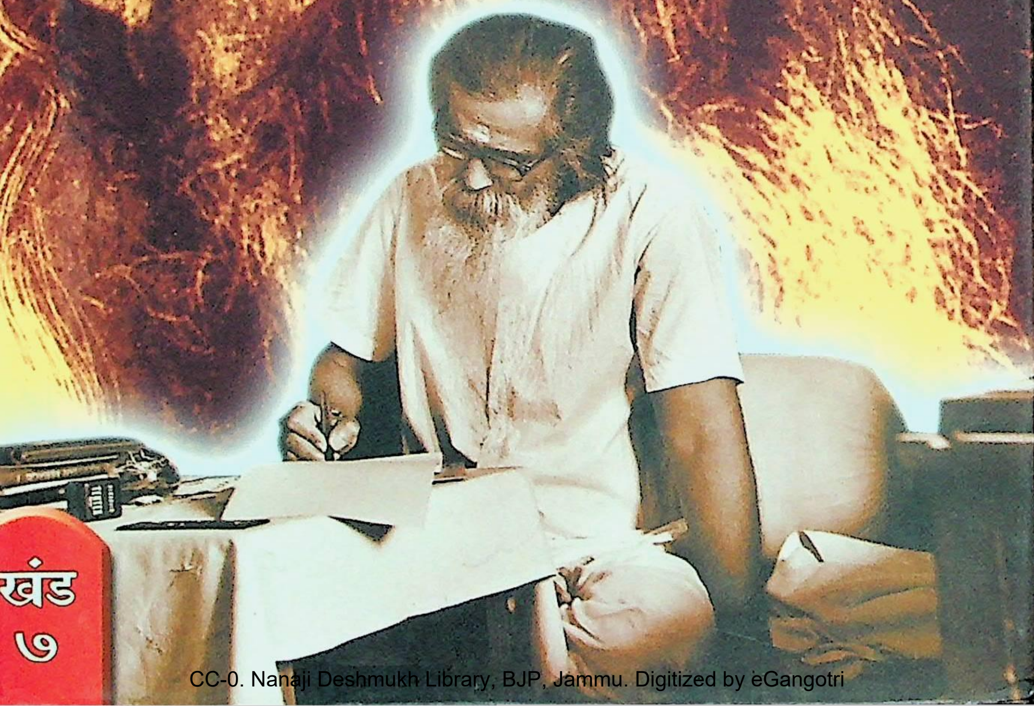
श्री गुरुजी समग्र



खंड
७

खंड १ : आदरांजलि

श्री गुरुजी का जीवन पट और महापुरुषों को दी गई श्रद्धांजलि।

खंड २ : संघ मंथन

प्रतिबंध के बाद नागपुर व उत्तरप्रदेश में दिए भाषण। सिंदी, इंदौर व ठाणे की चिंतन बैठकों में दिये गए भाषण।

खंड ३ : प्रबोधन

कार्यकर्ताओं को दिशादर्शन, बैठकें, प्रेरक पाथेय और कार्यक्रमों में दिए उद्‌बोधन।

खंड ४ : प्रशिक्षण

संघ शिक्षा वर्गों में १९३८ से १९७२ तक के बौद्धिक।

खंड ५ : समाजोद्‌बोधन

विविध संस्थाओं में दिए भाषण, विजयादशमी के बौद्धिक, उत्सवों पर दिए बौद्धिक।

खंड ६ : लेखन-कार्य

लेख, संस्थाओं की अभ्यागत–पुस्तिकाओं में अंकित अभिप्राय, पुस्तकों के लिए लिखी प्रस्तावनाएँ, छात्रकालीन पत्र, अंतिम तीन पत्र, सारगाछी आश्रम की दैनंदिनी।

7

A2→R2

श्री गुरुजी समग्र



खंड ७

पत्राचार

स्वत्वाधिकार :

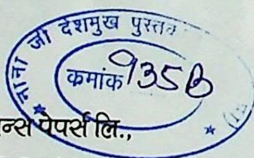
डा. हेडगेवार स्मारक समिति
डा. हेडगेवार भवन,
महाल, नागपुर-४४००३२

प्रकाशक :

सुरुचि प्रकाशन
देशबंधु गुप्ता मार्ग,
नई दिल्ली-११००५५

प्रथम संस्करण :

माघ कृष्ण एकादशी युगाब्द ५१०६



मुद्रक :

गोपसन्स पेपर्स लि.,
नोएडा-२०१३०१

मूल्य प्रति संच :

दो हजार रुपए



पारिभाषिक शब्द

सरसंघचालक	-	संघ के मार्गदर्शक।
सरकार्यवाह	-	संघ के निर्वाचित सर्वोच्च पदाधिकारी।
संघचालक	-	स्थानीय कार्य व कार्यकर्ताओं के पालक।
मुख्यशिक्षक	-	नित्य चलनेवाली शाखा के कार्यक्रमों को संचालित करनेवाला।
कार्यवाह	-	शाखा क्षेत्र का प्रमुख।
गटनायक	-	शाखा क्षेत्र के एक छोटे भौगोलिक भाग का प्रमुख।
प्रचारक	-	संघकार्य हेतु पूर्णतः समर्पित अवैतनिक कार्यकर्ता।
शाखा	-	संस्कार निर्माण हेतु नित्यप्रति का एकत्रीकरण।
उपशाखा	-	एक स्थान पर चलने वाली विभिन्न शाखाएँ।
बैठक	-	विचार-मंथन व सामूहिक निर्णय-प्रक्रिया हेतु एकत्र बैठने की प्रक्रिया।
बौद्धिक	-	वैचारिक प्रबोधन का कार्यक्रम, भाषण।
समता	-	अनुशासन के प्रशिक्षण हेतु शारीरिक कार्यक्रम।
संपत्	-	कार्यक्रम प्रारंभ करने हेतु स्वयंसेवकों को निश्चित रचना में खड़ा करने की आज्ञा।
विकिर	-	शाखा-कार्यक्रम की समाप्ति की अंतिम आज्ञा।
दंड	-	लाठी।
चंदन	-	एक साथ मिल-बैठकर जलपान करना।
सहभोज	-	अपने-अपने घर से लाए भोजन को एक साथ मिल-बैठकर करना।
शिविर	-	कैंप।
संघ शिक्षा वर्ग	-	संघ की कार्यपद्धति सिखाने हेतु क्रमबद्ध त्रिवर्षीय प्रशिक्षण योजना।
सार्वजनिक समारोप	-	शिविर तथा वर्ग का अंतिम सार्वजनिक कार्यक्रम।
खासगी समारोप	-	वर्ग का केवल शिक्षार्थियों के लिए दीक्षांत कार्यक्रम।

अनुक्रमणिका

खंड - ७

पत्राचार

पत्र-लेखन संपर्क का एक सशक्त माध्यम है। इस कला का उपयोग श्री गुरुजी ने भरपूर किया। उन्होंने इसके द्वारा संघ स्वयंसेवकों के साथ ही समाज के सभी वर्गों के सब प्रकार के लोगों से जीवंत संपर्क बनाए रखा। इस खंड में संघ के प्रत्यक्ष कार्य में लगे कार्यकर्ताओं के अतिरिक्त अन्य लोगों को लिखे गए पत्रों में से चुनिंदा पत्रों के महत्त्वपूर्ण अंशों को सम्मिलित किया गया है।

पत्राचार के विषय में

श्री गुरुजी की पत्र-लेखन कला में पारंगतता अद्वितीय थी। उन्होंने अपनी इस विशेषता का भरपूर उपयोग स्वयंसेवकों एवं कार्यकर्ताओं को निरंतर कार्यरत रहने की प्रेरणा देने हेतु किया। समाज के प्रभावशाली सत्पुरुषों को अपना बनाने में भी उनका पत्र-व्यवहार एक सशक्त माध्यम सिद्ध हुआ। उनके सारे पत्र हस्तलिखित हुआ करते थे। उनके द्वारा लिखे गए पत्रों की संख्या बताना असंभव ही है। नागपुर स्थित संघ मुख्यालय में ही उनके द्वारा प्रेषित ११,६१० पत्रों की प्रतिलिपियाँ उपलब्ध हैं। यह संख्या ही अपने आप में विस्मयकारी है। श्री गुरुजी के पत्रों का संग्रह रखनेवाले लोगों ने भी उनके पत्र उपलब्ध करवाए हैं। उनकी संख्या भी काफी अधिक है। इन सबका प्रकाशन एक दुष्कर कार्य है। इन सबको देना अनावश्यक भी लगा। इसलिए उनमें से महत्त्वपूर्ण पत्रों को चुनकर व पुनरावृत्ति को टालते हुए प्रस्तुत किया गया है।

जिन पत्रों का चयन किया गया है, उनमें प्रवास, कार्यक्रम, कार्य की जानकारी एवं पूछताछ आदि विषयों पर प्रांत-प्रांत के माननीय संघचालकों व प्रचारकों के लिए लिखे गए कार्यालयीन पत्र असंख्य है। उसी प्रकार अभिनंदन, शुभकामना, सांत्वना आदि के पत्र

भी हैं। इनमें से केवल प्रतीक के रूप में कुछ पत्र चुने गए हैं।

इसके अतिरिक्त आत्म-कथनयुक्त एवं छात्र जीवन में लिखे गए पत्रों को उनसे संबंधित विषय के 'खंड ६- लेखन कार्य' तथा प्रतिबंध काल से संबंधित पत्रों को 'खंड १०- 'संघर्ष के प्रवाह में' में सम्मिलित किया गया है।

श्री गुरुजी के पत्र के मुख्यतः तीन भाग रहा करते थे। प्रथम भाग में पत्र-प्राप्ति की सूचना, सद्यःसंपन्न प्रवास की जानकारी व अनुभव, पत्रोत्तर देने में हुए विलंब के लिए क्षमायाचना आदि। दूसरे भाग में पत्र लिखने का मुख्य हेतु होता था व तीसरे भाग में आगे का प्रवास, विशेष कार्यक्रम-उत्सव का उल्लेख, सहकारियों की जानकारी, कुशलान्वेषण आदि रहता था। सामान्यतः पत्र के दूसरे भाग, अर्थात् जिसमें पत्र लिखने का मुख्य हेतु दृष्टिगोचर होता है, का ही चयन किया है। परंतु कुछ अपवाद भी हैं। श्री गुरुजी पत्र पाने वाले की प्रतिष्ठा व उसकी मर्यादा के अनुरूप प्रत्येक के लिए अलग-अलग संबोधन किया करते थे, इसलिए पत्र का संबोधन वाला भाग भी महत्त्वपूर्ण है, परंतु ग्रंथ विस्तार की मर्यादा ने हाथ रोक लिए।

उनके पत्र हिंदी, मराठी, अंग्रेजी और संस्कृत भाषा में हैं। इसलिए पत्र के अंत में हिंदी को छोड़ कर उस पत्र की मूलभाषा कोष्टक में सूचित की है। ऐसे ही, जो पत्र नागपुर के अतिरिक्त अन्य किसी स्थान से प्रेषित किए गए हैं, केवल उन्हीं में स्थान का उल्लेख किया गया है।

प्रकरण – १
संत-वृंद को लिखे पत्र

१. अतीव कृतज्ञ

स्वामी शिवानंदजी महाराज, ऋषिकेश ८ अप्रैल १९५०

आप द्वारा भेजी हुई पुस्तकें मिली। आपकी कृपा के लिए मैं अतीव कृतज्ञ हूँ। मुझे कोई संदेह नहीं कि सर्वशक्तिमान ईश्वर की कृपा से जिस कार्य को मैं कर रहा हूँ, उसे आपने सराहा। अतः इस कार्य में आपके आशीर्वाद मुझे सदैव प्राप्त होते रहेंगे और यह कार्य यशस्वी होगा। आपकी कृपा का इच्छुक बनने हेतु सदैव प्रार्थना करनेवाला। (मूल अंग्रेजी)

२. अभ्युदयसिद्धि के साथ निःश्रेयस सिद्धि

श्री राधाकृष्ण चांडक, कोल्हापुर ८ अप्रैल १९५०

मुझे लगता है कि आपने मुझे पत्र लिखते समय मेरे बारे में कुछ भ्रांत धारणा बना ली है। मैं दावा नहीं करता कि मैं दार्शनिक हूँ। इसलिए उस विषय के संबंध में मुझसे प्रश्न पूछना ठीक नहीं। श्रीमन् रमण महर्षि और योगी अरविंद की कीर्ति सर्वतोमुखी है। उनसे पत्र-व्यवहार करें तो उपयोगी होगा।

व्यावहारिक साधारण मनुष्य के नाते मैं संप्रति जो कार्य कर रहा हूँ, वह मेरे सामने है। यह कार्य मुझे ऐसा दिखा कि निःस्वार्थ बुद्धि से कुछ सेवा कर सकूँगा तथा उससे राष्ट्र का भविष्य उज्ज्वल होगा। राष्ट्र समृद्ध और सुखी हुआ, तो अनेक व्यक्ति अभ्युदय के साथ निःश्रेयस भी प्राप्त कर सकेंगे। निःश्रेयस क्या है, यह तज्ञ लोगों का प्रश्न है। केवल वह प्राप्त करने के लिए योग्य, संतोषपूर्ण जीवन समाज में निर्माण करने का प्रयत्न करना व्यवहारी लोगों का कर्तव्य है। इतना ही विचार मेरे सामने है। (मूल मराठी)

३. अध्यक्ष महाराज का देहावसान

श्रद्धेय स्वामी अमृतानंदजी, बेलूर ३१ मई १९५१

अपने परमश्रद्धेय अध्यक्ष के देहावसान की वार्ता कल सुबह मुझे टेलीफोन द्वारा धंतोली आश्रम से मिली। मैं जब सौभाग्यवश बेलूर मठ गया था उस वक्त उनके शरीर-स्वास्थ्य के विषय में आपने सूचित किया था। अतः मैं उनका दर्शन नहीं कर सका। अब उन्होंने अपना नश्वर देह त्यागकर अपनी स्वाभाविक असीम अवस्था में प्रवेश किया है। अब अस्थिचर्ममय देह में उनका दर्शन करने का अवसर भी मैंने खो दिया। मुझे विश्वास है, वे मेरे चारों ओर सदैव हैं और उनके आशीर्वाद मुझे योग्य मार्ग पर चलने में सहायता करेंगे। उनके जैसे महानुभाव के विषय में मृत्यु अथवा तत्संबंधित विचार अर्थहीन हैं, इसलिए उनके देहावसान पर शोक करना उचित नहीं है। श्रद्धेय श्री निर्मल महाराज, श्री भरत महाराज तथा श्रीमत् प्रिय महाराज के पवित्र चरणों में मेरा विनम्र प्रणाम। (मूल अंग्रेजी)

४. केवल विरोध, कार्य का आधार नहीं

श्री हनुमान प्रसादजी पोद्दार, गोरखपुर २४ जून १९५१

आपका विचार अत्यंत योग्य है। किंतु मेरी रुचि का आपको पता है ही। संघ की नीति भी चिरपरिचित है, तथापि राजनीति एवं उसके साथ संलग्न चुनाव को सम्मुख रखकर चलनेवाली हिंदू हितैषी संस्थाओं ने एक होकर चलने का आपका विचार सर्वथा ग्राह्य है। आशा है कि ऐसी संस्थाओं के कर्णधार आपको सहयोग देकर योग्य निर्णय पर पहुँचेंगे।

इस संबंध में एक ही बात की ओर सबका ध्यान आकृष्ट करना मेरा काम है, यह योजना बनाते समय विशुद्ध राष्ट्रीय भूमिका रखना आवश्यक है, परंतु ऐसी भूमिका भावात्मक रहे, न कि विरोधात्मक। आज कल कांग्रेस और तत्सम संस्थाओं का विरोध यही अनेकों के विचार का प्रेरक तथा उनके कार्य का आधार होता हुआ प्रतीत होता है। इस मनोभूमिका से स्थायी लाभ होना असंभव दिखता है। अपरिहार्य आवश्यकता की दृष्टि से किसी संस्था विशेष पर उसका खंडन करना पड़े, यहाँ तक सब ठीक है, परंतु केवल विरोध, यह किसी कार्य का आधार होना ठीक नहीं लगता। आप यह सब जानते हैं। अतः इस विचार को दृष्टि के सम्मुख रखकर ही आप योजना बनाएँगे– यह मुझे विश्वास है।

५. राजयोग एक अनुभवगम्य शास्त्र

श्री राजाराम पंत भागवत, ठाणे ५ जुलाई १९५१

आपकी 'राजयोगाची मूल तत्त्वे व अभ्यास' नामक पुस्तक प्राप्त होकर बहुत समय बीत गया है। उत्तर देने में बहुत देरी हो गई है। अतः मैं क्षमाप्रार्थी हूँ।

आपने अभिप्राय लिखने को कहा है। इस गहन विषय पर मतप्रदर्शन करने का मेरा अधिकार नहीं है, परंतु व्यवहार में सामान्य मनुष्य को जिसका ज्ञान होता नहीं, इसलिए जिसके विषय में अनेक प्रकार की विचित्र भ्रांतियाँ, संभ्रम फैले हुए हैं, आधुनिक विद्वान तथा वैज्ञानिक अनुभव न करते हुए जिसे मिथ्या निरूपित कर उससे अपना पल्ला छुड़ा लेते हैं, उस कठिन, सूक्ष्म विषय की सच्चाई के बारे में विश्वास तथा उसका अधिक अभ्यास कर उसमें बताए गए श्रेष्ठ अनुभव लेने की रुचि तथा उत्सुकता, आपके इस छोटे से ग्रंथ से निस्संदेह निर्माण होती है। भोला विश्वास तथा नास्तिकता में से पैदा होनेवाला अंध-विश्वास, तथा उनका निवारण करनेवाला, यह एक यथार्थ शास्त्र है, यह ज्ञान आपकी पुस्तक के मनःपूर्वक अध्ययन से होकर जीवन की अगणित सुप्त शक्तियाँ विकसित कर जीवन सफल करने की अभिलाषा पैदा हो सकती है।

केवल एक न्यून दिखाई दिया है। राजयोग के अध्ययन के बारे में सूचनाएँ पर्याप्त विस्तारपूर्वक नहीं हैं। बहुधा इसका कारण यह हो कि विषय सूक्ष्म, गहन तथा उसका मार्ग अधिकांशतः संकटमय है और जानकार के सान्निध्य के बिना अनुसरण करने को कठिन होने से उसके विषय में सूचनाओं का अयथार्थ स्पष्टीकरण सर्वसामान्य मनुष्य के लिए हानिकारक हो सकता है, यह आपका मत हो। इस कठिन विषय का आपने जो सरल विवेचन किया है, उसके विषय में मुझ जैसे अनधिकारी व्यक्ति को अधिक न लिखना ही उचित है। (मूल मराठी)

६. धर्म का यथार्थ ज्ञान आवश्यक

श्री एच.एम.करी, सिद्धेश्वर मठ ५ नवंबर १९५३

'दैवी सर्वधर्मसमभाव' की कन्नड़ तथा अंग्रेजी प्रति प्राप्त हुई। मैं समझता हूँ कि यह मूल कन्नड़ भाषा का सरल अंग्रेजी अनुवाद है।

विभिन्न धर्म-संप्रदायों तथा मतों में सामंजस्य प्रस्थापित करने के लिए धर्म का यथार्थ ज्ञान तथा आचरण सर्वश्रेष्ठ तथा हितकारक है, यह बात लोगों के सामने रखना अच्छी कल्पना है। नेता लोग तथा उनके अनुयायी, सरकार तथा सामान्य जनता, वर्तमान 'सेक्युलरिज्म' का जो अर्थ समझती है, वह सामंजस्य निर्माण करने में असमर्थ है। धर्म के मूल सिद्धांतों को स्वीकार कर लेने के बाद धर्म को जो भी नाम दिया जाए, उसका निर्णय बाद में भी हो सकता है।

हमें आशा है कि इस भूमि की अस्मिता जागृत होकर, धर्म के सर्व समावेशक स्वरूप का यथार्थ ज्ञान होने में मार्गदर्शक तथा वर्तमान मानसिक संभ्रम तथा वैचारिक विकृति दूर करने में सहायभूत होगी।

इस धारणा का प्रचार करनेवाले लोगों में आप एक हैं, इसलिए मैं आपका अभिनंदन करता हूँ। (मूल अंग्रेजी)

७. ग्रंथ-प्राप्ति

श्रद्धेय श्री स्वामी शिवानंद महाराज, २८ दिसंबर १९५३

आपके कृपाप्रसाद रूप चार ग्रंथ मिले। अपने महान प्राचीन मूल्यों में प्रखर निष्ठा रखकर सुदृढ़ संगठनशक्ति के निर्माणार्थ मैं प्रवास करता आया हूँ। इस प्रयास में आपके शुभाशीर्वाद सदैव मेरे साथ रहेंगे। आपको विनम्र प्रणाम। (मूल अंग्रेजी)

८. परमपुरुषार्थ और संघकार्य

श्री चौसालकर, २८ जनवरी १९५४

मैंने कोई भी तपश्चर्या नहीं की है। मेरे बारे में यह एक भ्रांति फैली हुई है। यदि मैंने इसका प्रतिवाद किया तो वह दृढ़तर होगी, इसलिए मैं कुछ भी नहीं कहता। मैंने जो कुछ सुना है, उसके आधार पर ही लिखता हूँ।

आपके मन की स्थिति बहुत विचलित हो गई है। गुरु की आज्ञानुसार चलना महत्त्वपूर्ण कर्तव्य है। आप उसका पालन करें। अब संघ के प्रति आपके कर्तव्य के बारे में मैं यही कहूँगा कि आपके गुरु को वह जँचता न हो तो मेरा आग्रह नहीं है। मेरा विश्वास है कि एकांतिक निष्ठा से तथा स्वयं का अभिमान आदि कोई भी स्वार्थ न रखकर संघकार्य करना

भी अत्यंत श्रेष्ठ साधना है तथा उसके साथ ही रोज नियमपूर्वक निश्चित समय तक ईशचिंतन करते रहने तथा अपना कार्य भी उसी की सेवा का ही अंश होने के कारण कार्य का सर्वश्रेय उसके चरणों में अर्पण करते हुए जीवन उत्तम रीति से संपन्न करने से जीवन का लक्ष्य प्राप्त होता है, तथापि इस विषय में मैं आपसे आग्रह नहीं करूँगा। मैंने श्रेष्ठ पुरुषों से सुना है कि किसी को विशिष्ट मार्ग से चलने की जबरदस्ती करने पर अनिष्ट परिणाम हो सकता है तथा उसकी परागति हो सकती है। इसलिए मेरा सुझाव है कि इस विषय में आप ही निर्णय करें।

यह सच है कि 'मै कौन हूँ' इसका साक्षात् ज्ञान प्राप्त करना, प्रमुख कर्तव्य है। मैं समझता हूँ कि उसमें संघकार्य रोड़ा नहीं है, अपितु पोषक है, अन्यथा ऐसा लगता है कि पूर्णतः निवृत्ति-मार्ग का अवलंबन करना इष्ट, याने घर तथा परिवार छोड़ना भी आवश्यक है। परिवार में रहना है और समाज कर्तव्य को रोड़ा मानना मुझे ठीक नहीं लगता, परंतु मेरा आग्रह नहीं है कि आप मेरे मतानुसार चलें। आप अपने श्रद्धेय गुरु के निर्देशानुसार चलें, उससे आपको मनःशांति मिलेगी। भगवत्कृपा से आपको सब प्रकार से उन्नत जीवन प्राप्त हो।

मैंने सुना, पढ़ा तथा जो समझता हूँ, उसके अनुसार लिखा है। शेष योग्य-अयोग्य श्रीपरमेश्वराधीन है। वही योग्य प्रेरणा देता है।

(मूल मराठी)

९. गीता का १२वाँ अध्याय

श्री विश्वबंधु जी, होशियारपुर दिनांक २९ जून १९५४

देहली में आपका 'सत्संग सार' तथा कृपापत्र प्राप्त हुआ।

.....इस ग्रंथ में जितने लेख हैं, सभी विचारप्रवर्तक होते हुए अपने अनेक उत्सवों में आवश्यक दृष्टि देते हुए आचरण के प्रवर्तक भी सिद्ध होने की पात्रता रखते हैं। प्रथम लेख में ही संत की विस्तारपूर्वक की गई व्याख्या मार्गदर्शक होकर बाल, युवादि सबको योग्य गुणों की उपासना करने की प्रेरणा देनेवाली होने के कारण उसका मुझपर बहुत प्रभाव पड़ा। आपके ये सब प्रकाशन आज की आत्मविस्मृत अवस्था को दूर कर अपने राष्ट्रजीवन के आर्यत्व का आह्वान करनेवाले हैं। राष्ट्र पर आपका यह एक महान उपकार है।

कुछ काल पूर्व 'मानवता का मान' आपने मुझे देने की कृपा की थी। उसे मैंने अति ध्यानपूर्वक पढ़ा। क्योंकि श्रीमद्भगवद्गीता में स्थितप्रज्ञ का वर्णन, अद्वेष्टादि आठ श्लोक तथा अमानितवादि गुणवर्णन- परक श्लोक उत्तम मनुष्य के निदर्शक, इस नाते मुझे अतीव प्रिय हैं। उनमें भी दैनंदिन व्यावहारिक जीवन को सफल करते हुए श्रेष्ठतम आध्यात्मिक स्तर पर रहने के हेतु जिन गुणों से युक्त होने के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए, वे सब गुण अति संक्षेप में परंतु पूर्ण रूप से 'अद्वेष्टादि' आठ श्लोक जिसमें हैं, वह बारहवाँ अध्याय मेरे नित्य पाठ में है। उनका विवरण भी इस पुस्तक में इतना सुगम, सरल तथा हृदयस्पर्शी है कि देशभर के प्रमुख कार्यकर्ता एकत्र आएँ, तब उन्हें इसका अध्ययन करने के लिए प्रेरित करना अत्यंत उचित अनुभव कर मैंने पुस्तक का उल्लेख कर सबको उसे पढ़ने के लिए सूचना दी है। प्रतिदिन भोजन के समय आठों श्लोक सामूहिक रूप से कहकर 'ब्रह्मार्पण...' आदि श्लोक तथा 'ओ३म् सहनाववतु......' मंत्र का उच्चारण कर भोजनारंभ करने का परिपाठ भी चलाया है। यह कहना आवश्यक है कि इस पुस्तक ने मेरे हृदय पर गहरा परिणाम किया है।

१०. मूर्ति स्थापना के संबंध में शास्त्रीय संकेत

स्वामी केशवानंदजी, पटियाला — १८ नवंबर १९५४

....किन संतों की मूर्तियाँ स्थापन करने का आपका विचार है, सो मैं जानता नहीं। साधारण नियम तो यही है कि देवता, अवतार रूप ग्रहण किए महापुरुष, अवतार होने के नाते ईश्वर ही हैं। श्री हनुमानजी आदि भक्त के रूप में दिखते हैं, तो भी वे देवता हैं। श्री नारद मुनि, सनतकुमार आदि नित्यजीव हैं, अतः इनकी मूर्तियाँ बनाई जा सकती हैं, क्योंकि मूर्ति-प्रतिष्ठापना के समय उनका आह्वान तथा प्राणप्रतिष्ठा की जाती है और जो नित्य हैं, उन्हीं के संबंध में यह हो सकता है।

अन्य संत तो ब्रह्मीभूत हो गए हैं, उनका पृथक जीवरूप में अस्तित्व नहीं है। अतः उनका आह्वान आदि कैसे हो सकेगा? इसलिए उनकी मूर्तियाँ केवल शोभामात्र ही होंगी। तथापि संतों के नित्य जीवमान होने की किसी की श्रद्धा हो, तो वह भले ही उनकी मूर्ति बना ले। मंदिर में भगवान का विग्रह पूर्वाभिमुख हो, तो ये मूर्तियाँ उत्तराभिमुख। भगवान विग्रह उत्तराभिमुख हो, तो ये मूर्तियाँ पूर्वाभिमुख रखना प्रशस्त है। भगवान

के विग्रह के सम्मुख हाथ जोड़कर प्रणाम की स्थिति में मूर्ति विराजमान करना भी प्रशस्त ही है।

प्राणप्रतिष्ठा आदि के संबंध में 'निर्णय-सिन्धु' में पूरी क्रिया दी है, उसे देख लें। प्रमुख पंडितों से परामर्श कर यह लिखा है। मै स्वयं तो इसका ज्ञानी नहीं। किंतु शास्त्र सम्मत सिद्धांत विद्वानों से पूछकर लिखा है।

११. वैदिक ज्ञान की पुनःप्रतिष्ठा मानव-कल्याण के लिए

आचार्य श्री विश्वबंधुजी, ५ जुलाई १९५५

....आपकी कार्यकारिणी ने मुझे संस्थान की सभा का मानद् जीवनसदस्य निर्वाचित किया है, यह पढ़ा। कह नहीं सकता कि मैं इस योग्य कैसे हूँ। किंतु आपकी आज्ञा का मैं उल्लंघन नहीं कर सकता। आपने मेरी योग्यता से कहीं अधिक मेरा गौरव किया है, इतना ही कह सकता हूँ।

परमात्मा की असीम कृपा अपने राष्ट्र पर होने से आप शल्यचिकित्सा कराकर पुनः स्वस्थ हुए हैं, क्योंकि वैदिक ज्ञान की पुनर्प्रतिष्ठा अपने राष्ट्र द्वारा संसार के अखिल मानव के कल्याण के लिए आवश्यक है और आप इस पवित्र धर्म-कार्य में काया-वाचा-मनसा जुटे हुए हैं। आप पूर्ण विश्राम कर अल्पकाल में ही सर्वथा स्वस्थ होकर संस्थान का मार्गदर्शन तथा संचालन प्रदीर्घ काल तक करते रहें, यही परमपिता श्रीपरमात्मा से नम्र प्रार्थना करता हूँ।

१२. विषम अवस्था में हिंदू जागरण

श्रद्धेय स्वामी आगमानंदजी, कालडी(केरल) १९ अप्रैल १९५६

मेरे द्वारा आपको भेजी गई धनराशि का जैसा उचित समझें विनियोग करें। मैंने आपसे पहले ही कह दिया है कि आपको देने के लिए जिस सज्जन ने मुझे यह धनराशि दी है, आप उसका जैसा भी विनियोग करेंगे, उसे पूर्ण संतोष होगा तथा आपके द्वारा सूचित विनिमय से वह सज्जन आपका आभारी होगा।

मलबार क्षेत्र में संघकार्य बढ़ रहा है और त्रावणकोर-कोचीन क्षेत्र में भी वह बढ़े, इसके लिए हम आवश्यक उपाय सोच रहे हैं। अपने हिंदू बांधवों की ग्लानि तथा उदासीनता बहुत अधिक है। इसके साथ ही

राजकीय नेताओं की अदूरदर्शिता तथा राष्ट्रजीवन के प्रति शत्रुत्व की भावना रखनेवाले लोगों को दी गई विशेष सुविधा भी कारण है। लोगों की विचित्र मानसिकता बनी हुई है, इससे भीषण संकट निर्माण हो सकता है। सत्ताभिलाषी लोग विकृत भावनाओं से ग्रस्त हैं तथा उनके प्रभाव से ही जनसाधारण की मनोवृत्ति कलुषित हुई है।

इस विषम अवस्था में हमें अपने हिंदू समाज को सुसंगठित करने का कार्य करना है। ईश्वर की कृपा से तथा आप जैसे पुण्यात्माओं के आशीर्वाद से सब संकटों पर विजय प्राप्त कर हिंदू समाज को पुनर्जागृत तथा सुदृढ़ करने का अपना कार्य हम सफलतापूर्वक कर सकेंगे, ऐसा हमें विश्वास है। (मूल अंग्रेजी)

१३. आगमानंद साहित्य संकलन

श्री भास्कर मेनन,

सचिव, स्मरणिका प्रकाशन समिति, कालडी १६ अगस्त १९५६

श्रद्धेय स्वामी श्री आगमानंदजी साहित्य का संकलन करने की आपकी कल्पना से मुझे संतोष हुआ। श्री स्वामीजी का जीवन अपने समाज, धर्म एवं संस्कृति की निरपेक्ष सेवा का ज्वलंत उदाहरण है।

समाजोद्धार के प्रति स्वामीजी की तीव्र भावना, विशेषतः धार्मिकता के रूप में राजकीय स्वार्थ सिद्ध करने हेतु विभिन्न विकृत संप्रदायों का आक्रमण देखते हुए इतनी सर्वपरिचित है कि पुनरुक्ति नहीं की जा सकती। इसलिए भक्ति, ज्ञान, त्याग एवं अथक कर्मयोगी जीवन से अभिव्यक्त उनके विचार तथा लेख अगली पीढ़ी को निरंतर स्फूर्ति प्रदान करेंगे। आपके संकलन-प्रकाशन कार्य से आप बहुत बड़ी समाज-सेवा कर रहे हैं। भगवान रामकृष्ण आपका कार्य सफल करें, ऐसी उनके श्रीचरणों में मैं हृदयपूर्वक प्रार्थना करता हूँ। (मूल अंग्रेजी)

१४. आसनों से शरीर नित्य सक्षम रहता है

श्रीमान् जनार्दन स्वामी, ३१ अगस्त १९५६

श्रीमान् जनार्दन स्वामी द्वारा लिखित 'सुलभ सांघिक आसन' नामक पुस्तक की पांडुलिपि मैंने पढ़ी।

आसनों की आरोग्य संवर्धक उपादेयता सर्वमान्य है। हाल ही में

प्रधानमंत्री पं.जवाहरलाल नेहरू ने विद्यार्थियों को आसन करने का उपदेश दिया– यह सर्वश्रुत है। उन्होंने स्वानुभव के बल पर यह उपदेश किया है, जो खोखला 'परोपदेशे पांडित्य' नहीं है। उन पर जो दायित्व है, उस दायित्व की उन्हें जो चिंता है, प्रधानमंत्री के नाते जो कड़े परिश्रम करने पड़ते हैं, उन्हें देखते हुए यह तनाव वे कैसे सह सकते हैं, यह एक बड़ा रहस्य ही है। परंतु उन्होंने ही वह हल किया और आसनों से शरीर शुद्ध चैतन्ययुक्त, सुदृढ़, सब प्रकार के श्रम करने योग्य और मन तथा बुद्धि नित्य तेजयुक्त रहती है, यह स्वयं का अनुभव अनुकरण के लिए सब लोगों के सामने रखा है। (मूल मराठी)

१५. प्रेरणादायक दिव्य ग्रंथ

स्वामी चिरंतनानंदजी, मॉरिसपेठ, आंध्र १६ सितंबर १९५६

रामकृष्ण आश्रम से आपका श्रद्धायुक्त हृदय से निकट संबंध रहा है। आपने परमश्रद्धेया माँ तथा स्वामी विवेकानंदजी का चरित्र- लेखन किया है। इस पूर्वानुभव के कारण आपने भगवान रामकृष्ण के लीला-चरित्र के अलौकिक तथा दिव्य पहलुओं की अभिव्यक्ति सफलतापूर्वक की होगी, ऐसी मेरी अपेक्षा है। आंध्रप्रदेश के समाज-जीवन के विभिन्न स्तरों के लोगों तक भगवान रामकृष्ण के जीवन की दिव्य प्रेरणा इस ग्रंथ द्वारा पहुँचेगी, ऐसी मुझे आशा है।

भगवान रामकृष्ण के आप कृपापात्र हैं। उनका स्मरण कर मैं आपके चरणस्पर्श करता हूँ और जड़वाद से ग्रसित सहस्रावधि देशवासियों तक उनका संदेश पहुँचाने में आपको यश मिले, ऐसी उनके चरणों में विनम्र प्रार्थना करता हूँ। (मूल अंग्रेजी)

१६. वेदों के प्रत्येक मंत्र का पूर्वापार संबंध है

पं. विश्वदेवजी शर्मा, अजमेर ९ अप्रैल १९५७

श्रीमत् स्वामी विद्यानंदजी 'विदेह' कृत वेदभाष्य का प्रथम पुष्प प्राप्त होकर बहुत दिन बीत गए। अविरत प्रवास में व्यस्त होने के कारण अभी तक प्राप्ति-पत्र भेज न सका। क्षमा करें।

भाष्य पढ़कर अतीव संतोष हुआ। वैसे तो मेरा संस्कृत भाषा का

भी ज्ञान अल्प ही है, फिर वेदवाणी का क्या कहूँ ? किंतु अर्थ सरल तथा उद्‍बोधक है। एक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह भी है, जो अभी तक किसी ने संभवतः सोचा नहीं था कि प्रत्येक मंत्र का पूर्वापार संबंध है। तथा चारों वेदों में भी एक निश्चित अर्थ क्रम से प्रकट किया गया है, इस बात को स्पष्ट करने की प्रतिज्ञा श्रीमत् स्वामीजी ने कर तदनुसार सफलतापूर्वक अर्थ विशद करके बतलाया है।

मुझे विश्वास है कि समस्त वेदाभिमानी बंधु, शाश्वत ज्ञान के पृथ्वी-भर के उपासक इस अभिनव ग्रंथ की महिमा को समझकर उसका अध्ययन करेंगे और एतद्‍हेतु समग्र भाष्यग्रंथ लेकर उसकी प्रसिद्धि के कार्य में प्रत्यक्ष सहयोग देंगे।

श्रीमत् स्वामी विद्यानंदजी विदेह के श्री चरणों में अनंत प्रणाम।

१७. थकावट को हावी न होने दें

श्रीमत् स्वामी चिन्मयानंदजी महाराज, दिल्ली ६ अप्रैल १९५७

आप थकावट का अनुभव कर रहे हैं, यह पढ़कर खेद हुआ। ज्ञान-यज्ञ के परिश्रम से आपकी शारीरिक तथा आध्यात्मिक शक्तियों पर अत्यधिक बोझ पड़ा है, यह बात भयंकर है। कारण, आध्यात्मिक शक्ति के बिना असंख्य जिज्ञासुओं को प्रसन्नतापूर्वक मार्गदर्शन करने का कार्य सफल भी तो नहीं होता, परंतु थकावट को कार्यशक्ति पर कोई कैसे हावी होने देता है, यह मेरी समझ में नहीं आता? जिस युग में हम रहते हैं, उसकी माँग है कि अपनी संपूर्ण शक्ति लगाकर अपने समाज के लोगों, जो अमृतपुत्र हैं (अमृतस्य पुत्राः), को पुनर्जागृत कर, उसकी सच्ची अस्मिता जगाकर विश्व को दिव्यता से परिपूर्ण कर दें। आपके पवित्र कंधों पर अपना हाथ रखकर विधाता ने आपको इस दैवी उद्देश्य की पूर्ति की प्रेरणा दी है। किसी भी प्रकार की थकावट आपको कभी भी उस उद्देश्य-पूर्ति से डिगा नहीं सकेगी। (मूल अंग्रेजी)

१८. परमात्मा की योजनानुसार सृष्टिक्रम

(श्रीमान् विद्यानंदजी महाराज का स्वर्गवास होने पर निम्नलिखित शब्दों में श्रीगुरुजी ने अपना शोक प्रकट किया – सं.)

श्री बचूभाई भगत, कर्णावती २ जून १९५७

.....भौतिक सुखोपभोगवाद की कृष्णच्छाया जगत् पर गहरी होती जा रही है। ऐसे कठिन समय में श्रीमद्भगवद्गीता का दिव्य ज्ञान देश देशांतर में फैलाकर पथच्युत मानव को, विशेषकर अपनी आध्यात्मिक संपत्ति को भूले हिंदू मानव को, जागृत करने का अतीव आवश्यक कर्तव्य पूरा करनेवाले अधिकारी व्यक्ति का तिरोधान अत्यंत दुःखदायी प्रतीत होता है। श्रीपरमात्मा की जो योजना होती है, उसी के अनुसार सृष्टिचक्र चलता है। अतः इस दुर्घटना को श्रीप्रभु की इच्छा जानकर धर्मबुद्धि समाज ने उनके श्री श्रीगीतासंदेश को हृदयंगम कर उसका व्यक्तिमात्र में प्रचार करने हेतु जुट जाना आवश्यक दिखता है। श्रीमत् विद्यानंदजी महाराज की प्रेरणा सदैव ही साथ रहकर मार्गदर्शन कराती रहेगी, यह निस्संदेह है।

१९.वास्तव्य की अमिट स्मृतियाँ

श्री कालिदास बसु, कोलकाता २७ सितंबर १९५७

श्रद्धेय स्वामी श्री अमिताभ महाराज का निवास आज सुबह तक कार्यालय में था। २० सितंबर १९५७ को मै यहाँ आया और उन्हें देखकर, मिलकर उनकी बातें सुनकर बहुत प्रसन्नता हुई। उनका स्वास्थ्य ठीक न होते हुए भी, अपने सब स्वयंसेवकों से मिलकर, स्नेह तथा आत्मीयतापूर्ण बातचीत से उन्होंने सबके अंतःकरण हर्ष तथा उत्साह से भर दिए। उनका निवास यहाँ अल्पकालिक ही था, परंतु इस काल में जो भी बंधु यहाँ उपस्थित थे, उनके हृदय में स्वामीजी के वास्तव्य की अमिट स्मृतियाँ रहेंगी। (मूल अंग्रेजी)

२०. न तस्य प्राणाः उत्क्रामन्ति

श्री श्रीकरणजी सारडा, एडवोकेट, अजमेर ५ नवंबर १९५७

श्रीमत् स्वामी चंद्रानंदजी सरस्वती के समाधिस्थ होने का समाचार पढ़ा। श्री स्वामीजी के पूर्वाश्रम के सब आप्त स्वकीय जनों को बड़ा शोक होना स्वाभाविक है, किंतु सच्चे संन्यासी के निर्वाण में तो श्रुति कहती है कि 'न तस्य प्राणाः उत्क्रामन्ति'। वह कहीं आता जाता नहीं, अपने वास्तविक अमृत स्वरूप में स्थिर रहता है। केवल शरीर का आना-जाना स्थूल दृष्टि को दिखता है। अतः शोक-संवरण कर श्री स्वामीजी के

जीवनलक्ष्य की पूर्ति हेतु प्रयत्नशील होना ही वास्तविक श्रद्धा व्यक्त करना होगा, यह सोचकर सबने शांत चित्त से कर्तव्य-पथ पर आगे बढ़ने का निश्चय करना ही उचित होगा।

ऐहिक जीवन भर हिंदू-समाज में जागृति उत्पन्न कर उसे सचेत करते हुए, उसमें तेज, बल, वीर्य जगाने में सफल जीवन व्यतीत कर श्री स्वामीजी ने शरीर छोड़ा है। उनके तिरोधान से हिंदू-हितार्थ कार्यतत्पर तथा युद्धमान वीर से हिंदू-समाज वंचित हुआ है। किंतु उन्होंने जगाई हुई ज्योति अधिकाधिक प्रखरता से हिंदू जीवन को प्रकाशित तथा उत्तेजित करती रहेगी, इसमें संदेह नहीं। हम सब उस ज्योति में स्नेह भरनेवाले सिद्ध हों, यही श्री परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ।

२१. रामरक्षा स्तोत्र मंत्र है

श्री भाऊसाहेब खरे, दर्यापुर ७ अप्रैल १९५८

श्री रामरक्षा स्तोत्र एक मंत्र है। मंत्र का कितना ही सुन्दर अनुवाद किया, तो भी उसका सामर्थ्य अनुवाद में आता ही नहीं, ऐसा जानकार कहते हैं। अतएव आपके बुद्धिवैभव का एक आविष्कार के अतिरिक्त इस अनुवाद को कितना महत्त्व प्राप्त होगा, यह मैं नहीं कह सकता। यह स्तोत्र मंत्र नहीं है तथा मंत्र का सामर्थ्य अनुवाद में भी रहता है, यह किसी का मंतव्य हो, तो मेरा पक्ष भूल ही है। परंतु आप स्वयं जानकार हैं, इसलिए इसका विचार कर सकते हैं। (मूल मराठी)

२२. रुद्रपाठ से मानसिक व्याधि-मुक्ति

श्री मधुकर जोशी, भगूर (नासिक) २ जुलाई १९५८

..... की सुपुत्री दो मास से रुग्ण है तथा उसे एक प्रकार का मानसिक आघात होने से व्याधि का प्रादुर्भाव हुआ है, यह पढ़कर बहुत दुःख हुआ।

माननीय श्री तुकाराम बुवा का वेदों पर नितांत विश्वास है। उसके 'रुद्र' भाग का पाठ शास्त्रशुद्ध पठन करनेवाले व्यक्ति से करवाया जाए तथा उससे अभिमंत्रित जल का नियमपूर्वक ११ दिन सिंचन किया जाए। मुझे लगता है कि इससे बहुत लाभ होगा। अतः उन्हें यह बतलाएँ। समय-समय पर उनकी सुपुत्री के स्वास्थ्य का समाचार देते रहें। (मूल मराठी)

२३. धर्म शब्द बहुत व्यापक है

श्री मरतप्पा प्रभु, मंगलोर १५ अगस्त १९५८

'धर्म' शब्द में बहुत व्यापक विचार है। उसमें से ईश्वर की अनन्यचित्त होकर भक्ति तथा समाज-सुधारक सद्‌गुणों की उपासना और तत्प्रेरित व्यवहार– इतने ही अर्थों का अभी प्रचार हुआ तो भी पर्याप्त है। प्रयत्न करें। श्री भगवान सफलता देगा।

२४. आध्यात्मिक जीवन-मूल्यों में आस्था हो

श्री प्रेमानंद भारती जी,
महंत, अवधूत आश्रम, सदानंदपुरम् (केरल) ५ सितंबर १९५८

आपके पत्र में उस प्रदेश में उत्पन्न हुई दुरवस्था का जो वर्णन है, उसी में इस समस्या का उत्तर तथा उपाय निहित है। हिंदुओं की दुरवस्था का कारण एकता तथा संगठन का अभाव है, तो इन दोषों को दूर करना ही उसका उपाय है। आपके कथनानुसार लोग सोचते हैं कि धर्म और ईश्वरनिष्ठा ही उनके सब रोगों का मूल उपचार है, तब समस्या के समाधान के केवल दो उपाय हैं–

(१) यह सोचना कि यह अवस्था अपरिहार्य है और इसका कोई उपचार नहीं है। अतएव ईश्वर से वंचित असहाय लोगों को उनके दुर्भाग्य पर छोड़ दिया जाए, यह तो तथ्यपरक न होकर निराशावादी दृष्टिकोण है।

(२) साहस तथा आस्था के साथ आध्यात्मिक जीवन के परम सत्य तथा परमेश्वर-प्राप्ति में आस्था के बल पर और अपनी राष्ट्रीय परंपरा के अनुरूप अपना भविष्य स्वयं निर्माण करने की आवश्यकता, समाज के मन में अंकित करनी होगी। इसके लिए सर्वसाधारण हिंदू के मन में ईश्वर तथा उच्च आध्यात्मिक मूल्यों के प्रति अंतर्निहित जो दृढ़ श्रद्धा वर्तमान में अभ्राच्छादित हो गई है, उसे दृढ़ करने की आवश्यकता है। जो लोग हिंदू समाज के भविष्यकालीन स्वास्थ्य के प्रति सजग हैं, धर्म के अपराजेय आधार पर जिनकी श्रद्धा है तथा लोगों के मनों की दिव्यता जगाकर, अनैसर्गिक तथा अनैतिक ईश्वरविरहित अवस्था नष्ट करने का जिनमें दृढ़ साहस है, उनके लिए धर्म की सादगी तथा भव्यता में सुप्त विश्वास जगाने के लिए समर्पित प्रेरक आचरण की

आवश्यकता है, किंतु दूसरों के भौतिक तथा धार्मिक विचारों पर अनावश्यक टिप्पणी करना आवश्यक नहीं।

मै इस विषय पर अधिक कहना नहीं चाहता। मेरा ज्ञान और अनुभव सीमित है। मेरी शक्ति के अनुसार मैंने इस विषय के बारे में अपने विचार व्यक्त किए। निर्णय तथा मार्गदर्शन करना आप जैसे उच्च श्रेणी के संतों का कार्य है। (मूल अंग्रेजी)

२५. यज्ञ में पशुबलि न दी जाए

(श्री चौंडे महाराज ने श्री गुरुजी को लिखा– 'वाजपेय यज्ञ में पशुबलि दिया जानेवाला है। आपका क्या मत है? इसका उत्तर...–सं.)

गोजीवन श्री चौंडे महाराज, २५ अप्रैल १९५९

यज्ञ-कर्म की शास्त्रीय जानकारी मुझे नहीं है। श्रीमद्भागवत के 'लोके व्यपाया' आदि श्लोकों से पशुबलि का विधान पहले रहा हो तथा यह अनुमान निकाला जा सकता है कि पश्चात् यज्ञ में 'आमिष' सेवन से निवृत्त होने की शिक्षा प्राप्त करने की व्यवस्था है, ऐसा मानकर लोग व्यवहार करते रहे हों। प्रत्यक्ष वेदों के मंत्रों का अर्थ लगाना तज्ञों का काम है। मेरा वह अधिकार नहीं है। परंतु वेदमंत्रों का अर्थ पशुबलि-समर्थन पर या निषेध पर कैसा भी हो, तथापि बीच के कालखंड में पशुबलि-सह यज्ञ होते रहे हैं। श्री गौतम बुद्ध ने इस 'बलि' प्रथा का निषेध किया है, ऐसा जयदेव कवि कहते हैं। बाद में संपूर्ण समाज ने यज्ञ का स्वरूप ही बदल डाला या यज्ञ करना ही छोड़ दिया। उसके स्थान पर यज्ञ का व्यापक अर्थ ग्रहण कर, लोकसंग्रहात्मक निष्काम कर्म, अनेकविध उपासना, पूजाविधि आदि का अवलंब किया। कुल मिलाकर लोकमत अनेक शताब्दियों से ऐसा ही है। इसलिए अब पशुबलि-सह यज्ञ करना आवश्यक और अपरिहार्य मानने का कारण नहीं दिखता।

जनमानस में संभ्रम पैदा न होते हुए सुचारु रूप से स्वधर्मनिष्ठा की बुद्धि, सद्गुण, सदाचार, शील, चारित्र्य आदि श्रेष्ठ गुणों का पोषण होनेवाले कर्मों तथा आदर्शों की वर्तमान काल की आवश्यकता इस संकल्पित यज्ञविधि से सचमुच पूर्ण होनेवाली हो, तो सामान्य पशु ही क्या, मुझ जैसा मनुष्य कहेगा कि नरबलि के लिए स्वयं का देह-अर्पण कर दिया जाए, परंतु ऐसा होगा, ऐसा ही फल मिलेगा, यह साहस से कौन कह सकता है ?

इसलिए सर्व सृष्टि परिपालक, परमकृपालु दयानिधि श्री भगवान के चरणों में सन्मार्ग-दर्शन के लिए, सत्प्रेरणा-प्राप्ति के लिए; सत्कर्मरति उत्पन्न होकर तदनुरूप आचरण करने की शक्ति प्राप्त होने के लिए, अनन्य भाव से प्रार्थना करता हूँ। (मूल मराठी)

२६. रामकृष्ण-विवेकानंद प्रणीत वैशिष्ट्यपूर्ण शैली

स्वामी रंगनाथानंदजी, नई दिल्ली २७ अप्रैल १९५९

जापान मे दिए गए उन दोनों भाषणों को पढ़ने के पश्चात्, पूर्व की अपेक्षा मैं अधिक संतोष का अनुभव कर रहा हूँ। भगवान बुद्ध के बारे में सोचने पर लगता है कि आज भारत में उनके नाम को लेकर मात्र ऐहिक एवं स्वार्थी राजनीतिक गतिविधियों में अनुचित लाभ उठाया जा रहा है। मानवता की आध्यात्मिक समुन्नति में बुद्ध का उग्र संन्यासव्रत ग्रहण और खुले दिल से किया गया सर्वस्वार्पण अतुलनीय है। आध्यात्मिक उन्नयन के माध्यम से स्नेह एवं सहकार्य, दया, अनुकंपा एवं पारस्परिक सहयोग, त्याग-भावना एवं निरपेक्ष सेवा और इन सब श्रेष्ठ गुणों को अपने अक्षय सनातन धर्म का सुविकसित मधुर कमल पुष्प की भाँति विकसन के स्वरूप को आग्रहपूर्वक प्रस्तुत कर, इन विचारों का व्यापक प्रचार-प्रसार आज अत्यंत आवश्यक है। इसी से उनके नाम को लेकर आज भारत में अनुचित प्रचार करनेवाले, उनके ही द्वारा धूमिल बना बुद्ध का रूप देखने से बच सकेंगे। मुझे पूरा विश्वास है कि आपका धर्म के मूलभूत सिद्धांतों का चिंतन और धार्मिक व्यवहारों की गहरी जानकारी के कारण आप भारत के प्रदूषित बने वातावरण को, श्री रामकृष्ण-विवेकानंद प्रणीत वैशिष्ट्यपूर्ण शैली से निर्मल करने में अवश्य ही सफल सिद्ध होंगे। दूषित वातावरण शुद्ध करने का इससे अधिक उपयोगी कोई अन्य मार्ग नहीं सोचा जा सकता..। (मूल अंग्रेजी)

२७. 'समः सिद्धावसिद्धौ च'

श्री अमिताभ महाराज, पुरुलिया, विवेकानंदनगर १ जुलाई १९५९

....संघ शिक्षा वर्ग अच्छे हुए। श्यामनगर में जाकर आपने स्वयंसेवकों को आशीर्वाद दिया था। बहुत ही आनंद हुआ। सब बंधुओं को इस अनुग्रह से अतीव प्रसन्नता हुई।

शंकर कालेज (कालडी) के विषय में श्रीमान् माधवानंद स्वामी (बैलूर मठ) का तार आया था। मैंने चेन्नै में टेलीफोन पर कल रात बातचीत की। वहाँ उन लोगों को धन एकत्र करने में सफलता नहीं मिली। सहानुभूति तो सब प्रकट करते हैं, ऐसा समाचार मिला है। बहुत दुःख तथा लज्जा का अनुभव कर रहा हूँ। मै स्वयं मई तथा जून दोनों मास वर्ग के निमित्त प्रवास में था। अतः कुछ भी ध्यान नहीं दे सका। अब भी कम से कम १५ दिन मुझे नागपुर में रहना अनिवार्य है। विलंब भी हो गया है।. ...मैंने श्रीमन् माधवानंदजी की सेवा में अभी पत्र लिख दिया है। श्री प्रभु की इच्छा इस बार मुझे यश देने की नहीं थी। हो सकता है कि वृथाभिमान होने की आशंका से ही मुझे असफल बनाकर अभिमानदोष से दयामय प्रभु ने बचाने की योजना की हो। मैं यही मानता हूँ और कृतज्ञता से उसे प्रणाम कर उसके बलिष्ठ हाथों में सब देकर चिंतामुक्त होने का प्रयत्न कर रहा हूँ।

२८. सुख का अनुभव

माननीय श्री भालजी पेंढारकर — १२ मार्च १९६०

'पन्हाला' में आपने मुझे एक पुस्तक दी थी। भगवान श्री रमण महर्षि से अनेकों के हुए संवाद उसमें थे। पुस्तक संपूर्ण पढ़ी। प्रकाशन के बाद शेष भाग मुझे पढ़ने को मिलेंगे ही। प्रत्यक्ष करतलामलकवत् ज्ञानमय हुए महापुरुष के वचन पढ़ते समय सुख ही सुख का अनुभव हुआ। अनुभव हुआ कि विचारों से घुल-मिल जा रहा हूँ।

आपने परम स्नेह से इतनी अनमोल पुस्तक पढ़ने को दी, इसके लिए मैं आपका कैसे और किन शब्दों में आभार प्रकट करूँ? (मूल मराठी)

२९. श्री शंकराचार्य पद के योग्य मैं नहीं

जगद्गुरु श्री शंकराचार्य महाराज : श्री शारदा पीठम् मुंबई श्री महाबल भट्ट, मुंबई — ११ अप्रैल १९६०

ब्रह्मीभूतानां परमश्रद्धेय श्री भारतीकृष्ण तीर्थानाम् अंतिमेच्छापत्रके प्रकाशितेषु उत्तराधिकारिणां नामसु मदीयमपि नामधेयं मया अवलोकितम् आसीत्।

तत्पीठाधिरोहणेच्छा कदापि मम मनसि नासीत् नास्ति चेति सविनयम्

निवेदयितुमेव पत्रमिदं लिख्यते। जगद्गुरु पीठाधिरोहणे अपेक्षितानां पाण्डित्यवैराग्यतपश्चर्यादिगुणानाम् अभावम् आत्मनि पश्यामि। तादृशैः गुणगणैः संपन्नः कोऽपि महात्मा एव तत् सकलविश्वश्रेद्धेयं जगद्गुरुपीठम् अलंकर्तुम् अर्हति।

हिंदी अनुवाद–

ब्रह्मीभूत परमश्रद्धेय श्री भारतीकृष्ण तीर्थ की अंतिम इच्छा के संबंध में प्रकाशित पत्रक में उत्तराधिकारी की नामावली में मेरा भी नाम देखा। उस पीठ पर आरूढ़ होने की इच्छा न कभी मेरे मन में निर्माण हुई और न है। यह सविनय सूचित करने के लिए मैंने यह पत्र लिखा है। जगद्गुरु के पीठ पर आरूढ़ होने के लिए अत्यावश्यक पांडित्य, वैराग्य, तपश्चर्या आदि गुणों का मुझमें अभाव है। ऐसे गुण समुच्चय से संपन्न कोई महापुरुष ही उस अखिल विश्व में श्रद्धेय जगद्गुरु पीठ को सुशोभित करने के योग्य होगा।

३०. आशीर्वाद मिलता रहे

स्वामी शिवकुमारजी, सिद्धगंगा (कर्नाटक) ५ जून १६६०

"....(संघ शिक्षा वर्ग का) समारोप समारोह आपके आशीर्वचन से सफलतापूर्वक संपन्न हुआ। यह तो परमात्मा की ही कृपा है कि वहाँ के स्वयंसेवक अपने कार्यक्षेत्र में लौटते समय आपका आशीर्वाद प्राप्त कर सके। वर्ग की कालावधि में आपके सौजन्यपूर्ण सहकार्य एवं सहयोग के कारण मैं कितनी कृतज्ञता का अनुभव कर रहा हूँ, उसे शब्दों में व्यक्त करने में असमर्थ हूँ। वर्ग का स्थान एवं उपलब्ध सुविधाओं के कारण स्वयंसेवकों का वहाँ का निवास सुखद और प्रोत्साहित करनेवाला सिद्ध हुआ। मुझे पूरा विश्वास है कि वहाँ के गंभीर धार्मिक वातावरण के कारण वर्ग में रहनेवालों का जीवन अधिक पुनीत, धर्मनिष्ठ और लोगों के प्रति कर्तव्य-भावना को जगानेवाला बनेगा। उसकी इस सफलता के लिए मैं आपके आशीर्वाद का अनुरोध करता हूँ।

आपका दर्शन कर प्रणाम करने के सौभाग्यपूर्ण अवसर की मैं प्रतीक्षा कर रहा हूँ। उस समय तक आपसे विनम्र अनुरोध है कि वहाँ के अपने कार्य को आपका आशीर्वाद प्राप्त हो और सभी कार्यकर्ताओं को आपका शुचिर्भूत, त्यागपूर्ण एवं सर्वसमावेशक धर्मपरायणता से समाज-सेवारत प्रत्यक्ष जीवन उत्स्फूर्त करता रहे। (मूल अंग्रेजी)

३१. असार से सार की ओर

श्री नरेशकुमार जी, फिरोजपुर २९ अगस्त १९६०

आपने समस्त संसार सारहीन होने का, आकांक्षा में महत्त्वहीन होने का अपना विचार लिखा है। इस स्थिति में मेरा कुछ कहना भी सारहीन तथा महत्त्वहीन होगा।

फिर भी मेरा आपको नम्र सुझाव है कि संसार को असार आदि विशेषण न लगाते हुए इसी में जन्म पाने के फलस्वरूप इस 'असार' से 'सार' की ओर जाने की इच्छा होती है। इसके इस श्रेष्ठ गुण को समझकर इससे उस मात्रा में प्रेम करें। अंततः यह भगवान की लीला सृष्टि है, जो भगवान के आनंद गुण से वंचित नहीं हो सकती। सच्चा आनंद लेने की अपनी पात्रता चाहिए। इस पात्रता को पाने के लिए भी 'संसार' में रहकर चेष्टा करनी पड़ती है। जंगल भी संसार ही है। फिर मानवों से भागने का कारण क्या?

इस कर्ममय जगत् में आनंद का अनुभव करने की पात्रता पाने के लिए निष्काम भाव से सोच-विचारकर निर्धारित कर्तव्यपूर्ति में पूर्णतया संलग्न होकर कर्म करना सर्वप्रथम तथा सर्वाधिक आवश्यकता की बात है, ऐसा मैंने गुरुजनों से सुना है। भाग्य से आपको एक पुनीत कर्तव्य प्राप्त हुआ है। उसमें लगे रहें। स्वार्थादि छोड़ दें। सर्वदूर पवित्र तथा प्रेम से बँधा हुआ अपना पुनीत समाज खड़ा हो, इस हेतु प्रयत्न करें। उसमें से व्यक्तिगत अहंकार का उदय न हो, इस ओर सतर्क रहें। यह सब श्रीभगवान की उपासना है, इस विशुद्ध भाव से करें, तो इस 'सारहीन संसार' में सारसर्वस्व जो आनंदमय सत्तत्त्व है, का अनुभव आने लगेगा और फिर अपने ही बंधुओं से घृणा करने की जो दुरवस्था आज आपको प्राप्त हुई है, उससे मुक्त होकर आप सबसे निष्कपट स्नेह कर सकेंगे।

इस हेतु पूर्वसिद्धता के नाते माता-पिता की सेवा कर अपने भौतिक विद्यार्जन में मन लगाकर यश प्राप्त करें। मनोव्यथा आपको अपने निश्चय से डिगा नहीं सकती, ऐसा इसमें से अनुभव प्राप्त करें। अपने राष्ट्रसेवा-व्रत में संलग्न रहें। आसपास के बंधुओं की त्रुटियों का ही विचार न कर निःस्वार्थ प्रेम से उनको वश करें। विपरीत अवस्था में अपने को कष्टप्रद दिखनेवालों के मध्य में भी मन बिगड़ने न देना, उसे प्रसन्न रखना, स्नेहपूर्ण रखना, यह बहुत बड़ी उपासना है। यह जानकर करेंगे तो बहुत लाभ होगा।

मैंने जो श्रेष्ठों से सुना है, आपकी सेवा में निवेदन किया है। आगे जैसी बुद्धि श्रीभगवान आपको दे। स्नेहाकांक्षी।

३२. भ्रष्ट शासन और पवित्र मंदिर

महंत दिग्विजयनाथ, गोरखपुर ८ सितंबर १९६०

हिंदू धर्मस्व आयोग (भारत) की प्रश्नावली खंड २ तथा उसका आपने लिखा हुआ उत्तर (जो आपने छपवाकर वितरित भी किया है) मिला।

मैंने प्रश्न तथा उत्तर पढ़े हैं। उत्तर तो बहुत ठीक हैं। परंतु मेरे सम्मुख मुख्य प्रश्न है कि यह प्रश्नावली प्रस्तुत करनेवाले महानुभावों को धार्मिक मठ-मंदिर आदि के संबंध में प्रश्न करने का, नियमादि बनाने का अधिकार है क्या? वही शासन इसका अधिकारी हो सकता है, जो स्पष्ट, असंदिग्ध रूप से (इस आयोग के संबंध में) हिंदुधर्माधिष्ठित, याने श्रुतिस्मृत्युक्त सनातन धर्माधिष्ठित हो। साथ ही शील चारित्र्यसंपन्न व्यक्तियों द्वारा संचालित हो। आज का शासन संविधान से ही भौतिक विचारवाला (सेक्यूलर) है। आजकल के अनुभव से हिंदूधर्म के प्रति केवल उदासीनता ही नहीं, तो हिंदूधर्म को विनाश करनेवाली नीति ही उसने अपनाई है। विवाहविषयक निबंध देखकर हिंदू मान्यता, परंपरा तथा सिद्धांतों पर कुठाराघात करने का प्रयास किया गया है, यह स्पष्ट होता है। लगता है कि धर्मश्रद्धा के केंद्रों में अधिक्षेप कर उन्हें प्रभावहीन, साधनहीन बनाने की दृष्टि से अब एक-एक पग आगे बढ़ाया जा रहा है। चारित्र्य, शील आदि की दृष्टि से तो सद्यःकालीन शासन को धर्मसंस्थाओं की ओर देखने तक का अधिकार दिखता नहीं है। ग्रामपंचायत से लेकर नई दिल्ली के शासनकेंद्र तक कितना स्वार्थ, कितना भ्रष्टाचार, कितनी अशुद्धता भरी हुई है, यह बात किसी से छिपी हुई नहीं है। शासन के भिन्न-भिन्न विभागों की, अधिकार पर बैठे हुए व्यक्तियों की निष्पक्ष जाँच करने-करवाने का विरोध है। उसका कारण स्पष्ट ही है कि ऐसी जाँच में संभवतः कोई भी व्यक्ति या शासन का विभाग निर्दोष सिद्ध नहीं होगा। भ्रष्टता, अनीति, पापाचार करना और उसे छिपाने का प्रयत्न करना, भ्रष्ट व्यक्तियों को संरक्षण-समर्थन देना, यह सब एक ही स्तर के जघन्य दोष हैं। ऐसे धर्मविहीन, धर्मविरोधी, भ्रष्टशील शासन को मठमंदिरों की जाँच करने का, उनमें हस्तक्षेप करने का अधिकार कदापि नहीं हो सकता।

अतः इन प्रश्नों के उत्तर में मैं यही कह सकता हूँ- 'Set your house in order first' (पहले अपना घर ठीक करो, फिर मठ-मंदिरों की बात सोची जा सकेगी) यदि अनिवार्यतः आवश्यक हुई तो।

प्रश्नावली का ढंग देखकर मेरे मन में ऐसे भाव उठ पड़े है। प्रश्नों का ढंग सहानुभूति से, स्नेह से जानकारी प्राप्त कर सहायता तथा सुधार करने की श्रद्धायुक्त इच्छा को व्यक्त करनेवाला मुझे नहीं लगा। किसी को यदि प्रश्न किया 'कहिये आपने चोरी करना छोड़ दिया?' तो प्रश्नकर्ता का असद्भाव ही प्रकट होता है। इस प्रश्नावली में भी ऐसी चतुराई के शब्दप्रयोग से बने प्रश्न हैं। इसी कारण इन प्रश्नों के पीछे की वृत्ति के संबंध में सद्भाव न होने की मुझे आशंका हुई। प्रश्न तथा प्रश्नकर्ता के संबंध में यदि घृणा नहीं, तो कम से कम उपेक्षा करने की भावना मन में खड़ी हुई।

ऐसी स्थिति में जिस मनःसंतुलन से, शांति से, आपने उत्तर लिखे हैं, उसे देखकर आदरयुक्त आश्चर्य होता है। आपने हस्तक्षेप न करने की जो सूचनाएँ, चेतावनी दी है, उसका परिणाम होकर धर्मश्रद्ध समाज, सच्चे साधु-संन्यासी, महात्माओं के हाथों में मठ-मंदिरों के शोधन का, पुनर्निर्माण का भार सौंपकर शासन अलग हट जाए, यही इच्छा और श्रीपरमात्मा से विनम्र प्रार्थना है।

३३. भगवान महावीर जी का संदेश आज भी प्रेरक

श्री रतनलाल जैन छाबड़ा,
मंत्री, राजस्थान जैन सभा, उदयपुर — २१ जनवरी १९६१

....अनुगृहीत हूँ। भगवान की कृपा से आयोजित समारोह उत्तम रीति से संपन्न हो तथा आपने जो उद्देश्य सम्मुख रखा है, उसमें आपको बढ़ती हुई सफलता प्राप्त हो।

भगवान महीवीर जी के शुद्ध सात्विक तपःप्रधान जीवन का संदेश आज रजोगुणयुक्त, अतएव स्वार्थी मानव-जीवन में इष्ट परिवर्तन लाने के लिए अत्यावश्यक है। अतः वैसा पवित्र जीवन व्यतीत करनेवालों का समुदाय खड़ा होकर उक्त संदेश प्रवाहित करने में संलग्न होना लाभदायक होने के कारण आपका यह कार्य अतीव अभिनंदनीय है।

....पूर्वनियोजित कार्यक्रम के परिणामस्वरूप मेरा उपस्थित होना संभव न होने के कारण यह पत्र आप सब महानुभावों की सेवा में प्रस्तुत कर रहा हूँ।

३४. पं. मालवीय जी का कृपापात्र हूँ

पूज्यपाद श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी जी, ९ दिसंबर १९६१

....बहुत आनंद से पुस्तिका का फिर पठन किया। आज रात्रि का समय ही कुछ लिखने के लिए मिल सका, क्योंकि दिन में यहाँ से ३०-३२ मील दूरी पर सिंदी गया हुआ था। रात्रि में आकर कुछ लिखकर भेज रहा हूँ। आपके उज्ज्वल पीतांबर सदृश कृति में इस फटे कंबल के चिथड़े को जोड़ना आपको उचित जँचता हो तो जोड़ लें, मैं तो इससे धन्य हो जाऊँगा।

।। ओ३म् ।।

परमादरणीय महामना पं. मदन मोहन मालवीय जी की जन्म शताब्दी बड़े समारोह से देशभर में मनाई जाएगी। इस पुनीत अवसर पर 'मेरे महामना मालवीय जी तथा उनका अंतिम संदेश' इस छोटी सी किंतु अतीव भावगर्भ पुस्तिका का तृतीय संस्करण प्रसिद्ध होना अतीव समयोचित है। श्रद्धेय श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी जी जैसे भगवद्भक्त के पवित्र कोमल हृदय से यह उत्स्फूर्त श्रद्धांजलि अभिव्यक्त हुई है। इतना इस पुस्तिका की महत्ता को समझने के लिए पर्याप्त है। 'अंतिम संदेश' सदैव हिंदू जाति के लिए मार्गदर्शक रहेगा। तदनुरूप कार्य करने से हिंदू-समाज निश्चित ही सर्वतोमुखी प्रगति कर स्वाभिमानी तथा निरामय जीवन बना सकेगा। अपनी प्रदीर्घ, निःस्वार्थ, सर्वस्पर्शी राष्ट्रसेवा की अनुभूति का निचोड़ इस संदेश में उन्होंने सबको दे रखा है। श्री भगवान की कृपा से इस अमृतमय संदेश को ग्रहण कर हिंदू-समाज अमरत्व प्राप्त करे।

महामना पं. मालवीयजी का मैं भी अल्पांश में क्यों न हो, कृपापात्र रहा हूँ। 'अल्पांश में' कहने का कारण यह है कि उनकी कृपा का महासागर मेरे चारों ओर उमड़ा रहते हुए भी मैं अपनी सीमित क्षमता के कारण उसका कुछ अंश ही ग्रहण कर सका। उनसे मैंने कार्य की प्रेरणा पाई है और जिन पुरुषों के जीवनप्रकाश से मेरे जीवन को योग्य दिशा का कुछ ज्ञान हुआ, उनमें अनन्यसाधारण महत्त्व महामना पंडित मालवीयजी के आदर्श जीवन का ही है। असामान्य बुद्धि, गहन ज्ञान, सात्विक सरल जीवन, अमोघ कर्तृत्व, वक्तृत्व, अथाह स्नेह, दृढ़ धर्मश्रद्धा, अटूट भगवद्भक्ति, राष्ट्रहित दाक्ष्य, महान कर्मयोगी होने के कारण विषम स्थितियों में भी मनःसंयम, विर्लोभता, निःस्वार्थता, दुराग्रह, अहंकार-राहित्य आदि असंख्य

गुणों का एक ही व्यक्ति में समुच्चय दुर्लभ है। वह उनके जीवन में व्यक्त हुआ था। इसी कारण उनका व्यक्तित्व दैवी भाव से प्रकाशित हो रहा था, जिसकी मनमोहिनी आभा उनके मुखमंडल से चतुर्दिक आलोक प्रसारित करती रहती थी। उसी प्रकाश की एक अति छोटी सी किरण मुझमें प्रवेश कर गई, ऐसा मुझे नित्य भास होता है और उसी के तेज में अपना पथ देखता हुआ मैं प्रभुकृपा से चल पा रहा हूँ।

'मेरे महामना मालवीयजी' के पठन से अपने समाज के आबालवृद्ध बंधु उस दिव्य ज्योति को अपने अंतःकरण में समाकर समाज, राष्ट्र-सेवाव्रती बन सकेंगे। वैसे वे बनें और उनके अंतिम संदेश को आदेश मानकर समाज जागृत, स्वाभिमानी, संगठित, शक्तिशाली बनाने में जीवन-सर्वस्व से जुटें, यही इस पवित्र अवसर पर मेरी परमकृपालु सर्वशक्तिमय श्रीभगवान के चरणकमलों में प्रार्थना है। इति शम्।

३५. स्मृति मंदिर उद्घाटन में शुभाशीर्वाद भेजने की प्रार्थना

२१ मार्च १९६२

कामकोटिमठाधीश श्रीमद् शंकराचार्य जगदगुरु, कांचीपुरम्

स्वस्ति। श्रीमत्पमहंस-परिव्राजकाचार्य-पूज्यपाद-श्रीमदाचार्य-चरणेषु सविनयं सप्रश्रयं सांजलिबंधं च प्रणामसन्नतिं समर्पयं विज्ञाप्यते। यथा भवतां पुरस्तात् पूर्वं निवेदितमेव यत् १८८४ शकाब्दस्य चैत्रमासे शुक्लपक्षे प्रतिपदि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघस्य संस्थापकानां सुगृहीतनामधेयानां श्रीमतां डा. केशव बलिराम हेडगेवार महोदयानां स्मृतिमंदिरस्य समुद्घाटनसमारोहो भवितेति। तदानीं श्रीमद्भिःस्वामिभिरेतदभ्यूपेतमेव यत् ''शरीरेणानुपस्थितोऽपि मनसाऽऽसन्नः स्यामिति।'' ततो मंगलावसरस्यास्य कृते शुभाशीर्वादरूपं शब्दरूपमनुग्रहात्मकं यत्किचिंत् प्रेषणीयमिति भवदनुग्रहकांक्षिणा मया सविनयं प्रार्थ्यते। स्वामिपादानामाशिषा स्मृतिमन्दिरमिदं परस्परस्नेहमयात्मीयतार्थं स्वधर्माचरणार्थं सच्चरित्रमय-त्यागमय-राष्ट्रसमर्पितजीवनार्थं च समाजेऽस्माकं चिरकालं प्रेरणां स्फूर्तिं चोद्भावयतु इत्येतदर्थमेवेयं विज्ञप्तिः। इति शम्।

श्रीमदाचार्य चरणाम्भोजचंचरीकः

अर्थः-

स्वस्ति। श्रीमद्परमहंस परिव्राजकाचार्य पूज्यपाद श्रीमदाचार्य के श्रीचरणों में सादर सविनय करबद्ध प्रार्थना करता हूँ। वैसे आपको इसके

पूर्व ही विदित कराया था कि शके १८८४ के चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के संस्थापक श्रीमान् डा. केशव बलिराम हेडगेवार जी के स्मृतिमंदिर का उद्घाटन हो रहा है। आपने सूचित किया था कि उस समय शरीर से अनुपस्थित रहते हुए भी मन से उपस्थित रहूँगा। अतः आपसे विनम्र प्रार्थना है कि इस मंगल अवसर पर शुभाशीर्वादस्वरूप शब्द भेजकर हमें अनुग्रहीत करें। श्री स्वामिपादों के आशीर्वचनों से यह स्मृतिमंदिर परस्पर स्नेहपूर्ण आत्मीयता, स्वधर्माचरण सच्चरित्रमय एवं त्यागमय राष्ट्रसमर्पित जीवन के निर्माण के लिए समाज में सदा सर्वदा प्रेरणा व स्फूर्ति देता रहेगा।

श्रीमदाचार्य चरणकमल पर आबद्ध भ्रमर–

३६. स्मृतिमंदिर उद्घाटन का नम्र निवेदन

श्री कांचीकामकोटिपीठाधिप जगद्गुरु श्री शंकराचार्य   २४ जून १९६२

स्वस्ति। पूज्यपाद- श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य श्री कांचीकाम-कोटिपीठाधिपजगद्गुरु श्रीशंकराचार्यचरणेषु सश्रद्धप्रणतिततातिपुरस्सरं सानंदं निवेद्यते।

चैत्रे सुदि प्रतिपदि परमपूजनीय डाक्टर हेडगेवारमहाभागानां जन्मदिवसे यथानिश्चितं तदीयस्मृतिमंदिरं समुद्घाटयत। अस्य महोत्सवकृते भारतवर्षस्य समस्तप्रदेशतः प्रतिनिधिभूताः सहस्रशः स्वयंसेवकधुरीणाः नागपुरे संघकेंद्रस्थाने सोत्साहं सममिलन्। स्मृतिमंदिरोद्घाटनदिने प्रातः सायं च वेदमंत्रोच्चारणपूर्वकं समुचितोपचितिः विहिता। सायंकाले सार्वजनीनमहोत्सवावसरे चतुर्वेदपठनानन्तरं पूज्यचरणानां मंगलाशीर्वचनपत्रं मया सर्वेभ्यः श्रावयित्वा एतन्निमित्तं श्रीमद्भिःप्रेषितानां भूति-कुंकुम-मंत्राक्षतानां समर्पणेनैव स्मृतिमंदिरस्योद्घाटनं सञ्जातमिति प्रोद्घोषितम्। एवं विधेन विधिना स्मृतिमंदिरोद्घाटनमहोत्सवः संपाद्यत।

अस्य महोत्सवस्य वृत्तांतः विविधवृत्तपत्रेषु सविस्तरं प्रकाशमागतः। तानि वृत्तपत्रोद्धरणानि श्रीमता हरदासेन बालशास्त्रीणा पूज्यचरणानां निकटे प्रेषितानि स्युरिति आशासे।

कुशलमत्रत्यानां अस्माकं सर्वेषां भगवत्कृपाकटाक्षैः इति शम्।

श्रीमज्जगद्गुरु कृपाभिलाषी चरणरजः
(गोळवलकरोपाह सदाशिवसुतः माधवः)

हिंदी अनुवाद :

पूज्यपाद् के श्रीचरणों में प्रणाम कर सादर निवेदन है कि चैत्र शुद्ध प्रतिपदा को परम पूजनीय डाक्टर हेडगेवार जी के जन्मदिन पर पूर्व योजनानुसार उनके स्मृतिमंदिर का उद्‌घाटन संपन्न हुआ। इस समारोह हेतु केंद्रीय संघस्थान, नागपुर पर भारत के सभी खंडोपखंडों से प्रतिनिधि स्वरूप हजारों स्वयंसेवक बंधु एकत्रित हुए। उद्‌घाटन के दिन प्रातः सायं वेदमंत्रों का उद्‌गायन था। सायंकाल हुए सार्वजनिक उत्सव में चारों वेदों का पठन हुआ। उसके बाद मैंने श्री चरणों द्वारा प्रेषित मंगलाशीष का पत्र सब को पढ़ कर सुनाया तथा प्रेषित विभूति(श्री भस्म), कुंकुम व मंगलाक्षत के समर्पण से स्मृतिमंदिर के उद्‌घाटन की घोषणा की।

विभिन्न समाचार-पत्रों में इस कार्यक्रम का वर्णन सविस्तार प्रकाशित हुआ है। उन पत्रों की कतरने संभवतः श्री बालशास्त्री हरदास ने श्री चरणों में पहुँचाई होंगी।

भगवत्कृपा से यहाँ रहने वाले हम सब कुशलपूर्वक हैं।

श्रीमत्‌जगद्‌गुरु की चरणरज का कृपाभिलाषी
माधव सदाशिवराव गोलवलकर।

सार्वजनिक समारोह में परमाचार्यजी के मूल पत्र को पूजनीय गुरुजी ने पढ़कर सुनाया था, उसका संदेश निम्नानुसार था-

'भारतदेशे सनातनसंस्कृतिरक्षणार्थं राष्ट्रीयस्वयंसेवकसंघनामानं समाजं संस्थाप्य महानतमुपकारम् आरचितवतः श्रीकेशव- बलिरामहेडगेवारमहोदयस्य संस्मारकत्वेन नागपुरे तत्संघनिर्वाहकैः श्रीगोळवलकर महोदयादिभिः एकं मन्दिरं निर्माय तस्योद्‌घाटनमहोत्सवः अचिरात् संपत्स्यत इति विदित्वा भृशं संतुष्यामः। एतन्मन्दिरं श्रीहेडगेवारमहोदयस्य स्वधर्माचरणविशिष्टं त्यागमयं राष्ट्रसमुन्न- त्यर्थमर्पितजीवनं संस्मारयत् सर्वेषामपि भारतीयानां तन्मार्गानुसरणे प्रदीपायतां इति।''

अनुवाद :-

भारत देश में सनातन संस्कृति की रक्षा हेतु जिसने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ नाम का संगठन स्थापित किया, उस केशव बलिराम हेडगेवार महोदय के स्मरणार्थ उस संघ के श्री गोलवलकर जैसे कार्यकर्ताओं ने एक मंदिर का निर्माण किया है। उसका उद्‌घाटन महोत्सव अविलंब

संपन्न होनेवाला है, यह जानकर हम अतीव संतुष्ट हैं। यह स्मृतिमंदिर श्री हेडगेवार महोदय के स्वधर्मनिष्ठ, त्यागमय, राष्ट्र की उन्नति के लिए समर्पित जीवन का सबको स्मरण कराकर सभी भारतीयों को उसी मार्ग पर बढ़ने के लिए प्रचोदित करें।

३७. अनन्त की उपासना

श्री य.गो.नित्सुरे, पुणे   १० अगस्त १९६२

आपने 'नवे जग' नामक मासिक पत्रिका प्रारंभ करने का संकल्प किया है। उसमें ईश-कृपा से आपको सफलता प्राप्त हो।

भूतकाल की ओर वास्तविक दृष्टि रखकर देखें तो यह दिखाई देगा कि आज जिसे हम अद्यावत अर्वाचीन समस्याएँ कहते हैं, वे पहले भी अनुभव की गई हैं। परंतु आधुनिकता की भावना, कालप्रवाह के कारण प्रगति होने का आभास हमें ऐसा विचार नहीं करने देता। अनंतकाल में अपनी दृष्टि उसके अत्यल्प अंश पर पड़ सकती है, क्योंकि मानव का सामर्थ्य अत्यंत सीमित है। उसके अभिमान पर ही अनेक कल्पनातरंग उभरते हैं, ऐसा अनेक बार लगता है। अनंत का जितना खंड दृष्टि के सामने आ सकता है, उतने का भी संपूर्णतः आकलन करने की सामान्य मनुष्य की योग्यता नहीं रहती है। जो महाभाग दृढ़ प्रयत्नों से अनंत की उपासना कर, व्यक्तित्व विलीन कर स्वयं ही अनंत हो जाते हैं, उनकी बात अलग है। परंतु ऐसे प्रयत्न सफलतापूर्वक करने वालों पर विश्वास रखना 'नई दुनिया' के नए मानव को छोटापन लगता है। ऐसी अवस्था में दुरवस्था के अतिरिक्त कुछ हाथ नहीं लगता। आज के जगत् की संभ्रमावस्था इसका प्रत्यक्ष व प्रतिदिन का अनुभवगम्य प्रमाण है।

परंतु जिस प्रकार जन्मे हुए प्रत्येक प्राणी को मृत्यु-मुख में सदैव जाते हुए देखकर भी स्वयं चिरंजीवी होने के घमंड में मनुष्य व्यवहार करता है, उसी प्रकार यह प्रत्यक्ष प्रमाण अनुभव करते हुए भी उस ओर दुर्लक्ष कर अर्वाचीनता के आवेश में सर्वज्ञता का वृथाभिमान धारण कर वह सारा व्यवहार करता है। जगत् का यह भी एक सनातन आश्चर्य है।

तथापि समाजबंधुओं को कर्तव्यपरायण तथा पराक्रमोत्सुक करने का आपका यह संकल्प अभिनंदनीय है तथा आपकी सफलता की कामना करना मेरा सहज कर्तव्य है और वह मैं सहर्ष पूर्ण कर रहा हूँ। (मूल मराठी)

३८. मार्गदर्शनपरक दो ग्रंथ

आचार्य भद्रसेन जी, अजमेर   २० जुलाई १९६३

आपकी दो पुस्तकें 'प्रभु भक्त दयानंद तथा उनके आध्यात्मिक उपदेश' तथा 'योग और स्वास्थ्य' प्राप्त हुईं।

महर्षि श्रीमद्दयानंद जी का एक महत्त्वपूर्ण पहलू आपने सप्रमाण उपस्थित किया है। रुक्ष विद्वच्चर्चा से ही काम पूरा नहीं होता, उत्कट भक्ति और नामस्मरण ही सच्ची शांति दे सकता है, यह महर्षि के जीवन का कुछ मात्रा में उपेक्षित उपदेश अतीव महत्त्व का है। इसको व्यक्त कर आपने बड़ा उपकार किया है।

'योग और स्वास्थ्य' में सचित्र आसन-प्रयोग, प्राकृतिक एवं यौगिक चिकित्सा से रोगमुक्ति और स्वास्थ्य, उत्साह, बल, बुद्धि, मेधा आदि उपादेय गुणों की प्राप्ति आदि विषय विस्तार से, प्रामाणिकता से देने का आपका प्रयास है। आपने स्वयं अभ्यास किया है। उसके लाभों का स्वयं अपने लिए तथा अनेक आतुर बंधुओं के लिए अनुभव किया है। अतः यह ग्रंथ स्वास्थ्य-प्रेमी लोगों को मार्गदर्शक हो रहा है, यह स्पष्ट है।

मेरा आसनादि का ज्ञान नहीं के बराबर है, तथापि ग्रंथ पढ़ने से मन में विचार आया कि इसके द्वारा मैं आसनादि सीख सकूँगा। अभी के व्यस्त जीवन में इस हेतु कुछ अवकाश मिल सके तो आपके ग्रंथ को मार्गदर्शक रखकर प्रयत्न कर सकूँ– यह इच्छा है। अभी इस इच्छा के पूर्ण होने के कुछ भी लक्षण दिखाई नहीं देते, तथापि इच्छा और विचार विद्यमान रहने से संभवतः कुछ मार्ग निकल सकेगा।

३९. 'युगाचार्य विवेकानंद' के पुनः मुद्रण में सहयोग

स्वामी अपूर्वानंद जी महाराज, वाराणसी   ३० सितंबर १९६३

....नागपुर पहुँचते ही मैंने सेक्रेटरी कासखेडीकर के बारे में पूछताछ की । ....आज उन्होंने आपको दुबारा पत्र लिखा है।....उनसे मैंने पक्का किया है कि उन्होंने 'युगाचार्य विवेकानंद' के मुद्रण का विषय गंभीरता से लिया है। अक्तूबर अंत तक मुद्रण आदि कार्य पूरा हो जाएगा। मेरे एक मित्र ने पुस्तक के मराठी अनुवाद का प्रयास किया है। वे मुझसे मिलने आए थे। उनके साथ बैठकर पांडुलिपि पढ़ने की चेष्टा मैं कर रहा

हूँ। अपेक्षित स्तर का हो जाने पर हिंदी मूल तथा उसके मराठी अनुवाद दोनों का मुद्रण एक साथ हो सकता है। श्री श्री ठाकुर की कृपा से शेष सर्वकुशल है। (मूल अंग्रेजी)

४०. भगवद्गीता की शिक्षा हृदयंगम करना आवश्यक

श्री आंजनेय शास्त्री, नलगोंडा (आंध्र) १३ दिसंबर १९६३

आप तथा श्रीमद्भगवद्गीता सप्ताह समिति भगवद्गीता के अमर तथा जीवनदायी संदेश के प्रचार के लिए सब समविचारी लोगों द्वारा अभिनंदन के पात्र है।

यदि हमें इस संसार में सम्मानपूर्वक जीवित रहना है तो हमें अपने श्रेष्ठपूर्वज संतो, योगियों तथा दार्शनिकों द्वारा जो दिव्य भाव परंपरा से दिए हैं, उन्हें पुनः आत्मसात करना होगा। अपने जीवन की सर्वांगीण उन्नति के लिए निःस्वार्थ बुद्धि से कार्यरत होना होगा। इस दिशा में हमें प्रेरणा देने की शक्ति और ज्ञान गीता के उपदेशों में है।

इस ज्ञान का प्रसार करने में कार्यमग्न आप लोग स्तुति तथा अभिनंदन के पात्र है।

मुझे आशा है कि आपके प्रयत्न सब लोगों को संपूर्ण निःस्वार्थ बुद्धि तथा ईश्वर में अविचल श्रद्धा के साथ आपके कार्यक्रम में सम्मिलित होने की प्रेरणा देंगे। (मूल अंग्रेजी)

४१. त्रैत सिद्धांत का सफलतापूर्वक मंडन

स्वामी ब्रह्मानंदाचार्य जी, अहमदाबाद १९ दिसंबर १९६३

....आपने अनुग्रहपूर्वक दी हुई पुस्तकें पढ़ीं। अंतिम सत्य के संबंध में अनेकों के अनेक मत हैं। सभी बहुत तर्क से, युक्ति-युक्त रीति से अपने मत का मंडन तथा अन्यों का खंडन करते हैं। सामान्य व्यक्ति यह सब पढ़कर असमंजस में पड़ता है, तो भी सत्यान्वेषण आवश्यक है और इस हेतु सब प्रयत्न श्रेयस्कर हैं। आपने त्रैत सिद्धांत का संवाद रूप में बहुत अच्छा समर्थन किया है। अब सत्य को पाकर जीवन सफल करने हेतु प्रत्यक्ष दैनंदिन जीवन कैसा चलाया जाए, कर्म उपासना किस-किस प्रकार से हो, इसका मार्गदर्शन वाचकों के लिए अपेक्षित दिखता है। व्यक्ति के

नाते, परिवार के घटक के नाते, समाज-राष्ट्र के अंग के नाते किस प्रकार, किन सद्गुणों से युक्त होकर कौन से कार्य करने चाहिए और मन की शक्तियों को कैसे समाहित करना चाहिए, इस संबंध में लोगों को पथ-प्रदर्शन की आवश्यकता है। त्यागी, ज्ञानी, तत्त्वदर्शी महात्माओं की ओर से ही यह प्राप्त हो सकता है।

आप जैसे महात्माओं से यही अनुग्रह पाने की सब प्रतीक्षा में हैं। शीघ्र ही इस ओर आपकी कृपादृष्टि पड़े– यही श्रीभगवच्च्चरणों में प्रार्थना कर रहा हूँ।

४२. रास पंचाध्यायी, महान आध्यात्मिक ग्रंथ

डा. भगवानदास गुरुबक्सानी,
दि सिंध नवविधान ट्रस्ट, खार, मुंबई १६ जनवरी १९६४

अक्तूबर १९६४ में दिल्ली के मेरे मित्र श्री केदारनाथ साहनी ने स्व. भाई कृपालसिंह लिखित 'The Divine Cowherd and the Divine Milk-maids' नामक ग्रंथ पढ़ने को दिया था। उस ग्रंथ का ध्यानपूर्वक पठन करने पर मुझे यह कहने में अतीव आनंद होता है कि उसके पठन से मुझे उच्च कोटि का आनंद तथा भावावस्था प्राप्त हुई।

'रास पंचाध्यायी' पर आधारित यह ग्रंथ अत्यंत गूढ़ है, लेकिन असंख्य विशुद्ध तथा परमपवित्र भक्तों की प्रेरणा है। इसका गूढ़ार्थ अत्यंत भावुकता तथा अंतःस्फूर्त भक्तिभावना से ग्रंथकर्ता ने प्रतिपादित किया है। मुझे लगता है कि जो कोई इस ग्रंथ को ध्यानपूर्वक पढ़ेगा, निश्चय ही उसे वृंदावन की गोपियों के दिव्य आनंद का आस्वाद प्राप्त होगा। लेखक अब हमारे बीच में नहीं रहे, अतः वे हमारे सादर धन्यवाद स्वीकार नहीं सकते, तथापि इस दिव्य ग्रंथ के माध्यम से मुझे जो शांति तथा आनंद का अनुभव प्राप्त हुआ, उसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। (मूल अंग्रेजी)

४३. विश्व हिंदू सम्मेलन की आवश्यकता

स्वामी चिन्मयानंदजी, मुंबई ०४ अप्रैल १९६४

हमारे पुराने साथी प्रचारक श्री एस.एस.आप्टे जी पर एक छोटा सा कार्यभार सौंपा गया है। उसी संबंध में वे आपसे विचार-विनिमय करेंगे।

विश्व के विभिन्न देशों में बसे हुए हिंदुओं के प्रतिनिधियों का सम्मेलन आयोजित करने की कल्पना सामने आई है।

विदेशों में रहनेवाले हिंदुओं का अपने मूल स्रोत से संबंध नहीं रहा है। भारत से अखंड रूप से धर्म और संस्कृति का जीवनरस प्राप्त होने से वंचित रहने के कारण वे विदेशी जीवन-पद्धति की ओर बहते जा रहे हैं। उनके मन में हिंदू जीवन-पद्धति के प्रति दृढ़ विश्वास तथा भ्रातृभाव का पुनर्जागरण करने के लिए तथा इस अवस्था को बदलने के लिए क्या उपाय किए जा सकते हैं, इस दृष्टि से विचार-विमर्श करने के लिए उनका एक सम्मेलन होना आवश्यक है, भले ही उन्होंने कोई भी देश रहने के लिए चुना हो। एतदर्थ मूल प्रेरणा भारत से ही मिलनी चाहिए। इस संबंध में विचार-विनिमय करने के लिए श्री आप्टे जी को देशभर के अपनी अपरिहार्य आध्यात्मिक श्रेष्ठ परंपरा में विश्वास रखनेवाले गणमान्य महानुभाव, जो इस कार्य में सक्रिय सहभागी हो सकते हैं तथा जिनका केवल आशीर्वाद ही इस कार्य को सफल बना सके, उनसे भेंट करने का दायित्व सौंपा है। इस प्रारंभिक सम्मेलन से आगे क्या किया जा सकता है तथा इस कल्पना को कैसे स्पष्टरूप से साकार किया जा सकता है, इसके बारे में विचार होना चाहिए। आपके सहयोग, परामर्श तथा आशीर्वाद की अपेक्षा से मैंने श्री आप्टे जी को इसकी कल्पना सविस्तार स्पष्टीकरण करने हेतु आपके पास भेजा है। (मूल अंग्रेजी)

४४. पुरी गोवर्धन पीठ का समुद्धार

५ अप्रैल १९६४

श्रीमान् जगद्गुरु श्री शंकराचार्य महाराज, श्री द्वारका शारदापीठ

मेरे निरंतर प्रवास में रहने के कारण मेरे मित्र श्री बच्छराजजी व्यास ने मेरी ओर से आपके पत्र (७ मार्च १९६४) का उत्तर भेजा था। अभी तक उसकी स्वीकृति तथा उस संबंध में आगे क्या करणीय है, इसका मार्गदर्शन प्राप्त नहीं हुआ है। उसकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

श्री जगन्नाथपुरी के मठ की दृष्टि से जो योजना, भवन निर्माण, श्री का पट्टाभिषेक, यज्ञकार्य आदि आगामी दो-तीन महीनों के पश्चात् कार्यान्वित होनी है। उसके धन-संचय तथा सर्व कार्यक्रमों का निरीक्षण किसी दायित्वपूर्ण तथा आचार्यभक्त व्यक्ति के द्वारा होना तथा ऐसे व्यक्ति को सर्वसंचालन करने के लिए नियुक्त करना आवश्यक प्रतीत होता है। मुझे

एक नाम स्मरण होता है। उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के स्थान से सेवानिवृत्त श्रीमान् भुवनेश्वरी प्रसाद सिन्हा अब कामों से मुक्त हैं। आचार्यभक्त हैं। पुरी पीठ के सच्छिष्य हैं। उन्हें स्नेहपूर्ण आदेश यदि महाराज की ओर से जाए, तो वे सहर्ष इस कार्य का भार उठाएँगे। प्रत्यक्ष सब कामों की ओर ध्यान देनेवाले श्रेष्ठ व्यक्ति की उपलब्धि से संकल्पित कार्य सफलतापूर्वक संपन्न हो सकेगा।

अपने बंधु नागपुर की अवस्था को ध्यान में रखकर पूरा प्रयत्न कर रहे हैं और करेंगे।

संपूर्ण कार्यक्रम के लिए नियामक व्यक्ति का भार श्रीमान् भुवनेश्वरी प्रसाद सिन्हा ही उत्तम रीति से निर्वाह कर सकेंगे, यह सोच कर सेवा में यह लिखा है।

४५. विश्व हिंदू सम्मेलन की संयोजक समिति गठित

श्रीमत् स्वामी चिन्मयानंदजी २८ अप्रैल १९६४

मुझे और मेरे मित्रों को जो कल्पना सूझी तथा जिसे हिंदू महासभा के नेताओं ने उनकी विशिष्ट शैली में स्वीकार किया, उससे मेरा अंतःकरण अभिभूत हो गया तथा बाद में वह प्रेरणा बन गई। 'तपोवन प्रसाद' में आपके विचार पढ़ने का मुझे अवसर मिला। मुझे दिखाई दिया कि इस कल्पना के पीछे दैवी वरद्हस्त तथा साधुसंतों का आशीर्वाद है, इसलिए इस कल्पना को साकार करने के लिए मैंने साहस बटोरा।

श्री आप्टे जी इस दिशा में कार्य कर रहे हैं। वे विश्व हिंदू सम्मेलन का समय, स्थान तथा सम्मेलन में प्रस्तुत किए जानेवाले विषय निश्चित करने के लिए प्रमुख लोगों की बैठक आमंत्रित करेंगे, तदुपरांत संयोजन समिति गठित कर, उस समिति द्वारा विश्व के विभिन्न देशों में बसे हुए अपने बंधुओं को निमंत्रित किया जाएगा।

मुझे संदेह नहीं कि आपके मार्गदर्शन तथा आशीर्वाद से यह काम अवश्य सफल होगा। विदेशों के विचित्र तथा विपरीत वातावरण में रहनेवाले लोगों से सदैव संपर्क स्थापन कर प्राचीन संस्कार तथा सद्गुण, जिन्हें विदेश में प्रायः नष्ट होने का धोखा है, उनके पुनर्जागरण के लिए एक स्थायी व्यवस्था का निर्माण किया जाएगा। (मूल अंग्रेजी)

४६. विश्व हिंदू सम्मेलन की प्राथमिक बैठक

श्रीमत् स्वामी चिन्मयानंदजी, मुंबई — ६ जुलाई १९६४

जून महीने के आखरी सप्ताह मे श्री आप्टे जी मुझे मिले। उन्होंने बताया कि २९-३० अगस्त को आपके सांदीपनी साधनालय में विश्व हिंदू सम्मेलन के विषय में विचार करने लिए बैठक बुलाई गई है।

कार्यक्रम की रूपरेखा निश्चित करने के लिए यह बैठक होने के कारण, उसमें किसी भी प्रकार का विज्ञापन तथा लोगों में प्रदर्शन करने की आवश्यकता नहीं। आपका भी यही विचार है। इसका अर्थ यह है कि मेरे विचारों को आपका समर्थन तथा आशीर्वाद प्राप्त है। आध्यात्मिक अनुग्रह-युक्त सांदीपनी साधनालय का शांत और निर्मल वातावरण इस बैठक के लिए आदर्श स्थान है। व्यवस्था इत्यादि के विषय में चर्चा करने के लिए मैंने श्री आप्टे जी को आपसे मिलने के लिए कहा है। इस उद्देश्य से वे शीघ्र ही मुंबई जाएँगे– ऐसी मुझे आशा है। बैठक के पूर्व आपका पवित्र सहवास प्राप्त करने का मैं प्रयत्न करूँगा। अपने अगले डेढ़ महीनों का कार्यक्रम मुझे भेजने की कृपा करें। (मूल अंग्रेजी)

४७. धर्माचार्य धर्मप्रसार का कार्य करें

श्री स्वामी शंकरानंद जी सरस्वती,
श्री योगानंदेश्वर मठ, कृष्णराज नगर, मैसूर — ११ जुलाई १९६४

वास्तविक परिस्थितियाँ वैसी ही हैं, जैसा आपने लिखा है। हम अपने समाज की आलोचना उन दोषों के लिए नहीं कर सकते। कारण केवल कुछ मठों के प्रमुख ही नहीं, किंतु विभिन्न पंथों के धर्मगुरुओं ने धर्मश्रद्धा को जागृत रखने का अपना नैसर्गिक कर्तव्य– व्यक्तियों की केवल वैयक्तिक मुक्ति ही नहीं, अपितु समाजोत्थान के लिए धर्म के प्रति दृढ़ आस्था जागृत करना तथा उचित कर्म करने हेतु– मार्गदर्शन पूरा नहीं किया। इस अपयश से ही समाज की वर्तमान दयनीय अवस्था हुई है। ऐसा लगता है कि संपूर्ण विनम्रता से इस कार्य को छोटे रूप में प्रारंभ कर देना चाहिए। आपने पत्र में लिखा है, उसके अनुसार आवश्यक इप्सित आकार में यह कार्य बढ़ सकता है। यथासंभव इस कार्य को प्रारंभ तो करना ही होगा।

विश्व हिंदू सम्मेलन बुलाने की दृष्टि से श्री आप्टे जी मुंबई जैसे स्थान पर संसार के विभिन्न महानुभावों से मिलने के लिए संपर्क प्रस्थापित

कर सम्मेलन के प्रमुख विषयों पर चर्चा करने का प्रयास कर रहे हैं तथा विदेशों में रहनेवाले अपने बांधवों से दृढ़ संबंध प्रस्थापित करने की इच्छा से एक स्थायी समिति गठित करने की संभावना पर विचार कर रहे हैं। इस विषय में उन्होंने आपको लिखा होगा। (मूल अंग्रेजी)

४८. जीवन यापन में प्रभुभक्ति की सत्प्रेरणा

श्रीमद्‌जगद्‌गुरु श्री रामानुजाचार्य श्री राघवचार्यजी महाराज,
आचार्य पीठ-बरेली (उ.प्र) २५ अगस्त १९६४

आपका २२ अगस्त १९६४ का कृपापत्र प्राप्त हुआ। श्री आचार्य पीठ द्वारा भगवान श्रीकृष्ण की जयंती का समारोह वार्षिकोत्सव के रूप में मनाया जाता है। इस वर्ष भी सोत्साह सब संकल्पित कार्यक्रम संपन्न होकर उपस्थित सज्जनों में प्रभुभक्ति का उत्कट भाव जागृत होकर तद्‌नुरूप जीवनयापन की सत्प्रेरणा मिलेगी ऐसा विश्वास है। भगवद्‌भक्ति 'स्मरणं कीर्तन' आदि नवविधा वर्णित है। साथ ही प्रत्यक्ष श्रीभगवान श्रीकृष्ण का 'स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य' का मार्गदर्शन है। स्वदेश, स्वधर्म के हेतु निःस्वार्थ कर्म करने की ओर भी संकेत हैं, ऐसा दिखता है। श्री भगवत्कृपा से यह निश्चय अपने समारोह से जन-जन में जागृत हों।

४९. महात्माओं के आशीर्वाद से ही काम कर रहा हूँ

श्री स्वानंद जी महाराज,
अध्यक्ष, आध्यात्मिक उत्थान मंडल, जबलपुर १७ सितंबर १९६४

वृत्तपत्र में मेरे भाषण का वृत्त क्या छपा है, मैंने देखा नहीं है। परंतु धर्म के प्रति अनास्था का विचार मेरे मुँह से निकलना संभव नहीं है। जैसा आपने भी ठीक माना है, साधुओं के एक वर्ग के संबंध में यह कहा गया था कि उनकी गतिविधियों से उनके उपदेशों का प्रभाव नहीं पड़ सकता। सभी साधुओं के प्रति ऐसा मैं कैसे कह सकता हूँ, जबकि अनेक महात्माओं के आशीर्वाद के फलस्वरूप ही मैं जो अल्प-स्वल्प काम करता हुआ दिखाई देता हूँ, सो कर सकता हूँ। उनके अनुग्रह के अभाव में मेरा मूल्य शून्य से भी निम्न स्तर पर आ जाता है, इसको समझता हूँ। इतना ही मेरा यदि कुछ गुण हो, तो है।

धर्म के संबंध में मैंने केवल यही कहा कि अनेक पंथ-संप्रदायों में वह विभाजित हो गया है। व्यक्तिनिष्ठ, ग्रंथनिष्ठ होने के कारण उनके अनुयायियों की श्रद्धा केंद्रीभूत करना दुष्कर हुआ है। प्राचीन काल में सबके केवल वेदनिष्ठ होने के कारण श्रद्धाकेंद्र भी एक ही था। अब वह ईप्सित स्थिति अनुभव में नहीं आती। सभी पंथों में एक ही भगवान है, यह अद्वैत सिद्धांत के बल पर कहा जा सकता है, परंतु आज समाज की स्थिति, शिक्षा-दीक्षा को देखकर यही कहना पड़ता है कि ऐसे सूक्ष्म चरम सत्य को समझकर तदनुसार जीवन गठित करने की पात्रता उसमें नहीं के बराबर है। असामान्य व्यक्तियों का विचार यहाँ अभिप्रेत नहीं है। ऐसे सामान्य स्थूल बुद्धि के व्यक्तियों से बने हुए समाज को धर्मनिष्ठ, राष्ट्रनिष्ठ, चारित्र्यसंपन्न करने के लिए वेद काल के ऋषि-महर्षियों से लेकर आज तक सब महात्माओं ने जिसकी रजःकण को भी अति पवित्र अनुभव किया, जिसे स्वर्गादपि गरीयसी धर्मभूमि, कर्मभूमि, मोक्षभूमि अनुभव किया, उस स्थूल दृष्टि से दिखनेवाली, स्थूल इंद्रियों से अनुभव में आनेवाली, जगज्जननी के साक्षात् स्वरूप को व्यक्त करनेवाली मातृभूमि के प्रति आज के सुप्त भावों को जगाना ही आवश्यक तथा सद्यःपरिणामकारी दिखता है। इस भाव से ही आगे राष्ट्र का व्यवच्छेदक गुण जो श्रेष्ठ सनातन धर्म, उनके प्रति श्रद्धा का निर्माण होकर अभीप्सित समाज निर्माण हो सकेगा, इन विचारों को ही मैंने व्यक्त किया था। इसमें त्रुटि हो सकती है, वह मेरी स्थूल बुद्धि के कारण हुई होगी, धर्म के प्रति अश्रद्धा के कारण नहीं।

तथापि मेरे भाषण के वृत्त से आपको मानसिक कष्ट हुआ है, उसके लिए आपके चरणों में वंदन कर क्षमा याचना करता हूँ। आगे प्रयत्न करूँगा कि मेरे कहने से कोई भ्रम उत्पन्न न हो।

५०. धर्माचार्यों द्वारा समाज का मार्गदर्शन हो

श्री एम्.वी.कृष्णमूर्ति, कांचीपुरम् २० दिसंबर १९६४

मुझे लगा कि रोमन केथोलिक चर्च की विगत कुछ शताब्दियों से चल रही गतिविधियों के विरुद्ध प्रदर्शन कर अपना रोष व्यक्त करना, सदभिरुचि का द्योतक नहीं है। अपने लोगों में अपने महान धर्म के प्रति दृढ़ विश्वास जागृत करना ही हमें उचित लगा। इसलिए मैंने युकेरिस्ट कांग्रेस तथा राजनैतिक और धार्मिक उद्देश्य से प्रेरित पोप की भेंट के विषय में एक शब्द भी नहीं कहा। इस प्रश्न के विषय में धर्म जागृति करना यह

धर्माचार्यों का का कार्य है। उनके दिखाए हुए मार्ग पर यथाशक्ति चलना हमारा कर्तव्य है।

श्रद्धेय शंकराचार्य के चरणों में अपने श्रद्धासुमन अर्पण करने का जब भी मुझे समय मिलेगा, मैं उनसे इस जटिल प्रश्न के विषय में मार्गदर्शन चाहूँगा। (मूल अंग्रेजी)

५१. देशकालानुसार उचित व्यवस्था के लिए अनुरोध

(शांकरमठाचार्यों को भेजा पत्र)

२० दिसंबर १९६४

पूज्यपाद श्रीमद्जगदगुरु,पीठाधीशश्रीमच्छकराचार्यमहाराज जी की सेवा में शतशः साष्टांग प्रणाम।

इन दिनों अपने समाज में जो उथलपुथल हो रही है, अनेकों के मन में जो संदेहात्मक विचार से उत्पन्न अस्थिरता तथा धर्म के प्रति निष्ठा की शिथिलता दिख रही है, वह श्री चरणों में विदित ही है। विशेषतः जातिविशिष्ट तथा आनुवंशिक अस्पृश्यता को लेकर जो प्रक्षोभ निर्माण हुआ है, वह सर्वविदित ही है। इस प्रक्षोभ-निर्माण में यद्यपि अनेक राजनैतिक स्वार्थी तत्त्वों ने बवंडर खड़ा करने का प्रयत्न किया है, उसकी ओर दुर्लक्ष्य करते हुए भी संपूर्ण समाज-धारणा में बढ़ रही विच्छृंखलता तथा धर्मग्लानि का गंभीरता से विचार करना आवश्यक प्रतीत होता है।

समाज की सुव्यवस्थित धारणा कर समाज को सुगठित शक्तिसंपन्न तथा इहपरत्र की कल्याण-प्राप्ति के लिए समर्थ करनेवाले धर्म की कुछ रीतियों में इस लक्ष्य को ध्यान में रखकर परिवर्तन करने हेतु नवीन रीतियों की स्थापना करना, पुरानी अनावश्यक या अहितावह रीतियों को छोड़ देना विगतकाल में आवश्यकतानुसार पूर्वाचार्यों द्वारा किया गया है। आगे भी देशकाल-परिस्थिति को सोचकर आवश्यक रीतियों का स्वीकार व अनावश्यक या अहितकारक रीतियों की उपेक्षा करने की दृष्टि से उचित व्यवस्था देने का तत्कालीन आचार्यों का, धर्मगुरुओं का अधिकार भी पूर्वसूरियों ने, ऋषियों ने स्पष्ट तथा निर्देशित किया है।

इन निर्देशों के अनुसार आज के हिंदू समाज के पूज्यपाद धर्माचार्यों ने देशकाल-परिस्थिति का गंभीरता से विचार करके समाज धारणा के हेतु

व्यवस्था देना तथा अपने-अपने अधिकार क्षेत्र में उस व्यवस्था का अविलंब पालन करने का आदेश प्रसारित करना उनके अधिकार की ही बात है। कौन सी व्यवस्था देना उचित होगा– इस संबंध में कुछ सुझाव श्रीचरणों में रखना मेरे अधिकार के बाहर की बात है। मैं तो नम्रतापूर्वक इस हेतु प्रार्थना मात्र करता हूँ। आगे पूज्य श्री चरणों का जो आदेश होगा, वही हम लोगों को शिरोधार्य होगा। इति।

५२. अन्यान्य संप्रदायों के मठाधीशों को भेजा पत्र

२० दिसंबर १९६४

पूज्यपाद श्री आचार्यचरणों में साष्टांग नमस्कार।

आजकल अपने यहाँ अस्पृश्यता (जातीय वा आनुवंशिक) के विषय में जो कुछ विवाद और विक्षोभ, वातावरण में फैल रहा है, वह पूज्य आचार्यचरणों को विदित ही है। कुछ समय से ही अपने समाज में धर्म की निष्ठा कम हो रही है तथा सामाजिक विशृंखलता बढ़ रही है। कुछ हिंदुत्वविरोधी एवं स्वार्थी तत्त्वों के द्वारा हेतुपूर्वक चलाए हुए आज के विक्षोभ के कारण अपने समाज के अंग-उपांगों एवं जाति-उपजातियों में अविश्वास तथा पृथकता का भाव वृद्धिंगत हो रहा है। वास्तव में समाज को सुसंगठित एवं सामर्थ्यसंपन्न बनाकर अभ्युदय और निःश्रेयस प्राप्त करा देना– यही धर्म का हेतु और कार्य है। अपने मनीषी पूर्वजों ने समय-समय पर समाजधारणा के लिए कालानुकूल संशोधन करने के विषय में आदेश और अधिकार निर्दिष्ट किए हैं।

गत कुछ शतकों से सामाजिक पुनर्व्यवस्था की आवश्यकता प्रतीत होती आई है। द्रुतगति से काल परिवर्तित हो रहा है। अकल्पित परिस्थितिजन्य आघात एवं असह्य भार के कारण समाज के पारस्परिक स्नेहबंधन टूटने की अवस्था में आ पहुँचे हैं। ऐसी दशा में समय का आह्वान स्वीकार कर समग्र हिंदू समाज को अपने आचार-व्यवहार के विषय में नवजीवन देनेवाली और आत्मविश्वास निर्माण करनेवाली व्यवस्था प्रदान करना, यह आज का प्रथम अनिवार्य कर्तव्य हो गया है।

आचार्यचरणों से हमारी प्रार्थना है कि इस कठिन समय में अपने धर्म के जगद्गुरु एवं आचार्यों ने सामूहिक रूप से समाज का सम्यक् मार्गदर्शन किया तो न केवल वह युगप्रवर्तक सिद्ध होगा, प्रत्युत अपने इस सनातन समाज को चिरकाल तक नवजीवन देने में भी सफल होगा।

कदाचित् अन्य आचार्य इस तरह से व्यवस्था और आदेश देने के लिए सिद्ध न हों, तो भी आप अपने-अपने आम्नाय एवं सांप्रदायिक क्षेत्र में यदि आदेश एवं व्यवस्था दें, जिस विषयमें आपको संपूर्ण अधिकार है, तो वह बहुफलदायी सिद्ध होगा।

५३. भव्य कार्यक्रम में नेपाल-नरेश का संदेश

पूज्यपाद स्वामी अमूर्तानंदजी १६ जनवरी १९६५

..... श्री नेपाल-नरेश को निमंत्रित किया था। उन्होंने स्वीकृति भी दी थी, परंतु संभवतः अपने भारतीय शासन चलानेवाले नेताओं की ओर से बाधा उत्पन्न की गई और नेपाल नरेश नहीं आ सके। नागपुर तथा आसपास के असंख्य लोग उनका दर्शन पाने के लिए अत्यधिक उत्सुक थे, परंतु वह हुआ नहीं। अपना कार्यक्रम ऐसा होने पर भी बहुत भव्य हुआ। श्री नेपाल-नरेशजी ने इस कार्यक्रम की दृष्टि से अपना संदेश रूप भाषण तैयार किया था, उसकी एक मुद्रित प्रति उन्होंने भेजी थी और ऐसी इच्छा व्यक्त की थी कि वह पढ़कर सुनाया जाए। तद्नुसार डा. आबाजी थत्ते ने उसका हिंदी अनुवाद पढ़ा।

५४. असमर्थता के लिए क्षमायाचना

श्रद्धेय माँ योगशक्ति, दिल्ली ०६ जुलाई १९६५

.... संदेश के बारे में कहा जाए तो यह मेरे लिए इसलिए बहुत दुष्कर है, क्योंकि मेरी अत्यल्प क्षमता मुझे ज्ञात है। मैंने लिखने का अनेक बार प्रयास किया, परंतु हर समय भीतर में स्थित किसी अंतर्यामी ने मुझे लिखने से यह प्रश्न पूछकर परावृत्त किया कि 'क्या ऐसी संस्था के लिए संदेश लिखने जैसे आप स्वयं को महत्त्वपूर्ण मानते हो?' इस विषय में मेरी असमर्थता के लिए क्या मैं आपसे क्षमायाचना कर सकता हूँ?..(मूल अंग्रेजी)

५५. पुण्यात्माओं के प्रयत्न

श्रद्धेय स्वामी चिन्मयानंदजी ०७ जुलाई १९६५

.... विश्व हिंदू परिषद्, के सम्मेलन के आयोजन में हो रही प्रगति के बारे में पूर्ण जानकारी श्री आप्टे जी ने आपको अवश्य ही दी होगी।

मैसूर की बैठक में मैं उपस्थित न हो सका। आने की आवश्यकता भी नहीं थी, क्योंकि अब तो अनेक सुप्रतिष्ठित श्रेष्ठ पुरुषों ने मिलकर कार्यभार स्वीकार किया है और मैं अपनी आत्मविलोपी स्वाभाविक अवस्था में लौट सकता हूँ। परिषद् में तो मैं अवश्य उपस्थित रहने का प्रयास करूँगा और आप जैसे समुन्नत पुण्यात्माओं के प्रयत्नों के फलस्वरूप सफलतापूर्वक प्राप्त ध्येयसिद्धि को स्वयं देखूँगा।

अब आप, विदेश-प्रवास पूर्ण कर, फिर से लौट आए हैं। इसलिए कार्यकर्तागण आपकी प्रेरणाशक्ति के द्वारा उत्साह से काम करने में उत्स्फूर्त होंगे। मुझे कहा गया है कि आपने चिन्मय मिशन के सभी केंद्रों को सूचित किया है कि प्रत्येक काम में, आर्थिक दृष्टि से भी, वे स्वयंस्फूर्त सहयोग करें। मुझे विश्वास है कि सभी क्षेत्रों से आपको उदारतापूर्ण सहकार्य शीघ्र ही प्राप्त होने के कारण आवश्यक सभी व्यवस्थाओं का निर्माण सुविधापूर्वक होगा।

मैं आशा करता हूँ कि इस विदेश-यात्रा का आपके शरीर-स्वास्थ्य पर विपरीत असर नहीं हुआ है। स्थूल शरीर से परे आपकी शक्ति के विषय में मुझे पूर्ण विश्वास इसलिए है, क्योंकि वह श्रेष्ठ तत्त्व आपके अंतर्बाह्य में विराजमान है। .... (मूल अंग्रेजी)

५६. धुंडा महाराज को सश्रद्ध प्रणाम

आदरणीय श्री सोनोपंत दांडेकर, २८ अक्तूबर १९६५

..... श्रद्धेय श्री धुंडा महाराज देगलूरकर की षष्ठ्यब्दिपूर्ति का समारोह एवं उस उपलक्ष्य में श्री ज्ञानेश्वरी सुवर्ण महोत्सव पंढरपुर में आज से प्रारंभ होने जा रहा है। ....इन्हीं दिनों नागपुर में अपने संघ के केंद्रीय कार्यकारी मंडल की बैठक आयोजित है। इसलिए मुझे यहीं रहना आवश्यक है। अतः समक्ष उपस्थित रहकर श्री धुंडा महाराज को प्रणाम कर उनका अपनी सीमित शक्ति-बुद्धि के अनुसार सम्मान किया जाए– यह मन की इच्छा मन में ही दबाकर रखनी पड़ती है और यह पत्र भेजकर ही उनके चरणों में सश्रद्ध प्रणाम अर्पण कर संतोष मान लेना पड़ता है।

श्री प्रभु-कृपा से सब संत-मंडली की उपस्थिति में कार्यक्रम सानंद सोत्साहपूर्ण संपन्न होगा ही एवं दिग्दिगंत में सात्विक भक्ति की सुगंध महकेगी। उन सब भगवद्भक्तों को मन ही मन प्रणाम कर उसका अल्पांश

भी मुझे प्राप्त हो, यह श्री परमेश्वर के चरणों में प्रार्थना कर पत्र पूर्ण करता हूँ। .... (मूल मराठी)

५७. गुरुभाई के समक्ष कार्य-निवेदन

श्रीमत् स्वामी अमूर्तानंदजी महाराज ६ फरवरी १९६६

....असम प्रांत में ११ जनवरी को प्रातः नौगाँव जाने के लिए सिद्ध हुआ ही था कि मान्यवर श्री लालबहादुर शास्त्रीजी के आकस्मिक देहावसान का दुःखद वृत्त प्राप्त हुआ। अतः असम का शेष प्रवास वहीं छोड़कर दिल्ली आने के लिए चला। संयोग से तेजपुर से गौहाटी, वहाँ से कोलकाता तथा कोलकाता से दिल्ली के लिए विमान में स्थान मिलता गया और उसी दिन सायंकाल दिल्ली पहुँच सका। रात्रि में ही प्रधानमंत्री-निवास पर गया। प्रातःकाल शवयात्रा प्रारंभ के समय भी उपस्थित रह सका। दूसरे दिन १३ जनवरी को श्रद्धेय राष्ट्रपति के दर्शन हुए और १६ जनवरी को मैं प्रयाग गया।

दिनांक २२,२३ तथा २४ जनवरी प्रातः विश्व हिंदू परिषद् के सम्मेलन में उपस्थित था। प्रतिनिधियों की संख्या आदि की दृष्टि से कार्यक्रम बहुत अच्छा हुआ। द्वारका तथा पुरी के शंकराचार्य महाराज, मध्व, रामानुज, निंबार्क मतों के श्रेष्ठ पुरुष, जैन, बौद्ध, सिख आदि के कुछ महात्मागण उपस्थित थे। उनके आशीर्वाद एवं मार्गदर्शन से सब उपस्थित जनसमूह आनंदित एवं संतुष्ट हुआ। आगे कार्य कैसा चलेगा– यही देखना है? कार्यक्रम में मेरा योगदान केवल एक सेवक का ही था।

कुंभ मेला भी बहुत बड़ा था। तो भी असुविधाएँ अपेक्षा से बहुत कम थीं। दुर्घटना भी नहीं हुई, यह भी प्रभुकृपा का फल है।

....३० जनवरी को प्रातः पणजी गया, वहाँ मेरा प्रथम बार ही जाना हुआ। सितंबर में जाना था, किंतु युद्ध निमित्त भूतपूर्व प्रधानमंत्री जी ने एक बैठक में सम्मिलित होने के लिए बुलाने के कारण ये तीन स्थान छोड़ने पड़े थे– कोल्हापुर, रत्नागिरि, पणजी। पणजी में इतना बड़ा समुदाय एकत्रित होकर शांति से पूर्ण समय बैठने का यह संभवतः प्रथम ही योग था।

श्री श्री ठाकुर की कृपा से पूरे प्रवास में स्वास्थ्य अच्छा रहा है। श्री श्री ठाकुर की कृपा से आपका शरीर स्वस्थ होगा, ऐसा विश्वास है। एक

महत्त्व की बात हुई है। विश्व हिंदू परिषद् के लिए माननीय श्री बालासाहेब देवरस, माननीय श्री आप्पाजी जोशी मोटर से गए थे। आग्रह से श्री कृष्णराव मोहरीर को भी ले गए थे। त्रिवेणी स्नान, परिषद् में उपस्थिति, पश्चात् श्री काशी में भगवान विश्वनाथ-दर्शन आदि का लाभ उन्हें हुआ। उनका स्वास्थ्य ठीक है। नित्य के अनुसार प्रसन्न हैं।

५८. अशोभनीय शब्दप्रयोग भी प्रसाद

०७ फरवरी १९६६

श्री महाबल भट्ट, दुरवासपुरा, कर्नाटक

द्वारका शारदापीठ के श्रीमज्जगद्गुरु शंकराचार्यजी महाराज के मंत्री महोदय

.... प्रयाग-सम्मेलन में अनेक त्रुटियाँ रही हैं, इसकी हम सबको कुछ जानकारी है ही। सब कार्यकर्ताओं की सीमित क्षमता के अनुसार ही काम हो सका है। इससे इतना ही निष्कर्ष निकल सकता है कि वहाँ प्रत्यक्ष काम करनेवालों की योग्यता बहुत कम थी। परंतु श्रीमज्जगद्गुरुजी के साथ धोखाबाजी जैसा किसी ने कुछ किया हो, ऐसा मुझे प्रतीत नहीं होता। यहाँ धोखाबाजी हुई होगी तो उनके द्वारा, जिन्होंने अनेक आश्वासन आने के देने के उपरांत भी बिना किसी प्रबल कारण के, ऐन समय पर इनकार कर दिया।

परिषद् के लिए प्रयास करनेवाले किसी ने परिषदीय जनों के साथ ऐसा अनुचित व्यवहार नहीं किया। इस कारण आपके पत्र में 'धोखा' शब्द का प्रयोग पढ़कर मुझे बहुत दुःख हुआ। श्रीमज्जगद्गुरुजी के मंत्री के लिए यह सर्वथा अशोभनीय प्रतीत हुआ। परंतु हम लोग तो श्रीमज्जगद्गुरु के चरण-सेवक होने से आप पर क्षोभ नहीं कर सकते। ऐसे शब्द प्रयोग को भी प्रसाद के रूप में शिरोधार्य करते हैं।

५९. साक्षात्कारी महापुरुषों का उपदेश : स्वधर्मपालन

श्री विजयराव वाडेकर, पुणे — १० अप्रैल १९६६

आप श्री साईं महाराज के भक्त हैं, यह उत्तम है। आध्यात्मिक क्षेत्र में हिंदू-मुसलमान-ईसाई नामों का महत्त्व नहीं, यह श्रेष्ठ पुरुषों का कथन है। जहाँ मन को शांति मिलेगी, विकारों पर विजय प्राप्त करने की शक्ति मिलेगी, मन संतुलित होगा, निर्लिप्तता से स्वार्थरहित होकर जीवमात्र के

प्रति ईश्वर का निवास अनुभव कर कर्तव्य करने की अखंड प्रेरणा अंतःकरण में विद्यमान रहेगी, वहाँ पूर्ण श्रद्धा रखकर स्वयं की सच्ची उन्नति करना, उचित है।

मनुष्य को जन्म से अनेक कर्तव्य प्राप्त होते हैं। स्वयं का जीवन अधिक से अधिक शुद्ध कर अंतिम श्रेय की प्राप्ति की ओर उन्नत होते जाना, राष्ट्र के सर्व व्यक्तियों पर समबुद्धि से प्रेम कर स्वपरिवार की कष्ट सहकर भी भलाई व रक्षा के लिए प्रयत्नशील रहना, राष्ट्र व धर्म-संस्कृति की विशुद्ध परंपराओं का पालन कर उनकी अभिवृद्धि करना, संसार की धकापेल में राष्ट्र को स्वाभिमान पूर्ण तथा सामर्थ्यशाली बनाने के लिए, विजयी होने के लिए, योग्य दिशा में प्रयत्न करना तथा ये कर्तव्य पूर्ण करते समय अखिल मानवों के प्रति, जीवमात्र के प्रति, चराचर के प्रति ऐक्य-ज्ञान से विशुद्ध प्रेम रखना आदि कर्तव्य अपने जन्म के साथ ही पैदा होते हैं। वे पूर्ण करने के लिए जी चुराना नहीं चाहिए। प्रयत्न करने की प्रेरणा-शक्ति जहाँ से मिलेगी, वहाँ श्रद्धा रखना हितकारी है। आपको श्री साईं महाराज पर निष्ठा रखकर यह सब प्राप्त हो रहा है तो वह भक्ति अत्यंत उचित है। आपने जिस धर्म में जन्म ग्रहण किया है, वह आपका स्वधर्म है और उसे इन दिनों 'हिंदू धर्म' कहते हैं। उस पर आपकी निष्ठा तथा उसके परिपालन से उसकी सेवा करने में इस प्रकार की भक्ति से बाधा नहीं पहुँचेगी, अपितु सहायता ही होगी। स्वधर्म से वंचना करने को कोई भी अभिजात साक्षात्कारी महापुरुष नहीं कहता, अपितु स्वधर्म उत्तम रीति से पालन करने की प्रेरणा देता है। अंतः आप श्री साईं महाराज की भक्ति करने से हिंदू धर्मनिष्ठ नहीं रहेंगे, यह कल्पना भी अपने मन को छूने न दें।

श्रेष्ठ पुरुषों के विचारों का अध्ययन, चिंतन, मनन कर मुझे जो सूझा, मैंने वह आपकी सेवा में प्रस्तुत किया है। कुछ त्रुटि रह गई हो तो क्षमा करें। (मूल मराठी)

६०. वेदाध्ययन का महत्त्व

श्री इन्द्र देव विद्याभूषण १६ अप्रैल १९६६

.... वेदों के सस्वर, घन, जटा आदि विकृतियों से रहित विशुद्ध पाठ की परंपरा को अविच्छिन्न बनाए रखने का आपका प्रयास एक बड़ी आवश्यकता की पूर्ति करनेवाला है। ऐसे प्रकांड विद्वानों की प्रचुर संख्या देश के सब प्रांतों में रहनी चाहिए, यह सब मानते हैं। पर केवल आप जैसे

कुछ ही निष्ठावान इस हेतु प्रत्यक्ष प्रयत्नशील हैं। साथ ही भारतीय संस्कृति संस्कृत भाषा के अध्ययन तथा ज्ञान से ही समझी जा सकती है, सुरक्षित की जा सकती हैं। इस सत्य को हृदय में धारण कर संस्कृत विद्या के अध्ययन, अध्यापन तथा प्रसार में संलग्न आपके गुरुकुल की महत्ता सुस्पष्ट है।...

६१. आध्यात्मिक अनुभव : पूर्वजन्म के सत्कर्म का फल

श्री हरि विनायक वाडेकर, पुणे ५ जुलाई १९६६

आपके अनुभव पढ़े। किसी-किसी को ये अनुभव आते हैं। आध्यात्मिक जीवन में ये अनुभव आते ही हैं या आना ही चाहिए– ऐसा नहीं। आए तो अधिक निष्ठा से साधना करने की प्रेरणा प्राप्त हो सकती है। जिन्हें नहीं आते हैं, उन्हें मनःशांति, संतुलन, षड्-रिपुओं की पीड़ा कम होना आदि अनुभव आने से तेजी से प्रगति करने को अधिक शक्ति से साधनारत होने का उत्साह प्राप्त होता है। इसलिए कहते हैं कि ये अनुभव तथा आध्यात्मिक उन्नति का नित्य संबंध, पूर्वापर संबंध या समवादी संबंध है, यह प्रमाण नहीं माना जाता।

जागृति, स्वप्न, किसी भी अवस्था में ब्रह्मीभूत विभूतियों के दर्शनादि होना शुभलक्षण ही है। इसका उपयोग चित्तवृत्ति के प्रशमन के लिए और फलस्वरूप स्वस्वरूप में लय होने के लिए किया, तो जीवन सार्थक होता है। यह अवस्था प्राप्त होने पर अन्य लोगों के मन में अध्यात्म-मार्ग के सत्यत्व के विकास तथा रुचि-निर्माण करने के उद्देश्य से उन अनुभवों का तथा उसमें से प्रगट होनेवाली शक्तियों का उपयोग करने में रुकावट नहीं, किंतु तत्पूर्व करना हानिकारक सिद्ध हो सकता है। यह मैंने साक्षात्कारी पुरुषों से सुना है। मुझे स्वयं इस विषय का कुछ भी ज्ञान नहीं है।

पूर्वजन्म के सत्कर्म तथा इस जन्म की भक्तियुक्त उपासना के फलस्वरूप आपको ये अनुभव हो रहे हैं, यह अभिनंदनीय है। इसमें से आगे का मार्गक्रमण करने तथा उसमें सफल होने का निश्चय दृढ़ होकर अंतःकरण में दर्शन देनेवाले भगवत्स्वरूप विभूतियों का उपदेश और आशीर्वाद आपको प्राप्त होगा तथा आप सफलमनोरथ होंगे, यह आशा है। भगवच्चरणों में एतदर्थ प्रार्थना कर रहा हूँ। (मूल मराठी)

६२. हिमालय की गोदी में पंढरपुर अवतरित

श्री वसंतराव चिटणीस, मुंबई १८ जुलाई १९६६

..... ऋषिकेश के पवित्र परिसर में श्री विट्ठल का मंदिर स्थापन करने के आपके संकल्प को मूर्त स्वरूप कैसे प्राप्त हुआ, यह ध्यान में आया। आपकी लगन एवं परिश्रम सफल हुए। हिमालय की गोद में पंढरपुर अवतरित हुआ। उत्तर-दक्षिण का अंतर काटकर भारत की आध्यात्मिक एकता अभिव्यक्त हुई, यह आपको एवं आपके सहकारी बंधुओं को श्रेय देनेवाला है।

श्री विट्ठलाश्रम के संचालन में भी यह एकात्मता पग-पग पर, क्षण-क्षण में अनुभव में आएगी– ऐसा व्यवहार हो एवं प्रांत, भाषा आदि क्षुद्र दुरभिमान को आश्रय न देने का श्रेष्ठ उदाहरण आपकी ओर से उपस्थित हो, यही इच्छा है। त्रैलोक्याधिपति की पूजा जहाँ करनी है, वहाँ क्षुद्रता को स्थान नहीं रह सकता।

आप सबका मनःपूर्वक अभिनंदन कर शीघ्र ही श्री विट्ठलाश्रम में जाकर दर्शन करने का सुयोग प्राप्त हो, एतदर्थ श्री प्रभु-चरणों में प्रार्थना।

(मूल मराठी)

६३. सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात्

श्री वि.ज.घारपुरे, मुंबई १९ जुलाई १९६६

आपने एक महान उपक्रम हाथ में लेने का निश्चय किया है। पवित्र उद्दिष्ट, परिश्रमी सहयोगी तथा दृढ़ निश्चय के त्रिवेणी संगम से आपको यश मिलने में कोई बाधा नहीं आएगी, तथापि वर्तमान-काल की महिमा ऐसी है कि पवित्रता का मूल्य नहीं है तथा अति हीन विचार, भावना एवं कृति को बढ़ा-चढ़ा भाव मिल रहा है। विश्वास है कि आप सतत प्रयत्नशील रहकर प्राथमिक कष्ट आनंद से सहकर यह कठिनाई पार कर सकेंगे।

आप 'सत्य' और 'ऋत्' बोलने का प्रण कर 'परिचय' मासिक पत्रिका का संपादन करनेवाले हैं। यह अत्यंत श्रेष्ठ बात है। 'सत्यं ब्रूयात्' के साथ 'प्रियं ब्रूयात्' का आदेश है, यह आपको विदित ही है। मनोरंजन किया जाए, परंतु उसमें अनृत न हो। सत्य बोलें, परंतु वह रुक्ष और

चुभनेवाले शब्दों में न कहें। मधुर अमृतमय वाणी ही अक्षर रूप में अभिव्यक्त करें, ऐसा ऋषियों, महर्षियों, धर्मज्ञों, तत्त्वज्ञों, परतत्त्वज्ञाताओं का आदेश है। यह आपको विदित होने के कारण 'परिचय' मासिक पत्रिका इस नीति पर चलकर सर्वजनप्रिय और सर्वजनहितकारी सिद्ध होगी, ऐसी अपेक्षा है। श्री प्रभुकृपा से आपके उत्तम उपक्रम में आपको उत्तम यश प्राप्त हो। (मूल मराठी)

६४. विश्व हिंदू परिषद् सम्मेलन की पूर्व तैयारी

५ अगस्त १९६६

श्री जगद्गुरु द्वारकापीठाधीश श्रीमच्छंकराचार्य महाराज की सेवा में

१ अगस्त १९६६ का कृपापत्र ४ अगस्त १९६६ को प्राप्त हुआ। मैंने भी इसी अवधि में एक पत्र सेवा में प्रेषित किया था, वह प्राप्त हुआ होगा। आज श्री फडके शास्त्री का पत्र और साथ में एक प्रश्नावली प्राप्त हुई। उस प्रश्नावली की प्रतिलिपि सेवा में इस पत्र के साथ भेज रहा हूँ। यह प्रश्नावली श्री फडके शास्त्री ने ही बनाई है। काशी पंडित सभा की ओर से भी प्रश्नावली अपेक्षित है। श्री चरणों के आदेश से अन्य कुछ विद्वानों के भी मत प्राप्त होंगे। यदि आगामी कुछ दिनों में यह सामग्री प्राप्त हुई तो जामनगर आकर श्रीचरणों की सन्निधि में बैठकर उसपर विचार करना और विस्तृत प्रश्नावली बनाना संभव हो सकेगा। उसकी पर्याप्त प्रतियाँ बनाकर जिन विद्वानों की सूची बनेगी, उन सबको एक-एक प्रति भेजकर उनके लिखित उत्तर यदि शीघ्र आ सकें तो ही आगे विद्वत् परिषद् का स्थान एवं तिथियाँ निश्चित करना हो सकेगा।

उज्जयिनी में सूर्यमंदिर बनना प्रारंभ हुआ या नहीं, इसका मुझे ज्ञान नहीं है। मंदिर कब तक बनकर पूरा होगा और प्रतिष्ठा कब करने का विचार है, यह भी अज्ञात है। चारों पीठों के श्रीशंकराचार्य एकत्रित होने के लिए भाद्रपद पूर्णिमा के पश्चात् ही समय तय करना ठीक रहेगा। तत्पश्चात् श्री शृंगेरी आचार्यस्वामी वहाँ कितने दिन वास्तव्य कर सकेंगे? यदि शीघ्र स्थानांतर करना चाहें तो प्रतिष्ठा कार्यक्रम भाद्रपद कृष्ण पक्ष में, याने पितृपक्ष में आएगा, सो ठीक होगा क्या? यदि उज्जियिनी में चारों आचार्य स्वामियों के युगपत उपस्थित होने का ठीक निश्चित समय ज्ञात हो सकेगा तो ही उन दिनों में यह संकल्पित विद्वत् परिषद् वहाँ करने के संबंध

में सोचना संभव हो सकेगा। मैं अगस्त के दिनांक २९ को उज्जियिनी में श्री शृंगेरी पीठाधीश श्री आचार्य स्वामी के दर्शन करने जा रहा हूँ, तब इस संबंध में असंदिग्ध जानकारी प्राप्त होने की आशा है। पश्चात् श्री चरणों में सूचना भेजूँगा।

श्री आप्टे जी ने जामनगर से ३१ जुलाई को भेजा हुआ पत्र मुझे आज ही मिला। वे दिल्ली गए हैं। मैंने उन्हें दिल्ली के पते पर पत्र भेजा है और दिल्ली से नागपुर आकर मुंबई जाने के लिए अनुरोध किया है। नागपुर में उनके आने पर विचार कर श्री चरणों में आवश्यक निवेदन करूँगा। शेष भगवत्कृपा एवं श्री चरणों के आशीर्वाद से कुशल मंगल है। इति शम।

६५. विश्व हिंदू परिषद् प्रयाग सम्मेलन की पूर्व तैयारी

१८ अगस्त १९६६

श्री द्वारकापीठाधीश श्री शंकराचार्य महाराज, जामनगर

श्रीचरणों का ६ अगस्त १९६६ का कृपाशीर्वाद पत्र ९ अगस्त को ही प्राप्त हुआ। १४ अगस्त को श्री आप्टे जी का नागपुर आने का कार्यक्रम था। उनसे बात कर सेवा में उत्तर भेजने का विचार किया। श्री आप्टेजी आए थे। १६ अगस्त को महाराष्ट्र के कुछ जिलों में प्रवास हेतु गए हैं। श्रीमदाचार्य चरणों ने पत्र में जो मार्गदर्शन किया है, वह अतीव श्रेष्ठ है। अतः मैंने श्री आप्टे जी से परामर्श कर निश्चय किया है कि सितंबर मास में जामनगर आकर चरणों में उपस्थित हो जाऊँ। श्री आप्टे जी ने भी आने की स्वीकृति दी है। २१ सितंबर प्रातः मै वहाँ पहुँच जाऊँगा। २२ सितंबर को दोपहर मुझे लौटना पड़ेगा। उस अवधि में श्री चरणों के निर्देशानुसार प्रस्ताव के विषय में सीमित प्रश्नों की सूची बन सकेगी। जिन विद्वानों के पास भेजना होगा, उनसे कुछ नाम निर्धारित किए जा सकेंगे। प्रश्नावली के साथ उसका उद्देश्य स्पष्ट करने के लिए एवं उस संबंध में विद्वज्जनों से क्या अपेक्षित है, इसे स्पष्ट करने के लिए एक पत्र का प्रारूप भी सिद्ध कर भेजना होगा। सो भी श्री चरणों के मार्गदर्शन के अनुसार बनाया जा सकेगा। आगे की कार्यवाही विद्वज्जनों से उत्तर आने पर निश्चित कर सकेंगे।

२९ अगस्त को मैं उज्जैन जाकर श्री शृंगेरी पीठाधीश श्रीमदाचार्य स्वामी के दर्शन करूँगा। दोपहर ४ बजे का समय दिया है, ऐसी सूचना

मिली है। संकल्पित सूर्यमंदिर की प्रतिष्ठापना कब होगी, सब पीठाधीश उपस्थित होने की कैसी व्यवस्था हुई है आदि पूछकर उसी पुण्य अवसर पर विश्व हिंदू परिषद् का कैसा सम्मेलन हो सकता है, इसका विचार श्रीमदाचार्य चरणों से करूँगा।

२४ अगस्त को मुंबई में कार्यकारी मंडल की बैठक है। उसमें इन प्रश्नों पर भी विचार होगा, सो श्री चरणों में अवगत कराऊँगा। शेष भगवत्कृपा से कुशल मंगल है। इति शम्।

६६. अणुव्रत सम्मेलन की सफलता की कामना

श्री एस.एल.अक्षयजी, 'अणुव्रत विहार', दिल्ली   ४ सितंबर १९६६

श्रीमान आचार्य तुलसी जी के आशीर्वाद से आप यह आयोजन कर रहे हैं। आचार्य जी की प्रत्यक्ष उपस्थिति आपको उपलब्ध हो रही है। जिस विषय को लेकर आप आयोजन कर रहे हैं, वह राष्ट्र के स्वस्थ विकास की दृष्टि से अति महत्त्व का है। जनसाधारण में इन समाजचारित्र्य को ध्वस्त करनेवाले प्रकारों के संबंध में घृणा उत्पन्न करना, उनसे अलिप्त रहने का निश्चय निर्माण करना और उन प्रचार-माध्यमों का शुद्धिकरण कर उन्हें समाजहित में प्रयुक्त करना है। भगवत्कृपा से आपको पूर्ण यश प्राप्त हो। श्री आचार्य जी के चरणों में सश्रद्ध प्रणाम।

६७. देश-स्थिति

पूज्यपाद स्वामी अमूर्तानंदजी, मोहिपुरा   १९ अक्तूबर १९६६

....देश की स्थिति अच्छी नहीं है। पूरे बिहार प्रांत में फसल नष्ट हो चुकी है। अन्य भी बहुत से क्षेत्रों से यही चिंता देनेवाले समाचार आ रहे हैं। कई क्षेत्रों में पीने के जल का कष्ट बढ़ने की स्थिति है, क्योंकि कुँओं में पानी भरा ही नहीं है। इन प्राकृतिक संकटों के साथ ही देश में विविध आंदोलन, सत्याग्रह, हड़ताल, बंद आदि से वायुमंडल क्षुब्ध है। देश के लोग आपस में हिंसा-प्रतिहिंसा करने में पुरुषार्थ मान बैठे हों, ऐसा दिखता है। खाद्यान्न के अभाव में अवांछनीय लोगों द्वारा बिना मूल्य अन्न-वितरण की शासकीय अनुमति के परिणाम से धर्मांतरण के भी गंभीर समाचार आ रहे हैं। अन्य देशों के द्वारा संकट की स्थिति निर्माण होने की संभावना तो है ही। इस स्थिति में अंतःकरण में चिंता व्याप्त है। अपना

जागृति लाने का तथा समाज को सचेत, सतर्क और सुसंगठित करने का प्रयास चल रहा है। प्रगति के समाचार भी आ रहे हैं। परंतु समग्र वायुमंडल शुद्ध करने की क्षमता जब तक नहीं आती, चिंता बनी रहना स्वाभाविक है। चिंता के साथ-साथ प्रयत्नों में भी वृद्धि करने की चेष्टाएँ चल रही हैं। देखें, भगवदिच्छा क्या है।

....२५ सितंबर से ४ अक्तूबर तक असम में था। वहाँ लोग कुछ ठीक ढंग से सोचने लगेंगे ऐसा लक्षण दिखता है। .....तत्पश्चात् पारडी (गुजरात) में पं. सातवलेकरजी के ९९ वर्ष पूर्ण होकर १००वें वर्ष में पदार्पण के शुभ अवसर पर आयोजित होम-हवनादि तथा सत्कार समारोह में सम्मिलित होकर जयपुर में राजस्थान प्रांतीय शिविर के लिए गया था।

६८. महात्माओं के प्रति शासन का दुर्व्यवहार

२७ नवंबर १९६६

श्रीमज्जगद्गुरु द्वारकाधीश शंकराचार्य महाराज, तलवाडा, जिला बाँसवाड़ा

तार मिला। गोवर्धन पीठाधीश श्रीमदाचार्यजी के व्रत-ग्रहण कर केवल गंगाजल ही ग्रहण करते हुए रहने के निश्चय से सर्वदूर बहुत चिंता व्याप्त हुई है। आज के वृत्त-पत्रों में समाचार आया है कि स्वास्थ्य में चिंताजनक गिरावट आने लगी है। इससे मन व्यथित है। श्रीचरणों ने अनेक श्रेष्ठों को तार से आदेश दिया ही है। मै शीघ्र ही दिल्ली जाकर कुछ प्रयास करने की सोच रहा हूँ। क्या फल निकलता है, यह तो भगवदाधीन है।

सद्यःकालीन समस्या में कैसा समझौता हो सकेगा, यह समस्या ही है। संपूर्ण गोवंश वध-निषेध की माँग को लेकर श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी जी, श्री गोवर्धन पीठाधीश जी आदि अनेक श्रेष्ठ महात्माओं ने यह व्रत आरंभ किया है। इस माँग की पूर्ति से न्यून किसी सुझाव को कोई मानेंगे नहीं, ऐसा लगता है। उसका कारण भी है कि यदि वृद्ध निरुपयोगी के नाम से गोवध चालू रहा, तो वृद्ध निरुपयोगी पशुओं का वध तो नहीं होगा, अच्छी गौएँ ही नष्ट होंगी, ऐसा ही होता भी आ रहा है। यही कारण है कि जिन प्रांतों में गोवध चालू है, उनमें इन अनुपयोगी पशुओं की संख्या ५ प्रतिशत तक है और मैसूर राज्य में जहाँ गोवध सर्वथा बंद रहा है, यही संख्या ३/४, याने एक प्रतिशत से भी कम है। यह सब देखकर निरुपयोगी पशुओं के बोझ का मिथ्या भूत खड़ा किया गया है, ऐसा ही उन महात्माओं ने

सोचा है और इसी कारण पूर्ण गोवंश का वध बंद करने के निर्बंध (Law) की उनकी माँग है, जो पूर्ण युक्तियुक्त है। अतः शासन यह माँग मान ले और उसको पूर्ण करने के लिए जो करना आवश्यक है, उसे करने की दृष्टि से तुरंत पग उठाए, तो सब ठीक होगा।

व्रतरूप अनशन करनेवाले महात्माओं को बंदी बनाने की नीति विचित्र है। अनेक बार अनेक लोगों ने आमरण अनशन प्रारंभ किया था, किंतु उन्हें बंदी नहीं बनाया गया। यद्यपि उनके अनशन के परिणामस्वरूप व्यापक मात्रा में तोड़फोड़ आदि हिंसाचार के काम हुए और पूर्ण शांति से चलनेवाले और जिनके व्रत के परिणाम भी शांतिपूर्ण ही हैं, यह गत सप्ताह की परिस्थिति ने स्पष्ट कर दिया है, उन महात्माओं के प्रति यह व्यवहार अतीव दुःखदायक है। श्री चरणों के प्रभाव से उस अनिष्ट वृत्ति में परिवर्तन हो, इस आशा से चल रहे हैं। आगे क्या बनता है, सेवा में सूचित करूँगा।

६९. मंगलकामना

कार्यवाह, योगाभ्यासी मंडल, नागपुर ७ दिसंबर १९६६

.... इस पवित्र प्रसंग पर मैं उपस्थित नहीं रह सकता हूँ, यह मेरा दुर्भाग्य ही कहना चाहिए....आप सब बंधुगण उनके सत्कार का जो आयोजन कर रहे हैं, उसके उपलक्ष्य में मैं इस पत्र के रूप में उनके चरणों में अपने शतशः साष्टांग प्रणाम समर्पित करता हूँ।

योगशास्त्र के आद्य प्रवर्तक से परंपरा के रूप में चली आ रही योगविद्या की ओर आज के अश्रद्ध एवं परानुकरणरत समाज का ध्यान खींचकर उन्हें जीवन का सर्वांगीण विकास करनेवाले इस अमृतमय शास्त्र की शिक्षा देने का उनका निरलस प्रयत्न यश प्राप्त करे एवं इस कार्य का विस्तार कर असंख्य जीवों का कल्याण साध्य करने के लिए उन्हें भरपूर आयुरारोग्य का लाभ हो, यही इस प्रसंग पर श्री जगज्जननी के चरणों में प्रार्थना करता हूँ। (मूल मराठी)

७०. देशवासियों द्वारा स्मारक-निर्माण

श्रीमत् स्वामी अमूर्तानंदजी, मोहिपुरा ११ अप्रैल १९६७

....कन्याकुमारी में जो विवेकानंद शिला स्मारक का काम चल रहा हैं, उसे देखने श्री वीरेश्वरानंद स्वामीजी गए थे और वह सब देखकर

अत्यंत हर्षित होकर स्नेह गद्‌गद् हृदय से उन्होंने अपना आशीर्वाद लिखा। उसमें विदेशी सहायता का प्रश्न नहीं है। वैसे, उन्होंने विदेशों से सहायतार्थ अनुरोध करने में सहाय्य करने को कहा था, किंतु श्री एकनाथजी ने इस छोटी-सी धनराशि के लिए उसकी आवश्यकता न होने की तथा यह स्मारक अपने ही देशवासियों के द्वारा बनाने की उपयुक्तता की बात कही, जो श्रीमत् वीरेश्वरानंद स्वामी जी को बहुत अच्छी लगी। अतः आपने जो आशंका व्यक्त की थी, उसका कोई आधार नहीं रहा।

कल वर्ष प्रतिपदा का कार्यक्रम हुआ। उसके पूर्व तीन दिन सायं ७.३० बजे से एक घंटे के लिए सब तरुण स्वयंसेवकों के एकत्रीकरण में मेरे बौद्धिक वर्ग हुए। सद्यःस्थिति में राजनैतिक आदि किसी भी झकोरों में स्थिर चित्त रहकर केवल सर्व पंथ दल आदि का संग्राहक संघकार्य ही करना युक्तियुक्त तथा आवश्यक है, यही विषय था। देखें, क्या परिणाम निकलता है। शेष श्री श्रीठाकुर की असीम कृपा से कुशलमंगल है।

७१. संतसांत्वना

पूज्यपाद श्रीमद् श्री रंगावधूत महाराज २७ जून १९६७

.... आज लौटने पर आपकी परमवंदनीय माताश्री के इहलोकत्याग करने का समाचार मिला। तीर्थरूप माता की वृद्धावस्था एवं दीर्घकाल तक रही रोगावस्था का विचार करते समय लगता है कि उनको उससे मुक्ति ही मिली। तो भी माता के समान अन्य देवता नहीं। इष्टदेवता का प्रत्यक्ष दर्शन तथा उसकी प्रत्यक्ष सेवा करने का भाग्य अतुलनीय है। इससे वंचित होने का दुःख स्वाभाविक है। यह तो द्वंद्व से उत्पन्न सहज स्थिति है। तीर्थरूप माताश्री का विपुल पुण्य-संचय तथा आपका असामान्य तप दोनों के फलस्वरूप दिवंगत जीव पर श्री परमेश्वर की कृपावृष्टि होगी और उसको निस्संदेह सद्‌गति प्राप्त होगी। किंतु हम जैसे आपके असंख्य श्रद्धालु लोग इस प्रसंग से दुःखी होंगे ही। श्री प्रभु की कृपा से और आपके आशीर्वाद से इसकी तीव्रता कम हो और हम सभी का मंगल हो, इस हेतु श्री भगवच्चरणों में प्रार्थना।

(मूल मराठी)

७२. नामस्मरण रूपी औषधि से सकल रोगों का विनाश

१३ सितंबर १९६७

राष्ट्र संत श्री तुकडोजी महाराज, मोझरी (जिला अमरावती-विदर्भ)

७ सितंबर १९६७ को आपके दर्शन का महद्भाग्य मुझे प्राप्त हुआ। परंतु आपकी शारीरिक अवस्था देख कर अंतःकरण को अत्यंत कष्ट हुए। विगत अनेक वर्षों में आपने असंख्य लोगों को सन्मार्गोन्मुख किया। अनेकों की कठिनाईयाँ दूर की। संपूर्ण राष्ट्र का भाग्योदय कराने के लिए लगन से शरीर की आवश्यकता की उपेक्षा कर अविश्रांत कष्ट सहे। उन परिश्रमों का देह पर यह विपरीत परिणाम हुआ। अनेकों की उन्नति के लिए बाधारूप रहनेवाले उनके पूर्वजन्म के दुष्कृत्तों को स्वयं पर लेकर उन भक्तों की उन्नति का मार्ग खुला कर देना भगवद्भक्त संत सहज करते हैं तथा स्वयं लोगों का कष्ट सहते हैं। उनके हृदय की अपार करुणा के कारण यह होता है। इसलिए लगता है कि आपकी देह को भी ऐसे दुर्धर तथा कष्टमयी व्याधि ने ग्रसित किया हो, अन्यथा आप जैसे पुण्यात्माओं को रोग का स्पर्श भी कैसे हो सकता है?

ऐसे अनेक विचार मन में आते हैं, और मन स्वस्थ नहीं रहता। आपका हम पर अकृत्रिम, निष्कपट प्रेम है। आपके कृपाशीर्वाद को अल्पस्वरूप मात्रा में हम योग्य सिद्ध हुए, यह हमारा महद्भाग्य है। वह प्रेम, वह कृपाशीर्वाद सुदीर्घ काल आपके प्रत्यक्ष सहवास से प्राप्त होता रहे, यह इच्छा है। तदर्थ परममंगल श्री प्रभु के चरणों में नित्य प्रार्थना कर रहा हूँ।

अच्युतानंदगोविंदनामस्मरणभेषजात्।
नश्यन्ति सकलाः रोगाः सत्यं सत्यं वदाम्यहम्।।

इस वचन पर विश्वास रखकर प्रार्थना कर रहा हूँ। (मूल मराठी)

७३. ऐहिक बातों के लिए अनशन करना दुःखदायक

श्री स्वामी योगेश्वरानंदजी, मुंबई　　　　१६ अक्तूबर १९६७

श्रेष्ठ साधुओं ने ऐहिक बातों के लिए आमरण अनशन का अत्युग्र मार्ग अपनाना बहुत दुःखकारक है। ऐहिक जीवन में कार्य करनेवालों में हिंदी के लिए प्रयास करनेवाले और योग्य मार्गों से उसे उचित सार्वदेशिक स्थान दिलाने के हेतु प्रबल प्रयत्न करनेवाले जो राष्ट्रभक्त हैं, उन्हीं के लिए

यह प्रश्न छोड़कर अपनी वंदनीय साधु-मंडली देशभर में, ग्राम-ग्राम में, वन-वन में धर्मजागरण, चारित्र्य-जागरण, राष्ट्रभक्ति-जागरण, निःस्वार्थ निरलस राष्ट्रसेवा-रत गुणों का जागरण करते हुए अपने भोले-भाले, दारिद्र्य-अज्ञानादि से पीड़ित बंधुओं को स्वधर्म में ही रहने के लिए परधर्मियों के प्रलोभनों की सर्वथा उपेक्षा करके भूल से भी परधर्म की ओर न झुकने का ज्ञानयुक्त निश्चय सदैव जागृत रहने की शिक्षा देने में अपनी तपस्या, पुनीत आध्यात्मिक शक्ति लगा दें तो थोड़े ही समय में भारत का कायाकल्प होकर पुनरपि सच्चे अर्थ में अपने चिरंजीव ऋषि-मुनियों, ज्ञानियों का पवित्र भारत, जगद्गुरु भारत, समृद्ध पराक्रमी वैभव संपन्न भारत, संसार का मूर्धन्य राष्ट्र बनकर खड़ा रहेगा, यह मेरी श्रद्धा है।

श्री चरणों में मेरे यह विचार एवं भाव प्रेषित हैं। हृदयस्थ की प्रेरणा जो हो, सो आप करेंगे ही, इस विश्वास से विनम्र प्रणामपूर्वक पत्र पूरा करता हूँ।

७४. संत तुकडोजी महाराज की हालत

पूज्यपाद स्वामी अमूर्तानंदजी, १८ अगस्त १९६८

.... मैं इंदौर से चला और सकुशल मुंबई पहुँचा। भोजनादि के पश्चात्....बॉम्बे हॉस्पिटल में जाकर संत तुकडोजी महाराज के दर्शन किए। उसी दिन प्रातःकाल उनपर शस्त्रक्रिया की गई थी। कुछ समय वहाँ रुका। पुरानी स्मृतियाँ श्री महाराजजी के हृदय में जागृत हुई और सगद्गद् उन्होंने उनका उच्चार किया। उनकी स्थिति गंभीर है, किंतु इस शल्यक्रिया के कारण उन्हें कुछ आराम पड़ने की आशा निर्माण हुई है। भगवदिच्छा क्या है, कुछ समझता नहीं। श्री तुकडोजी महाराज दुःसाध्य रोग से जर्जर, इधर श्री बालशास्त्री हरदास का ११ अगस्त की रात्रि को देहावसान बड़ी दुर्घटनाएँ हैं मन पर आघात होते जा रहे हैं। श्री ठाकुर की कृपा से उन्हें सहकर काम में जुटे रहने में समर्थ हो रहा हूँ।....

७५. सुदीर्घ स्वस्थ जीवन हेतु प्रार्थना

राष्ट्रसंत श्री तुकडोजी महाराज, २८ सितंबर १९६८

....श्री बदरीनारायण का दर्शन कर सकुशल लौट आया। किंतु श्री केदारनाथ को जाना संभव न हो सका। अनपेक्षित अतिवृष्टि के कारण मार्ग

खंडित हुआ था, कुछ स्थानों पर बह गया था।

लौटते समय मेरे स्वास्थ्य पर किंचित् विपरीत परिणाम हुआ है।. ...इसी कारण, आपके प्रत्यक्ष दर्शन करने की यद्यपि मेरी अभिलाषा थी, आने में मैं असमर्थता अनुभव कर रहा हूँ। श्री बदरीनारायण मंदिर का प्रसाद आपके लिए भेजने का सोच रहा था। आपके कुछ कार्यकर्ता बंधु आपसे मिलने जा रहे हैं, ऐसा पता चला। इस पत्र एवं 'प्रसाद' को उन्हीं के साथ भेज रहा हूँ।

श्री बदरीनारायण के चरणकमलों के सम्मुख नित्य भजन-संकीर्तन एवं प्रार्थना होती थी। उस समय आपकी शारीरिक व्याधि का निर्मूलन हो, आपको सुदीर्घ स्वस्थ जीवन प्राप्त होकर समाज का कल्याण हो, ऐसी श्री चरणों में प्रार्थना करना मेरा स्वाभाविक कर्तव्य ही था।

ईश कृपा से यह प्रार्थना सफल सिद्ध हो।....'

७६. हिंदू समाज के सब अंगों में धर्मजागरण करना होगा

२६ दिसंबर १९६९

श्रीमत् जगद्गुरु शंकराचार्य जी महाराज, शृंगेरी पीठाधीश,

सेवा में शतशः साष्टांग प्रणाम।

कर्नाटक प्रांतीय विश्व हिंदू परिषद् के सम्मेलन का वृत्त आपकी सेवा में प्रस्तुत किया होगा। सम्मेलन बहुत भव्य हुआ। अपेक्षा से अधिक प्रतिनिधि उपस्थित थे। उडुपि के नागरिक बंधु, नगरपालिका एवं शासकीय अधिकारीगण– इन सभी का उत्तम सहयोग प्राप्त होने के कारण किसी प्रकार की असुविधा न होते हुए सब कार्यक्रम सफलतापूर्वक संपन्न हुए। भिन्न-भिन्न संप्रदायों के अनेक प्रमुख आचार्य उपस्थित होने के कारण पूर्ण हिंदू समाज का वास्तविक प्रातिनिधिक स्वरूप दृष्टिगोचर हो रहा था। असम प्रांत के वैष्णव आचार्य दक्षिण पाटीय सत्राधिकार गोस्वामी जी लगभग ३००० मील की मोटर-यात्रा करके आने के कारण बहुत ही आनंद हुआ। सभी के आशीर्वाद रूप भाषण, हिंदू समाज की एकता, जागृत भ्रातृभाव, परस्पर सहयोगिता आदि के प्रतिपादन से परिपूर्ण थे। विश्व हिंदू परिषद् के विश्वस्त मंडल के अध्यक्ष उदयपुर के महाराणा, ग्वालियर की श्रीमंत राजमाताजी आदि की उपस्थिति उत्साहवर्धक थी। कहीं पर विसंवादी बात नहीं हुई।

विभिन्न मठाधिपतियों ने धर्मजागरण के हेतु ग्राम-ग्राम में प्रचार करने का निश्चय व्यक्त किया। काफी, सुपारी आदि के बागवान तथा अन्य धर्मी व्यक्तियों ने सर्वप्रकार की सहायता करने का अभिवचन दिया। विद्यालयों, महाविद्यालयों के अध्यापकों ने छात्र वर्ग में धर्म-श्रद्धा जागरण करने का प्रयत्न करने का आश्वासन दिया। वायुमंडल उत्साह तथा विश्वास से युक्त था। आगे क्या परिणाम होता है, देखना है।

पूज्य श्री पेजावर मठ के स्वामी विश्वेशतीर्थजी ने बहुत परिश्रम से सम्मेलन का आयोजन कर उसकी सफलता के लिए प्रयत्न किए। भगवत्कृपा से तथा आप श्री के आशीर्वाद से उनके प्रयत्न सफल हुए है।

अब आगे हिंदू समाज के सब अंगों में धर्म के ज्ञान का तथा तत्परिणाम स्वरूप श्रद्धा का जागरण करना, हिंदू के नाते स्वतः के दैनंदिन जीवन को चलाने की शिक्षा देना तथा दुःखी, दारिद्र्यपीड़ित, शिक्षाविहीन, निराधार, निराश्रित, परित्यक्त-सा जीवन बितानेवाले बंधुओं को निष्कपट प्रेम से आत्मीयता अनुभव कराकर उन्हें अन्य धर्मावलंबियों से बचाना, उनका जीवन उन्नत कर उनका धर्मभक्तिपूर्ण आत्मविश्वास जागृत करना इत्यादि अनेक समाज सेवा के, धर्मरक्षा के कार्य करने हैं। परकीय प्रभाव से समाजच्युत, धर्मच्युत हुए अभागे बंधुओं को पुनः स्वधर्म की ओर आकृष्ट कर हिंदू समाज के प्रबल रक्षक के रूप में खड़ा करना है।

श्रीमदाचार्य श्री का कृपाशीर्वाद एवं मार्गदर्शन कार्यकर्ताओं में उत्साह, चैतन्य तथा कार्य ज्ञान निर्माण कर सकेगा। इसी कारण श्री चरणों से मैं प्रार्थना कर रहा हूँ कि सब कार्यकर्ताओं के सिर पर अपना वरदहस्त रखें, उन्हें सन्मार्ग दिखलाएँ और निरलस भाव से स्वार्थशून्य होकर कार्यरत रहने की प्रेरणा दें। इस दिशा में श्री चरणों के कुछ पुनीत शब्द प्रकट हों, तो हम लोग भाग्यवान सिद्ध हो सकेंगे।

शेष श्री भगवत्कृपा तथा श्रीमदाचार्य स्वामी के आशीर्वाद से कुशल। श्री चरणेषु विनीत।

७७. नम्रतापूर्वक अनुरोध

पूज्यपाद श्रीमद् स्वामी अमूर्तानंदजी, मोहीपुरा १४ जनवरी १९७०

आपके स्वास्थ्य में दुर्बलता अधिक आ गई है। ...मेरे लिए यह अति चिंता का विषय है। शरीर का वजन भी एक किलो कम हुआ है, ऐसा

श्री परमारजी के पत्र में है। मोहीपुरा में शरीर पोषण योग्य रीति से होने के लिए उचित आहार प्राप्त नहीं होता, यह स्पष्ट है। श्री नर्मदामाई का सान्निध्य और एकांतवास का लाभ, यही यहाँ प्रमुख है। अन्य सब असुविधा ही दिखती है। साथ ही अपने कार्यकर्ता आपको स्थान-स्थान पर चलने का आग्रह करते हैं और प्रवास के उचित साधनों के अभाव में भी कष्ट सहते हुए आपको जाना पड़ता है। आपके कारण कार्य में शुचिता, उद्योगशीलता तथा स्नेहादि श्रेष्ठ गुण निर्माण होकर कार्य सुचारु रूप से बढ़ता है। यह सत्य होते हुए भी आपके कष्ट देखकर मुझे नम्रतापूर्वक अनुरोध करना पड़ रहा है कि आप या तो प्रवास न करें या उचित प्रबंध रहने पर ही प्रवास करें।

७८. यह धर्म-कार्य है

श्रीमत् स्वामी विश्वेशतीर्थ जी पेजावर मठ, उडुपी ३ मार्च १९७०

बेंगलूर का वृत्त बहुत उत्साहवर्धक है। कुछ विरोध तो अवश्य होगा। परंतु परमकृपालु सर्वमंगलकारी श्री भगवान पर पूर्ण श्रद्धा से प्रेरित होकर सर्वहितकारी संकल्प आपने किया है तो उसपर सर्वेश्वर का बल भी आपको प्राप्त होगा और कुछ काल में सब सुव्यवस्थित संकल्प होगा, यह विश्वास है। अपना समाज-जागरण एवं संगठन का; धर्म-संस्कृति-परंपरा पर श्रद्धा बलवती करने का; पंथ, राजनैतिक गतिविधियों से समाज सुरक्षित करने का; व उसे सुखी बनाने का है, उसमें निहित किसी प्रकार का स्वार्थ, मान-पदादि लिप्सा नहीं है और सब कार्य भगवत्पूजा की सर्वस्व-समर्पण भावना से चलाने का निश्चय है। यह धर्मकार्य है। धर्मरक्षक भगवान श्रीकृष्ण का अपार सामर्थ्य अपने साथ है, यह मेरी श्रद्धा है। आप श्री की पवित्र उपासना से यह साक्षात् अनुभूति ही है। इसी अनुभवसिद्ध विश्वास के बल पर आगे बढ़ना है। सब समाज समर्थन करेगा।

श्री शेषाद्रि ने लिखा है कि आप श्री ने जोरहाट (असम) में होनेवाले विश्व हिंदू परिषद् के प्रांतीय संमेलन में जाने का विचार स्थिर कर लिया है। मैं भी आऊँगा। वहाँ आपके दर्शन करने का सद्भाग्य मुझे प्राप्त होगा, इस विचार से बहुत सुख का अनुभव कर रहा हूँ।

....शेष सब भगवत्कृपा तथा श्रीचरणों के शुभाशीर्वाद से कुशल है। इति शम्। श्री चरणेषु विनीत।

७९. दैवी पुरुष समाज संगठन का कार्य करें

१३ मार्च १९७०

श्री स्वामी सच्चिदानंदजी, अंबासमुद्रम्, तिरुनेलवेली (तमिलनाडु)

तिरुनेलवेली के एडवोकेट श्री एस.जी.सुब्रमण्यम नागपुर पधारे और आपका आशीर्वादस्वरूप पत्र दिया। हिंदू धर्म के पुनर्जागरण तथा हिंदू समाज की तथाकथित जाति-उपजातियों तथा वर्गों में सच्चा स्थायी प्रेम, सहयोग, एकात्मभाव निर्माण करने के लिए कार्य करने का आपने पवित्र निश्चय किया है, यह हमारे लिए अतीव आनंददायी बात है तथा इसके लिए हम ईश्वर के कृतज्ञ हैं। हमारा समाज अनेक दुर्गुणों से गहराई से जकड़ा हुआ है। इसलिए आप जैसे दैवी पुरुष इन दयनीय अवस्थाओं में परिवर्तन लाने के लिए आगे आएँगे, तो ये दुर्गुण हमेशा के लिए संपूर्णतया नष्ट हो जाएँगे। समाज के सभी वर्गों को स्थायी रूप में संगठित करके ही हम समय की चुनौतियों का सामना कर सकेंगे, संकटों पर विजय पा सकेंगे, दुष्ट शक्तियों को परास्त कर सकेंगे तथा श्रेष्ठ सत्यदर्शियों तथा वीर धर्मरक्षकों की सुयोग्य संतान के रूप में उभर कर आएँगे।

यदि मैं उस प्रदेश में आया, तो आपके मंगल चरणों पर श्रद्धासुमन अर्पण करने निश्चय ही आऊँगा। (मूल अंग्रेजी)

८०. मुंबई के रामकृष्णाश्रम में विश्राम

१३ अगस्त १९७०

श्रद्धेय श्री स्वामी हिरण्मयानंदजी, रामकृष्ण आश्रम खार, मुंबई

३ अगस्त १९७० को मुंबई छोड़कर दूसरे दिन नागपुर पहुँचा। डाक्टरों की इच्छानुसार अभी तक विश्राम कर रहा हूँ। मुंबई में जब मैं अस्पताल में था, आपने स्वयं आकर मुझे आशीर्वाद दिए थे। उस समय तथा तत्पश्चात् मैं खार आश्रम में आया था, तब आपने मुझे आश्रम के प्रशांत एवं पवित्र वातावरण में कुछ दिन रहने को सूचित किया था। मेरे वहाँ के वास्तव्य से मुझसे मिलने आनेवाले लोगों के कारण बाधा उत्पन्न हो सकती है, इस भय से मैं निर्णय नहीं कर पाया। किंतु आप तथा स्वामी अकामानंदजी ने मुझे आश्वस्त किया कि ऐसी बाधा नहीं होगी। इसलिए आपकी इच्छा का मान रखते हुए, कुछ दिन व्यतीत करने की धृष्टता कर मुंबई आ रहा हूँ।

२१ अगस्त १९७० को दादर पहुँचकर सीधा आश्रम में, लगभग प्रातः ११ बजे, आ जाऊँगा। दिनांक २५ शाम तक वहाँ ठहर कर इंदौर जाऊँगा। आपके पवित्र सान्निध्य से आश्रम में शांति का अनुभव करूँगा– यह मुझे विश्वास है। (मूल अंग्रेजी)

८१. योगाभ्यास करें

पूज्यपाद श्रीमत् जनार्दन स्वामी, नागपुर ५ दिसंबर १९७१

शरीर का शोधन कर उत्तम स्वास्थ्य तथा पूर्णायु प्राप्त करा देने के लिए योगासन के समान साधन नहीं है। यह संपूर्ण व्यावहारिक स्थूल विचार भी योग की ओर आकर्षित करने को पर्याप्त है। इसके अतिरिक्त मन को संयमित करने की शक्ति प्राप्त होने से, ज्ञान–संपादन तथा योग्यता से अपने कार्य सफल करने के लिए लगनेवाली एकाग्रता भी प्राप्त होती है। यह योग के अभ्यास का बहुत बड़ा लाभ है। वह ध्यान में रखकर इहलोक में यश, कीर्ति, सुख–समृद्धि की इच्छा करने वालों, को अर्थात् सद्यःकालीन बहुतांश समाज को योगाभ्यास की उत्सुकता रहनी चाहिए। इससे भी श्रेष्ठतम है मन को निर्विकार करने की, मन को सर्व प्रकार से रिक्त करने की शक्ति। यह प्राप्त होने पर अंतःकरण नित्य उत्साहपूर्ण सक्षम रहता है तथा थकावट या आलस्य नहीं आता। अखंड कार्य करने की क्षमता तथा मानवी जीवन का देव–दुर्लभ लक्ष्य प्राप्त होकर अक्षय प्रसन्नता तथा आनंद की उपलब्धि होती है। इन कारणों से सभी विचारवान तथा स्वहित चाहने वाले लोगों को योग का अनुसरण करना चाहिए। (मूल मराठी)

८२. मन एकाग्र करने का उपाय

श्री एस.एम.बसंतकुमार, सेलम ८ अप्रैल १९७२

आपके समान ही या आपसे भी अधिक बहुत से लोग मन एकाग्र नहीं कर पाते है, परंतु इससे विचलित न हों। यथाशक्ति अधिक से अधिक समय अपने काम में लगाइए। जिस क्षण आपको शून्यता या अस्वस्थता का अनुभव हो, कुछ क्षण विश्राम लें, कुछ समय चहल–कदमी करें और पुनः अपने काम में जुट जाएँ। क्रमशः काम की ओर लक्ष्य एकाग्र करने का समय बढ़ता जाएगा तथा आपका कष्ट दूर होगा। परमकृपालु से मैं आपके लिए तथा आपकी सफलता के लिए प्रार्थना करता हूँ। (मूल अंगेजी)

८३. धर्म-संस्कृति का ज्ञान करानेवाला साहित्य उपलब्ध हो

श्रीमत् स्वामी योगानंदतीर्थ, दौसा, जिला जयपुर   ६ सितंबर १९७२

'सम्यक् ज्ञान पत्रिका' का अंक आज पूरा पढ़ा। आज की परिस्थिति के संदर्भ में उसमें जो विचार प्रकट किए गए हैं, समाज के लिए अति उपकारक सिद्ध हो सकेंगे। ऐसा साहित्य अपने देशवासियों को उपलब्ध होने की आवश्यकता है। इससे अपने धर्म-संस्कृति-ज्ञान साधना की उज्ज्वल परंपरा का बोध प्राप्त होकर उस खंडित प्रवाह को पुनः जगाने की सत्प्रेरणा उदित होगी और फिर से भारत ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में अपने मौलिक संशोधनों के बल पर जग में सर्वोच्च स्थान पर विराजमान हो सकेगा।

आधुनिक विज्ञान के चमत्कारों से चौंधिया न जाते हुए, उनका जीवन में उपयोग कर, सच्चे सुख की आराधना जिस आत्मानुभूति से होती है, उसकी प्राप्ति का अनुभवसिद्ध मार्ग अखिल मानव के सम्मुख उपस्थित करने का महान दायित्व अपने राष्ट्र पर जगत्पिता ने ही डाल रखा है। उसे पूर्ण करने में निरलस भाव से, सत्प्रयत्नों के बल पर संलग्न रहना अपने व्यक्तियों का जन्मसिद्ध कर्तव्य है। इस कर्तव्य का बोध तथा प्रेरणा आपके द्वारा संपादित, आपके दिव्य जीवन से आलोकित यह 'सम्यक् ज्ञान पत्रिका' देने में समर्थ होगी, ऐसा विश्वास हुआ है।

प्रवासी जीवन के कारण आजकल अध्ययन कम ही होता है। लेखन का अभ्यास तो पूर्व भी नहीं था। अब तो वह विचार भी करना छोड़ देना पड़ रहा है। भगवान जैसा रखें, सुख से वैसा ही रहने का अभ्यास मात्र चल रहा है। आपने पत्र देकर तथा 'सम्यक् ज्ञान' का अंक भेजकर बड़ा अनुग्रह किया है। ऐसी ही कृपा बनी रहे। इति शम्।

८४. एक ही इष्ट की उपासना करें

श्री मोहनराव गोरवाडकर, नासिक   १ नवंबर १९७२

आप विभिन्न प्रकार की उपासनाएँ करते हैं। उपासना एक ही इष्ट की होना श्रेयस्कर है। उसमें समर्पण-भाव हो, स्वयं के लिए कोई भी कामना न रखते हुए करें। यही फलदायी होती है। आंतरिक इच्छाएँ भी पूर्ण होती हैं, परंतु कामना रखकर उपासना को सीमित न करें, ऐसा श्रेष्ठ पुरुषों से मैंने सुना है। यह बात आपके लिए उपयोगी होगी, ऐसा मुझे लगा, इसलिए लिखा है।

(मूल मराठी)

प्रकरण २
विदेशस्थ बंधुओं को लिखे पत्र

१. विदेशस्थ बंधु मन-धन से सेवा कर सकते हैं

वासुदेव चुलानी, कानरी द्वीप, स्पेन, १० सितंबर १९४९

विदेश गमन हेतु आप स्वयं को दोषी न समझें। सत्कर्म तथा सदाचरण से आप वहाँ के स्थानीय निवासियों के आदर के पात्र बन सकते हैं। अपने लोगों की सेवा करने के कई मार्ग हैं, पुराने साथी कार्यकर्ताओं के साथ प्रेमपूर्वक व्यवहार करते हुए अच्छे कार्यों के प्रति सदिच्छा का स्थायी भाव रखें। आप जानते हैं, हम कहते हैं कि तन, मन, धन से सेवा करेंगे। आप यदि विदेश में होने के कारण तन से सेवा करने में असमर्थ हैं, तथापि दो अन्य मार्ग आपके के लिए उपलब्ध हैं। (मूल अंग्रेजी)

२. मानववंश की दिव्यता जगाना हमारा कर्तव्य

श्री घनश्याम जी महतानी, (हांगकांग) २७ फरवरी १९५०

मुझे बहुत संतोष है कि आप हैदराबाद (सिंध) से उन नौ लोगों में से हैं, जिनके हृदयों में पुरानी सुखद स्मृतियाँ समाई हुई हैं। समय बदल गया है, जिसके कारण आप जैसे लोग इतस्ततः बिखर गए। सारे संसार में उथल-पुथल मची हुई है। सामाजिक, आर्थिक तथा अन्य व्यवस्थाएँ टूट रही हैं और बहुत बड़ा दुर्भाग्य यह है कि अन्य पौर्वात्य लोगों के समान ही अपने देश के लोग भी भूल रहे हैं कि मनुष्य केवल रोटी पर ही नहीं, बल्कि ईश्वर के वचनों पर जीवित रहता है। हम पुण्यभूमि भारत की संतान हैं, जिनका जीवनकार्य तथा प्रयत्न मानव वंश की दिव्यता तथा पौरुष के प्रति विश्वास जगाना है। इसलिए हम सब लोग जहाँ भी हों, अपनी संस्कृति

का दिव्य प्रकाश अपने हृदयों में जागृत रखे और प्रत्येक व्यक्ति अपनी शक्ति के अनुसार संसार की अन्य प्रकाश-किरणों को समेटे, जिसके कारण एक ऐसी प्रचंड अग्निज्वाला निर्माण हो, जो सारे संसार से अंधकार और दुःख नष्ट कर दे। (मूल अंग्रेजी)

३. हम अपनी संस्कृति का दीप ज्योतित रखें

श्री जगदीशजी, नैरोबी (पू.अफ्रीका) २८ फरवरी १९५०

.....अपनी पुण्यपावन मातृभूमि से दूर रहते हुए भारतीय संस्कृति की उपासना अखंड चालू रखने का निश्चय एवं तदनुसार चलाया हुआ भारतीय स्वयंसेवक संघ आपकी दृढ़ निष्ठा का परिचायक है। सब भारतीय बंधुओं को अपने इस संघ में सम्मिलित करने का आप प्रयास करेंगे ही। कहीं भी रहना क्यों न हो, अपनी संस्कृति का दीप ज्योतित रखना अपना सब का प्रथम कर्तव्य है। उसके लिए जीवन में उत्तम चारित्र्य निर्माण करना, श्रीमद्भगवद्गीता में दिए 'दैवी संपद' नाम से वर्णित गुणों को प्रत्येक ने अपने में उत्पन्न करने का प्रयत्न करना और अपनी मातृभूमि की आजीवन सेवा करने का निश्चय निभाना सर्वथा आवश्यक है।

४. पत्र को ही रसीद समझ लें

श्री मोहन पंजाबी, हांगकांग २५ मार्च १९५०

आप जहाँ भी हैं, आपके हृदय में हमारे दैवी जीवन कार्य के प्रति अमिट प्रेम बसता है, मैं इससे विशेष रूप से प्रसन्न हूँ। निःसंशय आप शीघ्र ही अपेक्षित उत्तरदायित्व वहन करने में समर्थ होंगे।

हम कठिन समय से गुजर रहे हैं। त्याग और प्रयत्नों की पराकाष्ठा ही समय की माँग है। कोलकाता के 'सहायता कार्य' के कोष में मैंने राशि भेज दी है। कृपया इस पत्र को ही तात्कालिक रसीद समझ लें, यथावकाश उसे भेजने की व्यवस्था होगी ही। घनश्याम महतानी को मेरा स्मरण करा दें। मैं आशा करता हूँ कि वे सकुशल ही होंगे। समय-समय पर मुझे लिखते रहें। (मूल अंग्रेजी)

५. बौद्ध मत अपने ही धर्म का अंग है

श्री प्रभुलाल, रंगून   १० नवंबर १९५५

.....आपके भारतीय स्वयंसेवक संघ का विजयादशमी महोत्सव बहुत उत्साह से संपन्न होने का समाचार पढ़ा। अतीव प्रसन्नता हुई। आप सब स्वयंसेवक बंधु मिलकर एक हृदय से चलते हुए कार्य में सब भारतीयों को साथ लेने का प्रयास करें। स्थानीय जनता भी एक दृष्टि से भारतीय ही है। बौद्ध मत अपने ही धर्म का एक अंग है। वेदों का साक्षात् प्रमाण न मानने से उनका भारतीयत्व नष्ट नहीं होता। अन्य भी वेद न मानने वाले, किंतु विशाल 'हिंदू धर्म' के सात्विक भाव को लेकर निराकार या शून्य की उपासना करनेवाले मत यहाँ प्रचलित हैं, वैसा ही बौद्ध मत भी है। राजकीय दृष्टि से विलग शासन वहाँ होते हुए भी समाज, संस्कृति, धर्म आदि अधिक श्रेष्ठ नाते से अपना स्थानीय जनता से साधर्म्य है। इस दृष्टि को लेकर उनके साथ सहानुभूति एवं प्रेम के संबंध स्थापित कर अपने शुद्ध आचरण, विचार, भावनाओं से तत्रस्थ समाज भारत की ओर आत्मीयता से देखे, राजनैतिक क्षेत्र में भी सौहार्द से चलने में प्रसन्नता अनुभव करे, ऐसा अपना व्यवहार रहे। अपने व्यापार आदि में उच्च भारतीय आदर्श रखकर अतीव सच्चाई से सबको प्रभावित करना अपना कर्तव्य है, इसका ध्यान रहे।

सब स्वयंसेवक बंधु रामायण, महाभारत, श्रीमद्भगवद्गीता, अनेक साधु-संतों के वचन आदि से अच्छे परिचित हैं। अध्ययन करना आवश्यक है। साथ ही श्रेष्ठ पुरुषों के चरित्रों का भी अध्ययन हो। श्रीमत् स्वामी विवेकानंद, स्वामी रामतीर्थ आदि के ग्रंथ पढ़ने से अपने धर्म-संस्कृति का ज्ञान तथा सार्थ अभिमान जागृत रहकर विचार भावना परिशुद्ध होती है, जीवन श्रेष्ठ बनकर हिंदुत्व का आदर्श बन सकता है।

नियमित रूप से दैनंदिन कार्यक्रमों के उत्साह से परिपूर्ण अनुशासित शाखा उत्तम रीति से चलाना, यह तो अपना जीवनव्रत है। इस प्रकार की अन्यान्य सब बातों की ओर ध्यान देकर कार्य में सुचारु रूप से वृद्धि करते रहें।

६. विदेशी संस्कृति का अंधानुकरण न करें

श्री बाबूभाई ओझा, इंग्लैंड   २१ फरवरी १९५७

.....आजकल देशभर में चुनाव की चहल-पहल चल रही है। मैं तो उससे दूर हूँ। कार्य भी चुनाव की स्पर्धा आदि से परे है। केवल कुछ

व्यक्ति साधारण नागरिक के नाते इस विषय में रुचि रखते हुए दिखने पर उनके द्वारा वाणी या कृति से अपने सर्वसमाज की एकात्मता का ही आविष्कार हो, उत्साह के तात्कालिक आवेश में किसी का संतुलन भंग न हो, इतनी सूचनाएँ देते रहना, यही आगामी तीन सप्ताह में मेरा काम है।

प्रजातंत्रीय चुनाव में अल्प अभ्यस्त भारतीय जनता बहुत शांति से काम करती प्रतीत होती है। कुछ अपवाद होते ही हैं, किंतु सर्वसाधारण वायुमंडल सराहनीय है। अब सब अपनी-अपनी स्तुति करने में लगे हैं। स्वतः की स्तुति करना, याने आत्महत्या करने के तुल्य पाप करना– यह अपने शास्त्र का सिद्धांत इस परानुकरण प्राप्त प्रणाली से विस्मृत हो रहा है और अशिष्ट तथा असंस्कृत मानव को शोभा देनेवाली आत्मश्लाघा का बोलबाला हो रहा है। भारतीय जीवन-प्रणाली के एक महान सिद्धांत को आघात के रूप में यह स्थिति विचारणीय तथा चिंताजनक है। हम आशा करें कि क्रमशः जन-नेतृत्व करनेवाले इस परागति को समझेंगे और शीघ्र ही सिद्धांतों के तथा कार्यक्रमों के आधार पर प्रचार करना सीखेंगे।

उधर प्रजातंत्रीय प्रणाली का अभ्यास पुराना होने के कारण चुनाव का ज्वर यहाँ जैसा उन्माद की अवस्था (Delirium) तक पहुँचता है, वैसा वहाँ होता नहीं होगा और फलस्वरूप परस्पर स्नेह में चुनाव-स्पर्धा से बाधा भी नहीं पड़ती होगी। आपको ऐसा अच्छा अवसर देखने के लिए मिलने पर, उसका उचित अध्ययन कर उसके गुणों का परिज्ञान प्राप्त कर लें। लाभ होगा।

आपकी पढ़ाई ठीक चल रही होगी। स्वास्थ्य का ध्यान रखना भी आवश्यक है। अपने अनेक देशवासी किसी न किसी उद्देश्य से उस देश में हैं। उनमें से जितने अधिक हों, उतने सब बंधुओं से स्नेहसंपर्क प्रस्थापित कर एक-दूसरे को अपने वहाँ के वास्तव्य का दायित्व समझाते रहना आवश्यक है। अनेक बार मैं कुछ मनोव्यथा से सोचता रहता हूँ कि अपना कोई बंधु विदेश में जाता है तो ऐसा रहन-सहन अपनाता है कि उसकी राष्ट्रीय विशेषता सर्वथा लुप्त हो जाती है, विचारादि को भूल जाता है। अपने राष्ट्र के वैशिष्ट्य के संबंध में यदि किसी ने पूछा तो कहने में असमर्थ होता है। इंग्लैंड आदि विदेशों के इतिहास, चाल-चलन, वाङ्मय इत्यादि में ही वह रंगा रहकर अपने ही राष्ट्र के विषय में अज्ञान में रहता दिखाई देता है। अपने राष्ट्र की प्रकृति आध्यात्मिक है। यह यदि कहा तो आध्यात्मिक का अर्थ क्या? तदनुसार जीवन-रचना कैसी? गुण-संवर्धन

कैसा? उसका प्रत्येक व्यक्ति के स्वभाव पर पड़ा परिणाम कैसा? इन सबकी श्रेष्ठता किस प्रकार की? आध्यात्मिकता में यज्ञप्रधान संस्कृति, त्यागप्रधान जीवन इत्यादि कहा जाता है, उसमें यज्ञ क्या? त्याग कैसा? उसकी उदात्तता किस कारण? इन बातों के उदाहरणस्वरूप राष्ट्र के आदर्श व्यक्ति तथा उनका चरित्र क्या? आदि बातों की ओर ध्यान न रहने के फलस्वरूप विदेशों में अपने देश तथा राष्ट्र के संबंध में अनादर उत्पन्न होना स्वाभाविक है। अपने ही हाथों से अपने राष्ट्र का अनादर होना कितना क्लेशकारक है, यह कोई सोचता है क्या?

आप भी इस ढंग से सोचते होंगे। अपने अन्य बंधुओं को भी सोचने के लिए प्रेरित करना तथा अपनी वैशिष्ट्यपूर्ण छाप तद्देशवासियों पर पड़े– ऐसा जीवन, चारित्र्य, एवं विचारों की प्रगल्भता प्रकट करने की सक्रिय उत्सुकता निर्माण करना अतीव आवश्यक है। हम याने किसी पश्चिमी देश के निकृष्ट अनुकरण की प्रतिकृति मात्र हैं, ऐसी धारणा नष्ट कर अपना श्रेष्ट वैशिष्ट्यपूर्ण राष्ट्रीय जीवन है, इसका ज्ञान तथा इस संबंध में आदर उत्पन्न हो, ऐसा ही अपना वहाँ का वास्तव्य होना आवश्यक है।

आप सब जानते हैं, परंतु पत्र लिखते-लिखते अनायास ही यह विचार मन में उठ आए। उसका कुछ अल्प अंश ही प्रकट किया है।

७. अपने जीवन में भारतीयता प्रकट हो

श्री प्रभुलाल मेहता, रंगून ३ अप्रैल १९५७

.....आप सब बंधु मिलकर अपनी भारतीय संस्कृति की पवित्र नींव पर तत्रस्थ सब पूर्वकाल के भारतनिवासी बंधुओं का एकत्रीकरण कर रहे हैं, उनमें परस्पर स्नेहादि शुद्ध भाव, अपनी परंपरा का ज्ञान, अभिमान, तदनुसार अपने जीवन की रचना की इच्छा व शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक सामर्थ्य तथा अनुशासित जीवन-निर्माण कर रहे हैं, यह पढ़कर तथा आपके प्रयत्न क्रमशः सफल हो रहे हैं, यह जानकर हृदय आनंद से भरा जा रहा है। विशेष प्रसन्नता तो इस बात की होती है कि यद्यपि राजनैतिक रचना की दृष्टि से ब्रह्मदेश भारत से भिन्न दिखता होगा, तथापि अति प्राचीनकाल से अपनी एकता का ही उल्लेख है। सांस्कृतिक, धार्मिक, सामाजिक, वैवाहिक आदि संबंधों से यह एकता परिपुष्ट होती रही है। बीच के विपरीत दुर्भाग्यपूर्ण कालखंड में यह भाव कुछ शिथिल सा हुआ और अंग्रेजों की नीति ने विभेद का विष बो दिया। तथापि अपना रक्त एक ही

है। हृदय एक है। इस एकता की विस्मृति दूर कर राजनैतिक दृष्टि से दो भिन्न राज्य होने पर भी सांस्कृतिक एकात्म्य की अनुभूति खंडित होने देना अयोग्य, अहितकर एवं अशोभनीय है। इस तथ्य को ध्यान में रखकर आप प्रयत्न कर रहे हैं, यह अतीव आनंद का विषय है। सहस्रों वर्षों की शुद्ध सर्वात्मभूतता की अनुभूति का फिर स्वरूप प्रकट हो रहा है। शीघ्र ही ब्रह्मदेशस्थ तथा भारतस्थ एक समाज का ज्ञान दृढ़ हो– ऐसा प्रयत्न करते रहें।

अपने जीवन में भारतीयता प्रकट होना आवश्यक है। जीवन के छोटे-छोटे अंगों से लेकर सद्गुण समुच्चय तथा तत्त्वज्ञान की जानकारी, अपने प्राचीन काल से अब तक प्रकट होते आ रहे धार्मिक, सांस्कृतिक, दार्शनिक एवं व्यावहारिक जीवन के इतिहास का ज्ञान, अपने जीवन की परंपरा का मार्गदर्शन करनेवाले महापुरुषों के परिचय का भावपूर्ण ज्ञान आदि सब दृष्टि से अपना भारतीयत्व शुद्ध एवं आकर्षक रूप में व्यक्त होना चाहिए। आत्मनिरीक्षणपूर्वक प्रत्येक बंधु इस ओर ध्यान देगा, तो बड़ा लाभ तथा बहुत उन्नति होगी।

आप सब परस्पर संबद्ध बंधु शिविर के रूप में एकत्र आ रहे हैं। वहाँ इन सब बातों पर विचार कर योग्य नीति निर्धारण करें।

८. विदेशों में स्वाभिमान से रहें

श्री राजेन्द्र दवे, लंदन

२७ मार्च १९५८

.....दस वर्ष भारत के बाहर रहकर भी आप यहाँ की गतिविधियों की जानकारी रखकर रुचि के साथ उसका विचार करते हैं, इस कारण आप अभिनंदन के पात्र हैं। अपनी स्थिति ऐसी स्वाभिमानविहीन अतएव विपरीत तत्त्वों से आहत क्यों है, इसका विचार करना आवश्यक है। आशा है, आप इसपर सोचेंगे।

सोचने के लिए एक प्रश्न प्रथम सामने रखें। भारत के बाहर अन्यान्य देशों में कभी विद्यार्जन, तो कभी धनार्जन के हेतु अनेक बंधु जाकर बसे हैं या कुछ अल्पकाल बसते हैं। वहाँ उनके रहन-सहन, आहार-विहार, वेषभूषा, दैनिक कार्यक्रम इत्यादि में कुछ भारतीयता का अंश दिखता है अथवा नहीं? अपनी भारतीय पद्धति को लेकर रहने की दृढ़ता तथा विश्वास जब उधर के जीवन में सब बंधु व्यक्त करेंगे और यह उनका स्वाभाविक गुण बन जाएगा, तब अन्य बातों का विचार करने में कुछ लाभ होगा।

इसका विचार तथा इस स्वाभिमान का प्रचार करने में अपनी शक्ति, बुद्धि आप तथा अन्य बंधु लगाकर भारत पर बड़ा उपकार करेंगे। श्री परमात्मा आप सबको ऐसी प्रेरणा एवं सामर्थ्य दे।

९. भारतीय मानव धर्म का संस्कार फैलाएँ

श्री जगदीश मिश्र सूद, नैरोबी (पू.अफ्रीका) २८ मार्च १९५८

.....उधर भारतीय स्वयंसेवक संघ का जो कुछ कार्य चलता है, उसका ठीक ज्ञान आपके पत्र से हुआ। अब आगामी मई में जो कार्यक्रम संकल्पित हैं, उसमें आपको उत्तम सफलता मिले। यहाँ से मैंने कुछ संदेश भेजना आवश्यक नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति के लिए इतना ध्यान में रखना आवश्यक है कि वह भारतीय है। उसकी अपनी परंपरा, अपना धर्म, अपना रहन-सहन, आहार-विहार इत्यादि है। उसको दृढ़ता से चलाना आवश्यक है। दुर्भाग्य से यही देखने को मिलता है कि देश-विदेश में रहनेवाले भारतीय अपने को भूतपूर्व राज्यकर्ता अंग्रेज के मानसपुत्र मानकर अंग्रेज जैसा रहन-सहन, व्यवहार, भाषा, वेष आदि सबको स्वीकार करके चलते हैं। यह बदलना आवश्यक प्रतीत होता है। अपनी ही विशिष्टता के साथ जीवन शुद्ध, पवित्र अतएव आकर्षक बनाकर स्थानिक जन के हृदय में बंधुप्रेम जागृत कर जीवन एक-दूसरे में घुला-मिलाकर अपने स्थायी अखिल मानव धर्म का संस्कार सर्व दूर फैलाते जाना आवश्यक है। ऐसा अभी होता नहीं। स्वाभिमान तथा आत्मविश्वास का अभाव होने से एक ग्लानि, जिसे अंग्रेजी में Inferiority complex बोला गया है, सब लोगों पर छाई हुई है। इस दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति को बदलना होगा। मैं आशा करता हूँ कि आप लोगों के प्रयास इस दृष्टि से हों और सफल हों। इसी में भारतीय स्वयंसेवक संघ के नाम की सार्थकता है। ....तत्रस्थ बंधुओं को सादर नमस्कार।

१०. ब्रह्मदेश-भारत की सांस्कृतिक एकता

श्री रामप्रकाश जी (ब्रह्मदेश) २८ मार्च १९५८

.....मान्यवर श्री ऊ छान टून जी के अभी दर्शन नहीं हुए। जो उनके आगमन का कारण इधर के वृत्त-पत्रों में आया था, वह कुछ विचित्र प्रतीत हुआ। तो भी ऐसे श्रेष्ठ पुरुष से मिलना, बातचीत करना मेरे लिए भाग्य का ही विषय होगा।

रंगून में आप वर्ग लगा रहे हैं, यह बहुत हर्ष की बात है। सब संबंधित स्थानों से स्वयंसेवक आएँ, योग्य तथा दैनंदिन कार्य के लिए आवश्यक शिक्षा प्राप्त करें तथा अपने कार्य के सिद्धांत, तदनुसार तत्प्रांतीय, याने ब्रह्मी भी अपने संस्कृति प्रवाह के ही अंग हैं, यह ज्ञान, उसपर आधारित व्यवहार, राजनैतिक स्वार्थों के कारण या अन्य स्वार्थों के कारण निर्माण हुई कटुता पाकर बढ़ रहे भेदभाव के ऊपर अपनी विशुद्ध सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक एकता है– इसका साक्षात् अनुभव एवं प्रचार करने की क्षमता प्राप्त करें और आगामी काल में सर्वदूर इस महान स्नेहसागर को फैलाने के हेतु, सर्वशक्ति से प्रयत्न करने हेतु आगे बढ़ें। इसी दृष्टि से वर्ग चलेगा और सफल होगा ऐसा मुझे विश्वास है।

दूर जाकर व्यवसाय इत्यादि के बाद सामान्यतः मनुष्य व्यक्तिवादी, स्वार्थी फलस्वरूप सत्संस्कारशून्य होता है। अपने यहाँ तो गत सहस्र वर्षों से विशुद्ध राष्ट्र-परंपरा का प्रायः लोप हो जाने से उनका जीवन अतीव ही विचित्र हो जाता है। अपने देश के मुख्य भाग से चलकर अन्यत्र कहीं बसने पर पिछले राज्यकर्ता अंग्रेज की रीतिनीति आदि स्वीकार कर उनके मानो मानसपुत्र बने हों, ऐसे स्वाभिमानशून्य होकर अपने कई बंधुओं का जीवन चलता हुआ दिखता है। रहन-सहन, आहार-विहार, विचार, आचार, वेष, भाषा आदि सबमें अंग्रेज का ही प्रभाव रहता है और विशुद्ध भारतीयता, जिसके अंतर्गत आज के कथित विलग ब्रह्मदेशादि हैं, का कहीं पता भी नहीं लगता। ऐसे स्वाभिमान तथा आत्मविश्वास खो बैठने पर सब प्रकार की आपत्तियाँ आएँ, तो आश्चर्य नहीं। यह स्थिति बदलनी चाहिए और अपनी विशाल, विशुद्ध, सर्वसंग्राहक परंपरा को जगा कर तदनुसार प्रत्यक्ष जीवन बिताने की क्षमता लाकर चलने से ही यह अवस्था बदल सकती है। केवल राजनीति की शासकीय चालों से काम नहीं होगा। अतः यह बड़ा और पवित्र भार आप बंधुओं के ऊपर है। इस बात को विचार में रखकर अपना पवित्र कार्य चलाएँ और उसमें अधिक गति प्राप्त होने के लिए जो वर्ग संकल्पित है, उसे उत्तम रीति से सफल करें। श्रीभगवान का आशीष पवित्र निःस्वार्थ धर्म-कार्य को नित्य मिलता है, इसका दृढ़ विश्वास रख प्रयत्न में सब बंधु संलग्न हों।

११. स्वत्व की रक्षा

श्री चंद्रकांत गोडसे

६ जुलाई १९५९

...स्वदेश छोड़कर कुछ काल के लिए क्यों न हो, अन्य देश में वास्तव्य करने से अपने पर एक बड़ा दायित्व आता है एवं अपने आचरण से अपने राष्ट्र का मूल्यांकन तद्देशीय करते हैं, इसका ज्ञान अपने विदेशी शिक्षादि कार्यार्थ गए हुए अनेक बंधुओं को यथार्थता से नहीं होता। यह अपना दुर्भाग्य है, जो उत्तम राष्ट्रभक्ति के अभाव का द्योतक है। इसलिए अनेक व्यवधान सँभाल कर भी स्वजनों से मेल-मिलाप, विचार-विनिमय करते रहना, वहाँ का समृद्ध जीवन देखकर उससे भी श्रेष्ठ जीवन अपने यहाँ निर्माण करने का निश्चय मन में अंकित करना, स्वयं की विशेषताओं की, श्रेष्ठता की उत्कट श्रद्धा बलवती रखकर, स्वत्व का त्याग न करते हुए अन्य देश के उत्तम गुण आत्मसात कर अधिक उत्तम, अधिक निष्ठावान, अधिक कर्तव्यदक्ष होना एवं विदेशी चमक-दमक तथा बाहरी जगमगाहट से न चौंधियाते हुए विदेशी विचार-आचार के दास न बनते हुए अधिक प्रखरता से राष्ट्र-सेवा का निश्चय मन में रखना आदि अत्यंत महत्त्व की बातों की ओर दुर्लक्ष्य होता है। हर कोई अपने ही स्वार्थी विचारों में मग्न होकर रहता है। फिर भी आपने प्रयत्न कर कुछ लोगों को बीच-बीच में एकत्र करने का प्रयास जारी रखा है। उसमें यश प्राप्त होकर आपका श्रीगुरुपौर्णिमा महोत्सव संपन्न करने का संकल्प उत्तम रीति से सफल हो...।'

१२. विदेशों में भारतीयों का कर्तव्य

श्री बालासाहब भिडे, (पूर्व अफ्रीका का प्रवास)   ५ सितंबर १९५९

ठीक प्रकार से कार्य की रचना कर परस्पर सहयोग तथा सामंजस्य से सर्व कार्यकर्ता आगे भी काम व्यवस्थित रूप से करते रहेंगे तथा सब की सहमति से सभी स्थानों का दायित्व उठा सकनेवाला कोई एक कार्यकर्ता नियुक्त कर, उसके मार्गदर्शन के अनुसार सभी चलें, यह अति महत्त्वपूर्ण काम करना होगा। शाखाओं के कार्यक्रमों की रचना ठीक कर सुव्यवस्था प्रस्थापित करना भी एक महत्त्वपूर्ण कार्य है। सर्वसहमति से नियुक्त व्यक्ति को समय-समय पर दिल्ली के बंधुओं से पत्रव्यवहार द्वारा संबंध रखने की सूचना दी जाए। शुद्ध, सात्विक तथा

पूर्णतः हिंदू संस्कार-युक्त जीवन जीने की रुचि पैदा करने के लिए अपने धर्म की जानकारी अध्ययन द्वारा प्राप्त की जाए। सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है स्वाभिमान जागृत करना। फलस्वरूप विदेशों के विदेशी वातावरण से मोहित होने, स्वत्व छोड़ने, परानुकरण करने की बुरी लत छूट जाएगी। इसमें पंथ-संप्रदाय के भेदों में न फँसते हुए सर्वसंग्राहकता ही आत्मसात करना है। अपने धर्मग्रंथों में से सच्चारित्र्य की शिक्षा देनेवाले रामायण-महाभारत का पठन-चिंतन हो। उपनिषदादि ग्रंथों का सुलभ ज्ञान कराया जाए। स्वामी रामतीर्थ, विशेषतः श्रीरामकृष्ण-विवेकानंद तथा उनकी परंपरा के वाङ्मय का अभ्यास हो। पंथ-संप्रदाय निरपेक्ष शुद्ध हिंदू धर्म के ज्ञान की मन पर पकड़ हो, यह प्रयत्न आवश्यक है।

इन सब दृष्टियों से मार्गदर्शन करें। राजनैतिक संघर्ष से अलिप्त रहकर, तद्देशीय लोगों का शोषणात्मक लाभ उठाने की दुष्प्रवृत्ति से सर्वथा मुक्त रहकर, उनसे सांस्कृतिक स्तर पर स्नेह के संबंध प्रस्थापित कर एकात्मता का व्यवहार निर्माण होगा, इसके लिए धीरज रखते हुए क्रमशः प्रयत्न होते रहें, ऐसी योजना हो।

वास्तव में इतनी दूरी से तथा वहाँ की प्रत्यक्ष परिस्थिति से अनभिज्ञ होने के कारण से कुछ सूचनाएँ देना धृष्टतापूर्ण ही होगा। आप सब जानते ही हैं। प्रत्यक्ष परिस्थिति का अध्ययन कर, स्वधर्म स्वसंस्कृति का अभिमान सूत्रबद्ध तथा सामर्थ्यसंपन्न रूप में व्यक्त होकर दूर देशों में बसनेवाले अपने बंधु स्वसंस्कृति की जीवित प्रदर्शनी के नाते गौरव से पहचाने जाएँ, इसके लिए जो-जो योजनाएँ आवश्यक, उचित तथा संभव हों, उन्हें प्रस्थापित करने का कार्य आप अपनी स्वतंत्र प्रतिभा से उत्तम कर सकेंगे। (मूल मराठी)

१३. अपनी आवाज प्रभावी हो

श्री चंद्रकांत गोडसे, बर्मिंघम (यू.के.)

२ सितंबर १९६०

....विभिन्न प्रांतों की घटनाएँ मन को चिंताग्रस्त कर रही हैं। भाषा, संप्रदाय आदि विवाद उग्र होकर उनका विस्फोट होने जा रहा है। हमारे इतिहास की पुनरावृत्ति हो रही है। पीछे जैसा विधर्मी आक्रामकों ने, अंतर्गत विग्रह का लाभ उठाकर, अपना स्वामित्व प्रस्थापित किया, वैसा ही होने लगा है। इतिहास से योग्य एवं सत्य बोध ग्रहणकर कार्य की रूपरेखा

केवल अपने कार्य में ही की गई है। परंतु लोगों ने आँखें, कान एवं हृदय अभी तक बड़े पैमाने पर बंद रखने का ही बीड़ा उठाया है। अपनी सत्य की पुकार बहुतों के हृदय तक नहीं पहुँच पाई है। इसका अर्थ स्पष्ट ही है कि अपनी आवाज अधिक गंभीर एवं प्रभावी होनी चाहिए। अपने कार्यकर्ताओं के यह ध्यान में आया ही है, एवं प्रयत्न चालू हैं। उनका सुपरिणाम होकर कार्य की व्याप्ति एवं दृढ़ता अपेक्षा एवं आवश्यकतानुसार बढ़कर अंतःसंघर्ष का विष समूल नष्ट होगा एवं अनुशासनबद्ध, एकात्म, संगठितता के अमृत से बलिष्ठ बनकर राष्ट्र स्वाभिमान, स्व-वैभव से गौरवान्वित होकर विश्व के सामने खड़ा रहेगा, ऐसी अपेक्षा है। वास्तव में अनेकों को सब प्रकार के व्यक्तिगत जीवन के उत्कर्ष का संकल्प मन से निकाल बाहर कर, काया-वाचा-मनसा परिश्रम करना पड़ेगा। तभी यह अपेक्षा पूर्ण हो सकेगी। ...

१४. विदेशों में शिक्षाप्राप्ति के समय कच का आदर्श सामने रहे

श्री रवींद्र भट्टाचार्य, प.जर्मन ६ सितंबर १९६०

आपका १४ अगस्त १९६० का पत्र मिला। आपको कदाचित् यह ज्ञात नहीं होगा कि वह दिन भगवान श्रीकृष्ण की जन्माष्टमी का शुभ दिन था। आपने पत्र लिखने का उचित दिन चुना। अन्य बातों की ओर दुर्लक्ष्य कर आप अपनी पढ़ाई की ओर ध्यान केंद्रित करें। अन्य बातें बाद में भी हो सकती हैं। हमारे तरुण मित्र जब विदेश में जाते हैं, तब उनका उद्देश्य ज्ञान-विज्ञान की उन शाखाओं का ज्ञान प्राप्त करना होना चाहिए, जिनका विकास स्वदेश में नहीं हुआ है। वह ज्ञान संपादन कर, विदेशों के मोहजाल में न फँसते हुए स्वदेश लौट आना चाहिए, जिससे वे अपने देश का विकास अन्य विकसित देशों के समान कर सकें। पुराणों में एक कथा प्रसिद्ध है।

देव-असुर संग्राम में असुरों की विजय इसलिए होती थी कि उनकी जीवनहानि नहीं होती थी, क्योंकि असुर-गुरु शुक्राचार्य के पास संजीवनी विद्या थी। देवों ने एक बुद्धिमान तथा उत्साही तरुण विद्यार्थी कच को संजीवनी विद्या सीखने के लिए असुरों के पास भेजा। असुर-गुरु की कन्या देवयानी को उस तरुण से प्रेम हो गया। अपनी कन्या के सुख के लिए असुर-गुरु ने उसे संजीवनी विद्या प्रदान की। विद्या-संपादन कर जब वह देवलोक लौटने लगा, तब देवयानी ने उसके प्रति अपना प्रगाढ़ प्रेम प्रकट

किया तथा उसके साथ विवाह करने की इच्छा व्यक्त की। कच ने उसकी प्रार्थना स्वीकार नहीं की, क्योंकि वह असुरलोक में विद्या प्राप्त करने के लिए गया था, न कि पत्नी प्राप्त करने। वह देवलोक लौट आया। परिणामस्वरूप देवों की निरंतर विजय होने लगी।

कुछ भी हो, आपको निश्चय करना है कि आप वहाँ विवाह करें या न करें। यदि आप विवाह करने का निश्चय करते हैं, तो उस महिला को आपके साथ स्वदेश चलने तथा देशसेवा के कार्य में संपूर्ण सहयोग देने को तैयार करें। यदि आपने अपने गुणों से उसका विश्वास तथा प्रेम जीत लिया हो, तो यह बात कठिन नहीं होगी। परंतु यदि आप केवल उसके शारीरिक आकर्षण से मोहित होकर पराजित हुए हों, तो आपको इस संपूर्ण सम्बन्ध पर गंभीरतापूर्वक पुनर्विचार करना चाहिए। (मूल अंग्रेजी)

१५. ब्रह्मदेश की उन्नति सर्वथा अपनी भी उन्नति है

श्री रामप्रकाश जी, रंगून

४ अप्रैल १९६१

....उधर की परिस्थिति के समाचार मिलते रहते हैं। वायुमंडल स्फोटक है। दृढ़ता से काम लेने पर उपद्रवकारियों को हानि करने से, अशांति उत्पन्न करने से रोका जा सकेगा। आशा है, शासन उचित कार्यवाही करेगा। भारत का अभिन्नहृदय मित्र-राज्य सुख तथा शांति से उन्नति करता रहे, यही इच्छा है। अतिप्राचीन काल से भारत तथा ब्रह्मदेश का सांस्कृतिक, धार्मिक जीवन एक ही है। भले ही राज्य भिन्न हो। वैसे भारत में भी अनेकों बार अनेक राज्यों के अस्तित्व की स्थिति रही है, तो भी आंतरिक एकात्मता अबाधित रूप से चलती आ रही है। वही स्थिति भारत तथा ब्रह्मदेश के बीच नित्य रही है। अतः ब्रह्मदेश की उन्नति सर्वथा अपनी भी उन्नति है। इसी कारण यह स्वाभाविक इच्छा है कि वहाँ के उपद्रव शांत होकर सुख-शांति का जीवन अति शीघ्र प्रस्थापित हो।

ट्रेन दुर्घटना में मृत तथा आहत सभी बंधुओं तथा उनके परिवार के व्यक्तियों के प्रति मन में बहुत सहानुभूति है। उनके दुःख से अंतःकरण में अपार व्यथा हो रही हैं। ...आपके ज्येष्ठ भ्राता श्री रामप्रतापजी का रक्षण परमकृपालु श्रीभगवान की कृपा से हुआ है। यह एक घटना भी श्रीपरमात्मा पर पूरा विश्वास रखकर अपने पवित्र कार्य में निःस्वार्थ भाव से संलग्न रहने की प्रेरणा देने के लिए पर्याप्त होनी चाहिए। सुख-दुःख,

जीवन-मरण तो भगवान के हाथों में है। अपने को उसपर भरोसा रखकर कर्तव्य करते रहना है। कर्तव्यविमुख होने से मृत्यु टलती नहीं, कर्तव्यच्युति का पातक मात्र होता है। अतः हम सब बंधुओं को निश्चिंतता से कार्यरत रहना ही उचित है। जो होगा, सो सभी श्रीपरमात्मा की कृपा का प्रसाद है, इस भाव से उसे सानंद ग्रहण करना अपना काम है।

२ अप्रैल ६१ से वर्ग प्रारंभ हो गया होगा।...नवीन नाम, प्रार्थना आदि का प्रारंभ इसी वर्ग में आप कर रहे हैं, यह हर्ष की बात है। आप सफल हों। नवीन स्वरूप धारण करने पर भी जीवन के मूल स्रोत को हृदय में जागृत रखने की ओर ध्यान रहेगा ही। मान्यवर श्री उ छान टून को स्मरणपूर्वक सादर नमस्कार प्रेषित करें।

१६. प्रयत्न सही दिशा में

श्री जगदीश मित्र सूद, दिल्ली   १ जुलाई १९६१

....अपनी संस्कृति की विशालता, सर्वसंग्राहकता के अनुरूप ही आप स्थानीय बंधुओं से विशुद्ध स्वार्थशून्य संबंध स्थापित कर संपर्क बढ़ा रहे हैं, यह जानकर बहुत हर्ष हुआ। ऐसे संपर्क के कार्यक्रमों में कभी-कभी अत्यधिक उत्साह के कारण कृत्रिमता आने की संभावना रहती है। वह अत्यंत हानिकारक होती है। अपना संबंध किसी स्वार्थमूलक हेतु से प्रेरित न होकर वास्तविक बंधुता की अनुभूति से है। अतः अपनी संपर्क-योजना भी स्वाभाविक होनी आवश्यक है। इस ओर आप सब कार्यकर्ताओं का ध्यान होगा ही।

तत्रस्थ हिंदू समाज अपनी परंपरा से विलग होता जा रहा है। अन्य समाजों का अनुसरण करता है, किंतु केवल स्वार्थवश, अन्यथा उनकी परंपरा की निष्ठा, राष्ट्रनिष्ठा, धर्मश्रद्धा का भी उन्होंने अनुसरण किया होता, परंतु इसके लिए मन शुद्ध, निःस्वार्थ तथा दृढ़ चाहिए। इसके अभाव में वह अपने जीवन से विलग होने का प्रयत्न करता है। इसका ही एक पहलू अपने को 'कीनियन' कहलाना है। उसमें उस देश से आत्मीयत्व हुआ हो, ऐसी बात तो दिखती नहीं। अतः उन्हें आप जैसा समझाने का प्रयत्न कर रहे हैं, वह ठीक ही है। केवल एक बात की ओर ध्यान देना उचित होगा कि इस प्रयत्न में कटुता उत्पन्न न हो और अपने मन में दुरभिमान उत्पन्न न हो। इस विषय में जितनी सतर्कता बरती जाए, उतनी कम ही माननी चाहिए।...

१७. हम सिंह शावक हैं

श्री सुरेश, शिकागो

१६ अगस्त १६६१

....श्री नंदाजी का साहचर्य सब प्रकार से आपको संतोष देनेवाला होगा, ऐसा मुझे विश्वास है। उन्होंने वहाँ विदेशी विद्यार्थियों की कोई संस्था भी चलाई है, ऐसा समाचार है। अब अपने भारतीय बंधुओं से संपर्क रखने के लिए उसका उपयोग होगा।

श्री रामकृष्ण आश्रम में जाने का प्रति रविवार का कार्यक्रम आपने बनाया है, इसका मुझे बहुत आनंद हुआ। शिकागो में ही श्री स्वामी विवेकानंदजी के द्वारा वेदांत की सिंहगर्जना आधुनिक जगत् ने विस्मयचकित हो कर सुनी थी। धर्म की, तत्त्वज्ञान की, संस्कृति की विजय का वह दुंदुभीनाद था। हम सब उसी परंपरा के छोटे से क्यों न हों, सिंहशावक हैं। इसका स्मरण रखकर ही चलना उचित होगा।

१८. ध्येय-शिक्षा-स्वास्थ्य का समन्वय

कुमारी अमृता रंगास्वामी, कैंब्रिज (यू.के.)

२० अक्तूबर १६६१

...पढ़कर बहुत संतोष हुआ कि आप सकुशल सानंद पहुँच गई हैं और सफलतापूर्वक विद्यार्जन करने के लिए आवश्यक तैयारी करने में लगी हुई हैं। यह समाचार भी मेरे लिए उत्साहवर्धक है कि आपने वहाँ के निवासी अपने भारत के बंधुओं को एकत्रित करने का और अपनी वैशिष्ट्यपूर्ण राष्ट्रीयता का सही दृष्टिकोण उनके मन-मस्तिष्क पर अंकित करने का प्रयास आरंभ किया है।

कृपया आप अपने स्वास्थ्य, जिसकी आप अपने अनेकविध अभ्यासक्रम और अन्य कार्य करते समय उपेक्षा नहीं कर सकतीं, की ओर यथोचित ध्यान देती रहें।... (मूल अंग्रेजी)

१६. विद्यार्जन व व्यवहार

चि. कुमार साठे, उल्म, जर्मनी

१५ फरवरी १६६२

....इच्छा के अनुसार उल्म में प्रवेश प्राप्त हुआ। पूर्ण अभ्यास कर विषय के अनुरूप जो-जो देखना है, वह उत्तम रीति से व सूक्ष्म दृष्टि से देखकर तज्ञ होने की चेष्टा करें। कोई कमी न रहने दें।

विदेश में आप हैं, अतः अपनी बोलचाल से अपने देश का मूल्यांकन वहाँ के लोग करेंगे, इसका कभी भी विस्मरण न होने देते हुए अपनी कुछ विशेषता वहाँ के लोगों के मन पर प्रभाव डाल सकें, ऐसा व्यवहार करना हितकारी होगा। केवल उनके समान ही रहकर प्रभाव डालना कठिन है।

फुरसत से पत्र लिखें। नासिक में घर पर नियमित रूप से पत्र भेजते रहना आवश्यक है। मुझे नहीं लिखा तो भी मुझे नासिक से जानकारी मिलेगी। स्वास्थ्य की उत्तम चिंता करते रहें।.... (मूल मराठी)

२०. व्यावहारिक निर्णय लें

श्री के.एस.सुरेश, शिकागो-अमरीका ८ मार्च १९६२

आपके Associateship की अवधि बढ़कर और एक-दो वर्ष रहने से कौन सा लाभ होगा? अनुभव प्राप्त होगा यह ठीक है, किंतु भारत में लौटकर आने के पश्चात् यह दो वर्ष का अनुभव बहुत उपयुक्त हो सकेगा क्या? यदि सामान्य ही लाभ हो तो विशेष आवश्यकता नहीं। यहीं पर काम करते-करते अनुभव आ सकेगा। परंतु यह अनुभव विशेष रूप से अच्छा होने की आशा हो तो अवश्य प्राप्त करें। आपके प्रोफेसर Associateship की अवधि बढ़ाने के लिए सिद्ध हैं तो उसका लाभ अवश्य उठाना चाहिए।

२१. बौद्ध मत सनातन धर्म का अंग है

१५ मार्च १९६२

श्री पी.एस.खन्ना, मंत्री, ऑल बर्मा हिंदू सेंट्रल बोर्ड, रंगून

आपके द्वारा आयोजित परिषद् की सफलता के लिए मैं सर्वशक्तिमान ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ। मैं आशा करता हूँ कि परिषद् के आयोजक, प्रतिनिधि तथा हमारे सर्व बंधु कदापि न भूलें, कि व्यापक दार्शनिक अर्थ में हिंदू अर्थात् सनातन धर्म में बौद्ध मत का भी समावेश होता है तथा अंतिम सत्य के भौतिक प्रतीक के रूप में भगवान बुद्ध की पूजा होती है। इस सत्य को दृढ़ता से हृदयंगम कर हम यह समझें कि ब्रह्मदेश (बर्मा) की तथाकथित हिंदू जनता तथा बौद्ध जनता की समस्याएँ एक-दूसरे के साथ अभेद्य रूप से मिश्रित तथा समान हैं।

मैं सर्वशक्तिमान ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि यह परिषद् बर्मा के लोगों तथा पुण्यभूमि भारत में रहनेवाले लोगों में अंतर्भूत एकता को बल देने में तथा उनमें बसी हुई समानता को पुनः स्थापित करने में सफल हो।

(मूल अंग्रेजी)

२२. धर्म संस्थापनार्थ योग्य परिस्थिति का निर्माण

२० जुलाई १९६२

श्रद्धेय उ छान टून जी, अध्यक्ष, जागतिक बौद्ध परिषद्, बर्मा

इस प्रदेश में अल्प मुकाम कर, श्री रामप्रकाश जी स्वदेश लौट रहे हैं। मुझे आशा है कि अब अपना कार्य वे अधिक उत्साहपूर्वक कर सकेंगे।

यह स्पष्ट तथा दुखद सत्य है कि अधर्म की शक्तियाँ मानव जाति को अपनी लपेट में ले रही हैं। कहा जाता है कि इन परिस्थितियों में धर्मसंरक्षक अवतार ग्रहण करते हैं। अधर्म के बढ़ते ज्वार को पीछे हटाने के लिए हमें पोषक परिस्थिति निर्माण करने का प्रयत्न करना होगा तथा अवतार ग्रहण योग्य भूमिका तैयार करनी होगी। हमारे यहाँ उच्चपदस्थ व्यक्ति भी यदि यह सोचते हैं कि शाश्वत मूल्यों का विरोध कर या कम से कम उनका निषेध कर हम कुछ इहलौकिक सुख प्राप्त कर सकते हैं, तो इसका अर्थ है कि वे निकृष्ट तथा अनैतिक बातों की ओर पागलों जैसे दौड़ रहे हैं। हमें प्राणपण से इस दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति से लोहा लेना होगा।

वहाँ जाकर आप जैसे सहृदयी व्यक्तियों के साथ कुछ समय बिताने की मेरी इच्छा है। क्या करना संभव है– यह हम सोचेंगे।

हमारे कुछ उत्सव देखने के लिए क्या आपका यहाँ आना संभव है? इन प्रश्नों के बारे में आपसे चर्चा करने के लिए मैंने श्री रामप्रकाश जी से विनती की है। आपका साथ मिलने से बर्मा तथा अन्य वे देश, जिनके साथ हम धर्मविषयक तथा सच्चे सांस्कृतिक संबंध प्रस्थापित कर सकते हैं, धर्म के कार्य में अधिक समन्वय प्रस्थापित करने के लिए विचार-विमर्श कर सकेंगे। (मूल अंग्रेजी)

२३. राष्ट्रहित की दृष्टि से जागतिक घटना-चक्र को देखें

श्री वी.एस.वाकणकर, पैरिस (फ्रांस) ३१ अक्तूबर १९६२

आपका कार्य ठीक चल रहा है। आपके कार्य से वहाँ के विद्वान लोगों का परिचय हो रहा है यह पढ़कर बहुत संतोष हुआ। अनेक वर्षों

के भ्रमपटल हटाने में आपके प्रयास कारणीभूत हों।

अंग्रेजी नहीं समझने तथा इंडियन व हिंदू परिचय देने पर अनेक लोगों को यही अनुभव हुआ, यह बात मुझे विदित हो चुकी थी। अपने देश के श्रेष्ठ पुरुषों ने तथा अंग्रेज कूटनीतिज्ञों ने 'इंडियन' शब्द के प्रचार का उपक्रम किया तथा चालू रखा, तथापि वहाँ किसी को उसका बोध नहीं हो पाया, यह स्वाभाविक ही है। शब्द ही पराया है, तो वह अर्थवाहक कैसे होगा?

आप अपने पुरातत्त्व विषय में रमे हुए हैं, तथापि वर्तमान-कालीन दैनिक व्यवहार में हो रही घटनाएँ आप देखते ही होंगे। उनसे ठीक बोध ग्रहण कर विशेषतः जिसमें अपना संबंध आने से अपने देश के वर्तमान तथा भावी काल के उत्कर्षापकर्ष पर जिनका परिणाम होने की संभावना हो, उनका सूक्ष्म दृष्टि से अन्वेषण करके लौटें। चहुँमुखी दृष्टि, खुली आँखें और कान और सूक्ष्मातिसूक्ष्म घटनाचक्र को ग्रहण करने वाला संग्राहक तथा विश्लेषक अंतःकरण चाहिए। विदेशों में जानेवाला प्रत्येक बंधु तीक्ष्ण दृष्टि रखनेवाला तथा राष्ट्रहित पर दृष्टि रखकर उसका संरक्षण करनेवाला हो। जासूसी का विकृत भाव त्याज्य है, परंतु स्वराष्ट्रहित के संदर्भ में जागतिक घटनाचक्र का उसके अंगों-उपांगों का अवलोकन तथा ज्ञान प्राप्त करना एक बड़ा गुण है। (मूल मराठी)

२४. सनातन धर्म की सर्वसंग्राहकता

२६ अगस्त १६६३

श्री शंकरराव तत्त्ववादी, यूनिवर्सिटी ऑफ टेक्सास, ऑस्टिन

आपको हिंदू धर्म पर भाषण देने के लिए आमंत्रित किया जा रहा है-- यह पढ़कर बहुत प्रसन्नता हुई। आप अध्ययनपूर्वक ही बोलते होंगे। वहाँ के समाज में अपने धर्म के प्रति उत्सुकता और जिज्ञासा है। इसके साथ ही बहुत सी दृढ़मूल नासमझी भी है। उनका विचार कर ऐसा लगता है कि आप ऐसा बोलते होंगे, जिससे उन्हें कुछ समझने का संतोष होता हो। अपने धर्म का व्यापक स्वरूप, उसका अद्वैत के आधार पर सर्वसंग्राहकत्व, अन्य सर्व मतों का यथायोग्य आदर, प्रोजेलिटायजेशन की स्पर्धात्मक, अपना-पराया भेदमूलक, अन्य-मत-विनाशक तथा परिणामतः ऐहिक सत्ता की ही पिपासा उत्पन्न करने-बढ़ानेवाली अनिष्ट तथा वास्तव में अधार्मिक प्रवृत्तियों के प्रति घृणा आदि श्रेष्ठत्व का व्यवस्थित दिग्दर्शन करने की ओर ध्यान देना हितकारी होगा। इस संबंध में मुझे एक उत्तम उदाहरण स्मरण

होता है। वर्तमान शृंगेरी मठ के आचार्य के गुरु श्रीमत् चंद्रशेखर भारती स्वामी (शृंगेरी श्रीमठ आद्यशंकराचार्य के चार मठों में प्रमुख माना जाता है। उसके पूर्ववर्ती पीठाधिपति–सं.) के पास एक अमरीकी सज्जन गए थे। उन्होंने उनसे हिंदू-धर्म में दीक्षित करने की प्रार्थना की थी। तब श्रीमत् आचार्य ने उनसे पूछा कि 'ईसाई मत में क्या कमी है, उस मत के अनुसार उपासना क्यों नहीं करते?' उस अमरीकी सज्जन ने कहा कि उस उपासना से मनःशांति नहीं मिली। श्रीमत् आचार्य ने उनसे पूछा– 'क्या तुमने प्रामाणिकता से, मनःपूर्वक, पूर्ण श्रद्धा से उपासना की है?' उसने कुछ समय सोचकर उत्तर दिया– 'नहीं।' तब श्रीमत् आचार्य ने उसे कहा, 'श्रद्धायुक्त अंतःकरण से, येशू पर विश्वास रखकर प्रामाणिकता से उस मतानुसार प्रभुभक्ति करो। पर्याप्त दिनों तक इस प्रकार करते रहने पर भी यदि मन अशांत तथा असंतुष्ट ही रहा तो सिद्ध होगा कि तुम्हारे पूर्व जन्म प्राप्त प्रकृति को वह उपासना सुसंगत नहीं है। और वैसा हुआ तो मैं आश्वासन देता हूँ कि पुनः यहाँ आने पर मार्ग सुझाया जाएगा।' इस उदाहरण का अर्थ स्पष्ट है। अपनी जन्म से प्राप्त मूल निष्ठा दृढ़ की जाए, यह इष्ट है। इसलिए उसकी येशू-निष्ठा सबल करने का प्रयत्न हुआ। अपने धर्म की यह व्यापक संग्राहक दृष्टि है। श्री स्वामी विवेकानंद ने भी ये विचार अपनी ओजस्वी वाणी से उद्घोषित किए हैं। उसमें अपने सनातन धर्म के श्रेष्ठ रहस्य का अनुभव होता है। आपको मैं यह बताऊँ, यह उचित नहीं है, तथापि स्मरण हुआ, इसलिए तथा मेरी स्वयं की स्मृति दृढ़ करने के लिए यह लिखा है। (मूल मराठी)

२५. अमरीका यात्रा के लिए शुभेच्छाएँ

प.दीनदयालजी उपाध्याय, दिल्ली — १६ सितंबर १९६३

....आपका अमरीका जाने का कार्यक्रम निश्चित हुआ, यह जानकर बहुत प्रसन्नता हुई। आपके कारण वहाँ के लोगों में अपने देश के प्रति आदरयुक्त स्नेह वृद्धिंगत होगा– इसका मुझे पूर्ण विश्वास है। बहुत से लोग जाते हैं, उनके रहन-सहन तथा विचारों में पश्चिमी लोगों की ही प्रतिकृति दिखाई देती है। उसे अपनी कुछ निकृष्ट-सी छायामात्र समझकर उन लोगों में भारत के प्रति उपहास करने की तथा उसकी अवहेलना-अवमानना करने की भावना जागृत होना आश्चर्य की बात नहीं है। आपके द्वारा उन लोगों को भारतीय जीवन एवं विचारों की मौलिकता का यथार्थ परिचय हो,

यही इच्छा है। वह पूर्ण होगी, यह विश्वास है।

न्यूयार्क के रामकृष्ण मिशन में स्वामी निखिलानंद जी हैं। मेरा उनसे परिचय नहीं है, परंतु भारतीय होने के नाते वहाँ आपका स्वागत होगा, ऐसा मुझे विश्वास होने से बिना परिचय-पत्र के भी आप स्वयं होकर वहाँ पहुँचे, तो ठीक होगा। उनका कार्य किस प्रकार चल रहा है, कितना प्रभाव निर्माण कर रहा है, इसका ज्ञान हो सकेगा।

....श्री भगवत्कृपा से आपकी यात्रा सुखपूर्ण हो तथा अपने देश की प्रतिष्ठा बढ़ाने में सफल हो।

२६. नई परिस्थितियों से चिंतित न हों

श्री एस. शिव, वोर्सेस्टर (अमरीका) २३ सितंबर १९६३

इस देश की जीवनशैली से वहाँ का जीवन निश्चित रूप से भिन्न है। किंतु आपको उस परिस्थिति से मेल बिठाते हुए, अपने कार्य में यश प्राप्त करना होगा। शाकाहारी भोजन प्राप्त करने में आनेवाली कठिनाई से न घबराएँ। आप ही कहते हैं कि दूध, फल, पावरोटी वहाँ विपुल प्रमाण में मिलती है तथा वहाँ का जीवन-स्तर देखते हुए ये चीजें सस्ती भी हैं। नियमित सेवन से वही भोजन आपको अच्छा तथा स्वास्थ्यकारक लगेगा।

जलवायु की भी चिंता मत करो। मनुष्य-शरीर में किसी भी जलवायु के साथ मेल बिठाने की अद्‌भुत शक्ति है। मुझे विश्वास है कि वहाँ का मौसम आपको अपने दृढ़ प्रयत्नों के अनुकूल ही लगेगा। हमारे अनेक देशबंधु वहाँ अनेक वर्ष बिताने के बाद भी स्वस्थ, चैतन्यशील, दृढ़ परिश्रम करनेवाले उन्नत लोगों के रूप में स्वदेश लौटते हैं। अपने प्रयत्नों में आप दृढ़ रहें, प्रथम अनुभव से ही निराश न हों। लोग अपने देशवासी तथा उच्च शिक्षण प्राप्त करनेवाले मित्रों के संपर्क में रहते हैं। (मूल अंग्रेजी)

२७. विदेशी नागरिकों की श्रद्धा का निरादर न हो

श्री चमनलाल जी, दिल्ली २५ सितंबर १९६३

....आपने जो समाचार भेजा है, वह प्रसन्नता देनेवाला है। प्रियबंधु किंगोला से मिलने का अवसर तो पंजाब में प्रवास के समय मिलेगा। उसके साथ स्नेहपूर्ण व्यवहार होता होगा, उसकी श्रद्धाओं का कभी भूल से भी निरादर न होते हुए उसमें ही उसे अधिक भक्ति हो, वैसा

ही व्यवहार करना उचित होगा। इससे अपने देश के जीवन के संबंध में उसमें आत्मीयता तथा आदरभाव स्थिर होगा।

२८. 'विश्वधर्म सेवक संघ' नाम से काम करें

श्री जगदीशजी शास्त्री, नैरोबी २ दिसंबर १९६३

मान्यवर पं. दीनदयाल जी भारत आने पर मिले थे। उनका आप लोगों के साथ का समय बहुत आनंद से व्यतीत हुआ, ऐसा कहते थे। आप जो कार्य वहाँ चला रहे हैं, उसमें कुछ परिवर्तन करना आपको अति आवश्यक प्रतीत होना स्वाभाविक है। बहुत पहले मैंने अपना सुझाव दिया था कि स्थानीय समाज के स्वतंत्र जीवन की आशा-आकांक्षाओं में समरस होकर उनकी पूर्ति के लिए उनके साथ यथासंभव सहयोग करना उचित होगा। अपनी बुद्धि और वहाँ अपना कमाया धन केवल स्वार्थ हेतु लगाना ठीक नहीं। वहाँ का समाज जागृत हो रहा है। बहुत मात्रा में हुआ भी है, परंतु शिक्षा, उद्योग, व्यापार आदि जीवनावश्यक बातों में उसकी बहुत प्रगति होना बाकी है। इसको पूर्ण करने में अपनी शक्ति, बुद्धि आदि लगाना शोभनीय है। वहाँ के नूतन स्वातंत्र्य-प्राप्त राज्य के नागरिक बनकर उसकी उन्नति के लिए समरसता से यत्नशील होना ठीक दिखता है। साथ ही अपने धर्म, शुद्ध संस्कार, जीवन की श्रेष्ठता, साहित्य आदि का अध्ययन, पालन तथा उसके विश्व मानवीय सिद्धांतों का स्थानीय समाज को परिचय कराकर उसके प्रति श्रद्धा एवं मान्यता निर्माण करना अपना कर्तव्य है। इन बातों को ध्यान में रखकर कार्य को यदि आप लोग विश्व धर्म सेवक संघ कहें तो कैसा होगा? उसी दृष्टि से प्रार्थना का रहना भी अच्छा होगा। किंतु उस संबंध में सोचकर नूतन प्रार्थना के श्लोक बनवाने में मुझे कुछ समय लगेगा। यदि आप चाहें, तो इसका प्रयत्न करूँगा।

विशाल हृदय, धैर्य, निर्भयता तथा शुद्ध चित्त से सबका सुव्यस्थित मेल रखकर स्थानीय समाज के साथ आत्मीयता से चलने से सब अच्छा हो सकेगा, ऐसा मुझे विश्वास है।

२९. धार्मिक एकता की स्वाभाविक अभिव्यक्ति

एस.पी.खन्नाजी, रंगून, ब्रह्मदेश १८ दिसंबर १९६३

....अत्यंत प्रसन्नता की बात है कि इस महीने के अंत में आप दूसरा अखिल ब्रह्मदेशीय हिंदू सम्मेलन कर रहे हैं। सफलता हेतु मेरी

शुभकामनाएँ।

यदि मुझे ठीक स्मरण है तो ब्रह्मदेश ने अपने आपको बौद्ध राज्य घोषित किया है। यद्यपि अन्य मतावलम्बियों के स्वाभाविक नागरिक अधिकार छीने नहीं गए हैं।

यदि हम इस ऐतिहासिक तथ्य का कि बौद्ध मत सनातन धर्म का, जिसे आज भारत में 'हिंदू धर्म' कहते हैं, एक सुधारित स्वरूप है, गुणग्राहकतापूर्वक विचार करेंगे तो ब्रह्मदेश के भाइयों के साथ धार्मिक एकात्मता का अनुभव हमें स्वाभाविक सरलता से होगा। मुझे लगता है कि यह भाई-चारा निर्माण कर उसे विकसित करने का हम हृदयपूर्वक प्रयत्न करें, क्योंकि हमारी सांस्कृतिक एवं धार्मिक एकता की यही स्वाभाविक अभिव्यक्ति है। (मूल अंग्रेजी)

३०. उभय देशों का राष्ट्रीय स्तर पर स्नेह हो

श्री जगदीशजी सूद, दिल्ली   १५ जनवरी १९६४

....नाम के संबंध में आपने जो सुझाव दिया है, उसमें आपत्ति तो दिखती नहीं, परंतु उसकी विशेष आवश्यकता भी प्रतीत नहीं होती। ध्वज तो जो स्वर्ण गैरिक है, उसमें परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है। यह तो ज्योति का, जीवन का, त्याग एवं सर्वसद्गुण समुच्चय का प्रतीक होने से वह संपूर्ण विश्व के मानव मात्र के लिए श्रद्धा के योग्य है। प्रतिज्ञा में प्रारंभ जैसा है, उसमें केवल विश्व धर्म के संवर्धन के लिए मैं विश्व धर्म सेवक संघ का घटक बना हूँ, इतना परिवर्तन उचित होगा। प्रार्थना साथ भेजने के प्रयत्न का उल्लेख तो ऊपर किया ही है।

इस कार्य का स्वरूप तो अपने उस देश में स्थानीय बंधुओं से वास्तविक आत्मीयता प्रस्थापित करने के लिए तथा अपनी पवित्र धर्मभूमि की पुनीत परंपरा में उनकी रुचि एवं श्रद्धा निर्माण कर उभय देशों का राष्ट्रीय स्तर पर स्नेह, सामंजस्य व्यवहृत हो इस शुद्ध स्वार्थशून्य दृष्टि से होना चाहिए। वहाँ के समाज के धुरीणों से सहयोग प्राप्त कर स्थानीय समाज को शिक्षा आदि देकर शीघ्र अधिकाधिक प्रगत करने की जैसी योजनाएँ बन सकेंगी, उनका विचार कर उन्हें अपनी शक्ति के अनुसार कार्यान्वित करना उचित होगा। क्या और कितना संभव है, उसे सोचें।

३१. विदेशों में हिंदू धर्म-प्रचारकों की आवश्यकता

श्री शंभुनाथ कपिलदेव, त्रिनिदाद (वेस्ट इंडीज) १६ जनवरी १९६५

मुझे आशा है कि आप पुण्य-भू भारत की यात्रा पूर्ण कर सकुशल त्रिनिदाद पहुँच गए होंगे।

मेरी आपसे यहाँ जो बातचीत हुई, उसमें आपने कहा था कि भारत से धर्मग्रंथों पर प्रवचन करनेवाले विद्वान पंडितों को त्रिनिदाद भेजने की आवश्यकता है।

गोस्वामी तुलसीदास जी के रामचरितमानस पर प्रभावी प्रवचन करनेवाले दो विद्वानों से मैंने संपर्क किया है। उत्तर भारत में उनका नाम प्रसिद्ध है। मैं उनसे मुजफ्फरपुर (बिहार) में मिला और अपने विदेशस्थ बन्धुओं के लाभ के लिए विदेश जाने की आवश्यकता पर बात की। उन्होंने स्वीकृति दी है। अब आप पर निर्भर है कि किसी मान्यताप्राप्त संस्था द्वारा उन्हें निमंत्रण भेजें, ताकि वे पासपोर्ट तथा अन्य आवश्यक बातों की पूर्ति कर सकें। वहाँ के मंत्रालय द्वारा आप यहाँ के विदेश मंत्रालय से संपर्क करें, ताकि यह काम जल्दी हो।

उनके आने-जाने की तथा रहने की व्यवस्था और आवश्यक खर्च आप करेंगे, यह आशा करता हूँ। यदि आपकी इच्छा हो तो आप उनसे प्रत्यक्ष संपर्क कर सकते हैं। अपना निर्णय मुझे पत्र द्वारा बताएँ। उनके रंगीन चित्र के कार्ड भेज रहा हूँ। उनका पता है– पंडित रामचंद्र जी महाराज, प्रा. शिवकुमार शर्मा एम.ए., श्रीराम दरबार, मुजफ्फरनगर, यू. पी. (भारत)। (मूल अंग्रेजी)

३२. आध्यात्मिक एकता प्रस्थापित करें

श्री एस.पी.खन्नाजी, रंगून -ब्रह्मदेश १६ जनवरी १९६५

....मुझे बहुत खुशी हुई कि अखिल ब्रह्मदेश हिंदू मध्यवर्ती मंडल (All Burma Hindu Central Board) धर्म, संस्कृति, नैतिक जीवन के आदर्श आदि के बारे में ब्रह्मदेशीय अपने भाईयों में प्रचार-प्रसार का अति उपयुक्त कार्य कर रहा है। ब्रह्मदेश, जिस प्रकार की भी शासन-व्यवस्था वहाँ चल रही हो, सचमुच अतीव धार्मिक ही है और आस्थापूर्वक बौद्ध मत का अनुसरण करता है। भगवान बुद्ध भारत में भी पूज्य हैं। इसी कारण

धार्मिक एवं सांस्कृतिक सूत्र से हम एक-दूसरे से आबद्ध हैं। हम आशा करें कि यह स्नेह-बंधन समान रूप से लाभप्रद तथा आर्थिक एवं राजनीतिक कारणों से और भी सुदृढ़ बनेगा। परंतु इस पहलू का विचार तो उनको करना चाहिए जो इस विषय के जानकार हैं और कुशलतापूर्वक तथा सद्भावना के साथ प्रयत्न कर सकते हैं। जहाँ तक हमारे धर्म-विषयक कार्य का संबंध है, मैं आशा करता हूँ कि आप इस बारे में आवश्यक सभी प्रकार के प्रयास सातत्य से, अथक परिश्रमपूर्वक करेंगे और अपने ब्रह्मदेशीय आप्त बांधवों के साथ आध्यात्मिक एकता प्रस्थापित कर उसे सुदृढ़ बनाएँगे।

आपके इन प्रयत्नों में दयाघन प्रभु आपको सुयश प्रदान करें, इसलिए मैं उन्हीं के श्रीचरणों में विनम्र प्रार्थना करता हूँ।.... (मूल अंग्रेजी)

३३. कर्तव्यदृष्टि भी स्वाभाविक हो

श्री आनंद परांजपे, बोस्टन १४ अगस्त १९६६

आप अपने अमरिका के निवास में एक महत्त्व के प्रश्न का अध्ययन करनेवाले हैं, यह पढ़कर अच्छा लगा। वह प्रश्न academic नहीं, पूर्णतः व्यावहारिक है। एकेडमिक दृष्टि से उसका अभ्यास अपूर्ण रहेगा। आपके तज्ञ शिक्षकों का क्या कहना है? एक अतज्ञ परंतु व्यवहार में रहनेवाला मुझ जैसा यह लिख रहा है। सच क्या है, यह अनुभव के पश्चात् ही ज्ञात होगा।

संघ के प्रत्यक्ष कार्य के स्थान पर आपने अध्येता तथा गवेषक का काम ग्रहण किया है। स्वंय की रुचि के अनुसार ही सामान्य मनुष्य काम कर सकता है, परंतु हम संघ में एक विशेषता निर्माण करने के प्रयास में है। वह यह है कि स्वयं की रुचि जिस प्रकार स्वाभाविक है, उसी प्रकार कर्तव्यदृष्टि भी स्वाभाविक हो; व्यक्ति में उत्कर्ष करने की प्रेरणा जितनी सहज है, उतनी ही किंबहुना अधिक सहज समाज-राष्ट्र का यश-उत्कर्ष साध्य करने के लिए किए जानेवाले प्रयत्नों के संबंध में हो। दोनों का मेल बिठाकर व्यक्ति समष्टि-व्यष्टि सामंजस्य स्वयं के जीवन में लाए। यह विशेषता उत्पन्न करने के प्रयत्न में अभी तक पर्याप्त सफलता नहीं मिल पाई है, अन्यथा आप संघ-कार्यपद्धति में रम सकते थे। प्रत्येक व्यक्ति का भिन्न-भिन्न पिंड होता है। उनका एकत्रीकरण होकर ब्रह्माण्ड को लपेटने की शक्ति पैदा हो सकती है। उसमें अपने 'पिंड' के विकास में कोई रुकावट

नहीं रहती, अपितु प्रोत्साहन ही रहता है। उसमें ब्रह्मांडस्वरूप में एकरस होने की भव्यता रहती है।

परंतु यह तत्त्व की बात हुई। लगता है कि वह अभी आचरण में नहीं आ सकी है। प्रयत्न से परमेश्वर भी मिलता है, इस दृष्टि से निरंतर प्रयत्न करना है। जीवन में वह व्रत ग्रहण करने पर रुचि-अरुचि के शिकार होकर उसका भंग क्यों होने देंगे? यश देना भगवान पर निर्भर है। उस पर विश्वास रखकर काम करना हम साधारण लोगों का कर्तव्य है।

अमरीका का अपना अध्ययन पूर्ण कर आप सफलतापूर्वक स्वदेश लौटें तथा आपका स्वास्थ्य सब प्रकार से उत्तम रहे, भगवच्चरणों में यह प्रार्थना करता हूँ। (मूल मराठी)

३४. निर्माणाधीन मंदिर सबका श्रद्धास्थान बने

डा. कृष्णराव हरदास, इंग्लैड

१२ अप्रैल १९६७

अपने तद्देशीय हिंदू बांधवों के एकत्रीकरण का आपका प्रयत्न जारी है, यह अभिनंदनीय है। शीघ्र ही उस देश में अपने बंधुओं के लिए मंदिर बनाए जाने की आशा है। इससे एकत्रीकरण के लिए एक पवित्र स्थान प्राप्त होगा। परंतु सच्ची कठिनाई यह है कि अन्य देशों में रहनेवाले अपने हिंदू-बंधु इतनी सीमा तक आत्मविस्मृत और स्वाभिमानशून्य हो गए हैं कि वे स्वत्व भूलने में भूषण मानते हैं। यहाँ अपने स्वयं के देश में भी स्वराष्ट्र का यथार्थ और स्पष्ट ज्ञान नहीं है। शासन की ओर से वैसा प्रोत्साहन नहीं, स्वत्व-विस्मरण तथा विदेशियों के अंधानुकरण में ही प्रगतिशीलता, पुरोगामिता मानने की लज्जास्पद स्थिति है। फलस्वरूप स्थिति यह है कि विदेशों में जाकर बसनेवालों के अंतःकरण में राष्ट्राभिमान, धर्म-संस्कृति की प्रखर भक्ति उदित नहीं होती। स्वदेश में यह न्यूनता दूर करने का अपना प्रयास जारी है। क्रमशः उसमें अधिकाधिक यश प्राप्त हो रहा है। इसी प्रकार उस देश में भी हो तथा जो मंदिर बनने जा रहा है, वह सबका श्रद्धास्थान तथा राष्ट्रीय मानबिंदु बने, इस दिशा में प्रयत्न करते रहना आवश्यक है।

'हिंदू-संस्कृति मंडल' के नाम से धर्म, संस्कृति, भाषा आदि जगाने का अपना प्रयत्न जोरों से चलाएँ। संस्कृत का अध्ययन आग्रह से होगा- इसकी ओर ध्यान रहे। (मूल मराठी)

३५. 'भारतीय स्वयंसेवक संघ'

श्री इकबालराय दत्ता, नैरोबी (द.अफ्रीका) १४ अक्तूबर १९६७

....अपने एक मित्र, जो महाराष्ट्र प्रांत में 'भारतीय जनसंघ' के बड़े पदाधिकारी हैं, किसी संसदीय प्रतिनिधिमंडल में युगांडा जा रहे हैं। १७ अक्तूबर को भारत से विमान द्वारा चलेंगे। युगांडा में लगभग १५ दिन उनका निवास रहेगा और बाद में १५ या २० दिन वे केनिया आदि देशों में जा सकेंगे। यह बात उनकी वैयक्तिक रहेगी। यदि आप चाहें तो 'भारतीय स्वयंसवेक संघ' के लिए उनसे विचारों का आदान-प्रदान करने हेतु उन्हें कुछ स्थानों में ले जा सकते हैं। अर्थात् युगांडा के बाद का प्रवास-व्यय आप लोग ही करेंगे तो यह हो सकेगा। दिल्ली से भी इस संबंध में आपके पास या मित्रवर जगदीश सूद वहाँ हों तो उनके पास सूचना पहुँचने की आशा है। भारत से युगांडा और वहाँ से भारत के खर्चे का प्रबंध यहाँ के शासन द्वारा होता ही है। युगांडा से आप उन्हें जहाँ-जहाँ ले जाएँगे उधर जाने आदि का व्यय मात्र आप लोगों को वहन करना पड़ेगा। जैसा हो सके, करें। युगांडा का उनका पता आपके पास पहुँच जाएगा। उस पते पर उक्त सज्जन से संपर्क स्थापित कर आगे का कार्यक्रम बनाएँ। उनका नाम श्री उत्तमराव पाटील है।

तत्रस्थ सब बंधुओं को तथा आपके कार्य से स्नेह रखनेवाले स्थानीय महानुभावों को सादर नमस्कार।....

३६. अपनी संस्कृति की छाप तद्देशियों पर अमिट रूप से पड़े

श्री पंडित उषर्बुध जी, अमरीका १३ जनवरी १९६९

आपका ८ जनवरी १९६९ का पत्र आज मिला। बहुत समय से जिसकी प्रतीक्षा कर रहा था, उसे पाकर बहुत प्रसन्नता का अनुभव कर रहा हूँ।

आप वहाँ के बंधुओं को भारतीय जीवन के श्रेष्ठ सिद्धांतों से परिचित कराकर उन्हें अपने राष्ट्र के अनुकूल बनाने का जो प्रयास कर रहे हैं, उसमें आप अवश्य ही सफल होकर बहुत बड़ी देशसेवा करने का श्रेय प्राप्त करेंगे। अपने भारतीय बंधु भी वहाँ हैं। कुछ स्थायी रूप से बस गए हैं, कुछ शिक्षा आदि की दृष्टि से अल्पकाल के लिए वहाँ हैं। उनके हृदय में यह सद्भाव जागे कि उनके विचार, शील, रहन-सहन, व्यवहार– सब

ऐसे हों कि अपने देश, धर्म, संस्कृति की महान श्रेष्ठता की छाप तद्देशियों पर अमिट रूप से लगी रहे, तो बड़ा उपकार होगा। यह तो सामान्य राष्ट्रभक्ति की माँग है। आपसे वे सब प्रेरणा पा सकें, तो उत्तम होगा।

....चित्र मिले। आपकी इच्छा के अनुसार उनमें से एक आपके पास भेज रहा हूँ। परंतु विचार ऐसा आया कि क्या आपने भी अपने हस्ताक्षर से युक्त वैसे चित्र की एक प्रति मेरे पास भेजना शोभनीय नहीं होगा? आप यदि उचित समझें तो, वैसा हस्ताक्षरयुक्त चित्र, जिसमें आपके साथ बैठने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है, भेजने की कृपा करें।

३७. 'विश्व हिंदू परिषद् यू.के.' की स्थापना के निमित्त

श्री कृष्णराव हरदास, लंदन ९ जुलाई १९६९

लंदन में हिंदू समेलन लेकर एक स्थायी संस्था 'विश्व हिंदू परिषद्, इंग्लैंड' नाम से प्रारंभ करने का आपका संकल्प पढ़कर बहुत आनंद हुआ। विश्व के विभिन्न देशों में रहनेवाले हिंदू बंधुओं ने स्वधर्म, स्वसमाज तथा अपनी पवित्र मातृभूमि के स्वाभिमान का स्मरण अंतःकरण में रखना उनका स्वभावधर्म होना चाहिए। दूसरे किसी देश में रहने से या वहाँ का नागरिकत्व स्वीकार करने से अपनी मूल धर्मभूमि का विस्मरण हो जाना शोभनीय नहीं है। दुर्भाग्यवश नासमझी तथा स्वाभिमानशून्यता में से उत्पन्न हुए विकारों से अपने अनेक बंधु इतने प्रभावित हैं कि भारत अथवा हिंदुत्व का केवल उल्लेख भी उन्हें सहन नहीं होता, उसे वे अस्पृश्य मानते हैं। यह मनोवृत्ति हीन है, अतएव त्याज्य है। विश्व में अपने हिंदुत्व का सम्मान बढ़े, भारत का प्रभाव बढ़े, यह आंतरिक आकांक्षा रखकर तदनुरूप आचरण, यही योग्य है। ऐसा सद्विचार जगाना तथा संगठित रीति से उसके लिए प्रयत्न करने की दृष्टि से योजना सामने आएगी– ऐसी अपेक्षा है।

अन्य देशों में, जहाँ अपनी हिंदू-संख्या थोड़ी हैं, सब हिंदुओं का हिल-मिलकर रहना तथा एकमत से समाजहित के काम करना, अत्यंत आवश्यक है। दुर्भाग्य से अनेक शताब्दियों से अपने समाज को फूट का शाप लगा हुआ है, वह अभी तक दूर नहीं हो सका है। सबसे दुःख की बात यह है कि पराए देशों में विदेशी समाजों में रहते समय भी अपना बंधु-वैमनस्य परायों के सामने उजागर कर, अपने समाज की हँसी कराने की बुरी आदत अब भी नष्ट नहीं हुई है। आप सावधान रहकर अपनी

संकल्पित योजना को इन दुर्गुणों की आँच नहीं लगने देंगे।

श्री परमेश्वर की कृपा से आपको उत्तम यश प्राप्त हो, सम्मेलन सफल हो, सब कार्यक्रम उत्साह से संपन्न हो तथा 'विश्व हिंदू परिषद्, इंग्लैंड' का काम पक्की नींव पर खड़ा हो। (मूल मराठी)

३८. धर्म की विजय अवश्य होगी

श्री ऊ छान टून, रंगून १८ सितंबर १९६९

नागपुर पहुँचने पर कल आपका पत्र मिला। आपके पत्र के हर शब्द में ऐसी आस्था और आत्मविश्वास प्रतीत होता है कि वह सब निराशाजनक विचार दूर भगा देता है और उससे सन्मार्ग पर चलने के लिए साहस तथा दृढ़ निश्चय की प्रेरणा मिलती है। निकट भविष्य में असत् पर सत् की तथा अधर्म की शक्तियों पर धर्म की विजय होने का आश्वासन प्राप्त होता है।

मुझे बताया गया है कि श्री उनू अभी तक विदेश में हैं। जब वे इस पूण्यभूमि में आएँगे, तब मैं अवश्य उनसे मिलूँगा। इस आशा के साथ मैं उस सर्वश्रेष्ठ अगोचर ब्रह्मांडनायक से प्रार्थना करता हूँ कि अपने सनातन धर्म के प्रसार तथा पालन की दृष्टि से योजना बनाने के लिए आपसे शीघ्र ही मिलने का अवसर दे। (मूल अंग्रेजी)

३९. जीवेम शरदः शतम्

श्री शंभुनाथ कपिल देव, त्रिनिदाद २५ अक्तूबर १९६९

....श्री प्रथमसूरत सिंह जी ने कल आपका पत्र मुझे दिया। ... .उनसे मेरा प्रारंभिक संवाद हुआ। वे अच्छे हैं और मुझे लगता है कि वहाँ अपने लोगों के लिए बड़ी उपलब्धि बन जाने की संभावना है। मैंने उनसे कहा है कि वे अपने जिम्मेदार कार्यकर्ताओं से सतत संपर्क करें, धर्मनिष्ठा, मानवसेवा, अनुशासन, शुद्ध चरित्र आदि गुण आत्मसात करें।

हर्ष की बात है कि आप इस पवित्र देश में सन् १९७१ में आने को सोच रहे हैं। सन् १९६९ का वर्ष प्रायः जा चुका है। अब मात्र एक वर्ष बाद आपसे पुनः मिलने की राह देख रहा हूँ। किंतु 'यदि १९७१ तक जीवित रहेंगे' ऐसा आपने क्यों लिखा? इहलोक, जो निःस्वार्थ निर्दोष कर्म

करने का तथा चिरंतन सत्य के साक्षात्कार हेतु समर्पित करने का क्षेत्र है, उससे भाग जाने की जल्दबाजी क्यों? प्रबुद्ध जन कहते हैं कि चरम सत्य का साक्षात्कार यहीं संभव है, मानव जीवन में संभव है और अवश्य हमारे सुसंबद्ध हिंदूजीवन द्वारा संभव है। हमारी आयु सौ वर्ष की है, यह हमारे पूर्वजों का आप्तवचन है। इसलिए १९७१ में अवश्य मिलेंगे।

(मूल अंग्रेजी)

४०. विदेशों में अपने राष्ट्र का गौरव बढ़ाएँ

श्री मनोहर शिंदे, न्यूयार्क — २४ मार्च १९७०

२२, २३ तथा २४ मार्च को नागपुर के श्री रामकृष्ण आश्रम में भगवान श्रीरामकृष्ण की जयंती का कार्यक्रम था। प्रतिदिन शाम को मैं उपस्थित रहता था। संप्रति शिकागो में रहने वाले श्रीमत् स्वामी भाष्यानंदजी, जो यहाँ आए हुए थे, से २२ तथा २३ को भेंट हुई। वे अब लौटनेवाले हैं। आप उनसे मार्गदर्शन प्राप्त करते रहते हैं। परस्पर सहयोग रहना ही चाहिए।

आप सर्व बंधुओं की खोज कर, उनके एकत्रीकरण का तथा संस्कार जागृत रखने का प्रयास कर रहे हैं। अपने बंधु स्वाभिमानी हैं, अपनी एक भव्य परंपरा है, सद्गुणसंपन्न संस्कृति है, उसके अनुसार अपना आचरण हो। उस प्रदेश के रीति-रिवाजों के कारण कुछ दोष– जैसे व्यसनाधीनता, अनीति आदि अपने में पैदा होना संभव है। सतर्कतापूर्वक सर्व दोषों से अलिप्त रहना तथा अपनी परंपरा का प्रभाव वहाँ के लोगों पर डालना, इसमें भूषण है। वहाँ जाते ही स्वयं का सब कुछ छोड़कर विवेक न करते हुए वहाँ के लोगों के रीति-रिवाज, आहार-विहार ग्रहण करने में शोभा नहीं है। इस प्रकार का विचार तथा उसके अनुसार व्यवहार की ओर सबके मन का झुकाव होना आवश्यक है। आपमें से हर-एक अपने राष्ट्र का एक प्रकार से प्रतिनिधि ही है। अपने व्यवहार से तथा विचारों से राष्ट्र का अवमान हो, यह अशोभनीय है। अपने राष्ट्र की श्रेष्ठ विशेषताओं की ओर लोग आकर्षित हों, आदर से देखें तथा विश्व में अपने राष्ट्र का गौरव बढ़ता रहे, इस प्रकार की कृति-उक्ति प्रत्येक की रहे। इसका प्रत्येक बंधु को जागृत स्मरण रहे, इसके लिए प्रयत्न हो।

(मूल मराठी)

४१. अपने जीवन की श्रेष्ठता का उद्‌बोधन लाभदायी

पं. उषर्बुधजी, मिनिआपोलिस, अमरीका ८ अप्रैल १९७०

आपका पत्र १.४.७० को आया। परंतु मैं केरल गया था। किसी प्रकार से भी यह पत्र तीन दिन में वहाँ पहुँचने की आशा न होने के कारण आज एक 'केबलग्राम' डा. शिंदे के नाम भेज दिया और एक पत्र भी लिखकर भेज रहा हूँ।

डा. शिंदे अपने संघ की पद्धति से सोचकर अमरीकास्थित बंधुओं में परस्पर स्नेहसंबंध निर्माण करने का प्रयास कर रहे हैं। साथ ही सबमें कुछ राष्ट्रीय स्वाभिमान नित्य व्यवहार में अभिव्यक्त होता रहे, यह भी प्रयत्न होना आवश्यक प्रतीत होता है। यहाँ जो समाचार आते हैं, उनसे प्रतीत होता है कि रहन-सहन, खान-पान आदि में अपनेपन का कुछ विचार न रखना, अपने धर्म, संस्कृति-इतिहास आदि का ज्ञान न रखना तथा उसके संबंध में उन देशों के कतिपय तथाकथित विद्वानों द्वारा फैलाए हुए भ्रमजाल को ही सच मानकर अपने राष्ट्र की अवहेलना करना, कम-से कम अपनेपन में कुछ लज्जा करना और उससे पृथक होकर उस देश के रहन-सहन आदि को श्रेष्ठ मानकर उनका अनुसरण करना, उधर के भौतिक जीवन-स्तर के आकर्षण में आकर स्वदेश लौटने का विचार छोड़ देना– इस प्रकार के संस्कारों में वहाँ गए हुए अपने तरुण अपने आपको खोते जा रहे हैं। यह यदि सच हो, तो इससे अपने देश का, राष्ट्र का स्वाभिमान आहत होता है, जो किसी भी भारतीय के लिए शोभनीय नहीं है। इस कारण सबका एकत्रीकरण, सबमें स्वत्व-जागरण, अपने जीवन की श्रेष्ठता का उद्‌बोधन आवश्यक और लाभदायी सिद्ध हो सकता है। यह दृष्टि सामने रखकर वहाँ कार्य हो, ऐसी इच्छा है। डा. शिंदे को आपके ज्ञान की सहायता मुझे आवश्यक दिखती है। आप अनेक वर्षों से वहाँ स्थायी हैं, अतः इस प्रकार अपने बंधुओं का एक बलिष्ठ, स्वत्वसंपन्न कार्य खड़ा करने में आपका योगदान बहुत लाभप्रद होगा। आप इसका विचार तो करते ही हैं। जितना अधिक दायित्व उठा सकें, उतना उठाकर इस आवश्यक कार्य को कितना कर सकेंगे– यह सोचकर डा. शिंदे आदि अपने बंधुओं से विचार-विमर्श करें, यही इस समय आपसे प्रार्थना है।

आप शीघ्र ही फिजी जानेवाले हैं, यह पढ़ा। अपने बंधुओं के जीवन-संबंधी, उनके संस्कारादि-संबंधी प्रत्यक्ष देखी हुई जानकारी प्राप्त होगी, इसकी प्रतीक्षा करता हूँ।

४२. सहयोग प्राप्त करें

डा. मनोहर शिंदे, न्यूयार्क

८ अप्रैल १९७०

....पं. उषर्बुध उदार हृदय, श्रेष्ठ विद्या विभूषित और हिंदुओं के उत्कर्ष में प्रयत्नशील हैं। आर्य समाज के वातावरण से वे कुछ मात्रा में प्रभावित थे, परंतु वे अब हिंदुओं में एकात्मता निर्माण करने में प्रयत्नशील है। ऐसा नहीं कहा जा सकता कि वे अपनी विचार-प्रणाली और कार्य-प्रणाली से पूर्णतया समरस हो गए हैं, किंतु भारत में अपने कार्य में, अन्य कार्यकर्ताओं के निकटवर्ती सान्निध्य से ऐसा व्यक्ति समरस हो सकता है।

इस प्रकार की अनुकूल परिस्थिति वहाँ अपेक्षित नहीं है। ऐसा सोचकर ....उनको कार्य की दृष्टि से अमरीका में प्रवासादि करने में प्रोत्साहित करें। ....एक जिम्मेदार व्यक्ति के नाते अपनी विचार-प्रणाली आत्मसात कर वे कार्य करें, इस प्रकार प्रयास करना हितप्रद होगा।..

४३. नीर-क्षीर विवेक से गुण ग्रहण करें

श्री नागेंद्र, बैंकुअर, कनाडा

१६ अक्तूबर १९७०

....आपका पत्र पढ़कर बहुत प्रसन्नता हुई। अत्यल्प काल में आपने तत्रस्थ जीवन का अंतरंग देखने का प्रयत्न किया है। आपने भारतीय जीवन का विचार भी किया है, परंतु इस जगत् में कहीं का भी जीवन सर्वांश से त्याज्य नहीं होता और सर्वांश से ग्रहण करने योग्य भी नहीं होता। अतः शांति से गंभीर विचार कर, जीवन-पद्धति के गुणदोष का विवेचन कर अपने जीवन में उनमें से कौन से गुण लाना हितप्रद होगा, उनके और अपने जीवन के किन दोषों का निर्मूलन करना होगा, दोनों जीवन-प्रणालियों का सुंदर सर्वोत्कर्षकारी समन्वय किस प्रकार किस आधार पर हो सकेगा, यह सोचकर वहाँ के वास्तव्य काल में आवश्यक एवं सफल प्रयास आप करेंगे ही।

भारत से गए अन्य बंधु वहाँ होंगे। उनसे मिलकर भारतीय जीवन का आदर्श तत्रस्थ लोगों के सम्मुख उपस्थित करने की योजना बनाना हितप्रद होगा। वहीं के जीवन का अंधानुकरण कर उसमें धन्यता मानने से वहाँ प्रतिष्ठा, सम्मान प्राप्त होना कठिन है।

४४. व्यक्ति अपरिहार्य नहीं

श्री सर्व सत्यार्थी, लंदन — २० अक्तूबर १९७०

मै स्वस्थ हूँ। मेरी दृष्टि से ऑपरेशन एक मामूली बात है, तथापि आपकी शुभेच्छा के प्रति आभारी हूँ।

इस विश्व में मानव आता है, जाता है। ईश्वर की बृहत् योजना में कोई भी व्यक्ति अपरिहार्य नहीं है, क्योंकि उसके पास अमर्याद शक्ति होने से उसके नाटक में विश्व के रंगमंच पर जिस वस्तु की तथा जिस पात्र की आवश्यकता होती है, उसे वह निर्माण करता है। (मूल अंग्रेजी)

४५. अपने संस्कारों का परिपालन-संवर्धन करें

श्री महेश मेहता, न्यूयार्क — २८ मार्च १९७२

आपने वहाँ के विश्व हिंदू परिषद् के कार्य को उत्तम रीति से चलाया है और संस्था का पंजीकरण भी हो गया है, यह ध्यान में आया। आपके सत्-संकल्प के अनुसार वहाँ के अपने सब बंधुओं में अपनी मातृभूमि, अपने धर्म, अपनी संस्कृति पर अपार भक्ति उत्पन्न हो तथा वहाँ के वायुमंडल में रहते हुए भी अपने संस्कारों का परिपालन-संवर्धन करने की इच्छा और क्षमता उनमें बढ़ती रहे, वहाँ के स्थानीय निवासियों के सामने अपना आदर्श उपस्थित कर सकें, यही इच्छा है। भगवत्कृपा से यह पूर्ण होगी, ऐसा विश्वास है। आप स्वयं प्रवासादि कर रहे हैं, यह तो उपयुक्त है, परंतु आपको इस कार्य के लिए और बंधुओं को प्रोत्साहित करना लाभदायी होगा। आपने सदस्यों के नाम दिए हैं, उनमें ऐसे कर्तृत्ववान कम नहीं हैं।

आपके स्वास्थ्य के संबंध में पढ़कर चिंता होती है। चिकित्सा शास्त्र में उधर इतनी उन्नति होने पर भी औषधियों का परिणाम नहीं होता, यह आश्चर्य है। आप आगामी सितंबर में भारत आएँगे, तो यहाँ किसी आयुर्वेदीय चिकित्सक से परामर्श करना अच्छा होगा। आपसे भेंट होने पर इसका विचार करेंगे।

४६. पुनः-पुनः उद्‌बोधन की आवश्यकता

श्री ब्रह्मस्वरूप वर्मा, चेम्सफोर्ड (यू.के.) — ३० मार्च १९७२

....आप आगामी जुलाई-अगस्त में भारत आनेवाले हैं। तब

प्रत्यक्ष मिलकर सब प्रकार से विचार-विमर्श हो सकेगा।

अपनी अनुपस्थिति में 'हिंदू विश्व पत्रिका' अबाध रूप से चलती रहे, इसकी व्यवस्था कर किसी अच्छे विचार के उत्साही व्यक्ति पर भार सौंपना अच्छा होगा।

प्रति तीन-चार वर्षों में एक बार तो भी किसी ख्यातनाम व्यक्ति को विदेशों में भ्रमण करना चाहिए और उसके द्वारा अपने धर्म-संस्कृति का पुनः-पुनः उद्‌बोधन होना चाहिए जिससे कि उधर जाकर बसे हुए अपने-अपने जीवन की विशुद्ध परंपरा को भूल न जाएँ। यह आवश्यक है। ऐसे व्यक्ति थोड़े ही होते हैं। आपने मान्यवर एकनाथजी रानडे का नाम सुझाया है। संयोग से श्री एकनाथजी यहीं होने से मैंने आपकी इच्छा उनके सम्मुख निवेदन की है। अब निश्चय करना उनके अधीन है।....

४७. दिवंगत को श्रद्धांजलि

श्री लक्ष्मीदासजी, लेसस्टर (यू.के.) ५ सितंबर १९७२

....माननीय श्री बाबासाहेब आप्टे जी के अकस्मात् देहावसान से सब बंधुओं में बहुत दुःख छा गया है। प्रारंभ से संघकार्य करनेवाले, बुद्धिमान, विद्वान, तत्त्वचिंतक, विचारक, प्रथम प्रचारक, अनेक उत्साही बंधुओं को एकांतिक भाव से संघकार्य करने की प्रेरणा देनेवाले, अनेक सद्‌गुणसंपन्न बहुमुखी प्रतिभावान कार्यकर्ता हमें छोड़कर चले गए। उनका अभाव खटकता रहता है, परंतु उपाय भी तो नहीं है। यह दुःख सहना और उनके प्रिय लक्ष्य की पूर्ति के लिए अहोरात्र यावज्जीवन प्रयत्नशील रहना, यही हम लोगों के लिए कर्तव्य है।

आपकी सद्‌भावना तथा सहानुभूति से यहाँ सांत्वना मिलने में सहायता हुई है। वहाँ के अपने बंधु आपकी शुद्ध भावना में एकरूप हैं, उन सबको हम सबका सधन्यवाद सादर नमस्कार।....

४८. संभाव्य परिस्थिति के बारे में सचेत करता रहा हूँ

श्री जगदीश सूद, एलडोरास (पू.अफ्रीका) १७ नवंबर १९७२

उधर की अवस्था का विवरण पढ़ा। कई वर्षों से इसके संकेत मिल रहे हैं और मैं भी वहाँ के सब बंधुओं को संभाव्य परिस्थिति के बारे में

सचेत करने का प्रयत्न करता रहा हूँ।

आप स्वयं वैसी अनिर्वायता आ पड़ी तो यू.के. में बस सकते हैं, ऐसा आपने लिखा है। वहाँ का वायुमंडल भी कुछ विरोधी बन रहा है, ऐसा आभास मिलता है। तथापि आप वहाँ का नागरिकत्व प्राप्त कर उधर ही बसें, तो उस देश में रहनेवाले अपने बंधुओं को एक अच्छा आधार मिल सकेगा। समय आने पर आप निर्णय करेंगे ही, परंतु अभी से सोच रखना अच्छा होगा।

ॐ ॐ ॐ

हमारे धर्म की परिभाषा दुहरी है। प्रथम तो मनुष्य के मस्तिष्क का उचित पुनर्वसन तथा द्वितीय है सामंजस्यपूर्ण सांघिक अस्तित्व के लिए विविध प्रकार के व्यक्तियों को परस्पर अनुकूल बनाना, अर्थात् समाज–धारणा के लिए एक उत्तम समाज–व्यवस्था।

– श्री गुरुजी

प्रकरण - ३
नेतागण को लिखे पत्र

१. अभीष्ट चिंतन

मान्यवर श्री बाबू राजेंद्रप्रसादजी, दिल्ली   २५ जनवरी १९५०

स्वाधीन भारत के प्रजातंत्र राज्य के अध्यक्ष स्थान पर आपके निर्वाचन से अतीव प्रसन्नतापूर्वक मैं आपका अभिनंदन करता हूँ। सर्वसामान्य जनता में एक व्यक्ति के नाते, नूतन तंत्र को आपके सुयोग्य मार्गदर्शन का लाभ होने से मन में अनेक आकांक्षाओं की पूर्ति हो सकने की भावना का अनुभव कर रहा हूँ। परमकृपालु भगवान आपको इस महनीय कार्य को सफल करने के लिए सुदृढ़ स्वास्थ्य एवं दीर्घायु प्रदान करे।

२. स्वाधीनता की प्राप्ति, याने नई जिम्मेदारियाँ

डा. गोपीनाथकृष्ण गुरुबक्ष, बीकानेर   २७ जनवरी १९५०
(महात्मा गाँधी के निकट सहयोगी)

आपने तो अपना सर्वजीवन पूज्यपाद महात्मा जी के निकट रहकर पावन किया है। भारतमाता की सेवा का अखंड व्रत सदा ही आपका रहा है। कल की शुभ घड़ी पर आपने अपनी प्रतिज्ञा को दोहराया, यह उचित है।

आपने मेरे जैसे सामान्य व्यक्ति को कुछ सूचना देने के लिए कहा, इसमें आपका निरहंकार सौजन्य ही प्रकट होता है, न कि आपको मार्गदर्शन की आवश्यकता। ऐसा होते हुए भी अपनी मातृभूमि की सर्वगामी उन्नति के लिए मुझे जो कार्य अनिवार्य दिखता है, आपके विचारार्थ लिख रहा हूँ।

नूतन स्वाधीनता की प्राप्ति, याने अनेक नई जिम्मेदारियाँ। अपके सामने कई समस्याएँ खड़ी हैं। उनमें विशेष संकट जनता में बढ़ती हुई विच्छेद-वृत्ति का है। स्वार्थ, उससे उत्पन्न स्पर्धा, द्वेष, ईर्ष्या, परस्पर

अविश्वास, सहकार्य का अभाव– यही सब दूर दिखता है। इसमें सर्वसामान्य जनता को पक्षोपपक्ष से परे विशुद्ध राष्ट्रभावना की शिक्षा देकर निःस्वार्थ, त्यागी, राष्ट्रसेवक के नाते जनसाधारण को सुसंस्कृत करना और सब एक ही भारतमाता की संतान– इस नाते सब में अटूट प्रेम-भाव का निर्माण करना, यही उपाय है। आपने तो एक अतिश्रेष्ठ महापुरुष के सन्निकट इन गुणों की शिक्षा पाई है। उसका अपने सब बंधुओं को लाभ दिलाएँ, यही मेरी आपसे प्रार्थना है। यह सब जानने वाले आप हैं, अतः और कुछ लिखना धृष्टता मात्र है....आपकी सहधर्मचारिणी श्रीमती विमलारानी माता को साष्टांग प्रणाम।

३. सशर्त छुटकारा

श्रद्धेय स्वातंत्र्यवीर श्री तात्याराव सावरकर　　१३ जुलाई १९५०

आज के 'तरुण भारत' में आपके छूटने का आनंददायी समाचार पढ़ा, उसमें लिखा 'सशर्त' शब्द मुझे चुभने लगा। आपने सारा जीवन भारतमाता के दास्य-विमोचन हेतु उत्सर्ग किया है। जीवन में राष्ट्रगौरव के अतिरिक्त अन्य कोई भी चाह आपने नहीं की। ऐसा होते हुए भी परकीय सत्ता जाने के अनंतर भी आपको कारावास के कष्ट भोगने पड़े, इससे विचित्र विधि-विधान क्या हो सकता है? मानो परमेश्वर ने कष्ट भोगने के लिए ही आपकी उत्पत्ति की हो। आप भी सीता के शब्दों में यही कह सकेंगे कि–

मामिकेयं तनुर्नूनं सृष्टा दुःखाय लक्ष्मण
धात्रा यस्यास्तथा मेऽद्य दुःखमूर्तिः प्रदृश्यते।'
(वाल्मीकि रामायण, उत्तरकांड ४८-३)

हे लक्ष्मण! संदेह नहीं, ब्रह्माजी ने मेरा यह शरीर दुःख भोगने के लिए ही पैदा किया है। उसके कारण आज मैं दुःख की मूर्ति सी दिखाई पड़ती हूँ। किंतु आपका यह कष्टमय जीवन व्यर्थ नहीं होगा। कालांतर से मार्ग पर आया समाज पूर्वाग्रह दोषमुक्त होकर आपके उज्ज्वल जीवनयज्ञ की ज्वाला के प्रकाश में राष्ट्र की सेवा का व्रत ग्रहण करेगा तथा आपको नम्रतापूर्वक श्रद्धांजलि अर्पण करेगा।

इससे अधिक इस समय क्या लिखूँ? कृपया अनुग्रह बनाए रखें, इस प्रार्थना से।

(मूल मराठी)

४. निर्वासितों की समस्या पर गंभीरता से विचार हो

डा. चोइथराम गिडवानी, २२ जुलाई १९५०

अति कठोरता से या जहरीले शब्दों में किसी व्यक्ति या संस्था की निर्भर्त्सना न करते हुए पंजाब, सिंध और बंगाल से निर्वासित बंधुओं की समस्याओं पर गंभीरतापूर्वक विचारकर विधायक सूचनाएँ इस सम्मेलन में दी जाएँगी, ऐसी मुझे आशा है। जो प्रदेश आज 'पाकिस्तान' कहा जाता है, वहाँ इन बंधुओं को अपनी करोड़ों रुपयों की संपत्ति छोड़कर आना पड़ा, इस बात की ओर शासन का ध्यान आकृष्ट करने का जोरदार प्रयास करना पड़ेगा। कोई कारण नहीं कि अपने बंधु और अपना देश अकारण ही इस तथा अन्य सब हानियों को सहे और दूसरा पक्ष फायदा ही उठाए। गंभीरता से तथा व्यावहारिक चातुर्य से इस प्रश्न का विचार करने के लिए शासन को बाध्य करना होगा।

आशा है कि आप और सम्मिलित होनेवाले अन्य बंधु, इस समस्या को जानते हुए तथा उसका हल करने में सक्षम होते हुए, इस कार्य को सफल बनाने के लिए एक योजना बनाएँगे। (मूल अंग्रेजी)

५. कलाकारों को शासन की सहायता मिले

केंद्रीय मंत्री डा. बारलिंगे १० अप्रैल १९५१

कल आपके साथ जीवन-विकास प्रदर्शनी देख आया, इसका मुझे अतीव समाधान है। उसका खेती-विषयक, ग्रामसुधार एवं वन विभाग आदि का आयोजन उद्बोधक है। हर तहसील में यदि शासन ऐसी प्रदर्शनी लगाए और उसमें सरल भाषा में सब समझाने की व्यवस्था हो तो बहुत लाभप्रद सिद्ध होगा। प्रदर्शनी में खर्चीले पाश्चात्य उपकरणों के स्थान पर अपने यहाँ प्रचलित उपकरण सुलभता से सुधारने की कृति दर्शाई है। उससे अपने खेतीहर बंधुओं का बहुत फायदा होगा और अनाज का उत्पादन बढ़कर जनता को लाभप्रद सिद्धि होगी। इसलिए इन उपकरणों की जानकारी देने हेतु ऐसी प्रदर्शनी प्रत्येक तहसील में लगाना बहुत उपयोगी है। आप भी ऐसा ही सोचते होंगे। प्रत्यक्ष व्यवहार में उसे चरितार्थ करने की समस्या आपके सम्मुख है। मर्यादित क्षेत्रों में क्यों न हो और भले ही कुछ आर्थिक व्यय हो, यह प्रयोग लाभदायी सिद्ध होगा, ऐसा मुझे लगता है। जो उचित है, वह आप करेंगे, ऐसा विश्वास है।

....इस पत्र को लेकर आपके पास आनेवाले श्री आठल्ये एक उत्कृष्ट कलाकार हैं। कला के उपासकों को शासन के द्वारा प्रोत्साहन मिलना बहुत आवश्यक है। पूर्व काल में कला और उसकी उन्नति हेतु सुयोग्य कलाकारों को राजा-महाराजाओं का ही आश्रय रहता था। वे आर्थिक सहायता भी करते थे। पूर्व काल के राजाओं के स्थान पर आज विद्यमान शासन-व्यवस्था है। इसीलिए यह प्रोत्साहन यदि शासन ने दिया तो ही कला जीवित रहेगी और उसका विकास होगा तथा वह मानवता के अभ्युदय में पोषक सिद्ध होगी। आप जैसे सहृदय शासनाधिकारी हमें मिले, यह हमारा अहोभाग्य है। जो भी संभव हो, कृपया श्री आठल्ये का सहाय्य कर जनता को आश्चर्यचकित करनेवाली कला, उन्हें रचना करने का और नागपुरस्थ सुज्ञ जनता को वह देखने का सुयोग आप कृपया प्रदान करेंगे, ऐसा विश्वास है। (मूल मराठी)

६. राष्ट्रहेतु परमात्मा ने आपका संरक्षण किया

मान्यवर श्री मोरारजी भाई, मुख्यमंत्री, महाराष्ट्र — २१ सितंबर १९५१

वृत्त से पता चला कि जब आप मंचर में थे, एक दरवाजा गिर जाने के कारण आपको चोटें आईं। वृत्त पढ़ते समय लगा कि यह अपघात बहुत भीषण बन जाने की संभावना थी। श्री परमात्मा ने ही आपका संरक्षण किया।...

आप कर्तृत्वसंपन्न व्यक्ति है। आपका कर्तृत्व राष्ट्रसेवा में समर्पित है। ऐसे श्रेष्ठ व्यक्ति की राष्ट्र को अपरिहार्य आवश्यकता रहती है। सद्यःस्थिति में आपकी आवश्यकता अत्यधिक है। ऐसे अवसर पर आपका संरक्षण, दयाघन श्री प्रभु की अपने राष्ट्र पर महती कृपा ही है। उसकी ऐसी ही कृपा सदैव बनी रहे। आपको और प्रदीर्घ कार्यशक्तिसंपन्न जीवन प्राप्त हो, यही श्री प्रभु चरणों में मेरी प्रार्थना है।

७. चुनाव जीतने पर अभिनंदन

डा. श्यामाप्रसाद मुखर्जी, — ७ फरवरी १९५२

चुनाव में आपके विजयी होने का समाचार मिला। परिस्थिति को ध्यान मे रखते हुए आप जिस दल का प्रतिनिधित्व करते हैं, उसके विरुद्ध मान्यवर प्रधानमंत्री जैसे पुरुषों ने किया हुआ जोरदार केंद्रित प्रचार आदि

होते हुए भी आपकी विजय इस बात का संकेत करती है कि यह दल लोगों का प्रिय आदर्श बनकर, समाजसेवा की दिशा में तथा राजनैतिक क्षेत्र में देश को वैभवसंपन्न तथा श्रेष्ठ बनाएगा। आपकी शानदार विजय के लिए हार्दिक अभिनंदन। (मूल अंग्रेजी)

८. चुनाव जीतने पर बधाई

श्री वि.घ.देशपांडे

७ मार्च १९५२

....दोनों क्षेत्रों में सब प्रतिपक्षी स्पर्धकों को परास्त कर आप निर्वाचित हुए, इसलिए आपका हृदयपूर्वक अभिनंदन करता हूँ। आप के निर्वाचन क्षेत्रों में माननीय पंडित नेहरू जैसे प्रभावी नेता ने हिंदूसभा एवं महात्मा गाँधी-हत्या का अकारण ही संबंध जोड़कर वातावरण दूषित करने का भरसक प्रयास किया था। आपके निर्वाचन से असत्यता सिद्ध हुई और झूठा प्रचार करनेवालों का दिमाग ठिकाने लग गया। हिंदुत्व का प्रभाव नष्ट करने का प्रयास असफल ही सिद्ध होगा, यह विश्वास हिंदू जनमानस में दृढ़ होगा, ऐसा आपका नेत्रदीपक यश है। (मूल मराठी)

९. स्वराज्य सुरक्षित रखने का आधार स्वदेशी व्रत

डा. कुमारप्पा,

२५ सितंबर १९५२

....आर्थिक वैषम्य दूर करने का जो निश्चय आपने किया है, वह सर्वथा राष्ट्रहितकारक है और उसके लिए शांतिपूर्ण, विद्वेषरहित, समाज के एकात्म साक्षात्कार पर आधारित मार्ग ही अनुसरणीय है, इसका आपने किया आग्रह अत्यंत समयोचित है।

'स्वदेशी' के विषय में तो कुछ कहने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि प्रथम स्वराज्य-प्राप्ति का शस्त्र और तदनंतर उसको सुरक्षित एवं उन्नत रखने का आधार स्वदेशी ही है। हम लोगों ने भी अपने संघ के कार्य द्वारा इस व्रत के आचरण का आग्रह अधिक तीव्रता से प्रसारित करने का निश्चय किया है।

....आपके सब उचित कार्यक्रमों में अपना सहयोग रहेगा, इसमें कोई संदेह नहीं।

१०. समर्थन-सहकार की प्रार्थना

श्री टी.आर.वी.शास्त्री, चेन्नै २८ सितंबर १९५२

शासन संपूर्ण देश में निरपवाद रूप में तथा किसी आरक्षित अधिकार के बिना गोहत्या बंद कर दे इस दृष्टि से संघ ने लोकमत जागृति कर उन्हें प्रेरणा देने के लिए हस्ताक्षर-संग्रह अभियान प्रारंभ किया है। इस प्रश्न पर अनुकूल वातावरण निर्माण होकर हमारे कार्यकर्ताओं का कार्य सुकर हो तथा उन्हें लोगों से सहजता से सहयोग मिले, इस दृष्टि से मुझे लगता है कि जिनके शब्दों में प्रभाव तथा वजन है, ऐसे प्रसिद्ध व्यक्तियों को समाचार-पत्र, छोटी सभा, स्वतंत्र लेख, भाषण आदि द्वारा सुनिश्चित रूप से अपनी सहमति व्यक्त करनी चाहिए तथा शासन पर प्रभाव डालकर उसे सुयोग्य उपाय करने के लिए बाध्य करने हेतु जनमानस में इस कार्य के प्रति विश्वास उत्पन्न करने की आवश्यकता है। इस कार्य में पहले ही विलंब हो चुका है, इसलिए जितना शीघ्र शासन गोहत्या-बंदी कानून (बैल, बछड़े किंबहुना संपूर्ण गोवंश) लागू करेगा, उतना देश का भला होगा। शासन को अनुकूल बनाने के लिए जो भी प्रयास करने आवश्यक हैं, उन्हें प्रारंभ कर देना चाहिए। इसलिए आपसे विशेष प्रार्थना है कि आप अपनी प्रभावी लेखनी तथा अतुलनीय व्यक्तित्व का वजन इस कार्य में डालें। गोहत्या बंदी की सर्वोच्च आवश्यकता को सिद्ध करने के लिए इस प्रश्न के विभिन्न पहलुओं पर विचार होना चाहिए। गो हत्या बंदी के आर्थिक दृष्टिकोण को प्राथमिकता दी गई है, उसका प्रतिपादन करना सरल है। मुझे लगता है कि आर्थिक पहलू से भी दूसरा महत्त्वपूर्ण पहलू यह है कि सदियों से गाय अपने लोकमानस मे भक्ति एवं श्रद्धा का केंद्र रही है, राष्ट्रीय सम्मान की अभिव्यक्ति है तथा राष्ट्रभक्ति का जीता जागता उदाहरण है। इस बात पर समुचित तौर से जोर देना चाहिए। आपके बिना यह कार्य दूसरा कोई अधिक अच्छी तरह से नहीं कर सकता। किसी श्रद्धा-विषयक संरक्षण के प्रश्न पर आर्थिक दृष्टिकोण से सोचना अनावश्यक ही नहीं, गलत भी है। इस विषय के बारे में मेरी यही सोच है और निस्संदेह आप भी मेरे दृष्टिकोण से सहमत होंगे।

इस महत्त्वपूर्ण विषय पर आप अपने लेख, निवेदन, आदि 'हिंदू' तथा अन्य सम्मान्य वृत्त-पत्रों मे अंग्रेजी तथा तमिल भाषा में प्रकाशित करें, यही प्रार्थना है। (मूल अंग्रेजी)

११. गोरक्षा आंदोलन विशुद्ध राष्ट्रीय

साधु.टी.एल.वासवानी, ७ नवंबर १९५२

गो हत्या बंदी आदोलन का उद्देश्य जनभावना का किसी संस्था के लिए अनुचित लाभ उठाना नहीं है। अपने राष्ट्रहृदय की वह स्वाभाविक पुकार बने, ऐसी इच्छा है।

यह शुद्ध सात्विक भावना आपको प्रिय है, यह मै जानता हूँ। अतः इस कार्य की सफलता के लिए आपका आशीर्वाद प्राप्त हो और इस विषय में आप कृपया लोगों को उद्बोधित करें, यह नम्र अनुरोध है। (मूल अंग्रेजी)

१२. गोरक्षा का प्रश्न संपूर्ण देश का है

राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन, दिल्ली ६ नवंबर १९५२

गोवंशहत्यानिरोध-विषयक यह जो कार्यवाही मैंने प्रारंभ करवाई, इसे किसी दल विशेष का कार्य है, यह स्वरूप न हो, यही मेरी इच्छा रही है। यह तो समस्त जनता का, अखिल देश का प्रश्न है। अतः उसका सर्व कार्य जनता का कार्य, इसी रूप में होना और जनता को ही उसका सब श्रेय मिलना, मुझे अभीप्सित है। अपने संघ की दृष्टि से तो इस कार्यक्रम के द्वारा स्वयंसेवकों को अधिक श्रम करने की प्रेरणा देना, इतनी ही इच्छा है; श्रेय, प्रसिद्धि आदि की कामना नहीं। अतः आपसे मेरी नम्र प्रार्थना है कि उक्त दोनों कार्यक्रमों– सार्वजनीन सभा तथा शिष्टमंडल में आप सम्मिलित हों तथा प्रत्यक्ष सहकार्य दें, अपनी अमृतवाणी से इस पवित्र विषय को अधिक पवित्र करें।

१३. मातृभाषा में राज्य-शासन का व्यवहार अभिनंदनीय

पंडित रविशंकर शुक्ल, मुख्यमंत्री, मध्यप्रदेश २ सितंबर १९५३

अपने मध्यप्रदेश राज्यशासन में विदेशी अंग्रेजी को दूर कर आज से विधिवत् मराठी तथा हिंदी दोनों प्रादेशिक भाषाओं का व्यवहार आपने प्रारंभ कर दिया, यह जानकर अतीव प्रसन्नता एवं समाधान का अनुभव कर रहा हूँ। समस्त भारत को एकात्मता के अनुभव तथा पारस्परिक व्यवहार हेतु विदेशी भाषा पर निर्भर रहना लज्जास्पद है, राष्ट्राभिमान का अपमान है। इसका साक्षात्कार आप जैसे भारतीय राष्ट्रपरंपरा के अभिमानी

महानुभावों को होते रहना स्वाभाविक ही है। अतः इस अपमान का परिमार्जन करने की दृष्टि से आपकी ओर से पग उठाया जाना अपेक्षित था। आज यह महत्त्वपूर्ण निर्णय कार्यान्वित कर आपने राष्ट्राभिमान के भाव को जागृत किया है। इससे जन-जन का हृदय तेजस्विता से परिपूर्ण होगा, ऐसा मुझे विश्वास है।

इस उत्कृष्ट निर्णय को प्रत्यक्ष में लाने में अनेक कठिनाइयाँ होते हुए भी राष्ट्राभिमान के संतोष के निमित्त उन्हें झेलकर पार करने की दृढ़ता आपने प्रकट की है। इस महान कार्य के लिए मैं अपने तथा अपने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की ओर से आपका एवं आपके शासकीय सहकारियों का हृदयपूर्वक अभिनंदन करता हूँ। परमकृपालु भगवान की प्रार्थना करता हूँ कि इसी प्रकार भारतीयता का पोषण करने के लिए आपको सुदीर्घ आयुरारोग्यसंपन्न कर्तृत्वपूर्ण जीवन प्रदान करे।

१४. स्वतंत्रता का मूल्य अखंड जागरूकता

श्री जसवंतसिंह, नई दिल्ली ६ सितंबर १९५३

अखंड जागरूकता स्वतंत्रता का मूल्य है, सीमा-रक्षा के लिए सीमाओं के अंदर और बाहर जो कुछ घटनाएँ होती हैं, उनपर दृष्टि रखकर तथा उनका अभ्यास कर सभी प्रकार के काम करने के लिए नित्य सिद्ध रहना प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है, ताकि हमारी सीमाएँ सुरक्षित रह सकें; देश में शांति, स्थिरता और राष्ट्रीय एकता बनी रहे। इस दृष्टि से उत्तर क्षेत्र की घटनाओं पर तथा सीमाओं पर लोगों का ध्यान आकृष्ट करने का आपका प्रयास अभिनंदनीय है। अपने शासन को, जो इस परिस्थिति के विषय में सजग है, हम आश्वस्त करें कि देश के अंदर तथा बाहर से जो संकट मंडरा रहे हैं, उनसे देश की रक्षा करने के लिए सब देशवासियों का हार्दिक समर्थन है।

इस कार्यक्रम से एक और लाभ है। दुनिया के पीड़ितों, दुःखी, अज्ञानी लोगों का हमारा देश सदैव मित्र रहा है। तिब्बती लोग न केवल हमारे मित्र हैं, अपितु प्राचीनकाल से उनसे हमारा धार्मिक एवं सांस्कृतिक संबंध है तथा मानवता के रक्षक भगवान बुद्ध की भक्ति का भी दृढ़ बंधन है। इसलिए उनकी आपत्ति हमारी आपत्ति है, उनका पारतंत्र्य हमारे राष्ट्रीय आत्मसम्मान का अपमान है।

अपने देश को इस विषय में पूरी शक्ति के साथ आवाज उठानी चाहिए। इस अत्यावश्यक महत्त्वपूर्ण विषय के बारे में आपने अपनी भावनाओं का प्रकटीकरण किया, इसलिए इस आयोजन मैं आपका अभिनंदन करता हूँ। (मूल अंग्रेजी)

१५. समस्त गोवंश सर्वथा अवध्य

श्री उमाशंकर त्रिवेदी, नीमच

१५ नवंबर १९५३

गोहत्या-निरोध विषयक बिल का प्रारूप कल मिला। बिल छोटा, परंतु अर्थपूर्ण है। यही उसका उत्तम गुण भी है। किंतु मुझे एक आशंका है। 'मिल्च एंड ड्रॉट कैटल' इस शब्द-प्रयोग में ड्रॉट का अर्थ जो श्रम कर सकते हैं, जैसे बोझा ढोना, गाड़ी खींचना, हल चलाना आदि, अर्थात् इसमें दूध न देने वाली गायें सम्मिलित नहीं हैं, क्योंकि शब्द 'मिल्च' है। विधान के ४८ अधिनियम में यह त्रुटि ही है। अतः इस बिल में इसके नामाभिधान से भी यह स्पष्ट होना चाहिए कि केवल दुधारू गायें, काम कर सकनेवाले बैल तथा बछड़े इनकी हत्या रोकने के लिए नहीं, अपितु समस्त गोवंश, दूध देनेवाली, न देनेवाली गायें, दोनों लिंगों के बछड़े, काम कर सकनेवाले तथा वृद्धावस्था, रुग्णावस्था आदि किसी भी कारण से अकार्यक्षम बने हुए बैल, याने सब अवस्थाओं के ये पशु सर्वथा अवध्य हैं। बिल में यह स्पष्ट है, परंतु इसके नामाभिधान तथा हेतु (स्टेटमेंट ऑफ ऑब्जेक्ट्स आदि) में भी यह निःसंदिग्ध रूप से आना आवश्यक प्रतीत होता है।

आशा है कि सभी पक्ष के सदस्य पक्षाभिमान छोड़कर इस राष्ट्रीय प्रश्न को इसी दृष्टि से देखेंगे और इसका समर्थन करेंगे। व्यक्ति से पक्ष श्रेष्ठ और राष्ट्रीय श्रद्धा एवं संपत्ति की रक्षा करने का सार्वदेशिक कार्य पक्ष से भी अनंतगुण श्रेष्ठ है। पक्ष के हित के लिए व्यक्ति का त्याग जितना उचित है, उससे अत्यधिक उचित एवं आवश्यक है राष्ट्रहित के लिए पक्ष का त्याग। सब प्रकार के दुरभिमान छोड़कर कार्य करना कर्तव्य है, यह बात सब सदस्य समझेंगे, तो यह पवित्र कार्य पूरा होगा ही।

१६. सत्याग्रह पूर्णतया वैध मार्ग

स्वामी स्वतंत्रतानंद जी

२९ जून १९५४

अत्यंत हर्ष से पत्र तथा प्रस्ताव पढ़ा। प्रस्ताव में कमी कोई नहीं,

परंतु आगे और भी दृढ़ता से अपना मत प्रकट करना पड़ेगा, ऐसा दिखता है। हाल में श्री सेठ गोविंददास जी ने भी एक वक्तव्य निकालकर सरकार को चेतावनी दी है। जनता उग्र से उग्र पग उठाने के लिए उत्तेजित हो रही है। इसका कारण सरकारी अकर्मण्यता की नीति ही है। मैं स्वयं यह नहीं चाहता कि सत्याग्रह आदि करना पड़े। पर मेरी इच्छा-मात्र से तो सब जनता चलती नहीं। अतः जनता का स्वाभाविक रोष किसी अनिष्ट रूप से प्रकट न हो, इस हेतु आर्य-समाज जैसी प्रबल संस्था ने आगे आकर यदि सत्याग्रह भी छेड़ना पड़े तो भी उसे शांतिपूर्ण ढंग से चलाने का भार लेना आवश्यक होगा। प्रस्ताव में जो कहा है कि 'सत्याग्रह' यह पूर्णतया वैध मार्ग है, वह सर्वांश से सत्य है। अन्य सभी बुद्धिवाद के युक्तिवाद के मार्ग रुक जाने पर सत्य स्थापित करने का यह न्यायसंगत मार्ग है तथा जनता का स्वाभाविक अधिकार है, निःसंदेह है। तो भी इस मार्ग का अवलंब अतिविचार से, अन्य मार्गों के कुंठित होने पर ही करना उचित रहता है। इस दृष्टि से आपके प्रस्ताव में इस संबंध में जो लिखा है, अति योग्य है, तथापि जनता के मार्गदर्शक के नाते इस मर्यादा तक जाने की सिद्धता कर रखना आवश्यक है। समय आने पर अव्यवस्थित पाया जाना लाभदायक नहीं होगा।

मेरा विश्वास है कि आप तथा अन्य श्रेष्ठ कार्यकर्ताओं ने सब बातें सोच रखी होंगी। हम सब मिलकर श्रेय के बँटवारे का प्रश्न कभी-कभी, किसी-किसी ओछी बुद्धि में आता है, उससे परे रहकर योग्य मार्ग अपनाएँ, तो शीघ्र ही गोहत्या का जो कलंक अपने राष्ट्र पर है, वह धुल जाएगा।

१७. अतीव शांति प्राप्त हुई

पं. रविशंकर शुक्ल, मुख्यमंत्री, नागपुर — ४ अगस्त १९५४

आपने इतना कार्यव्यस्त होते हुए भी स्मरणपूर्वक मेरे पितृवियोग के दुःख में धैर्यप्रदान करनेवाला पत्र भेजा, इससे हृदय कृतज्ञता से भर गया। मन को अतीव शांति प्राप्त हुई। जन्मदाता का छायाछत्र नियति ने छीन लिया, तो भी आपके पत्र से वही पितृतुल्य छाया मेरे ऊपर विद्यमान है, यही अनुभव होने के कारण अंतःकरण का शोक नष्ट हो गया। अब स्वस्थचित्त से अपने नित्य कार्य में जुटने का धैर्य भी अनुभव कर रहा हूँ।

आपके प्रति मेरी जो भावना है, वह किन शब्दों में व्यक्त करूँ, समझ में नहीं आता। आप मेरे भाव समझ लेंगे।

इसी पत्र में एक और आनंदमय कर्तव्य पूर्ण करता हूँ। दो दिन पूर्व २.८.५४ को आपने ७८वें वर्ष में पर्दापण किया है। परमपिता श्री परमात्मा की कृपा से आपको प्रदीर्घ आयुरारोग्य प्राप्त हो।

१८. सब मिल-जुलकर मार्ग निकालें

डा. घनश्यामदास जी तोलानी,

३० सितंबर १९५४

ये जो सत्याग्रह चल रहे हैं (गोवध कानूनन बंद हो, इसलिए –सं) उनका कुछ पता वृत्त-पत्रों से मिल रहा है। सत्याग्रह करने की धुन सी सब लोगों में सवार हो गई दिखाई देती है। बहुत कम बार यह सोचा जाता है कि सर्वदा देश-भर में किसी न किसी प्रश्न को लेकर जनता को क्षुब्ध रखना अंततोगत्वा लाभदायक नहीं होता। इस देश में गोहत्या पूर्णतया बंद होनी चाहिए। ऐसा होगा भी। इसके लिए जो प्रयत्न करने हैं, उसमें राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की क्या नीति रहेगी, यह मैंने हस्ताक्षरसंग्रह के समय तथा पिछले वर्ष के गोपाष्टमी सप्ताह में अपने भाषणों में स्पष्ट कर दिया है। उसका स्मरण करें।

आपने लिखा है कि हमारी यही दुर्बलता रही है कि हमारे संगठन और शक्तियाँ बिखरी हुई हैं और हम मिलकर प्रयत्न नहीं करते, वह पूर्णतया ठीक है। सब यही कहते हैं। एकत्र आने के लिए कहनेवाले भी उद्यत नहीं होते। गोहत्या-निषेध के आंदोलन में मेरा यही अनुभव रहा है। सब अपने-अपने मन से अलग-अलग कुछ कर डालते हैं। साथ बैठकर सोचकर एक मार्ग निकालने के लिए कोई सिद्ध नहीं होता। यह अनुभव पाकर अब मैं, जो इस सत्याग्रह क्षेत्र में उतरे हैं, उन्हीं को सफलता का श्रेय मिले, इस दृष्टि से उनका अभिनंदन करता हुआ, उनकी सफलता के लिए इच्छा करता हुआ बैठा हूँ। आशा है कि आगे मिलकर प्रयत्न करने के केवल उपदेश न देते हुए सब एकत्र आने का विचार करेंगे और वह भी किसी एकाध विषय को लेकर नहीं, तो पूरे जीवन भर राष्ट्रपुनर्निर्माण के सभी कार्यों में सुसंगठित रहने का निश्चय लेकर।

१९. हिंदुत्ववादी हमारा प्रतिनिधित्व करें

श्री फिरोजशहा डी. पटेल, १० अप्रैल १९५४

गोमाता के प्रति आपके श्रद्धायुक्त शुद्ध भाव जानकर हृदय पुलकित हुआ। ऐसी ही सब लोगों के मन में तीव्र भावना रही तो शीघ्र ही गोहत्याबंदी का कानून बनेगा। यह सत्य है कि शासन चलानेवाले लोग यह सोचते हैं कि हिंदूविरोधी, अतएव राष्ट्रविरोधी मुसलमान और तत्सम मानसिकता वाले लोगों के वोटों से अगले चुनाव में निर्वाचित होकर अपना सत्तास्थान भविष्य में बहुत समय तक कायम रहेगा। मुझे लगता है कि सभी सत्प्रवृत्त राष्ट्रभक्त इन सत्ताधारी लोगों को केवल मुसलमानों की संगत में ही छोड़ दें और जनता की आकांक्षाओं के अनुरूप शासन चलानेवाले जनप्रतिनिधियों को अन्यत्र खोजें। सत्याग्रह कुचलने के लिए शासन द्वारा असभ्य पद्धति का सहारा लेना दुर्भाग्यपूर्ण है। अपनी संस्कृति, संस्कार तथा गुणों के अनुसार ही व्यक्ति का व्यवहार होता है। अतः शासन से इसके विपरीत अपेक्षा करनी ही नहीं चाहिए। दमन नीति के रहते हुए भी यह आंदोलन प्रभावी बन रहा है। लोग सजग हैं और मुझे लगता है कि यह आंदोलन दिन-प्रतिदिन तीव्र होगा। कुछ समय भले ही लगे, किंतु यह आंदोलन यशस्वी होगा, ऐसा मुझे विश्वास है। गोमाता के विषय में आपकी उदात्त कल्पनाओं के लिए कृतज्ञ हूँ। (मूल अंग्रेजी)

२०. ७९वीं वर्षगाँठ पर रविशंकर शुक्ल का अभिनंदन

श्री बृजलाल बियाणी, नागपुर ५ जुलाई १९५५

आदरणीय पं. रविशंकर शुक्ल के सम्मान हेतु अभिनंदन-ग्रंथ उनकी ७९वीं वर्षगाँठ पर समर्पित करने का विचार स्तुत्य है। मा. शुक्लजी का संपूर्ण जीवन राष्ट्रविमोचनार्थ व्यतीत हुआ है और अंग्रेजों के यहाँ से जाने के उपरांत अपने प्रांत का शासनभार सँभालने में पिछले ८ वर्ष उन्हें अतीव परिश्रम के होते हुए भी उन्होंने यह भार अतीव योग्यता से निभाया है, यह सर्वविश्रुत है। जिस अवस्था में साधारण व्यक्ति कार्यभार से निवृत्त हो विश्राम की कामना करता है, उस परिपक्व वृद्धावस्था में अनेकविध समस्याओं से जटिल बने शासन के दायित्वपूर्ण कार्य को इतनी योग्यता से चलाना कोई सामान्य बात नहीं है। परंतु मान्यवर पंडितजी के जीवन में जो धर्मश्रद्धा तथा तदनुरूप नियमपूर्वक आचरण करने की दृढ़ता है, उसी

कारण मन शांत, संतुलित रहकर श्रेष्ठ सफलकर्मी का जीवन निभाकर महान दायित्व पूरा करने की शक्ति उनमें प्रकट हुई है। श्री परमात्मा की उपासना वैध या विधिनिषेध के परे होकर कैसी भी हुई तो सद्यःफलदायिनी सिद्ध होती है, मा. पंडितजी का जीवन इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है, ऐसा मैं मानता हूँ। उनका यह परिश्रम से भरा हुआ कर्मी जीवन, देश के हित सर्व प्रकार के कार्यों में अविरत रूप से व्यस्त जीवन आज की तरुण पीढ़ी में अध्यवसायी वृत्ति, श्रम करने का उत्साह, कर्तव्य-पथ पर अडिग रहने का धैर्य प्रदान करने में समर्थ है। मैं आशा करता हूँ कि इन गुणों का तथा धर्मप्रेम एवं आचरण का यह आदर्श अपनाकर देश का युवक वर्ग अपने-आपको योग्य राष्ट्रसेवक के रूप में उपस्थित करने में यत्नशील होगा।

व्यक्तिशः मेरे लिए यह मंगल अवसर अतीव आह्लाद देनेवाला है। श्रद्धेय पंडितजी के सहाध्यायी तथा एक ही पाठशाला में छात्र के रूप में मेरे पूज्यपाद चाचाजी तथा पूजनीय पिताजी थे। इस कारण मैं उनको इन गुरुजनों की भाँति ही अतिप्रेमास्पद एवं आदरणीय मानता हूँ। अतः मान्यवर पंडितजी की इस ७९वीं वर्षगाँठ के पुण्य अवसर पर उन्हें श्रद्धापूर्वक प्रणाम करता हुआ परम कृपालु श्री परमात्मा के चरणों में नम्र प्रार्थना करता हूँ कि मा. पं. रविशंकर शुक्लजी को उत्कृष्ट स्वास्थ्य सुखपूर्ण दीर्घजीवन प्राप्त हो, जिससे कि देशवासी बांधवों को यह श्रेष्ठ आदर्श प्रत्यक्ष देखकर अपना जीवन योग्य बनाने की चिरकाल प्रेरणा मिलती रहे।

मध्यप्रदेश हिंदी साहित्य सम्मेलन के सब सदस्य तथा श्री शुक्ल अभिनंदन ग्रंथ के संपादक मंडल का इस उत्तम उद्योग के लिए अभिनंदन करता हूँ।

२१. भेदों की जड़ मन से निकाल डालें

श्री. पूनमचंद रांका, नागपुर ११ जुलाई १९५५

बहुदुरा ग्राम में आप तथा अन्य श्रद्धास्पद सहकारियों द्वारा चलाए अहिंसात्मक क्रांति आंदोलन की पुस्तक प्राप्त हुई। पूर्ण पढ़ ली। अपने समाज में जो भेद हैं, उनमें से एक अतीव महत्त्व का भेद मिटाने का कार्य होने से वह अत्यंत श्रेष्ठ है, किंतु उसके पृष्ठ ५ पर 'हिंदू और हरिजन' ऐसा अलग उल्लेख है। इस भाव से एकता कैसी उत्पन्न होगी, मैं समझ

नहीं सका। इससे अपने-अपने अधिकार की स्पर्धा तथा तज्जन्य कटुता के ही उत्पन्न होने की आशंका है।

भेदों की जड़ मन में है। उसमें परिवर्तन लाने का विचार योग्य है। बलात् से हृदय-परिवर्तन नहीं होता। ये सब विचार बहुत ठीक हैं और उन्हीं विचारों से चलकर सफलता प्राप्त हो सकती है। हृदय परिवर्तन के हेतु भेदों का अनुभव करनेवालों के सम्मुख अपनी परंपरा, इतिहास आदि से निदर्शित अभेदरूप प्रकट करनेवाली, सबके लिए समान रूप से प्रिय, उपादेय ऐसे लक्ष्य के प्रति उत्कट श्रद्धा की जागृति आवश्यक है। वह श्रद्धा भी समाज की बुद्धि को आकलन हो सके, ऐसी प्रत्यक्ष अनुभव योग्य तथा पीढ़ी-दर-पीढ़ी हृदय में अंकित शुद्ध लक्ष्य का आह्वान करनेवाली होने से ही फल दे सकेगी, ऐसा मैं समझता हूँ। उस ओर अधिक ध्यान देने से तथा केवल बाह्य आचरण का बल कुछ समय के लिए हल्का करने से हृदय-परिवर्तन होना सुगम होगा। आगे जैसा आप श्रेष्ठ पुरुष योग्य समझें।

२२. सावरकर का जीवन प्रखर और दीप्तिमान

स्वातंत्र्यवीर वि.दा. (तात्याराव) सावरकर २६ मई १९५६

अपनी आयु के ७५ वर्ष २८.०५.५६ को आप पूर्ण कर रहे हैं। इस पुण्य पर्व पर आपके चरणों में श्रद्धावनत हो, परमपिता श्री परमेश्वर की कृपा चाहता हूँ। आपकी तेजस्वी वाणी एवं लेखनी द्वारा स्फूर्तिप्रद मार्गदर्शन का लाभ हम कोटि-कोटि हिंदुओं को दीर्घकाल तक प्राप्त होता रहे– इसलिए आपको निरामय प्रदीर्घ जीवन प्रदान कर हमें अनुगृहित करे, इस हेतु उस दयाघन के श्री चरणों में नम्रतापूर्वक प्रार्थना करता हूँ।

आपके प्रखर एवं दीप्तिमान जीवन के सब पहलुओं की अनुभूति संभवतः किसी को नहीं है। अपना-अपना दृष्टिकोण सही मानकर कुछ लोग आपकी स्तुति करते हैं, कुछ आपके भव्य व्यक्तित्व को सीमित करने का प्रयास करते हैं और कुछ अन्य आपकी अवहेलना कर स्वयं को धन्य मानते हैं। आपके दिव्य जीवन की प्रखरता न सहने के कारण ही इनकी ऐसी अवस्था होती होगी। इसी कारण मैं भी आपके विषय में यथार्थ स्तुति पर लिखने की धृष्टता न करते हुए आपका केवल वंदन करता हूँ। यथावकाश आपका सही रूप देखने की अपने सब राष्ट्रबंधुओं की शक्ति बढ़ेगी, दृष्टि निर्मल होगी। अपने राष्ट्रजीवन को उत्पथगामी होने से परावृत्त

करनेवाले आपके राष्ट्रसमर्पित जीवन की अतिश्रेष्ठ उदात्तता का अनुभव कर उनके द्वारा आपका यथोचित सत्कार अवश्य ही होगा, इसमें संदेह नहीं। हम जनदृष्टि निर्दोष करने का प्रयास करनेवाले और आपसे प्रतिपादित सत्य सिद्धांतों का उपयोग करने वाले लोग हैं। इस पवित्र सुअवसर पर कृतज्ञता से आपको वंदन कर हम अपना स्वयं का जीवन कृतार्थ अनुभव कर रहे हैं, क्योंकि आपका यथार्थ सम्मान करने की हमारी पात्रता ही नहीं है।

आपके प्रदीर्घ निरुज जीवन के लिए श्री चरणों में प्रार्थना करनेवाला, सदैव आपका ही। (मूल मराठी)

२३. सभ्य शासन का कर्तव्य

मान्यवर पं.गोविंदवल्लभ पंत जी — १० जुलाई १९५६

होशियारपुर में हुए कांड की जाँच हेतु अनशन कर रहे श्रीयुत यज्ञदत्तजी का स्वास्थ्य बहुत गिर चुका है तथा उनकी अवस्था अतीव चिंताजनक है, इस आशय के पत्र तथा तार मेरे पास पहुँचे हैं। भेजनेवाले व्यक्ति भी अच्छे प्रतिष्ठित एवं गणमान्य हैं। अतः समाचार विश्वसनीय है, ऐसा मैं मानता हूँ।

इस संकट से श्री यज्ञदत्तजी को मुक्त कर उनके प्राण बचाना आपके अधीन की बात है। उनकी माँग भी छोटी सी तथा अतीव उचित है। सभ्य शासन का कर्तव्य है कि उसके कर्मचारियों द्वारा अधिकार-अतिक्रमण होकर असभ्य व्यवहार होने के आरोप की त्वरित छानबीन कर अपराधियों को दंडित करें या आरोप निराधार सिद्ध करें। जो समाचार प्राप्त हैं, वे इतने भयंकर तथा लांछनास्पद हैं कि जाँच होना अनिवार्य रूप से आवश्यक प्रतीत होता है।

अतएव मेरी आपसे नम्रतापूर्वक प्रार्थना है कि योग्य न्यायालयीन जाँच का तुरंत आश्वासन प्रकट कर श्री यज्ञदत्तजी को अनशन स्थगित करने का अवसर दें। जाँच भी किसी राजनैतिक व्यक्ति द्वारा न करवाकर निष्पक्ष न्यायाधीशों की ओर से ही होनी चाहिए। अन्यथा वह विश्वासार्ह नहीं होगी। इसका विचार कर कृपया त्वरित उचित घोषणा कर ऐसा अनुग्रह करें कि श्री यज्ञदत्तजी अपने अनशन से परावृत हों तथा उनके प्राणों की रक्षा हो।

२४. लोकनायक श्री बापूजी अणे का अभीष्ट चिंतन

महामहोपाध्याय श्री दत्तोपंत पोतदार, १२ जुलाई १९५६

श्रद्धेय लोकनायक श्री बापूजी अणे का अभीष्टचिंतन करने हेतु एक सभा एवं भोजन का कार्यक्रम आगामी रविवार १५.७.५६ को आपने आयोजित किया है

इस कार्यक्रम में उपस्थित रहने की चाह हृदय में रहते हुए भी मुझे वह असंभव है। सब श्रेष्ठ महानुभावों के अभीष्टचिंतन की सद्भावनाओं में अपने सादर श्रद्धाभाव सम्मिलित कराने हेतु इस पत्र का आश्रय ले रहा हूँ। सर्वशक्तिमान् श्री परमेश्वर की असीम कृपा से लोकनायक महोदय को प्रदीर्घ आयु एवं स्वास्थ्यलाभ प्राप्त हो और उनके श्रेष्ठ जीवन से हम और आगामी पीढ़ी की जनता सुदीर्घ काल तक प्रत्यक्ष मार्गदर्शन प्राप्त करती रहे, यही उस दयाघन के श्री चरणों में नम्रतापूर्वक प्रार्थना है।

इस शुभ पर्व पर लोकनायक महोदय को सादर अभिवादन कर आज की 'किं कर्म किमकर्मेति' से मोहित नई पीढ़ी के कल्याण के लिए उनके आशीर्वाद की कामना करता हूँ। (मूल मराठी)

२५. पूर्वाग्रहग्रस्त बुद्धि को शुद्ध करना अति कठिन

श्री उमाशंकर त्रिवेदी, दिल्ली २१ जुलाई १९५६

मान्यवर प्रधानमंत्री महोदय संघ के संबंध में जो निराधार आरोप लगाते हैं, उनसे मैं परिचित हूँ। ......उनके पत्रों से तो ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने अपने मत बना लिए हैं। उन मतों के लिए प्रमाण खोजना तथा प्रमाणों की सत्यासत्यता की जाँच करना उन्हें आवश्यक प्रतीत होता हुआ नहीं दिखता। दृढ़ पूर्वाग्रहस्त बुद्धि को शुद्ध करना अति कठिन कर्म है। साधारण न्यायोचित बात तो यह रहती है कि ऐसे गंभीर आरोपों के संबंध में वे प्रमाण प्राप्त करते तथा उनकी प्रामाणिकता की छानबीन करने का हम लोगों को अवसर देते। परंतु ऐसा न्यायोचित मार्ग उनकी रुचि के या उनकी राजनैतिक इच्छाओं के प्रतिकूल समझकर वे संभवतः उसका अनुसरण नहीं कर रहे हैं। उनके संबंध मेरे हृदय में अतीव स्नेह एवं आदर की भावना है। यह भावना केवल उनके प्रधानमंत्री होने के कारण नहीं, अपितु व्यक्ति के नाते उनमें विविध लोभनीय गुणसंपदा है, उसके कारण है। इसके लिए उनके बारे में कोई कुछ अशोभनीय कहता है तो मुझे दुःख होता

है। ऐसी अवस्था में मुझे उनकी न्यायबुद्धि के विषय में संदेह करने की स्थिति उत्पन्न होने से जो व्यथा होती है, उसका मैं वर्णन भी नहीं कर सकता, तथापि ऐसा संदेह हो ही जाता है। इसी कारण उन्हें पत्र लिखकर उनका समय लेना तथा स्वयं भी अपना समय खर्च करना लाभदायक होने का विश्वास नहीं होता और इसी कारण उन्हें पत्र लिखने का मैं कुछ निश्चय नहीं कर सका हूँ। आगे श्री परमात्मा जैसी बुद्धि देगा, वैसा करूँगा परंतु आपने अत्यंत स्नेह के कारण आत्मीय भाव से न्याय की पुकार सुनकर जो प्रयास किया है, उसके लिए मैं अनुगृहीत हूँ। अगस्त मास के द्वितीय सप्ताह में थोड़े समय के लिए दिल्ली आने का अवसर मुझे प्राप्त होने की आशा है। उस समय आपके दर्शन करने का प्रयास करूँगा।

२६. शासन किसी दल का अनुगत दास नहीं

पं. गोविंदवल्लभ पंत, नई दिल्ली

२२ जुलाई १९५६

आपका कृपापत्र प्राप्त हुआ। होशियारपुर में जाँच करने के हेतु कांग्रेस ने एक समिति बनाकर उसमें एक अवकाशप्राप्त न्यायाधीश को सम्मिलित किया, यह समाचार प्राप्त हुआ। आपके पत्र से ऐसा लगता है कि केंद्रीय शासन की भी इस समिति को तथा उसकी जाँच को मान्यता है।

जाँच पूर्ण स्वरूप से होने के लिए जनता तथा जिनपर आक्षेप हैं, ऐसे अधिकारी से पूछताछ करना तथा अधिकारी मंडली के कागज पत्रादि का निरीक्षण करना आवश्यक है। एक राजनैतिक दल के कार्यकर्ताओं को यह अधिकार प्राप्त होना, इसका अर्थ केंद्रीय तथा प्रांतिक शासन से एक दल को श्रेष्ठ मानना होने की संभावना है। इससे शासन का पक्षभेदातीत सार्वभौम स्वरूप नष्ट होकर एक दल मात्र का अनुगत दास यह स्वरूप उसे प्राप्त होकर शासन के संबंध में जैसी आदर की भावना जनसाधारण में नित्य जागृत रहनी चाहिए, वैसी न रहने का भय निर्माण होता है।

इसी कारण मैंने पिछले पत्र में निष्पक्ष न्यायालयीन अधिकारी या सेवा निवृत्त पक्षनिरपेक्ष न्यायाधीश या तत्सम सज्जनों की समिति शासन की ओर से नियुक्त की जाने की, न कि कांग्रेस या अन्य दल की ओर से, आवश्यकता प्रतिपादन की थी।

आशा है कि आपने इस पहलू का विचार किया होगा। आगे जैसा आप उचित समझें।

परंतु इस समिति की नियुक्ति से श्री यज्ञदत्त जी ने अनशन समाप्त किया, यह अतीव समाधान की बात है। इस सफल कार्य के लिए मैं आपको हृदय से धन्यवाद देता हूँ।

२७. संवेदना

पंडित जवाहरलाल नेहरू, दिल्ली १० अगस्त १९५६

अंजार के भूचाल-पीड़ित क्षेत्र का निरीक्षण करने जाते समय आपकी मोटर उलटकर अपघात होने का तथा आपको चोट पहुँचने का समाचार पढ़कर अतीव दुःख एवं चिंता हुई। यह तो परमकृपालु श्री परमात्मा की कृपा है कि गंभीर चोटें नहीं आईं। आपपर श्री प्रभु की सदैव कृपा बनी रहे और आपको सब प्रकार का स्वास्थ्य एवं दीर्घ जीवन प्राप्त हो, आकस्मिक संकट आपके पास आने न पाएँ, यही मैं उस दयाघन के पास प्रार्थना करता हूँ, जिसके फलस्वरूप आप चिरकाल अपने राष्ट्र की सेवा सोत्साह व सफलतापूर्वक कर सकें।

२८. विच्छेदोत्पादक शब्द प्रयोग न हों

पं. गोविंदवल्लभ पंत, नई दिल्ली २० अगस्त १९५६

अपने देश के समाज के विभिन्न अंगों में ऐक्य की सद्भावना रहना तथा मतभेदों को व्यक्त करते समय हिंसा या अन्य किसी प्रकार के शांतिभंग करनेवाले कार्यक्रमों का प्रयोग सर्वथा त्याज्य मानकर चलना अतीव आवश्यक है, यह सर्वसामान्य बात है। हो सकता है कि आज देश में कुछ अशांतिप्रिय लोग हों और उन्हें अव्यवस्था निर्माण में रुचि हों, परंतु देश की लगभग संपूर्ण जनता शांति के ही पक्ष में है तथा शांति से ही प्रगति हो सकेगी– इस बात पर विश्वास रखती है, ऐसा मैं मानता हूँ। मेरे अविरत प्रवास में अधिकतर यही अनुभव भी आता है।

इस स्वाभाविक सद्भाव का पोषण हो, ऐसा व्यवहार, ऐसी वाणी तथा उसमें के शब्दप्रयोग यदि न हुए तो शांति की इच्छा व्यर्थ ही सिद्ध हो सकती है। आपके ही कृपापत्र का उदाहरण लेने से यह स्पष्ट होगा कि शासन में अत्युच्च दायित्वपूर्ण स्थान सुशोभित कर देश की उन्नति की चिंता वहन करते हुए भी एक अभंग हिंदू समाज में विच्छेद का भाव बढ़ाने वाले सिख और हिंदू जैसे शब्दप्रयोग, अनवधान से क्यों न हो, व्यवहृत होते

हैं। हम लोग तो सिख, सनातनी, आर्यसमाजी इत्यादि तथा जैन-बौद्ध आदि सभी को एक ही हिंदू समाज के, संस्कृति के अभिन्न अंग मानकर एक 'हिंदू' शब्द में सबका अंतर्भाव हो, इस हेतु प्रयत्नशील हैं। शासन की ओर से तथा कांग्रेस आदि राजनैतिक संस्थाओं की ओर से भी यह संस्कृतिसिद्ध व्यवहार हो तथा इन अभिन्न अंगों में परस्पर सत्ता आदि स्वार्थ की स्पर्धा निर्माण करनेवाले प्रयोग बंद हों, तो ऐक्य, सद्भाव, शांति, विशुद्ध राष्ट्रीय एकात्मकता निर्माण होकर राष्ट्रोन्नति की योजनाओं में सर्वसाधारण व्यक्ति के हृदय में उत्साह उत्पन्न होगा, ऐसी मेरी धारणा है।

मै नम्रतापूर्वक आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप तथा आपके अन्यान्य सहकारी इस बात की ओर गंभीरता से ध्यान दें। विच्छेदोत्पादक शब्दप्रयोग तथा उनके पीछे की भावनाओं को हृदय से हटा दें। एक समाज का साक्षात्कार कर राजनैतिक अधिकारों का बँटवारा करने की योजनाओं का त्याग करें। फिर राष्ट्र की प्रगति रोकने की शक्ति किसी अंतर्गत या बहिःस्थित तत्त्वों में नहीं होगी।

२९. नियोगी जाँच समिति वृत्त

श्री घनश्याम सिंह गुप्त, दुर्ग　　　　　　　　१४ सितंबर १९५६

आपने भेजी हुई श्री नियोगी जाँच समिति के वृत्त की प्रति प्राप्त हुई। बहुत अनुग्रहीत हूँ। मैंने वृत्त पहले ही पढ़ा था, क्योंकि प्रसिद्धि के दूसरे ही दिन एक प्रति यहाँ मँगा ली गई थी। आप सबके अथक परिश्रम तथा सत्यान्वेषण का यह फल है कि ईसाई प्रचारकों के अनिष्ट प्रयत्नों के सब भ्रमोत्पादक आवरण हटाकर, सत्य स्वरूप इस वृत्त में प्रकट किया जा सका। शासन इस पर क्या करेगा, यह कहना कठिन है। अनेक प्रश्न इसके विचारों में निहित रह सकते हैं और सब वृत्त उपेक्षित पड़ा रह सकता है। इसका भी उपाय सोचना होगा।

३०. हिंदी रक्षा आंदोलन ऐक्यसाधक हो

श्री घनश्याम सिंह गुप्त, दुर्ग　　　　　　　　३१ जुलाई १९५७

पंजाब में चल रहे हिंदी रक्षा आंदोलन का समाचार समय-समय पर मिलता रहता है। दुर्भाग्य से भाषा की आड़ में कुछ अधिक मात्रा में सांप्रदायिकता तथा उसपर आधारित राजनैतिक प्रभुता पाने की चेष्टा उस

प्रांत में बढ़ गई है। दोष कहाँ है, संकट किस अंश में निहित है, उसका विचार न कर या उसकी ओर से आँखें मूँदकर शासन चल रहा प्रतीत होता है, अन्यथा आर्यसमाज के इस आंदोलन को 'राजनैतिक' चाल या 'राजनैतिक चाल का शिकार' कहने का दुःसाहस शासन के श्रेष्ठतम व्यक्ति न करते।

इस आंदोलन के फलस्वरूप शुद्ध राष्ट्रीय भाव को ही अपनाकर क्षुद्र पक्षस्वार्थ के हेतु विच्छेदकारी सांप्रदायिक तत्त्वों के सम्मुख न झुकते हुए चलने की शिक्षा सब देशवासी ग्रहण करेंगे, विशेषतः इन दोषों से ग्रस्त आज का शासक वर्ग करेगा, ऐसा विश्वास है। श्री परमात्मा की असीम शक्ति इस आंदोलन के साथ रहे तथा इसे शुद्ध ऐक्यसाधक सिद्ध करे।

३१. यथार्थ अभ्यास व मूल्यांकन हो

५ नवंबर १९५७

रूस के भारत स्थित राजदूत के निजी सचिव, नई दिल्ली

रूसी क्रांति की ४०वीं वर्षगाँठ के उपलक्ष्य में आयोजित समारोह की निमंत्रण-पत्रिका आज मिली। बहुत अभारी हूँ। आशा है समारोह सफलतापूर्वक संपन्न होगा। हर वर्षगाँठ के समारोह का वास्तविक उपयोग भूतकाल के घटना-चक्रों का योग्य अभ्यास व पुर्नमूल्यांकन कर प्राप्त ज्ञान-प्रकाश में अपने भावी कार्य तथा कार्यक्रमों को उचित रूप देना होता है। इसमें आप सफल हों– यही इच्छा है।

३२. विचित्र राजनीति

१० सितंबर १९५८

श्री भिक्षु चमनलाल, मुंबई

खाद्यान्न समस्या भीषण है, यह सत्य है। अचानक विगत माह से सब राजनैतिक दल उस समस्या का हल ढूँढने में जुट गए हैं। प्रत्येक दल में उसका मार्गदर्शन करने हेतु कार्यकारी प्रमुख लोग हैं। ऐसी स्थिति में किसी को और आपके द्वारा संकेतित जनसंघ को भी मार्गदर्शन करने की स्थिति में मैं नहीं हूँ। कहते हैं कि खाद्यान्न भरपूर है, किंतु महँगा है। यह महँगाई कृत्रिम है और शासन द्वारा नियंत्रित कर कीमतें कम की जा सकती हैं। विभिन्न दलों ने यह प्रश्न उठाया है– यह सोचकर अपने-अपने दल की प्रतिष्ठा का प्रश्न न बनाते हुए, दूसरों के दृष्टिकोण से हमारी प्रतिष्ठा कम होती है– यह न सोचते हुए, शासन के कर्ता-धर्ता इस समस्या को हल

करेंगे, समाज को खिलाना अपनी झूठी दल-प्रतिष्ठा से कई गुना अधिक महत्त्व का विषय है, यह बात विभिन्न दलों के नेता अवश्य ही अनुभव करेंगे, ऐसी मुझे आशा है।

किसी भी अच्छे कार्य में सहकार्य करने के लिए हम सदैव तत्पर हैं। किंतु किसी भी अराजकीय संस्था और व्यक्तियों का यह काम नहीं। फिर भी हम प्रयत्न करेंगे। वर्तमान खाद्य समस्या हल करने का आपने जो सुझाव दिया है, उसके लिए मैं आभारी हूँ। आश्चर्य की बात यह है कि उत्तरप्रदेश एवं अन्य प्रदेशों में इस हेतु हो रहे आंदोलन राष्ट्रभक्तों के नहीं, बल्कि निम्नकोटि के तथा शत्रुओं के राजनैतिक शस्त्र समझे जाते हैं। परंतु इसके विपरीत केरल में संविधान के अनुसार विधिवत गठित सरकार के विरुद्ध हो रहे घृणित प्रदर्शनों को तथा आंदोलनों को अलग मापदंड से नापकर राष्ट्रभक्तिपूर्ण कहा जा रहा है।

राजनीति, राजकीय नेता तथा उनके अनुयायियों के राजनैतिक खेल के मार्ग आश्चर्यकारक है। (मूल अंग्रेजी)

३३. पिताश्री के निधन पर सांत्वना

श्री श्रीप्रकाश, २४ सितंबर १९५८

प्रवास में मुझे समाचार मिला, जिससे बहुत व्यथित हुआ कि अपने देश के गंभीर विद्वान, राष्ट्रभक्त, धर्मसंस्कृति के ज्ञाता तथा उनके चिरंजीवी सिद्धांतों को आधुनिककाल में नवीन शब्दप्रयोगों के उपयोग से मंडित कर जगत्-भर के सज्जनों को उनकी सार्वजनिक व्यवहार्यता का सम्यक् दर्शन करानेवाले आपके पूज्य पिताश्री डा. भगवानदास जी इहलोक की यात्रा समाप्त कर दिव्य जीवन की ओर चल बसे। उनका मुझसे तथा अपने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कार्य से अत्यंत हार्दिक प्रेम था। कार्य को उनका नित्य आशीर्वाद प्राप्त था। अब उनकी स्नेहमयी आशीषपूर्ण छत्रछाया से हम लोग वंचित हो गए हैं। आपके तथा समस्त परिवार के लिए तो पिता का प्रेमपूर्ण छत्र चला गया। पूर्ण परिवार को अति गौरवान्वित करनेवाले अपने पूज्यतम तथा प्रियतम पिताश्री के वियोग का कितना शोक छा गया होगा, इसकी कल्पना भी अंतःकरण को कंपित कर देती है।

आप भी श्रेष्ठ पिता के श्रेष्ठ विचारी पुत्र हैं। अतः 'जातस्य हि ध्रुवो मृत्युः' इस सत्य का स्मरण कर आप स्वतः का शोक संवरण कर

परिवार को सांत्वना देने में समर्थ हैं। मैं परमकृपालु श्रीपरमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि इस महाशोक को सहने की शक्ति सबको दे तथा आपके द्वारा परिवार की ज्ञानकीर्ति में निरंतर वृद्धि होती रहे।

३४. माताश्री के निधन पर सांत्वना

श्री अण्णासाहेब चितळे, महाड (महाराष्ट्र) ६ अक्तूबर १९५८

आपकी वंद्य माताश्री का स्वर्गवास होने का दुःखद समाचार है। आपकी माताश्री ने आप सबकी गृहस्थी देखकर एवं सबका लालन-पालन कर इहलोक का वास्तव्य पूर्ण किया। आप जैसा सुपुत्र एवं उसकी गृहस्थी देखकर उन्हें मनःशांति मिली होगी। परंतु माँ कितनी ही वृद्ध या अपाहिज हो, तो भी सच्चे सपूत को लगता है कि वह हमेशा आशीर्वाद देने के लिए सामने रहे। इसलिए उसका वियोग अपरिहार्य एवं निसर्ग नियमों के अनुसार होने पर भी अत्यंत दुःखदायी होता है। इससे आपको शोक होना अत्यंत स्वाभाविक है। यह आघात सहने की विवेकपूर्ण शक्ति आप में है ही, फिर भी उसमें वृद्धि होकर आपको मनःशांति अधिक मात्रा में प्राप्त हो, एतदर्थ श्री प्रभुरचणों में मैं प्रार्थना करता हूँ। पूरे परिवार को आवश्यक धृति प्राप्त हो एवं सबको सांत्वना मिले, ऐसी उसके चरणों में याचना करता हूँ। (मूल मराठी)

३५. राजनैतिक दलों का एकीकरण

श्री राधाकृष्ण माहेश्वरी, मेडता १५ अक्तूबर १९५८

बड़े-बड़े राजनैतिक दलों के एकीकरण के विषय में आपने जो कहा है, वह सबको ठीक लगता है। इन दलों में ऐसे बड़े विद्वान, प्रसिद्ध नेता हैं कि मैं उनसे कुछ कह सकूँ, ऐसी मेरी योग्यता नहीं है। इसी कारण अपने छोटे से क्षेत्र में राजनैतिक दलभिन्नता से दूर रह कर समाज के एकीकरण का प्रयास करने की चेष्टा कर रहा हूँ। अनेक बुद्धिमान कर्तृत्ववान साथियों के अथक परिश्रम से कुछ फल भी मिल रहा है। किंतु उस फल के कर्तृत्व का श्रेय भी मेरा नहीं, मेरे साथियों का है, जिनका मैं एक साधारण सा साथी हूँ, यह कहना ही अधिक उचित है। तथापि मैंने सुना है कि ऐसे एकीकरण के लिए कुछ श्रेष्ठ महानुभाव प्रयत्नशील हैं। मेरी ओर से यावच्छक्य सहायता होगी ही। यद्यपि राजनीति में मेरी न तो रुचि है, न ही कार्यक्षेत्र राजनैतिक है।

३६. मुझे मेरे छोटे से क्षेत्र में चलते रहने दें

श्री भवानीशंकर जी (मध्य भारत), १५ अक्तूबर १९५८

आपने संस्कृति के विषय में पत्र-व्यवहार से चर्चा करने का विचार प्रकट किया है। विषय गहन है– यह आपने ही लिखा है। गहन विषयों पर पत्र-व्यवहार से चर्चा हो सकती है, इस बात पर मेरा विश्वास नहीं है। आप कैसे विश्वास करते हैं, इसका आश्चर्य है।

मैं न तो विद्वान होने का दावा करता हूँ, न ही कोई श्रेष्ठ पुरुष या नेता हूँ। एक सामान्य व्यक्ति, बड़ों के वचनों को दोहराकर उनका अपने से मिलनेवालों को स्मरण करा देना, यथासंभव इतना ही अतिअल्प मात्रा में कर सकने की पात्रता मुझमें हो सकती है। अधिक गुणों का मेरे ऊपर आरोप करना सत्य को छोड़कर होगा।

अतः आप श्रेष्ठ पुरुषों से ही ऐसे गहन विषयों के संबंध में विचार विनिमय करें और मुझे मेरे छोटे से क्षेत्र में चलते रहने दें, यही उचित होगा।

३७. हिंदू और अहिंदू में समझौता

श्रद्धेय श्री सुमेरचंद्र दिवाकर, २६ मार्च १९५९

आपकी दृष्टि में जैन समाज, हिंदू समाज से भिन्न है। किंतु जैसे अपने देश में मुसलमान, ईसाई आदि के साथ हिंदूसमाज को मित्रता से रहना उचित है, उसी प्रकार जैन समाज से भी मित्रभाव हिंदू समाज को रखना चाहिए, ऐसी धारणा आपके पत्र से व्यक्त होती है।

अब मैं हिंदू संगठन का थोड़ा काम करता हूँ। हिंदू और अहिंदू समाजों में समझौता कराना मेरे कार्यक्षेत्र के बाहर है। यद्यपि समझौता रहना अत्यंत उपादेय है, ऐसा मैं मानता हूँ। कोई प्रतिभाशाली व्यक्ति वह बृहत् दायित्व सँभाले तो अच्छा, ऐसा मेरा मत है। आशा है कि आप मेरा भाव समझ लेंगे।

३८. संघकार्य, धर्म-कार्य है

सेठ जुगलकिशोर बिरला जी, दिल्ली ३ सितंबर १९६०

अपने धर्म, समाज तथा राष्ट्रजीवन की अवस्था अतीव संकटाच्छन्न है, यह स्पष्ट है। बाहर के आक्रमणों का भय, देश में ही निवास करनेवाले

विद्यार्थियों के बढ़ते हुए उद्वेग दिन-प्रतिदिन भीषण रूप धारण कर रहे हैं। इनसे अधिक भयावह अपने समाज की अंतर्गत स्थिति है। पंथ, जाति, भाषा, प्रांत आदि का दुरभिमान मर्यादाओं का उल्लंघन कर अंतर्विग्रह के रूप में व्यक्त हो रहा है। इसमें से बचने का एक उपाय यह है कि व्यक्ति-व्यक्ति में धर्म तथा सब पंथोपपंथों को अपने अंदर समाविष्ट करनेवाले सर्वसंग्राहक धर्म का अभिमान जगाकर एकात्मता के अमृतमय भाव का अनुभव प्रत्येक के अंतःकरण में जगाना और सब व्यक्तियों को सूत्रबद्ध राष्ट्रीय शक्ति के रूप में खड़ा करना। अपनी अल्पशक्ति के अनुसार अपने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने इस अमृतमयी एकात्म शक्ति का निर्माण करने का व्रत चलाया है। यश है, परंतु अपेक्षाकृत गति से वृद्धि होती दिखाई नहीं देती। आपके पत्ररूप शुभ भाव प्रोत्साहन देते हैं, अतः कार्यकर्ताओं का साहस तथा उत्साह बढ़ता है। इसका उत्तम फल दिखकर अंतर्गत कलहरूपी विष का निर्मूलन हो सकेगा, इसमें संदेह नहीं।

यह धर्म का कार्य है। धर्म-कार्य में श्री भगवान की सहायता रहती ही है। उसी के सहारे कार्य चलता है। यश देना उसी के हाथों में है। उसपर निर्भर रहकर सर्वशक्ति बटोरकर अपने कर्तव्य में काया-वाचा-मनसा संलग्न होना, इतनी ही अपनी ओर से अपेक्षा है।

आप जैसे महानुभावों के शुभाशीष से सब स्वयंसेवक बंधु इस प्रकार कर्मरत होकर आज का चिंताजनक चित्र अवश्यमेव बदल देंगे, ऐसी मेरी श्रद्धा है। अतः हम सब आपके आशीर्वाद की ही आशा करते हैं। धन का स्थान तो बहुत निम्न कोटि का है। किंतु आपने प्रदान किया हुआ आशीर्वाद ही यह सहस्र रुपयों का रूप धारणकर प्राप्त हुआ है, इस भावना से संघकार्य के लिए उसे सधन्यवाद ग्रहण कर रहा हूँ। शेष श्री भगवत्कृपा से कुशल है।

३९. फिरोज गाँधी जी के निधन पर संवेदना

पं. जवाहरलाल जी नेहरू, नई दिल्ली ९ सितंबर १९६०

बहुत दुःख हुआ, जब आपके जामाता श्रीमान फिरोज गाँधी जी के अकस्मात देहावसान का वृत्त सुना। वे बहुत तरुण थे। देश की चिंता करनेवाले श्रेष्ठों में थे। उनका यह आकस्मिक स्वर्गवास सभी को बहुत शोक का कारण हुआ है। फिर आप तथा आपकी दुःखाहत कन्या श्रीमती इंदिराजी की अवस्था कितनी शोचनीय होगी, इसकी कल्पना भी असह्य होती है।

कार्यव्यस्त होने से सुख-दुःखों की ओर देखने का आपके पास समय ही नहीं है और अनुभवी, विवेकी होने के कारण आप अपना मन शांत रख सकेंगे। अपनी प्रिय कन्या को सांत्वना देकर उसे भी मनःशांति प्राप्त हो– इसका भार आप ही पर है। बालक भी छोटे ही हैं। उनको पितृवियोग का दुःख आहत न कर सके, इसका भी भार आप पर आ पड़ा है। अपनी योग्यता के कारण आप इस दायित्व को पूर्णरूपेण निभा सकेंगे। मैं परमकृपालु श्री परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि आपके इस महान दुःख में सब को शक्ति, धृति, मनःशांति प्रदान कर आपको जीवन के सर्वश्रेष्ठ लक्ष्य की ओर अग्रसर करे। मैं प्रार्थना मात्र कर सकता हूँ। आपको सांत्वना देने की मुझमें शक्ति ही कहाँ हैं? भवदीय शुभानुध्यायी।

४०. श्री यशवंतराव चव्हाण का अभिनंदन

श्री वामनराव गावंडे, मुंबई   २५ फरवरी १९६१

आपके द्वारा प्रकाशित होने जा रहा अभिनंदन ग्रंथ उनके जीवन के अनेकविध पहलुओं का दिग्दर्शन कर सर्वसामान्य सार्वजनीन जीवन में आवश्यक ज्ञान से भी समृद्ध रहेगा, ऐसा विश्वास है।

मेरा अनुभव है कि माननीय यशवंतराव जी को अब अधिकाधिक दायित्वपूर्ण राष्ट्रीय कर्तव्यों को स्वीकारना आवश्यक होगा। उनकी वैसी योग्यता भी प्रकट हुई है। उनके अनेक सद्गुण क्रमशः अधिक प्रभावशाली स्वरूप में अभिव्यक्त हों और श्री शिव छत्रपति से प्रेरणा लेकर जो व्यापक अखिल भारतीय दृष्टिकोण महाराष्ट्र के नेताओं ने स्वीकृत कर तदनुसार आचरण में चरितार्थ किया है, उसकी चरम सीमा श्री यशवंतराव जी के जीवन में देखने का सौभाग्य हमें प्राप्त हो, इस हेतु श्री प्रभुचरणों में नम्र प्रार्थना करता हूँ। उस असीम दयाघन की कृपा से उनको प्रदीर्घ आयुरारोग्य का लाभ प्राप्त होकर यह सुयोग्य कार्यकर्ता अनेकानेक वर्षों तक राष्ट्रकार्य करते रहें।

४१. व्यवहार-भाषा की एकता

श्री भुवनेश्वरनाथ मिश्र, पटना   १८ मार्च १९६१

बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् के समारोह में प्रत्यक्ष सम्मिलित होने में असमर्थ हूँ। क्षमा प्रार्थी हूँ। परमदयालु श्री परमात्मा की कृपा से समारोह

अति उत्साह से संपन्न होकर राष्ट्र की मौलिक एकता का प्रमुख सूत्र–सार्वदेशीय व्यवहार–भाषा की एकता सुदृढ़ एवं व्यापक बनाने में अधिकाधिक यश प्राप्त करने के लिए परिषद् को अधिक लोकप्रिय, लोकमान्य तथा प्रभावसंपन्न बनाने में सफल हो। सर्वकल्याणकारी श्री प्रभुचरणों में मेरी यही प्रार्थना है।

इसी संबंध में आप महानुभावों से भी मेरी नम्र प्रार्थना है कि भारत की आंतरिक एकात्मता की अभिव्यक्ति करनेवाली सर्व प्राकृत भाषाओं की जननी, पोषणकर्त्री गीर्वाणवाणी संस्कृत का उचित गौरवपूर्ण अभ्यास तथा प्रसार अपनी परिषद् के कार्य का एक प्रमुख अंग बनाएँ तो बहुत लाभ होगा।

४२. शुभेच्छा का अनुग्रह

श्री बापूजी अणे, दिल्ली २१ मार्च १९६१

नूतन वर्षप्रतिपदा की वर्षाभिवंदना एवं शुभेच्छा शीर्षक की पत्रिका आज प्राप्त हुई। स्मरण रखकर आपने वह भेजी, यह मुझ पर बड़ा ही अनुग्रह हुआ है। आप जैसे श्रेष्ठों के आशीर्वाद सिर पर रहने से नए उत्साह से कार्यक्षेत्र में आगे बढ़ने में निश्चिंतता अनुभव होती है। इस आशीर्वाद के भरोसे कार्य सफल होगा, इसमें संदेह नहीं। (मूल मराठी)

४३. आंध्र में हिंदी विद्यालय की स्थापना महत्त्वपूर्ण

श्री वासुदेव नाईक (एम.एल.ए.) हैदराबाद, ५ जुलाई १९६१

हैदराबाद में हिंदी विद्यालय की स्थापना बहुत महत्त्वपूर्ण बात है। अपने देश की राज्यभाषा या राज्यव्यवहार भाषा इस नाते से हिंदी का महत्त्व अनन्यसाधारण है। देशभर में उसका उचित ज्ञान, उसके माध्यम से सभी विषयों का उच्चतम ज्ञान प्राप्त करने की सुविधा आवश्यक है। विशेषकर जहाँ साधारण व्यवहार में हिंदी प्रयुक्त नहीं है, उन क्षेत्रों में विशेष ध्यानपूर्वक यह व्यवस्था करना अनिवार्य है। स्थानीय क्षेत्रीय भाषाओं के विकास के साथ–साथ हिंदी का ज्ञान तथा उसमें अध्ययन की सुविधा होने से यह लाभ होगा कि देश के सब प्रकार के व्यवहार चलाने के लिए संपूर्ण देश के कर्तृत्वसंपन्न कार्यकर्ताओं की पर्याप्त संख्या में पूर्ति हो सकेगी। प्रस्तावित हिंदी महाविद्यालय आंध्रप्रदेश के लिए श्रेष्ठ तथा अत्यंत महत्त्व का कार्य कर इस प्रदेश से सार्वदेशिक प्रतिष्ठा के कार्यकर्ता निर्माण

करने में सफल होगा, ऐसा मुझे विश्वास है। इस विश्वास से मैं आपका तथा आपके सब आदरणीय सहकारियों का अभिनंदन करता हूँ। उद्घाटन समारोह सोत्साह संपन्न होगा ही। उसकी यशस्विता के लिए मैं परमकृपालु श्री परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ।

समारोह के उद्घाटक मान्यवर डा. श्रीमाली जी एवं अन्य सब महानुभावों को सादर सस्नेह नमस्कार।

४४. राष्ट्रपति के स्वास्थ्य की चिंता

लुधियाना (पंजाब), ३० जुलाई १९६१

सेवा में सादर नमस्कार। आपका स्वास्थ्य चिंता करने योग्य होकर आप डा. सेन महोदय के रुग्णालय में प्रविष्ट हुए, सर्वप्रकार की चिकित्सा, श्रेष्ठ तज्ञों की सूचना तथा देखरेख में होकर कुछ आराम हुआ आदि बातें पढ़कर मन में जो अस्वस्थता बढ़ रही थी, वह कम होने का अनुभव मैं करने लगा था और यह आशा लेकर चल रहा था कि आपके स्वास्थ्य-सुधार को अपनी आँखों से देखकर हृदय को संतोष दे सकूँगा। इस हेतु आपके दर्शन मात्र की अभिलाषा से दिल्ली के मान्यवर लाला हंसराजजी गुप्त द्वारा कल सायंकाल में वैसी अनुमति प्राप्त करने का प्रयास करने के लिए लिखा था। कल मैं दिल्ली पहुँचा, तब समाचार मिला कि अनेक महानुभावों के मिलने आने से उनके साथ बातचीत करने से आपको अत्यधिक श्रम होकर फिर कुछ ज्वर बढ़ गया है, इस कारण मिलने के लिए आनेवालों पर प्रतिबंध लगा दिया गया है। यह उचित ही हुआ, किंतु आपके दर्शन से मैं वंचित रह गया हूँ।

अब इस दूरस्थित स्थान से ही मैं आपके शीघ्र स्वास्थ्य लाभ के हेतु परमकृपालु श्री जगन्माता के चरणकमलों में हृदय से प्रार्थना कर रहा हूँ, करता रहूँगा। आज की राष्ट्र की दुःस्थिति में जो सन्मार्ग का प्रदर्शन एवं अनुसरण करने में समर्थ हैं, उनमें आपका स्थान अनन्यसाधारण श्रेष्ठता का है। राष्ट्र को आपकी अतीव आवश्यकता है। अतः पूर्ण स्वास्थ्ययुक्त सुदीर्घ आयु आपको प्राप्त होना अति आवश्यक है। इसी दृष्टि से मैं श्री श्री जगज्जननी के पास साग्रह प्रार्थना कर रहा हूँ। उसकी स्नेहपूर्णकृपा अवश्य होगी और आगे आपको स्वस्थ सानंद देखने का सौभाग्य मैं प्राप्त कर सकूँगा, इस उत्कट आशा को लेकर यह स्वल्प पत्र पूर्ण कर रहा हूँ।

४५. सर्वसमावेशक हिंदू शब्द का प्रयोग हो

मान्यवर श्री लालबहादुर शास्त्री जी, गृहमंत्री २१ अगस्त १९६१

गत कई वर्षों से पंजाब में एक समस्या खड़ी है। प्रारंभ से ही असंदिग्ध रूप से नीति-निर्धारण न करने से वह दिन-प्रतिदिन अधिक ही जटिल होती गई है। अब तो आमरण अनशन का निश्चय कर श्रीमान् मास्टर तारासिंह जी बैठे हैं, जिससे समस्या की उलझन बढ़ रही है। उनके अनशन के प्रतिवाद में स्वामी रामेश्वरानंदजी भी आमरण अनशन का निश्चय कर बैठे हैं। व्यावहारिक क्षेत्र में अनशन का उपयोग अच्छा नहीं लगता, पर गत कई वर्षों से यह एक सम्मान्य राजनैतिक शस्त्र बनाया गया है। इसमें लाभ की आशा नहीं, परंतु आगे योग्य वायुमंडल बनाने की यह बात है।

आज की प्रमुख बात इन दोनों श्रद्धास्पद महानुभावों को अनशन से परावृत्त कर प्रांत की परिस्थिति पर यथार्थवादी विचार करने के लिए अनुकूल वायुमंडल बनाना है। अनशन के बलात्कार के सम्मुख न झुकते हुए भी अनशनकारी महानुभावों का समुचित आदर कर उन्हें परावृत्त करना आप जैसे मँजे हुए राजनीतिज्ञ के लिए कठिन नहीं है। मान्यवर प्रधानमंत्री महोदय ने तथा आपने दृढ़ता का एवं नीतिज्ञता का परिचय देकर पंजाब के अविभाजित रूप को बनाए रखने का निश्चय प्रकट किया है। पंजाबी तथा हिंदी, दोनों का समुचित आदरयुक्त व्यवहार करने का योग्य आश्वासन भी दिया है। इसी निश्चय पर दृढ़ रहने से किसी प्रलोभन में न आकर, सांप्रदायिकता के साथ समझौता कर उसे प्रश्रय तथा प्रोत्साहन न देने से भी इस समय मार्ग निकल सकेगा।

साथ ही 'सिख और हिंदू' ऐसे भेदभाव निर्माण करनेवाले शब्दप्रयोगों का सर्वथा त्यागकर 'हिंदू' शब्द में शैव, वैष्णव, जैन, बौद्ध, सिख, आर्यसमाज आदि सबका अंतर्भाव है, इस तथ्य के अनुरूप ही बोलने-लिखने में सत्यानुकूल सतर्कता बरतने की दक्षता अपने सब कार्य करने वाले महानुभाव व्यवहृत करें, ऐसा सफल प्रयत्न करें, यह मेरी प्रार्थना हैं।

शेष आप की राजनीतिज्ञता पर विश्वास रखकर हम लोग विश्वास कर रहे है कि पंजाब की गुत्थी सुलझ जाए, ऐसा दृढ़तापूर्वक पग आप उठाएँगे और इन श्रेष्ठ पुरुषों के प्राणों की रक्षा करेंगे।

४६. हिंदू-सिख भेद राष्ट्रविघातक

श्री बी.डी.भाटिया   २१ अगस्त १९६१

हिंदू-समाज का संरक्षण करने के लिए सिख पंथ द्वारा किया हुआ महान त्याग प्रत्येक हिंदू कृतज्ञता से स्मरण करता है। जीवित शरीर का एक अंग दूसरे अंग के लिए अवश्य त्याग करेगा। हाँ, यदि वह अंग सजीव शरीर का एक हिस्सा है, न कि उससे जुड़ा हुआ निर्जीव अवशेष। उन्होंने की हुई सेवाओं के लिए कुछ माँगें रखना अप्रिय व अरुचिकर है। आप मेरा अभिप्राय समझ गए होंगे।

वर्तमान गतिरोध धर्म के कारण नहीं, बल्कि राजनीति की सत्ता-स्पर्धा के कारण है। यह बात देश के सभी प्रदेशों पर लागू होती है। मास्टर तारासिंह की माँगें हों या ई.वी.रामस्वामी नायकर की, दोनों अपने संप्रदायों में श्रद्धेय हैं। लोग उन्हे देवदूत तथा पंथ-संरक्षक के रूप में देखते हैं। दुरुपयोग होनेवाले इस शब्दप्रयोग का जो भी अर्थ हो, उसका शुद्ध राजनैतिक संदर्भ है। मैं राजनीति से अलिप्त हूँ, इसलिए जगज्जननी माँ से केवल प्रार्थना करने के अलावा कुछ भी नहीं कर सकता। माँ उन्हें सद्बुद्धि दे, उनका मार्गदर्शन करे, देश के टुकड़े होने की दुर्निवार्य दुर्दृष्ट स्थिति से बचाए।

इस विषय का आपका ज्ञान तथा सिख गैर-सिख– दोनों हिंदू ही हैं– के विषय में भेदविरहित आत्मीयता से सोचना, इन बातों को देखते हुए आप वर्तमान समस्या को उचित ढँग व साहस के साथ हल करेंगे, ऐसी मेरी आशा है। (मूल अंग्रेजी)

४७. निर्वैर भाव से व्यवहार करें

श्री नरूभाऊ लिमये,   २२ अगस्त १९६१

श्री अप्पा भोई मुझे बंधुवत प्रिय था। अतः उसकी मृत्यु से मुझे असीम वेदना हुई। कुछ दिन पूर्व कोले ग्राम जाकर मैं उसके परिवारिक लोगों से मिला था। गाँव के अन्य बंधुओं से भी मिला था। इस दुर्भाग्यपूर्ण घटना के कारण अपना मन असंतुलित न होने दें, गाँव का वायुमंडल परस्पर विश्वास का रहे, सामंजस्यपूर्ण बातचीत और तदनुसार व्यवहार करें, ऐसी सबसे प्रार्थना कर आया था। न्यायालय में अभियोग चला, उसका निर्णय हुआ, न्यायदेवता संतुष्ट हुई होगी। मानवसुलभ प्रतिशोधबुद्धि भी

कुछ प्रमाण में संतुष्ट हुए होंगे। परंतु मैं अस्वस्थता का अनुभव कर रहा हूँ। न्यायालय से इन बंधुओं को दंड मिलने से श्री अप्पा वापस तो लौटने वाला नहीं हैं। परंतु लोगों के मन की कुंठा एवं वैमनस्य का भाव अकारण ही बढ़ने की संभावना अवश्य है। कर्‍हाड के अपने सहकारी कार्यकर्ताओं को मैंने अपने हृदय के भाव अवगत कराकर आगे भी अपना व्यवहार कटाक्षपूर्वक निर्वैर भावना से करने की आवश्कता समझाई है। संगठन कार्य में मत्सर, ईर्ष्या, वैमनस्यादि दुर्गुणों को स्थान नहीं है। दलगत व्यवहार से निर्मित मतभिन्नता नष्ट होते ही एक विशाल हृदय की अनुभूति होती है। यह मेरा स्वयं का अनुभव है और वही अनुभव संगठन के सभी कार्यकर्तागण करें, ऐसा मेरा प्रयास रहता है।

किंतु आज अपने देश में दलगत राजनीति के कारण वायुमंडल अत्यंत दूषित हुआ है। प्रतिस्पर्धी की हत्या राजनीतिक स्वार्थ से होती नहीं, ऐसा कहने का साहस संभवतः कोई नहीं करेगा। कुछ दिनों पूर्व अंतर्गत फूट के कारण कांग्रेस के अनेक कार्यकर्ताओं की हत्या हुई है, ऐसा उत्तरप्रदेश के गृहमंत्री महोदय का निवेदन आपने अवश्य ही पढ़ा होगा। उदार हृदय होने के कारण ऐसी दुर्घटना से व्यथित होकर उन्होंने यह निवेदन प्रकाशित किया, यह स्पष्ट ही है। ऐसे समय विभिन्न दलों की स्पर्धा समाजविघातक सिद्ध न हो, अपने समाज का ऐक्य एवं सौहार्द अबाधित रहे, इस हेतु आप जैसे श्रेष्ठ पुरुषों को निरभिनिवेश होकर प्रयत्न करने की आवश्यकता है और तदर्थ मेरी आपसे नम्र प्रार्थना है।

(मूल मराठी)

४८. आपसी समझौता ही विवाद का हल

३० अगस्त १९६१

श्री महीपसिंह जी, मुंबई

पंजाब की स्थिति सभी की चिंता का विषय बनी हुई है। मुझे विशेष मनोव्यथा हो रही है, क्योंकि अपने हिंदू समाज में ही गहरी फूट पड़कर भिन्न-भिन्न अंगों के बीच एक खाई सी बनकर वह बढ़ती जा रही है। फिर भी मैं चुप हूँ। इसका कारण तो स्पष्ट है। सर्वप्रथम यह कि यह एक राजनीतिक समस्या बन गई है। इसका आधार भी एक विशिष्ट प्रकार की सत्ताभिलाषा दिखता है। मैं राजनीति की उलझनों से दूर रहता आया हूँ। फिर मैं एक अतिसामान्य व्यक्ति हूँ। मेरा कहना कौन सुनेगा, कौन मानेगा, यह समझ में नहीं आता। गत बार मैंने कुछ कहा तो क्या

आर्यसमाजी, क्या सनातनी, क्या सिख, सभी हिंदू उससे असहमत होकर उसपर प्रतिकूल टीका-टिप्पणियाँ करने में संलग्न हो गए। ऐसी स्थिति में अनाहूत रीति से कुछ कहते रहना अच्छा नहीं।

इस कारण मैं नित्य श्री भगवान के पास प्रार्थना करता हूँ कि सबको सुबुद्धि देकर इस महाविनाशकारी परिस्थिति से बाहर निकालने का सही मार्ग सबको प्रदर्शित करे। पता नहीं, वह भी मेरी पुकार सुनने का इच्छुक है या नहीं? परंतु मैं तो आग्रह से प्रार्थना करता रहूँगा।

श्रद्धेय मास्टरजी तथा अन्य दो स्वामी अनशन कर प्राणत्याग पर तुले हुए हैं। यह मुझे अतीव वेदना देनेवाली स्थिति है। इस एकांतिकता में आपस के समझौते से ही विवाद का हल निकलने की आशा दिखती है। ये सब श्रेष्ठ महानुभाव यदि हठ छोड़ दें, तो वातावरण में कुछ अनुकूलता आकर भगवत्कृपा से मार्ग निकल सकेगा, ऐसी मेरी धारणा है। यह आशा लगाए बैठा हूँ। देखें श्री प्रभु की क्या इच्छा है, क्या विधान है।

४९. आपका आशीर्वाद छत्र

स्वातंत्र्यवीर सावरकर, मुंबई — २१ अप्रैल १९६२

आपका आशीर्वचन-पत्र प्राप्त हुआ। समारोह में मैंने वह पढ़कर सुनाया। उसमें आपके शरीरस्वास्थ्य विषयक अंश पढ़ना कठिन कार्य था। परंतु उसका वाचन आवश्यक ही था। उसे सुनकर श्रोताओं के हृदय पर आघात हुआ। आपके शरीर की दुर्बलता अनुभव कर दुःख एवं चिंता से लोग व्यथित हुए। पत्रवाचन करते समय की अपने हृदय की अवस्था किन शब्दों में लिखूँ?

आपके आशीर्वाद के फलस्वरूप समारोह उत्साहपूर्ण रहा। प्रकर्ष से शतगुणित कार्य वृद्धि हो, यह आपका आदेश संपूर्णतया कार्यान्वित करने का सब स्वयंसेवकों का निश्चय दृग्गोचर हुआ। भगवत्कृपा से वह अविलंब सफल होगा, यह विश्वास धारण कर कार्य प्रारंभ कर रहे हैं।

आपका शरीरस्वास्थ्य ठीक होकर आपके आशीर्वाद छत्र का लाभ हम सबको प्रदीर्घ काल तक प्राप्त होता रहे, एतदर्थ श्री परमात्मा की चरणों में प्रार्थना करता हूँ।

(मूल मराठी)

५०. निर्वाचित सदस्य की जवाबदेही

श्री ए.डी.मणि, ६ अक्तूबर १९६२

मध्यप्रदेश के लोगों के लिए निवेदन' इस प्रकाशन को मैं केवल सरसरी दृष्टि से ही देख सका। लोकसभा या राज्यसभा के घटक लोग किसी सदस्य को निर्वाचित करते हैं, तो उनका प्रतिनिधि वहाँ कौन सा कार्य कर रहा है– यह जानने का उनका स्वाभाविक अधिकार है। वैसे ही लोगों को अपने कार्य के विषय में अवगत कराना सदस्य का भी कर्तव्य है। इस प्रकाशन से आपने अपने कर्तव्य की पूर्ति की है। इससे मध्यप्रदेश के लोगों में यह विश्वास निश्चित निर्माण होगा कि उन्होंने सही व्यक्ति को सही जगह चुना है। (मूल अंग्रेजी)

५१. चीन के आक्रमण की पृष्ठभूमि में

सम्माननीय प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल जी, ३० अक्तूबर १९६२

२५.१०.१९६२ को कुछ घंटों के लिए मैं दिल्ली में था। उस समय आपसे मिलने का विचार मन में आया था, किंतु आपका व्यस्त जीवन विशेषकर आजकल की गंभीर परिस्थिति में अधिक ही व्यस्त होगा, यह सोचकर तथा पूर्व सूचना देकर आपसे समय निश्चित कर नहीं सका था, इसलिए वैसा कर नहीं सका, तथापि श्रद्धेय राष्ट्रपति महोदय ने कुछ समय देने की कृपा करने से उन्हें अतिअल्पकाल के लिए मिल सका।

कहने के लिए बहुत है। कभी आप समय दे सकें तो समक्ष में अवश्य निवेदन करूँगा। तब तक हम सब बंधु अपनी पूरी शक्ति लगाकर आज के संकट से देश को मुक्त करने के प्रयास में शासन को पूर्ण सहयोग देकर मातृभूमि के प्रति अपना स्वाभाविक कर्तव्य निभाने में कोई कसर नहीं रहने देंगे। यह असंदिग्ध आश्वासन शासन-तंत्र के प्रमुख संचालक के नाते आपको देने में मुझे परमसंतोष हो रहा है। आगे जैसी स्थिति बनती जाएगी जनता का धैर्य बढ़ाने में तथा शांति सुव्यवथा में, स्थैर्य कायम रखने में भरसक प्रयत्न करने का हम लोगों का निश्चय है।

शासन की सूचनाओं की ओर हम लोगों का ध्यान है और उनकी प्रतीक्षा में हैं कि उनके अनुसार कर्तव्य कर सकें। इति।

५२. विसंगत शासकीय न्याय

श्री ए.एन. कश्यप, गृहसचिव, पंजाब २१ अक्तूबर १९६३

आपके द्वारा भेजे गए ९ जनवरी १९६३ के पत्र के लिए कृतज्ञ हूँ। जो उद्धरण आपने भेजे हैं, उससे स्पष्ट होता है कि आप मेरे भाषणों के गलत समाचार-वृत्त पर भरोसा कर रहे हैं। आप भली-भाँति मानते हैं कि अपने ही देश के एक सह-नागरिक को इस प्रकार गलत आधार का स्वीकार कर धमकीभरा पत्र लिखना न्याय्य औचित्य से पूर्णतया विसंगत है। जो भी हो, आपके इस असमर्थनीय उपदेश के लिए आपका आभारी हूँ।

५३. नेपाल के साथ स्नेह के दृढ़ संबंध बनें

मान्यवर पंडितजी, वाराणसी (उत्तरप्रदेश) २७ फरवरी १९६३

महाशिवरात्रि के पर्व के संदर्भ में श्री पशुपतिनाथ के मंदिर में पूजा करने हेतु मैं काठमांडू गया था। डा. तुलसी गिरी से मिलना संभव हुआ। नेपाल नरेश महाराजाधिराजजी से साक्षात्कार करने की अनुमति भी उनकी कृपा से प्राप्त हुई। हम मिले और हमारी बातचीत सौहार्दपूर्ण, मुक्तरूप से और अनौपचारिक वातावरण में संपन्न हुई। इस वार्तालाप से मुझे अनुभव हुआ कि नेपाल में सर्वोच्च स्थान विभूषित करनेवाले महानुभावों से लेकर सभी नेपाल निवासी जनता जानती है एवं अनुभव करती है कि उनका भारत के लोगों के साथ युगों-युगों से चलता आ रहा घनिष्ठ आत्मीय संबंध है। वे यह भी अनुभव करते हैं कि हम दोनों का भवितव्य एक दूसरे से अटूट एकता के बंधन से संलग्न है। हमारी उन्नति-अवनति, उत्कर्ष-अपकर्ष का भाग्य भी एक दूसरे से जुड़ा हुआ है। कुछ थोड़ी गलतफहमियाँ हैं, परंतु मुझे लगता है कि सही दृष्टिकोण अपनाकर स्नेहपूर्ण बातचीत से उनका निर्मूलन सहज संभव है। मात्र विद्वत्प्रचुर विचार एवं केवल तत्त्वनिष्ठा की भावना त्यागकर हम यदि इस प्रश्न को वास्तववादी दृष्टिकोण अपनाकर सुलझाने का प्रयास करेंगे, तो इन कठिनाइयों पर विजय पाना अवश्य ही संभवनीय है।

ऐसा दिखता है कि वहाँ के अपने अधिकारियों, जिनमें हमारे दूतावास के भी अधिकरी सम्मिलित हैं, का व्यवहार एवं कार्यपद्धति वैसी नहीं रही, जैसी उनसे अपेक्षित थी। संप्रति उस दूतावास के दफ्तर में जो कार्यरत हैं, उनके बारे में तो अधिक कुछ कह नहीं सकता, परंतु नेपाल, उसका शासन एवं उसकी जनता से भारत के संबंध सुधारने के लिए

दूतावास की कार्यवाही अधिक कुशलता एवं क्षमता से सँभालनेवाले वहाँ आवश्यक हैं, ऐसा मुझे लगा।

वहाँ हुई बातचीत से मैंने और भी एक बात का अनुभव किया कि उनका चीन के प्रति आकर्षण कम है और अंतरराष्ट्रीय विस्तारवादी साम्यवाद के प्रति उनका प्रेम और भी कम है। इस कारण से चीन की आक्रामक विस्तारवादी नीति के विरोध में नेपाल प्रबल स्वरक्षक कार्यवाही के पक्ष में है, परंतु इसके लिए भारत को चाहिए कि वह उनसे सहयोग करे। विशेषतः नेपाल के बारे में हमारी व्यावहारिक नीति, दृष्टिकोण एवं हेतु के विषय में उनके हृदय में विश्वास जगाकर, उनके सार्वभौम स्वतंत्र पड़ोसी राज्य, जो स्वयं अपनी राज्य शासन-व्यवस्था का चयन करने में पूर्ण स्वतंत्र है और एक स्वाधीन राज्य के विशेषाधिकार स्वयं अपनी इच्छा के अनुसार अपना सकते हैं- के बारे में उनको आश्वस्त करना बहुत आवश्यक है।

नेपाल विषयक और भी कुछ महत्त्वपूर्ण पहलू बातचीत में मुझे ज्ञात हुए, परंतु उनके बारे में आपसे प्रत्यक्ष मिलकर ही बोलना उचित होगा। मुझे संदेह है कि पत्र के माध्यम से मेरे सभी विचार, दृष्टिकोण एवं निष्कर्षों को इस पत्र की मर्यादा में स्पष्ट करना शायद संभव न होगा। परंतु नेपाल-प्रवास के कारण बने मेरे विचार एवं भावनाओं से अपने प्रधानमंत्री जी को अवगत कराना मेरा स्वाभाविक कर्तव्य है, ऐसा सोचकर मैंने इस पत्र को लिखा है।

अपने गृहमंत्री महोदय सदिच्छा-भेंट के लिए नेपाल जा रहे हैं, यह जानकर मुझे खुशी हुई है। अपना स्नेहभरा मधुरभाषी सौजन्य एवं कुशलता के कारण सभी गलतफहमियाँ दूर कर भारत-नेपाल के बीच अटूट मित्रता के संबंध प्रस्थापित करने में वे सफल सिद्ध होंगे, ऐसी मैं आशा करता हूँ।

अपने प्रवास क्रम में उत्कल प्रदेश में जाकर मैं ६.०३.१९६३ को नागपुर पहुँचूँगा। मेरे इस पत्र की प्राप्ति के विषय में आपके द्वारा भेजा गया एक वाक्य भी मुझे प्राप्त हुआ तो बड़ी कृपा होगी।

५४. अयूब खाँ द्वारा अनावश्यक दोषारोपण

पं. पद्मकांत मालवीय, अभ्युदय प्रेस, इलाहाबाद ५ अक्तूबर १९६३

एक ऐतिहासिक, सामाजिक, धार्मिक और सबसे अधिक महत्त्व की

जटिल राजनैतिक समस्या का हल निकालने का आपका प्रयास अभिनंदनीय है। किंतु आपका अत्यधिक नम्रता से-कुछ स्तुतिमात्र करने की ओर झुका हुआ पत्र और उसका रूक्ष, स्वतः की ओर सर्व निर्दोषता तथा मान्यवर पं. नेहरुजी के ऊपर विवाद का बेमेल का पूरा दोष रखने का प्रयास करनेवाला पाकिस्तानी अध्यक्ष फील्ड मार्शल अयूब खाँ महोदय का उत्तर पढ़ने पर आपके प्रयत्न को यश मिलने की धुंधली सी आशा भी मुझे दिखाई नहीं दी। तो भी हम सब अपने सद्भाव से उनके हृदय परिवर्तन करने के प्रयास में लगे रहें, यही अपनी उदार परंपरा को शोभनीय है।

महाकवि अकबर इलाहबादी जी के संबंध के दो पम्पलेट भी मिले। उर्दू समझना मुझे कुछ कठिन होता है, तो भी इतना तो स्पष्ट है कि उनकी शायरी में आधुनिक वायुमंडल से मेल खानेवाली स्वदेशप्रीति की प्रबल भावना है। स्मारक योजना ध्यान से पढ़ नहीं सका, क्योंकि मैं अभी अपने प्रवास के लिए निकल रहा हूँ। स्मारक की औचित्यपूर्ण आवश्यकता तो सबको ही मान्य हो सकनेवाली है। उसके स्वरूप के संबंध में अनेकों की अनेक कल्पनाएँ हो सकती हैं। सभी तो प्रत्यक्ष में कोई ला नहीं सकेगा। अतः इस विचार के प्रवर्तक की कल्पना ही अनुकूलता को देखकर यथासंभव पूर्ण करने की चेष्टा करना उचित दिखता है।

५५. नेहरू जी की अस्वस्थता के समाचार से चिंता

श्रीमती इंदिरा गाँधी, दिल्ली १५ जनवरी १९६४

असम प्रांत में मैं प्रवास पर था, उस समय वृत्त-पत्र पढ़नेवाले मेरे मित्रों ने श्रद्धेय पं. जवाहरलालजी की अस्वस्थता का समाचार मुझे दिया। पश्चात् प्रतिदिन वृत्त पाता रहा। संपूर्ण अधिवेशन में उनकी अनुपस्थिति रही। इसपर से यह अनुमान है कि स्वास्थ्य विशेष रूप से बिगड़ा होगा। इससे मन बहुत चिंताग्रस्त हुआ है। अब कुछ सुधार होने का समाचार पाकर चिंता थोड़ी कम हुई है, तथापि मन की अस्वस्थता है ही। आशा है कि शीघ्र पूर्ण स्वास्थ्य-लाभ होगा। इतने श्रेष्ठ पुरुष को सदैव स्वस्थ तथा कार्यक्षम रहना उपकारक होने से उनकी संपूर्ण रोगमुक्ति के लिए तथा उत्साहपूर्ण कार्यक्षमता के लिए मैं अंतःकरणपूर्वक परमकृपामयी श्री जगज्जननी के चरणकमलों में प्रार्थना करता हूँ। आशा करता हूँ कि श्रद्धेय पंडितजी के स्वास्थ्य-सुधार की सूचना आपसे शीघ्र ही प्राप्त होगी। उन्हें मेरा सादर नमस्कार कहने की कृपा करें। इति।

५६. माँ विशुद्ध प्रेम की साकार मूर्ति

महाराष्ट्र के मंत्री श्री सदाशिवराव बर्वे, ३० अप्रैल १९६४

वृत्त-पत्र से आपकी पूज्यपाद माताजी के देहावसान का पता चला। मातृवियोग कितना दुःखद होता है, इसका मुझे अनुभव रहने के कारण आपकी मनःस्थिति की कल्पना करना संभव हुआ। निःस्वार्थ, निरपेक्ष, विशुद्ध प्रेम की साकार मूर्ति– यही माँ का यथार्थ वर्णन है। अपनी संतान सद्गुणसंपन्न हो या दुर्गुणी, सुंदर हो या कुरूप, कर्तृत्ववान हो या कर्तृत्वशून्य, कैसी भी रही, उसने स्वकर्तव्य पालन किया अथवा न किया और माँ के अंतःकरण की असीम वेदना का कारण बनी, तो भी अपनी संतान पर निष्कपट ममता के कारण जिसके विशाल अंतःकरण में संतान के सभी अपराध समा जाते हैं, ऐसी केवल माता ही तो है। अन्य किसी को यह संभव नहीं है। इसलिए मातृवियोग जैसा दुःख नहीं है, परंतु यह असहनीय दुःख भोगने का अवसर निसर्गक्रम से प्रत्येक के जीवन में आता ही है। अतः यह दुःख अटल, अपरिहार्य समझकर अपने मन का संवरण कर, उसे यथासंभव शांत संतुलित रखना, इतना ही हमसे हो पाता है। जिसने राष्ट्रसेवा का व मातृभूमिपूजन का व्रत ग्रहण किया है, उसे इस शोक के लिए समय ही कहाँ है? एक जन्मदात्री तो दिवंगत हुई, वहीं विशुद्ध स्नेहमयी मातृभूमि के स्वरूप में जो भी अल्प-स्वल्प सेवा हमें संभव हो, ग्रहण कर संतोष पाकर शुभाशीर्वाद देने सदैव विद्यमान है। दुःख को मिटाकर अपना अंतःकरण प्रशांत व स्वकर्तव्यरत बनाने के लिए यह बोध पूर्णतः समर्थ है। मातृ-भू के समर्थ स्नेहभाजन बनने का आपका सौभाग्य है। इसलिए मेरे अपर्याप्त शब्दों की सांत्वना आपके लिए अनावश्यक है।

दिवंगत जीवात्मा को सर्वमंगलमयी जगज्जननी की कृपा से सुख-शांति का लाभ हो, राष्ट्र सेवारत रह कर आपका उत्कर्ष उनके वरद्हस्त के कारण सदैव होता रहे, एतदर्थ माँ जगदम्बा के चरणकमलों में प्रार्थना करता हूँ। (मूल मराठी)

५७. सामंजस्य प्रस्थापित करने का प्रयास हो

पं. पद्मकांत मालवीय, संपादक, 'अभ्युदय', १३ अक्तूबर १९६४

अपने-अपने विचारों के अनुरूप राष्ट्ररक्षा, राष्ट्रसम्मान, राष्ट्रसंवर्धन के एक ही लक्ष्य की ओर जानेवाले सभी मार्ग समादरणीय हैं। इस दृष्टि

से सबके बीच सामंजस्य प्रस्थापित करने का मेरा भी विचार व प्रयास रहता है। उसे आज फल मिलता न भी दिखाई दे, तो भी प्रयत्न करना ही चाहिए।

आपने लिखा है कि भारत के मुसलमान बंधुओं को हम लोगों की ओर से अभय मिले। वे भारत से एकनिष्ठ रहें, तो उनका मजहब भिन्न होने मात्र से उनके प्रति किसी प्रकार अन्याय या आपत्तिकारक व्यवहार न हो, यह मैं प्रकट भाषणों में अनेकों बार कह चुका हूँ। भारत, भारतीय राष्ट्रपरंपरा तथा भारतीय राष्ट्रपुरुषों के प्रति श्रद्धा, भक्ति, सम्मान तथा राष्ट्रार्थ उद्यमशील रहकर भारत के विरोधियों से उसकी रक्षा के लिए सर्वप्रकार सन्नद्ध होकर खड़ा होना, इन गुणों से परिपूरित होकर जो चले, वह किस नाम से भगवान की उपासना करता है, किस पद्धति से करता है, इसका विचार करने की आवश्यकता नहीं है, परंतु दिखता तो यह है कि अपने केवल उपासना-मार्ग का ही नहीं, तो ऐहिक राजनैतिक पार्थक्य सुरक्षित रखकर भी उन्हें 'सच्चे राष्ट्रीय' कहलाने की तथा कुछ अधिक ही सुविधाओं की प्राप्ति के साथ अन्य नागरिकों की ओर से उनका विशेष सम्मान हो, ऐसी अपेक्षा है। अब इसका अर्थ वे बराबरी के नाते राष्ट्रार्थ कंधे से कंधा लगाकर खड़ा नहीं होना चाहते, ऐसा होगा। ऐसी अवस्था में अच्छे राष्ट्रहितैषी का व्यवहार कैसा हो, यह सोचने की बात है।

विषय बहुत लंबा है। १२ शताब्दियों का इतिहास उसकी पृष्ठभूमि है। वर्तमान में जो है, वह दिखता ही है। वह भी बहुत बड़ा विषय है। कभी प्रत्यक्ष मिल सकें तो विचार-विनिमय कर बहुत ही श्रेष्ठ भाग्य प्राप्त होने का अनुभव करूँगा। आपके पत्र के साथ के लेख पढ़े।

५८. संक्रमण-महोत्सव में नेपाल नरेश

महामहिम राष्ट्रपति डा.राधाकृष्णन — ७ जनवरी १९६५

महाराजाधिराज श्री महेंद्र की ओर से प्राप्त स्वीकृति-पत्र के पश्चात् समारोह की समुचित व्यवस्था करने में हम कार्यरत हैं। आवश्यक सब व्यवस्था लगभग पूर्ण हो चुकी है। नगर में सर्वत्र और महाराष्ट्र तथा मध्यप्रदेश के पड़ोसी क्षेत्र से बहुत अधिक संख्या में लोग राजदंपति के आगामी आगमन की ओर कौतूहलपूर्ण अपेक्षा से देख रहे हैं और उनके स्वागत-समारोह में सहभागी होने की तैयारी में लगे हुए हैं।

किंतु कुछ समाचार-पत्रों में प्रकाशित वृत्त से, मुझे लगता है कि केंद्रीय शासन नेपाल-नरेश की भेंट के बारे में नाराजी व्यक्त करते हुए महाराजा महोदय को अपनी भारत यात्रा के विचार से निवृत्त होने का अनुरोध कर रहा है। केंद्रीय शासन के द्वारा अपनाई जा रही इस नीति से मुझे लगता है कि महाराजा महोदय की निश्चय ही प्रतिकूल धारणा बनेगी और परिणामतः नेपाल-भारत के पारम्परिक संबंध अधिक बिगड़ेंगे। किंतु इस समाचार में फिर भी यदि कुछ सच्चाई है, तो मैं आपसे विनम्र अनुरोध करता हूँ कि इस विषय में आप स्वयं सोचें और प्रधानमंत्री एवं संबंधित शासकीय अधिकारियों से बात कर उनका संदेह निवारण करें। इस प्रवृत्ति से उत्पन्न होनेवाले संभाव्य दुष्परिणामों से उनको अवगत कराएँ। महाराजा महोदय के नागपुर में आयोजित सत्कार-समारोह के विषय में यथोचित मार्गदर्शन कर उनके मत परिवर्तन का कृपया प्रयास करें। मैं आशा करता हूँ कि नेपाल से बेहतर व स्वस्थतर संबंध, जो उसके साथ हमारी अनादिकाल की मैत्री तथा हमारे असुरक्षित उत्तरी सीमांत तथा नेपाल की सामरिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए अति आवश्यक हैं, प्रस्थापित करने की दिशा में हमारी कार्यशैली पर आप पूर्ण विश्वास कर सकते हैं।

कल शाम को मुझे फोन पर सूचित किया गया कि आज ही साक्षात्कार करने की अनुमति देकर आपने मुझपर कृपा की है, किंतु किसी भी हवाईयान में, जो मुझे दिल्ली ले जा सकेगा, स्थान का आरक्षण करने में मैं असमर्थ रहा। मुझे इसका दुःख है कि आपके द्वारा प्रदान किए गए इस अवसर का उपयोग कर इस विषय का संपूर्ण विवरण आपसे मिलकर प्रस्तुत करना मेरे लिए संभव न हो सका। मुझे ज्ञात हुआ कि अगले दो-तीन दिन में साक्षात्कार के लिए आपके पास समय उपलब्ध नहीं है। इसी कारण मैंने पत्र लिखने का विचार किया।

मैं आशा करता हूँ इस विषय में आप कृपया ध्यानपूर्वक विचार करेंगे और बिगड़ रही बात को सही मार्ग पर लाएँगे। मैं यह भी आशा करता हूँ कि इस प्रकार भारत सरकार की सुधारित नीति के बारे में प्रकाशन के लिए समाचार-पत्रों को तुरंत सूचना मिलेगी। (मूल अंग्रेजी)

५९. नेपाल-भारत का रक्त का नाता

डा. तुलसी गिरि, काठमांडू — १५ जनवरी १९६५

श्रीमन्महाराजाधिराज जी का शुभागमन नहीं हो सका, इसका सब

नागपुरस्थ नागरिकों को बहुत दुःख हुआ है। सभी बड़ी उत्कंठा से प्रतीक्षा कर रहे थे। बहुत भव्य प्रमाण में स्वागत की सिद्धता लगभग पूर्ण हो चुकी थी। परंतु वह सब आधे में ही बंद कर देनी पड़ी। जैसी श्री भगवान की इच्छा हो, वैसा ही होता है। अतः शांत चित्त से स्वकर्तव्य में दृढ़ता से लगे रहना यही हम लोगों के लिए उचित एवं आवश्यक है।

जो कुछ हुआ है, उससे आपके मन को बहुत कष्ट होना स्वाभाविक है। एक आवश्यक कर्तव्य, जिससे नेपाल-भारत का आदिकाल से चलता आ रहा धार्मिक, सांस्कृतिक संबंध आत्मीयत्व से भरा रक्त का नाता अति दृढ़ बनकर परस्पर की समृद्धि एवं सुरक्षा के लिए आशातीत सफलता मिलती, करने का हम सबने प्रयत्न किया। उसमें आपका योगदान बहुमूल्य रहा है। परंतु सोचा हुआ और सुपरिणामकारी बनने की क्षमता रखनेवाला संकल्पित कार्यक्रम न हो सकने से आपको मानसिक कष्ट होना अपेक्षित ही है। श्री मन्महाराजाधिराज जी को जो मनोवेदना हुई है, वह उनके पत्र के शब्द-शब्द से व्यक्त हो रही है। तो भी हम सब दृढ़ निश्चय से, कुशलता से समग्र हिंदू समाज के एकत्रीकरण के लिए प्रयत्न करते हुए हिंदू समाज के लिए आशा व गौरव का स्थान नेपाल तथा भारत के बीच अक्षुण्ण स्नेह को सुदृढ़ करते रहें और आगे श्रीमत् महाराजाधिराज जी का स्वागत-सत्कार अवश्य कर सकेंगे, इस विश्वास को लेकर स्वकर्तव्य में सोत्साह जुटे रहें।

६०. मनस्वी कार्यार्थी न गणयति दुःखं न च सुखम्

केंद्रीय मंत्री श्री यशवंतरावजी चव्हाण, १९ अगस्त १९६५

मातृवियोग की दुःखपूर्ण आपत्ति आपके जीवन में उपस्थित हुई, यह वृत्त आज ज्ञात हुआ। माता का स्नेहपूर्ण कृपाछत्र अनुपम है। वह खोने से होनेवाली व्यथा, जिसे अनुभव है, वही समझ सकता है। आपके दुःख की कल्पना से वह स्मरण, जागृत एवं उत्कट हो उठी। आपके अतंःकरण की संवेदना अनुभव कर मेरा मन अत्यंत व्याकुल हुआ है।

परंतु जिसपर किसी कार्यविशेष का दायित्व रहता है, उसे शोक करने का भी समय नहीं मिलता। 'मनस्वी कार्यार्थी न गणयति दुःखं न च सुखम्' सब दुःख का संवरण कर आप स्वकर्तव्यरत हो गए होंगे। इस अवसर पर पूर्ण शोक-संवरण हेतु आपको धृति एवं शक्ति प्राप्त हो, और

दिवंगत जीवात्मा को सुखी एवं कल्याणप्रद सद्गति प्राप्त हो, इसलिए श्री प्रभुचरणों में प्रार्थना करता हूँ। अपना कर्तव्य सफलतापूर्वक पूर्ण करने का भाग्यलाभ आप अनुभव करें और तीर्थरूप माताश्री का आशीर्वाद सदैव विद्यमान है– इस अनुभूति से आप अमित उत्साह का नित्य अनुभव करें, इस हेतु परमदयाघन सर्वमंगलकारी श्री परमेश्वर से अनुरोध करता हूँ।

(मूल मराठी)

६१. ताशकंद जाने के पूर्व प्रधानमंत्री को पत्र

२८ दिसंबर १९६५

भगवत्कृपासे आप सकुशल होंगे। शीघ्र ही आप ताशकंद जा रहे हैं। वहाँ पाकिस्तान के श्री अयूब खाँ महोदय से वार्तालाप करना आपने स्वीकार किया है। रूस के अध्यक्ष महोदय ने मध्यस्थ के रूप में दोनों को निमंत्रण दिया है। इस वार्तालाप से सामान्य शांति-प्रस्थापना हो सकी तो रूस को उसका बहुत श्रेय प्राप्त होकर उसकी प्रतिष्ठा में वृद्धि हो सकेगी। इसमें किसी को आपत्ति होने का कारण नहीं हैं। परंतु मध्यस्थ की भूमिका न्यायसंगत होनी आवश्यक है। इस निमंत्रण में ऐसा कोई आभास नहीं मिलता कि आक्रमण को वैसा माना हो, प्रत्युत आक्रामक पाकिस्तान तथा आक्रांत भारत दोनों ही जागतिक शांति-भंग के दोषी हैं एवं दोनों में समझौता कर जगत् को अशांति के संकट से बचाना रूस का कर्तव्य है, ऐसी रूस की भूमिका दिखाई देती है। यह भूमिका न्याय्य प्रतीत नहीं होती। भारत के प्रति रूस की मित्रता को देखकर उससे कम से कम न्याय्य भूमिका की अपेक्षा है। इस अवस्था में निमंत्रण के स्वीकार से रूस की भूमिका को एक प्रकार से भारत की मान्यता होने की आशंका उत्पन्न होती है, जो पाकिस्तान-भारत संघर्ष में भारत के न्याय्य पक्ष के प्रतिकूल भासमान है। इसका अंतर्राष्ट्रीय वायुमंडल पर अनिष्ट परिणाम होने की आशंका दिखती है। इसका आपने योग्य विचार किया ही होगा।

इस प्रास्ताविक वार्तालाप में कश्मीर के संबंध में 'जनमत संग्रह', 'स्वयं निर्णय' आदि किसी प्रश्न को उठने देना कश्मीर के विषय में भारत की सुप्रतिष्ठित भूमिका के विरुद्ध है, अतः इस प्रश्न पर किसी प्रकार बातचीत नहीं होगी– ऐसा आपने अनेक बार दृढ़ता से स्पष्ट कहा है। इससे सब को बहुत आश्वासन मिलता है। परंतु तृतीय पक्षस्थ रूस आदि के आग्रह से तथा पाकिस्तान के हठ से यह प्रश्न उठाया जा सकता है।

पाकिस्तान के हठ का आप पर कोई प्रभाव पड़ने की संभावना नहीं है। इसी प्रकार मित्र देश रूस के भी इस अवांछित आग्रह को अपसारित कर समस्त भारतीयों को आप आश्वस्त करेंगे, ऐसी अपेक्षा है।

कश्मीर के संबंध मे जो विचार न्याय्य होगा, वह पाकिस्तान द्वारा बलात् अधिकृत किए अंश की मुक्ति तथा उस भाग का फिर भारत में संपूर्ण विलय यही है। एतद् व्यतिरिक्त कश्मीर-विषयक अन्य किसी भी प्रकार की बातचीत अपनी सत्य भूमिका कि कश्मीर भारत का अटूट अभिन्न अंग है, से असंगत होगी।

यदि स्थायी शांति के लिए यह प्रयास है तो पाकिस्तान-भारत के बीच के सभी विवादों पर निर्णय होना चाहिए। १४ अगस्त १९४७ से जितना लेन-देन का ब्यौरा है, उसे स्पष्ट कर पाकिस्तान को पूरा देना चुकाने के लिए बाध्य करना चाहिए। भारत तो अपनी ओर से प्रत्येक समझौते की प्रत्येक शर्त को पूर्ण कर धन-जल आदि चीजें भी पाकिस्तान को देता आ रहा है। अभी के अगस्त-सितंबर १९६५ के संघर्ष के समय भी पाकिस्तान को जल देकर अपनी यह सिद्धता जगत के सामने भारत के प्रमुखों ने स्पष्ट कर दी है, परंतु १४.८.४७ से हुए एक भी समझौते की एक भी शर्त का पालन पाकिस्तान द्वारा करने का उदाहरण ज्ञात नहीं है। अतः अब, जबकि स्थायी शांति के मार्गों का अन्वेषण चल रहा है, प्रारंभ से सभी हिसाब पूरे करा लेना अनुकूल वायुमंडल बनाने में तथा परस्पर विश्वास बनाने व बढ़ाने में उपकारक होगा। अभी तक केवल एकतरफा सद्भावना का प्रकटीकरण हुआ है। अब पाकिस्तान की ओर से भी हृदय शुद्ध होने का परिचय मिलना चाहिए, जो इस प्रकार पूरे विगत १८ वर्षों से अधिक समय का हिसाब उसने चुकाकर ही देना आवश्यक है, अन्यथा उसे न्याय्य-पथ से चलने की इच्छा नहीं है— यही सिद्ध होगा।

इतने वर्षों में पाकिस्तान ने अनेक अन्याय किए हैं। पूर्व बंगाल के हिंदुओं के साथ का निर्घृण व्यवहार, उनका निर्वासन, कश्मीर के एक अंश को व्याप्त कर रखना, असम-बंगाल आदि में अवैध रूप से अपने मुस्लिम नागरिकों को बसाने का प्रयास करना, सीमा पर बार-बार अवैध प्रवेश, जन-धन की लूट करने का प्रयत्न, गोलाबारी, दो बार कच्छ के रण में आक्रमण, युद्धविराम घोषित करने के पश्चात् भी उसी दिन से अभी तक चल रहे आक्रमण-प्रयत्न तथा भारतीय भू-भाग का अपहरण, ऐसे अगणित

अन्याय चल रहे हैं। उन सबका निराकरण होकर इतने वर्षों में भारत को जो हानि उठानी पड़ी है, उसकी पूर्ति करना अंतर्राष्ट्रीय न्याय की दृष्टि से पाकिस्तान के लिए अनिवार्य है। इसका सुस्पष्ट आग्रह उचित दिखता है। गत अगस्त-सितंबर के संघर्ष में उनकी भी कुछ हानि हुई अवश्य है, परंतु वह तो उन्होंने स्वयं ही अपनी दुर्गति से अपने ऊपर ओढ़ी है। उसका दायित्व भारत पर नहीं, सर्वथा उन्हीं पर है। अतः उस हानि का पाकिस्तान के द्वारा उल्लेख अन्याय्य होने से उसपर विचार करना सर्वथा त्याज्य कहा जा सकता है।

ऐसे अनेक प्रश्न उठते हैं और भी हो सकते हैं, जिनका इस पत्र में उल्लेख करना पत्र को बहुत विस्तृत कर देगा।

आप पर इन सब जटिल प्रश्नों को सुलझाने का दायित्व आपकी पद-प्रतिष्ठा से अनायास आ पड़ा है। अपनी व्यवहारकुशलता से और विशेष बात भारत की प्रतिष्ठा-रक्षण का आपका जो स्वाभाविक धर्म है, उसके कारण आप इस वार्तालाप में यशस्वी होंगे, ऐसा मेरा विश्वास है। आपके व्यक्तिगत महत्त्व में तो इससे बहुत वृद्धि होगी ही, पर भारत का नाम भी जगत् में अधिक ही ऊँचा उठेगा, ऐसी आपसे हम सबकी आशा है। प्रस्तावित शांतिवार्ता पाकिस्तान के दुराराध्य स्वभाव के कारण असफल हुई और फिर युद्ध की विभीषिका उत्पन्न होने की आशंका निर्माण होती दिखाई दी, तो भी भारत के सम्मान को किंचित मात्र भी धक्का न लगने पाए– यही एक ध्रुवविचार सामने रखकर वार्ताएँ चलें। शांति की इच्छा कितनी भी बलवती क्यों न हो, उसके लिए राष्ट्र की प्रतिष्ठा की बलि चढ़ने न पाए, यही आपसे विनती है।

आपकी यह यात्रा पूर्णतः सफल हो, भारत की ध्वजा अधिक उज्ज्वल बनाकर उसे अधिकाधिक ऊँचा फहराने का श्रेय आपको प्राप्त हो, यही कामना है। सर्वशक्तिमान श्री विजय तथा भूतिः के मूलाधार श्री भगवान आपके साथ रहें, आपकी रक्षा करें एवं आपको सदैव यशस्वी करें।

६२. डा. राजेंद्रप्रसाद महान देशभक्त

डा.के.एम.मुंशी, भारतीय विद्याभवन, मुंबई   १२ मार्च १९६६

आपका ८.३.१९६६ का पत्र मिला। समिति में मेरा नाम अंतर्भूत कर आपने मेरा सम्मान किया है, जिसके योग्य मैं संभवतः नहीं हूँ।

आदरणीय स्व. डा. राजेन्द्रप्रसाद जी की स्मृति चिरकाल बनाए रखने हेतु निर्मित कार्य में मुझे एक सहयोगी सदस्य बनाने की आप एवं अन्य सदस्यों की इच्छा है, तो यह मेरा विशेष सम्मान है, ऐसा मैं मानता हूँ। अपने देश, समाज एवं राष्ट्रीय परंपरा के रक्षणार्थ जिन्होंने निःस्वार्थ भाव से अपना जीवन समर्पित किया, ऐसे दिवंगत आदरणीय डा. राजेन्द्रप्रसाद जी के प्रति यह मेरी श्रद्धांजलि कृपया स्वीकृत करें। आपका भेजा निवेदन हस्ताक्षर कर लौटा रहा हूँ। (मूल अंग्रेजी)

६३. समाज कृतिशील गोपूजक बने

श्री भैयासाहब मानकर, वर्धा २० अगस्त १९६६

आपके विचार पढ़कर बहुत आनंद अनुभव कर रहा हूँ। अपने समाज ने गोमाता की अक्षम्य उपेक्षा की है, अभी भी कर रहा है। समाज को कृतिशील गोपूजक बनाने का प्रयास चल रहा है। परम गोभक्त श्री चौंडे महाराज का ही आदर्श सम्मुख है। मैं दुग्ध सेवन क्वचित ही करता हूँ, परंतु जब करता हूँ, तब केवल गोदुग्ध ही लेता हूँ। आवश्यकतानुसार गोदुग्ध ही जमाकर उसका दही या छाछ लेता हूँ। वह उपलब्ध न हो, तो दही या छाछ का सेवन नहीं करता। मेरी इस आदत का प्रचार करना मुझे जँचता नहीं, इसलिए किसी को कहता नहीं, परन्तु संबंधित सभी लोगों को गोदुग्ध का ही प्रयोग करने को कहता हूँ, यह सत्य है।

गो-पालन के संबंध में सोच रहा हूँ। निरुपयोगी गाय एवं भैसों की समुचित व्यवस्था करने हेतु स्थान-स्थान पर प्रयास कर रहा हूँ। इन सब कामों को मैं स्वयं ही करूँगा, ऐसा सोचने से एक भी काम यथोचित करना संभव नहीं होगा। इसलिए मैं केवल संघकार्य कर रहा हूँ। संघकार्य के पोषण हेतु और जो धर्म एवं संस्कृति संसार में बलशाली बनाने की आकांक्षा हृदय में है, उसी के संरक्षण एवं परिपालन हेतु यह सब चल रहा है। यह परमेश्वराधीन है।

मेरे उपोषण संबंधित जानकारी जैसी आपको, वैसी मुझे भी वृत्त-पत्र से ज्ञात हुई। वैसा मेरा विचार निश्चित हुआ तो भी उससे मुझे किसी भी प्रकार का राजनीतिक लाभ अपेक्षित नहीं है। सोचने की यह दृष्टि किसी राजनीतिक दल की हो सकती है। दलगत राजनीति से दुरान्वय से भी मेरा संबंध नहीं है। किसी ने अपप्रचार ही किया तो वह बेचारा

करता रहे। उसको रोकना संभव नहीं, क्योंकि ऐसे लोगों पर मेरा कुछ भी नियंत्रण नहीं है, किसी प्रकार का दबाव भी रहना संभव नहीं है। इससे अधिक और क्या लिखूँ? (मूल मराठी)

६४. आपकी गरिमा को शोभा नहीं देता

३ सितंबर १९६६

श्री पी.कोदंडराव, सर्वेंटस् ऑफ इंडिया सोसायटी, बंगलौर

२२ अगस्त १९६६ का आपका निवेदन प्राप्त हुआ। संभवतः आप जानते होंगे कि कानून से गोहत्या बंद कराने हेतु जिन व्यक्तियों का आमरण अनशन का वृत्त है, उनमें से एक भी व्यक्ति का चुनाव तथा किसी भी प्रकार की राजनीति से दुरान्वय से भी संबंध नहीं है। बल्कि मैं कहूँगा कि आपके निवेदन से इन पवित्र साधु-महात्माओं पर घोर अन्याय हुआ है। मेरे स्वयं के विषय में आप असद् हेतु का आरोप कर सकते हैं तथा आपके मन का पूर्णतः समाधान होने तक आप मेरी बदनामी कर सकते हैं। उस विषय में मैं एक भी शब्द नहीं कहूँगा। इन बातों का मैं आदी हो गया हूँ।

वस्तुतः संकलित रूप से सोचकर मैं कह सकता हूँ कि आपका निवेदन आपके ज्ञान, अध्ययन, और अनुभव को शोभा नहीं देता। आप एक वयोवृद्ध, धीर-गंभीर, राजनीतिज्ञ हैं, ऐसी मेरी श्रद्धा को आपके निवेदन से गहरा आघात पहुँचा है, तथापि उसे भूलने का प्रयास कर आपके प्रति अपना दृढ़ आदर भाव रखने का मैं प्रयत्न करूँगा।

(मूल अंग्रेजी)

६५. असम शासन एकात्मता निर्माण करने में असफल

५ सितंबर १९६६

श्री एम.के.बागडिया,
अध्यक्ष, पूर्वी असम चैंबर ऑफ कॉमर्स, डिब्रुगढ़

अगस्त १९६६ में असम मे हुए उत्पात के कारण अनेक व्यापारी बंधुओं को जो क्षति पहुँची है, इस विषय में पूर्वी असम चैंबर ऑफ कॉमर्स द्वारा मान्यवर मुख्यमंत्री को दिए गए वक्तव्य की प्रतिलिपि प्राप्त हुई। असम के अन्य भागों में भी ऐसे ही या इससे भी भयानक उत्पात चल रहे हैं।

इस प्रकार के उत्पात शासन के उच्चाधिकारियों तथा शासन

चलानेवाले दल का राष्ट्रीय एकता में प्राप्त यश के दावे का खोखलापन सिद्ध करते हैं। विशेषतः देश की सीमाओं पर आक्रमण का जो खतरा मँडरा रहा है, उससे इन उत्पातों की भीषणता और भी गहरी हो जाती है।

क्षतिपूर्ति के लिए क्षति के अनुसार आपको न्याय तथा सहायता मिलेगी और आप सब संकुचित प्रांतीयता, अलगाववाद तथा भाषायी भेद अपने हृदय से नष्ट कर, विशुद्ध बंधुभावना से राष्ट्रीय एकता, सुरक्षा, एवं वैभवसंपन्नता के लिए प्रयास करेंगे, ऐसी मुझे आशा है। (मूल अंग्रेजी)

६६. यशस्वी भव

माननीय श्री यशवंतराव चव्हाण, केंद्रीय गृहमंत्री १४ नवंबर १९६६

आज के समाचार-पत्रों से ज्ञात हुआ कि केंद्रीय मंत्रिमंडल के विभागों में परिवर्तन होकर आपकी ओर गृह-विभाग आया है एवं वह आपने स्वीकार किया है। अंतर्गत सुव्यवस्था, शांति एवं परस्पर स्नेह, सौहार्द एवं सहयोग का वातावरण राष्ट्र के उत्कर्ष एवं रक्षण के लिए अत्यंत आवश्यक है एवं वैसा वातावरण निर्माण करने के लिए कुशल कर्णधार की आवश्यकता रहती है। कुछ पूर्वाग्रह बचाकर चलने से हठ-दुराग्रह संजोने से या एक-दूसरे के संबंध में अविश्वास का वातावरण बनाने या जारी रखने से हेतु साध्य करना संभव नहीं है, क्योंकि उसमें संकुचित दृष्टि व तात्कालिक लाभ की अपेक्षा ही प्रगट होती है। विशेषतः संप्रति देश में एक प्रकार की अशांति एवं गृहयुद्ध जैसी स्थिति अनुभव की जा रही है। विभिन्न कारणों से आंदोलन हो रहे हैं और वातावरण विक्षुब्ध सा हो रहा है। इन आंदोलनों के मूल प्रेरणाओं की टोह लेकर अनिष्ट न होने देने की दृढ़ता एवं इष्ट कारण के लिए व्यक्त होनेवाले आंदोलनों के प्रति सहानुभूति से विचार कर योग्य निर्णय लेने की दृढ़ता आवश्यक है।

अति आवश्यक काम करने की क्षमता, कुशलता, सौजन्य, विवेकशीलता आदि गुण आपमें विद्यमान होने का पूर्वानुभव रहने से आपने यह महत्त्वपूर्ण दायित्व ग्रहण किया— यह पढ़कर मुझे बहुत संतोष हुआ। आपके मार्गदर्शन से इस विभाग के छोटे-बड़े सब अधिकारी एवं कर्मचारी भी जिम्मेदारी से व्यवहार करेंगे एवं शासन और जनता के बीच परस्पर पूरकता एवं स्नेहादर बनाए रखने में सहायता करेंगे, ऐसा विश्वास प्रतीत होता है। कुल मिलाकर वातावरण सुधरने की सुदृढ़ आशा भी अनुभूत होने लगी है।

इस नए दायित्व की पूर्ति में आपको उत्तम यशकीर्ति प्राप्त हो, यह प्रभुचरणों में प्रार्थना कर रहा हूँ। आगे दिल्ली जाने का सुयोग प्राप्त हुआ एवं आपको समय मिल सका तो प्रत्यक्ष भेंट का प्रयत्न करूँगा ही। यह निश्चित कब घटित होगा, यह आज कहा नहीं जा सकता। प्रतीक्षा करूँगा।

(मूल मराठी)

६७. अविश्वास का वातावरण शुद्ध करना आवश्यक

श्री जगजीवनराम जी, दिल्ली ५ जुलाई १९६७

आपके मंत्रालय से गोरक्षा समिति के गठन के प्रस्ताव की प्रतिलिपि जो ३० जून को नई दिल्ली से भेजी गई थी, आज मुझे प्राप्त हुई। उस समिति में मेरे नाम का अंतर्भाव किया है, इसका बोध हुआ। जब कभी समिति अपना कार्य प्रारंभ करेगी, उसमें उपस्थित रहने का प्रयत्न करूँगा, यदि यथासमय समिति की बैठकों की तिथि, स्थान, समय आदि की पूर्वसूचना मेरे पास पहुँच जाए। भगवत्कृपा से तथा सब सदस्यों की सद्भावना से उत्तम निष्कर्ष पर समिति पहुँच सकेगी, ऐसा विश्वास करता हूँ।

परंतु आज ही तिहाड़ केंद्रीय कारागार से एक पत्र मेरे पास आया है। गोरक्षा आंदोलन के सत्याग्रही के रूप में बंदीवास का दंड भोगनेवाले किसी बंधु का पत्र है। कुछ दिन पूर्व उस कारागार में इन सत्याग्रहियों के साथ परम-वंदनीय श्री करपात्री स्वामी आदि महात्माओं के साथ जो अत्याचारी व्यवहार हुआ है, उसका व्यथित हृदय से उस पत्र में उल्लेख किया गया है। यह इतना आश्चर्यकारक कांड है कि उस संबंध में वृत्त सुनते ही अंतःकरण शोकग्रस्त एवं क्षुब्ध हो उठा है। ऐसी घटनाओं के होते हुए समिति क्या कार्य कर सकेगी, यह समझ में नहीं आता। मुझे तो ऐसा लगा कि समिति का गठन आदि केवल दिखावा है, उसमें तथ्य नहीं, हृदय की सच्चाई नहीं। इस अविश्वास के वातावरण को शुद्ध करना आवश्यक है। उक्त कांड की निष्पक्ष न्यायालयीन जाँच कराना, दोषियों को उचित दंड देना आदि आवश्यक सब पग उठाना लाभदायक होगा। यह जाँच अतिशीघ्र पूर्ण हो, जिससे अभी दूषित बना हुआ वातावरण शुद्ध एवं परस्पर स्नेह, विश्वास से ओतप्रोत बनकर समिति संतुलित अंतःकरण से अपना कार्य पूर्ण करने की स्थिति में पहुँच सके। यह जाँच आदि न होते हुए समिति की बैठक बुलाना निष्फल ही होने की आशंका है।

आशा है कि आप इसका विचार करेंगे, गृह-मंत्रालय द्वारा जाँच कराने में त्वरा करवाएँगे और समिति का कार्य उत्तम रीति से कराकर गोमाता के तथा श्री भगवान के आशीर्वाद के योग्य अधिकारी बनेंगे।

६८. कार्य का केवल आभास न हो

माननीय श्री जगजीवनराम जी, ५ अक्तूबर १९६७

आपने निर्माण की हुई 'गोरक्षा समिति' की तीन-चार बैठकें हुईं। चार प्रांतों के मुख्यमंत्री या उनके अधिकृत प्रतिनिधि, जिनके नाम समिति के १२ सदस्यों की सूची में हैं– उनमें से एक बार बंगाल के और दूसरी बार चेन्नै के सदस्य उपस्थित हुए थे। मध्यप्रदेश तथा उत्तरप्रदेश से कोई नहीं आया। अन्य सदस्य भी कार्यवश कभी उपस्थित होते हैं, कभी नहीं। न्यूनतम संख्या ६ की निर्धारित की गई है। वह जैसे-तैसे पूर्ण होती है। इसी प्रकार समिति का काम चलनेवाला हो, तो कहना पड़ेगा कि उससे कुछ भी उपयुक्त कार्य होने की आशा नहीं है। अब २३,२४,२५,२६,२७ तथा २८ अक्तूबर को फिर बैठक का आयोजन हुआ है। इस दीर्घ कालावधि में कतिपय व्यक्तियों से प्रत्यक्ष बातचीत कर उनके मतों की छानबीन करने की योजना है। इसमें भी यदि सब सदस्य नहीं आए और जिन तज्ञों को निमंत्रित किया जाएगा, उनमें से कुछ ही आए तो सब समय व्यर्थ में नष्ट होने का अनुभव मात्र आने की आशंका रहेगी।

इस अवस्था में आपसे मेरा साग्रह अनुरोध है कि सब सदस्यों को प्रत्येक बैठक में उपस्थित करने के लिए प्रयत्न करें। आगामी सत्र में जो तज्ञ निमंत्रित हैं, वे उपस्थित हों– ऐसा प्रबंध करे, जिससे समिति कुछ काम करने में समर्थ हो सके। यदि ऐसा करना संभव न हो तो समिति का विसर्जन करना ही उचित होगा। व्यर्थ सबका समय और शासन का धन नष्ट करने में क्या लाभ?

समिति को विसर्जित करने का आपने विचार किया तो एक और कार्य करना शोभनीय होगा। शासन की ओर से संपूर्ण गोवंश की हत्या पर प्रतिबंध लगाने की दृष्टि से जो संविधान में परिवर्तन, नवीन कानून का निर्माण आदि आवश्यक है, इस दृष्टि से लोकसभा में आवश्यक विधेयक प्रस्तुत कराकर उसी में इस प्रश्न के सब पहलुओं पर पूर्ण विचार कर कानून बनाने का प्रयत्न करना उचित होगा। इस संबंध में आप सहृदयता

से विचार करें और अभी जो 'गोरक्षा समिति' के नाम पर कार्य का केवल आभास निर्माण हो रहा है, उसको या तो ठीक करें या त्वरित समाप्त कर दें, अन्यथा समिति सर्वत्र एक उपहास का विषय बनेगी, जिसका उपसर्ग शासन को भी होने का भय है।

आशा है, आप इस पवित्र विषय की ओर गंभीरता से ध्यान देंगे। इति शम्।

६६. केरल हिंदुओं की खान-पान आदत

२३ अप्रैल १९६८

माननीय श्री समर सरकार महोदय,
सचिव, केंद्रीय सरकारी गोरक्षा समिति

केरल प्रांतीय हिंदुओं की खान-पान की आदतों के विषय में एक आवेदन पत्र, कुछ समय पूर्व गोरक्षा समिति के सभी सदस्यों को प्रसृत किया गया था। समिति में हमारे एक सहयोगी डा. कुरियन महोदय ने 'दैनिक मलयाली मनोरमा' के संपादक महाशय के द्वारा उस आवेदन को प्राप्त किया। उस आवेदन-पत्र में लिखे गए विचारों से सहमत होना मुझे असंभव सा प्रतीत हुआ। इसलिए अपने कुछ मित्रों के माध्यम से केरल के कुछ जिम्मेदार महानुभावों से, जो उस प्रांत के अपने बंधुओं की आदतें, रीति-रिवाज, लोक-व्यवहार आदि से सुपरिचित हैं (ऐसा विश्वास वहाँ की जनता को भी है) से संपर्क कर इस बारे में अपने विचार, अपनी स्वाक्षरी से मुझे प्रेषित करने को कहा था।

इस विषय से संबंधित चार लेख आज तक मुझे प्राप्त हुए हैं। उनमें दो अंग्रेजी में हैं और दो अंग्रेजी भाषांतर सहित मलयालम भाषा में हैं। इन लेखों की मूल प्रति मेरे पास सुरक्षित हैं। उनकी दो अंग्रेजी तथा दो अंग्रेजी-भाषांतरित प्रतियाँ आपके पास भेज रहा हूँ।

अंग्रेजी में लेख लिखनेवाले हैं-

१) श्री कुट्टिकृष्ण मेनन, चेन्नै प्रांत के भूतपूर्व सरकारी प्रधान अधिवक्ता (Advocate General) संप्रति केरल के प्रमुख अधिवक्ता एवं केरल देवस्वम एकत्रीकरण के विषय में आवेदन-पत्र के लेखक। (यह आवेदन पत्र केरल शासन के आदेश से तैयार किया गया था)

२) श्री दामोदरन् पोट्टी, केरल विधानसभा के सभापति के मलयालम में

लिखे गए लेख और उनका अंग्रेजी अनुवाद साथ संलग्न हैं, ऐसे अन्य दो महानुभाव हैं -

१) स्वामी ब्रह्मानंद, श्री नारायण धर्म संघम ट्रस्ट, शिवगिरी मठ वरकला, (जिला तिरूवनंतपुरम्)

२) श्री पी.आर.कुरुप्प, केरल सरकार में जलसिंचन, सहकार और देवस्वम के मंत्री

मैं अपेक्षा करता हूँ कि ये लेख संबंधित प्रश्न को सुलझाकर सही निर्णय पर पहुँचने हेतु समिति की कार्यवाही में उपयोगी सिद्ध होंगे।

(मूल अंग्रेजी)

७०. पंजाब व असम के आसन्न संकट की पूर्वसूचना

श्री नरूभाऊ लिमये, पुणे

९ सितंबर १९६८

राहुरी कृषि विश्वविद्यालय का निमित्त बनाकर विध्वसंक आंदोलन हुए हैं। संपूर्ण भारत में विभिन्न कारणों से इसी प्रकार आंदोलन समय-समय पर होते रहने से आपके अंतःकरण में निर्माण हुई चिंता प्रत्येक सत्प्रवृत्त व्यक्ति के हृदय में निर्माण होकर उसको अवश्य ही व्यथित करती रहेगी। इस वृत्ति के दुष्परिणाम अत्यंत भीषण हो सकते हैं, यह चेतावनी गत अनेक वर्षों से भिन्न-भिन्न अवसरों पर मैं नित्य दे रहा हूँ। कुछ समय पूर्व, दायित्वपूर्ण स्थानों पर आसीन नेताओं से विचार-विमर्श करने का भी मैंने प्रयास किया है। मेरे कहने का कुछ अच्छा परिणाम निकला है, ऐसा अभी तक अनुभव नहीं है। तो भी एक व्यक्ति के नाते और संघकार्य द्वारा मेरे प्रयास चल रहे हैं और चलते रहेंगे। संघ इस नाते सर्वसाधारण जनमानस में जो आत्मीयता है, उसे अभिव्यक्त करते समय और संघकार्य में सहयोग करते समय अनेक सुस्वभावी लोगों को संकोच होता दिखाई देता है। संभवतः यह सहयोग अपने शासन को अरुचिकर लगेगा, ऐसा वे सोचते हैं। इस प्रकार सोचने में गलती उनकी नहीं है। कुछ विशेष मतप्रणाली के प्रचार हेतु चलनेवाले वृत्त-पत्र समय-समय पर अपप्रचार करते रहते हैं और इस अपप्रचार का मानो समर्थन शासनाधिष्ठित नेतागण करते हैं। उस अपप्रचार का पोषण करने के लिए वे लोकसभा में भाषण करते हैं। मुझे लगता है कि इस प्रकार कहकर, परिणामतः अराजकता निर्माण कर राष्ट्र को बाह्य आक्रमण के संकट की खाई में ढकेलनेवाली अनिष्ट शक्ति से संघर्ष

करनेवाली विशुद्ध स्वदेशप्रेमी लोगों की एवं संस्थाओं की अभेद्य एकता निर्माण में बाधा उत्पन्न होती है। विभिन्न दलों में स्पर्धा रह सकती है। लोकतंत्र में वह अपरिहार्य है, परंतु इस स्पर्धा के कारण अपेक्षित अभेद्य एकता निर्माण के कार्य में बाधा उत्पन्न हो, ऐसा किसी का वक्तव्य या व्यवहार न रहे। परस्पर व्यवहार स्नेहपूर्ण एवं विश्वसनीयता का रहना चाहिए, ऐसा लगता है। आपके हृदय की अवस्था इस दृष्टि से अत्यंत उच्च एवं अनुकरणीय है। अतः इस प्रकार प्रयत्न करने के लिए आप ही अत्यंत योग्य हैं। इस योग्यता के कारण ही आपने मुझे पत्र लिखा है। वह पढ़ते समय समानधर्मा व्यक्तिहृदय की लगन सुस्पष्ट अनुभव कर, मन में अत्यंत सुख हुआ।

जो विचार आपने प्रगट किए हैं, उस ढंग पर पंजाब का अब विभाजन न हो, अपितु उसे जम्मू-कश्मीर में जोड़कर एक विशाल प्रदेश का निर्माण करें, ऐसा मैंने सूचित किया था। परंतु वैसा नहीं हो पाया और पंजाब छोट-छोटे क्षेत्रों में विभाजित हुआ। विभाजन के पश्चात् आपस का वैमनस्य नष्ट होना तो दूर रहा, वह बढ़ ही रहा है। अब असम में जो पुनर्रचना का विचार चल रहा है, वह विनाशकारी सिद्ध होगा, ऐसी आशंका है। इस विषय में भी मैंने स्पष्ट सूचना दी है। एक प्रदेश के अतंर्गत सभी क्षेत्रों का, जिलों का, विकास संतुलित न रहा तो विभाजन यही एकमात्र उपाय नहीं है। सभी को एकहृदय होकर लगन से प्रयास करना, यही संतुलन निर्माण करने का मार्ग है। मेरे हृदयस्थ इन भावनाओं को आपने अपने पत्र में उत्तम शब्दों में अभिव्यक्त किया है।

पत्र प्रेषित कर आपने आत्मीयता एवं स्नेह की अनुभूति मुझे करवा दी है। मैं अतीव कृतज्ञ हूँ। आपके स्नेह एवं विश्वास के योग्य मैं सदैव रहूँ, यही प्रार्थना कर पत्र पूर्ण करता हूँ। (मूल मराठी)

७१. श्री बृजलाल बियाणी की मृत्यु पर संवेदना

श्री कमलकिशोरजी बियाणी, अकोला, २ अक्तूबर १९६८

श्रद्धेय भाईजी श्री बृजलाल जी बियाणी के स्वर्गवास का वृत्त प्राप्त हुआ। अत्यंत व्यथित हृदय से समदुखी के नाते यह लिख रहा हूँ।

देशसेवा में रत अविश्रांत परिश्रमी जीवन इतने दीर्घकाल चलाते हुए शरीर थक गया, रोगग्रस्त हो गया और अब तो इस नश्वर जगत् को

वे छोड़कर चले गए, क्योंकि यह जीर्ण-शीर्ण शरीर देश के हित में कुछ करने के लिए सर्वथा असमर्थ हो चुका था। कुछ मतभेद होते हुए भी सबसे व्यवहार का अभिजात सौजन्य, वाणी की सुखद मधुरता और सबके प्रति हार्दिक स्नेह उनके स्थायीभाव होने के कारण जीवन के सब क्षेत्रों में उन्हें चाहनेवाले, माननेवाले असंख्य लोग उनके वियोग से व्यथित हो उठे, तो यह स्वाभाविक ही है। ऐसे श्रेष्ठ व्यक्ति अब कम हो चले हैं। उनकी स्मृति में उनका अनुकरण कर आज की पीढ़ी स्वतः में देशसेवा-व्रत, निःस्वार्थ भाव तथा सब समाज के प्रति आत्मीयत्व धारण करे एवं शुद्धशीलसंपन्न होकर पूरी लगन से राष्ट्रकार्य में रत हो, यह मन में इच्छा है। दिवंगत महापुरुष के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त करने का यही सर्वोत्तम मार्ग होगा।

आपके कुटुंबियों तथा आत्मीयजनों में मैं भी अपने को एक मानता हूँ, अतः पूरे परिवार के दुःख में स्वभावतः सहभागी हूँ। दिवंगत जीव की सद्गति के लिए परमकृपालु श्री भगवान के चरणकमलों में प्रार्थना करता हूँ। अधिक क्या कह सकता हूँ।

७२. श्री अटलजी के स्वास्थ्य के प्रति चिंता

श्री अटलबिहारी वाजपेयी, दिल्ली — १३ जुलाई १९६९

आप यहाँ से दिल्ली जाकर डाक्टर से परामर्श कर फिर यहाँ लौट आने की बात कह गए थे, किंतु आपका आना नहीं हुआ। अतः यह अनुमान है कि आपके डाक्टर महोदय ने जाँच हेतु आपको रोक लिया होगा। पेट में या आँतड़ियों में एक सामान्य स्फोट (अल्सर) की जाँच और चिकित्सा करने में कौन-सी कठिनाइयाँ उनको अनुभव हो रही हैं, यह कहना मेरे लिए संभव नहीं है। एक बात स्पष्ट है कि जहाँ आप जाँच कराकर चिकित्सा भी कराने का विचार कर चल रहे हैं, उनके नैपुण्य के संबंध में मुझे विश्वास अभी तक नहीं है। कारण कहना कठिन है, परंतु वस्तुस्थिति यही है। अतः मुझे लगता है कि अन्य किसी तज्ञ से जाँच-चिकित्सा कराने का निर्णय करना ठीक होगा। एलोपैथी के स्थान पर आयुर्वेदिक चिकित्सा लाभदायक हो सकेगी, यह बात मैंने आपसे कही थी। यहाँ बैठक के लिए इंदौर के माननीय पं. रामनारायणजी शास्त्री आए हैं। उनसे विचार करने पर उन्होंने यही कहा कि अल्पावधि में यह विकार पूर्णतया ठीक हो सकता है। उन्होंने यह भी कहा यदि आप इंदौर जाएँ तो चिकित्सा के पूर्व

और पश्चात् 'क्ष' किरणों से चित्र खिंचवाकर, औषधि के गुणों का आपको प्रत्यक्ष बोध कराकर, आपको रोगमुक्ति का पूर्ण संतोष दिलाया जा सकेगा। माननीय श्री शास्त्रीजी का यह निमंत्रण स्वीकार्य प्रतीत होता है। आप सोचें, अपने सहयोगी बंधुओं से भी परामर्श करें और इंदौर जाने का निश्चय करें। यह मुझे लाभदायक प्रतीत हो रहा है।

संभव है आगामी सप्ताह मैं भी इंदौर जाकर तीन सप्ताह के लगभग माननीय श्री शास्त्री जी के घर पर रहूँगा। विश्राम और कुछ औषधोपचार कराकर शरीर अधिक कार्यक्षम होगा, ऐसा सब बंधुओं का कहना है और मेरे इंदौर जाने के संबंध में आग्रह है। उन्हीं दिनों आपकी भी चिकित्सा हो सकेगी और मुझे प्रत्यक्ष में पूर्ण सुधार देखने के लिए मिल सकेगा।

इसका विचार करें और निर्णय माननीय श्री शास्त्रीजी को सूचित करा दें। यह विश्वास है कि आप भी पूर्ण विश्वास से मेरी सूचना पर योग्य विचार करेंगे।

७३. भूतमात्र के प्रति अहिंसा

श्री पी. कोदंडराव, बंगलौर — १६ जुलाई १६६६

सर्व भूतमात्र के प्रति अहिंसा यह अपना मूलभूत सिद्धांत है। किसी कारण से भी धार्मिक तथा अन्य कारण से भी, मूक प्राणियों की हत्या न हो, इस विचार से मैं पूर्णतया सहमत हूँ। परिहार्य पीड़ा के विषय में यही कह सकते हैं कि हत्या के पूर्व प्राणियों को बधिर बनाने के विचार संभ्रम निर्माण करते हैं। आपके हृदय में यदि भूतदया है, तो उनकी हत्या क्यों करना? और सामिष भोजन का आग्रह क्यों? शाकाहारी भोजन कर, अन्न का मूल्य बढ़ानेवाले स्निग्ध पदार्थ तथा प्रथिन (Protein) युक्त आहार के लिए दूध तथा उससे बने पदार्थों का सेवन क्यों न करें?

तज्ञों का कहना है कि एक व्यक्ति के सामिष भोजन के लिए आवश्यक पशुपालन हेतु चार एकड़ भूमि आवश्यक है, परंतु शाकाहारी भोजन के लिए आधा एकड़ से भी कम भूमि पर्याप्त है। कुछ लोग ऐसा भी मानते हैं कि खाद्यान्न-समस्या शाकाहारी भोजन से दूर होगी। सामिष भोजन से वह और भी जटिल बनेगी।

पशुओं को दुःख न हो इसलिए उन्हें बधिर बनाकर हत्या करने की

अनुमति देना और साथ ही अहिंसा के समर्थक होने का दावा करना मुझे आत्मवंचना मात्र लगती है।

आपके पवित्र हेतु से मैं पूर्णतया सहमत हूँ और लोगों को सच्ची अहिंसा का पालन करने को प्रवृत्त करने के लिए मैं पूर्ण शक्ति से प्रयत्न करूँगा। (मूल अंग्रेजी)

७४. राष्ट्रीय एकात्मता के पक्ष में

सेनापति श्री करिअप्पा जी, ३० दिसंबर १९६९

'उडुपी (कर्नाटक) में हुई अपनी बातचीत के बारे में नागपुर पहुँचने पर आपको लिखूँगा ऐसा आश्वासन मैंने आपको दिया था। २३.१२.६९ को दोपहर मैं यहाँ आया और तब से कार्य में इतना व्यस्त रहा कि लिखने के लिए आवश्यक समय एवं मनःशांति मुझे मिल न सकी। इस व्यस्तता से आज थोड़ा समय प्राप्त होते ही मैं यह प्रयास कर रहा हूँ।

'हमारी मातृभूमि' (Our Mother Land) यह आपका लेख मैंने पढ़ा। इसके पूर्व आपके द्वारा लिखे गए लेखों के कुछ अंश पढ़ने का सुअवसर मुझे उडुपी में भी प्राप्त हुआ था। इन दिनों वायुमंडल ऐसा है कि इस दिशा में सोचने की प्रवृत्ति भी बहुत कम लोगों में दिखाई देती है। यथार्थ देशभक्ति के विषय में विचार करने का स्वभाव भी आज अपने देश के तथाकथित कर्ताधर्ताओं में दिखाई नहीं देता। उदाहरणस्वरूप कहा जाए तो मातृभूमि ही आज जिनका सर्वस्व है, अपनी विरासत के प्रति जो पूर्ण समर्पित हैं, उनको संकुचित जातीय जैसी उपाधियों से विभूषित किया जाता है। जिनके हृदय में परकीय राज्यों के प्रति निष्ठा है, जो देश की सुरक्षा-विरोधी और अपनी सही राष्ट्रीय परंपरा के विरोध में कार्यवाही करने में हिचकिचाहट अनुभव नहीं करते, जो भारत के लोगों की आंतरिक शांति भंग करने में और भारत की प्रगति एवं प्रतिष्ठा की अवमानना करनेवाले कामों में आसक्ति रखते हैं, वे आज उच्च स्थानों पर आसीन हैं। अपने भारतीय लोगों के राष्ट्रीय स्वत्व के मूलभूत आधार की अवहेलना करते हुए ऐसे लोगों के अधिकारों की एवं उनकी सुविधाओं की रक्षा की जा रही है।

इतना सब कुछ होकर भी ऐसे देशहित-विरोधी लोगों को अपनी हानिकर कार्यवाही त्यागकर राष्ट्रीयता की मुख्य धारा में समरस करने की,

वे अपनी राष्ट्रीय आकांक्षाओं एवं तदनुसार जिम्मेदारी वहन करने में, राष्ट्रजीवन के अंगभूत घटक के नाते सहयोग करें इसलिए उनको सुशिक्षित करने की कल्पना से भी मुँह मोड़ लेते हैं। जो इस विचार को गर्हणीय मानते हैं, उन्हीं लोगों पर आज देश की सर्वांगीण उन्नति एवं विकास का दायित्व पूर्ण करने की जिम्मेदारी है। अल्पसंख्य आदि के बारे में विचार एकसंघ राष्ट्रीय एकात्मता से मेल नहीं खाता। अल्पसंख्य कहलानेवाले अपना अलगाववादी दृष्टिकोण छोड़कर, जिन आदर्शों को स्वीकार कर हम लोग युग-युग से अपना जीवन चला रहे हैं, जिनकी रक्षा करने में हमने संघर्ष किया, कष्ट सहे परंतु उनका विस्मरण नहीं होने दिया, उनको अल्पसंख्यक कहलानेवाला अपना अलगाववादी दृष्टिकोण छोड़कर हृदयंगम करें। यह विचार किसी ने प्रतिपादन किया तो तथाकथित अनेक नेता उसपर खुलेआम आक्षेप करते हैं। स्वस्थ, एकात्म राष्ट्रजीवन की निर्मिति में हो रहे सही प्रयासों का विरोध करते हैं।

इस प्रकार की दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थिति में आप, भारत के लोगों को योग्य दिशा में मार्गदर्शन करने हेतु अपनी आवाज उठा रहे हैं। मैं आशा करता हूँ कि लोग आपके द्वारा प्रसृत विचारों को श्रद्धा से हृदयंगम करेंगे और सच्ची एकता की प्रस्थापना में प्रयत्नशील होंगे। सभी पंथो के बारे में समान आदर की भावना, अपना हिंदू विचार ही है। सभी संप्रदायों के लोग सुसंगत व्यवहार से एक-दूसरे के पूरक बनकर यहाँ विद्यमान रहें, अपने राष्ट्र एवं मातृभूमि की निरपेक्ष सेवा में रत रहें, अपने इस उदात्त प्रयत्न में आप सुयश प्राप्त करें इस हेतु श्री चरणों में मैं प्रार्थना करता हूँ। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि हम लोग सच्ची राष्ट्रीय एकात्मता के पक्ष में जो कभी भी परस्पर विरोधी, आपसी शत्रुता की विचारधारा एवं स्वार्थी प्रवृत्तियों की गुदड़ी नहीं बने, ऐसे कार्य में सदैव ही रत हैं। (मूल अंग्रेजी)

७५. काशी हिंदू विश्वविद्यालय में संघ कार्यालय

आदरणीय कुलपति डा. कालूराम श्रीमाली जी, ११ अप्रैल १९७०

आपका १.४.१९७० का कृपापत्र ४.४.१९७० को मेरी अनुपस्थिति में यहाँ आया। अब नागपुर आने पर उसका उत्तर दे रहा हूँ। विलंब बहुत हुआ है, जिसके लिए क्षमाप्रार्थी हूँ।

विश्वविद्यालय के परिसर में जो छोटा सा स्थान संघ के लिए, संघ

के द्वारा विश्वविद्यालय की सहायता से तथा अनुमति से बनाया गया है, उसे विश्वविद्यालय के संस्थापक महामना पं. मालवीयजी का शुभाशीर्वाद प्राप्त रहा है।

१४.६.१६४१ का प्रस्ताव संख्या २०२ मुझे आपके पत्र से ही ज्ञात हुआ है। उस प्रस्ताव से आपको, याने विश्वविद्यालय के पदाधिकारियों को जो अधिकार प्राप्त है, उनको देखते हुए वह भवन खाली कराकर अपने अधीन कर लेने में मेरी अनुमति या सम्मति का प्रश्न ही खड़ा नहीं होता।

वातावरण की जिन प्रवृत्तियों के कारण आप सबकी यह इच्छा हुई है, उन्हें सब जानते ही हैं। अतः यह कहाँ तक और कितने लोग उचित समझेंगे, मैं नहीं कह सकता। इतना मात्र कह सकता हूँ कि विश्वविद्यालय के जन्मदाता के मन में ऐसी इच्छा कदापि उत्पन्न नहीं होती। मेरी उनसे अनेक बार जो बातें हुई थीं, उनके आधार पर यह कह सकता हूँ। परंतु इस संबंध में मैं विवाद में पड़ना नहीं चाहता। आप अपने अधिकारानुरूप जो उचित मानें, सो करें। इति शम्।

७६. पूर्व बंगाल का प्रश्न गंभीर तथा जटिल

श्री यशोधरभाई मेहता, अहमदाबाद ७ जुलाई १६७१

पूर्व बंगाल का प्रश्न बहुत गंभीर एवं जटिल है। शरणार्थियों का सतत आगमन अपनी अर्थव्यवस्था को संकट है। परंतु उनकी सहायता कर उन्हें बसाना अपना कर्तव्य है। उनका अपने घरों को वापस जाना, उनकी सुरक्षा का आश्वासन मिले बगैर, अब यह असंभव है। राजनैतिक दलों ने इस प्रश्न के सभी पहलुओं पर विचार किया ही नहीं। वर्तमान संघर्ष के कारण पाकिस्तान के दो टुकड़े होनेवाले हैं, इस विचार से मानो उनका मानसिक संतुलन बिगड़ गया है।....

भारत के साथ एकीकरण की निश्चयपूर्वक घोषणा पूर्व बंगाल के नेता करेंगे, यह सर्वथा असंभव लगता है। उनकी इस प्रकार की इच्छा का कोई संकेत नहीं मिला है।

अपने देश की अन्य आंतरिक समस्याएँ भी हैं, उनकी उपेक्षा अपने लिए घातक सिद्ध हो सकती है। अपने दलगत विचारों को दूर रखते हुए, सब नेतागण एकत्र बैठकर सोचते हुए इस समस्या का समाधान ढूँढने का प्रयास करेंगे, ऐसी मुझे आशा है। (मूल अंग्रेजी)

७७. अंतःकरणपूर्वक अभिनंदन

श्रीमती इंदिरा गाँधी जी, २२ दिसंबर १९७१

बाँग्लादेश की निरीह जनता पर हुए अत्याचार मानवता के लिए कलंकभूत थे। उनसे प्रत्येक सत्प्रवृत्त व्यक्ति और देश का क्षुब्ध होना स्वाभाविक था। पीड़ितों की रक्षा करने का भारत का परंपरागत व्रत होने से भारत की जनता में दुःख एवं क्षोभ होना अपेक्षित ही था। साथ ही बाँग्लादेश की जनता के प्रति भारत में सहानुभूति है, इसका बहाना बनाकर पाकिस्तान के युद्धपिपासु सत्ताधीशों ने भारत की पवित्र भूमि पर आक्रमण प्रारंभ कर दिया। उसका प्रतिकार भारत की सेना के तीनों विभागों ने एकसूत्रता से, युद्ध कौशल्य से तथा श्रेष्ठ वीरता से करके शत्रु को पराजित किया और दुःखग्रस्त बाँग्लादेश को पाकिस्तान के दास्य से मुक्त किया। इसका श्रेय सबसे अधिक आपको है। आपने प्रथम संयम से समझौते के प्रयत्न कर अपनी शांतिप्रियता का परिचय दिया, किंतु अपनी सुरक्षा के लिए युद्ध अनिवार्य सिद्ध होने पर निर्भयता से उसका सामना करने के लिए सेना को प्रेरित किया और जनता को पूर्ण मनोबल से यश प्राप्त करने हेतु परिश्रम करने का सफल आह्वान किया। मित्र कहलानेवाले अन्य देशों का विरोध, सहायता बंद कर दबाव डालने की नीति, पाकिस्तान को शस्त्रादि सहायता देकर संकट बढ़ाने की प्रवृत्ति, इन सबकी अवहेलना कर स्वावलंबन से आत्मनिर्भर होकर संकट के सामने धैर्य से खड़ा होने का आपका निश्चय स्वाभिमानपूर्ण एवं भारत का गौरव बढ़ानेवाला होने से संपूर्ण भारत आपका अभिनंदन करने में अपूर्व उत्साह प्रकट कर रहा है।

बाँग्लादेश की मुक्ति का लक्ष्य पूर्ण होते ही युद्ध विराम की घोषणा भारत की शांतिप्रिय नीति को स्पष्ट करनेवाली ही मानी जाएगी। युद्ध-विराम हुआ है, परंतु संकट टला नहीं है। अतः देश की जागरूक सन्नद्ध शक्ति नित्य बनी रहना आवश्यक है, इस ओर भी आपका पूरा ध्यान है ऐसा मैं मानता हूँ। राष्ट्रभक्तिपूर्ण एकता के सूत्र में आबद्ध सर्व देशबंधु, आर्थिक समृद्धि एवं सुयोग्य सेना– तीनों अंगों में यह शक्ति जागृत रखना है। देश के हित, सुरक्षा तथा स्वाभिमान को आघात पहुँचानेवाली अंतर्गत प्रवृत्तियों के प्रति अति सावधान रहना है।

बाँग्लादेश मुक्त होने से अब उधर से गत २४ वर्षों में खदेड़े गए निर्वासित अब अपने अपने घर लौट सकें और उनकी अपहृत संपत्ति उन्हें

फिर प्राप्त होकर वे अपने नवमुक्त देश की उन्नति में सोत्साह जुट सकें– ऐसी व्यवस्था भी होना न्यायसंगत होगा। आपके द्वारा इस संबंध में समय-समय पर दिए हुए आश्वासन शीघ्र पूर्ण हों और कोटि-कोटि पीड़ितों की कृतज्ञता प्राप्त करने का भाग्य आपको प्राप्त हो।

देश की एकात्मता, परिस्थिति का वास्तविक मूल्यांकन, राष्ट्र के स्वाभिमान तथा गौरव-रक्षा का सार्थ संकल्प इसी प्रकार विद्यमान रहे। केवल संकटकाल में नहीं तो सदैव सब प्रकार की राष्ट्रोत्थान की चेष्टाओं में इसकी आवश्यकता है। अपने राष्ट्र की गौरव-भावनायुक्त एकात्मशक्ति के निर्माण में रत राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ सदैव इसमें आपके साथ है और रहेगा। देश की प्रतिनिधि के रूप में आप इन सभी आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर अपनी राष्ट्रीय तथा विदेशनीति निर्धारित करेंगी, ऐसा मुझे विश्वास है। आपके नेतृत्व में भारत के गौरव में इसी प्रकार अभिवृद्धि होती रहे।

आज के राष्ट्र-सम्मानवर्धक यश के लिए आप तथा आपके सहयोगी मंत्रिमंडल का मैं अपने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की ओर से अंतःकरणपूर्वक अभिनंदन करता हूँ और अपनी अजेय सैन्यशक्ति का अभिवादन करता हूँ। इति शम्।

७८. जागरूकता बनी रहे

बाबू जगजीवनराम जी, २२ दिसंबर १९७१

रक्षामंत्री के नाते आपके नेतृत्व में अपनी सेना के तीनों विभागों ने अभिनंदनीय पराक्रम कर बाँग्लादेश मुक्त किया, वहाँ के लोगों को अपना जीवन स्वतंत्रता से बनाने का आश्वासनयुक्त सुअवसर प्राप्त कर दिया, यह घटना स्वर्णाक्षरों से अंकित करने योग्य है। प्रारंभ से ही आपने आत्मविश्वास का, निश्चित विजय का तथा जीत प्रदेश, जो कभी भारत का अंग रहा है, भारत के ही अंतर्गत रखने के निश्चय का उद्घोष कर देशभर में उत्साह और चैतन्य की प्रबल लहर उत्पन्न कर दी थी। अब यश-प्राप्ति के कारण आपके शब्दों की सार्थकता सिद्ध हुई है।

अभी संकट पूर्ण रूप से टला नहीं है। अतएव जागृत सैन्यबल और धैर्ययुक्त, सतर्क, संगठित उत्साही समाज– दोनों की अनिवार्य आवश्यकता है। अतः देश की सैन्यशक्ति अधिकाधिक बलवती होती रहे और राष्ट्र सुरक्षित तथा गौरवशाली बना रहे, इसकी ओर ध्यान देना आवश्यक है। आपके द्वारा यह जागरूकता बनी रहेगी, ऐसा मुझे विश्वास है।

अपने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की ओर से राष्ट्रशक्ति एवं मनोबल बनाए रखने के आपके सब प्रयत्नों में पूर्ण सहयोग का आश्वासन देते हुए आपका हृदय से अभिनंदन करता हूँ और अपनी विजयशालिनी सेना का अभिवादन करता हूँ। इति शम्।

७९. विविधता में एकत्व का साक्षात्कार

प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिराजी, नई दिल्ली   १८ जनवरी १९७२

आपका १३.१.१९७२ का पत्र आज प्राप्त हुआ। बहुत आभारी हूँ। राष्ट्र में एकता का भाव सदैव बना रहे, यह सत्य है। सबने अपना-अपना दायित्व जानकर, समझकर इसके लिए प्रयत्नशील रहना है।

भारत की जीवनधारा में विविधता में एकत्व का साक्षात्कार करना तथा तदनुरूप व्यवहार करना है। सबको एक ही ढाँचे में ढाल कर विविधता के सौंदर्य को, जीवमानता को, नष्ट करना नहीं है। इस तथ्य को ध्यान में रखकर सब चलें, यह कामना है। इस हेतु सबको सद्बुद्धि प्राप्त हो, यह परममंगलमयी श्री जगज्जननी के चरणों में प्रार्थना करता हूँ।

८०. नेपाल-नरेश अमर रहें

डा. तुलसी गिरि, काठमांडू, नेपाल   १४ अप्रैल १९७२

बहुत समय बीत गया, आपसे मिलने का अवसर नहीं प्राप्त हो सका। इस कालखंड में अनेक महत्त्वपूर्ण घटनाएँ घटीं। पूर्व बंगाल का प्रसंग सुख देनेवाला और अपने देश तथा जाति के गौरव को बढ़ानेवाला, सब जगत् के सामने उपस्थित है। भारत और उसके साथ शत्रुता करनेवाले पाकिस्तान नामक राज्य की विचारधाराओं में, भावनाओं में कितनी भिन्नता है, यह भी इस प्रसंग ने स्पष्ट किया। स्वार्थपूर्ति की आसुरी लालसा से प्रेरित होकर निरीह जनता पर नृशंस अत्याचार करनेवाला पाकिस्तान और किसी भी स्वार्थ को हृदय में प्रश्रय न देते हुए केवल पीड़ितों की सहायता के लिए कठोर परिश्रम और बलिदान में ही सुख पानेवाला भारत, पृथ्वी के मानवों के सम्मुख उपस्थित है। दोनों में से किसको श्रेष्ठ मानना, किसको मित्र के नाते अपनाना, किसको आदर की दृष्टि से देखना, इसका निर्णय सरल है और इस निर्णय से जगत् के छोटे-बड़े देशों की अंतःप्रवृत्ति कितनी शुद्ध या अशुद्ध है, इसकी परीक्षा होना भी सरल है।

ऐसे गौरवपूर्ण प्रसंगों का सुख, अनुभव करने के लिए उपस्थित हुआ। परंतु भगवत्सृष्टि में अभीप्सित सुख की योजना ही नहीं है। गंभीर दुःख का बहुत बड़ी मात्रा में मिश्रण होने से मन दोलायमान है। वह दुःख भारत की उत्तर सीमा में स्थित, देवतात्मा हिमालय की उपत्यका में विराजमान, भगवान श्री पशुपतिनाथ का क्रीड़ास्थल नेपाल के सार्वभौम स्वतंत्र हिंदूराष्ट्र के कर्णधार श्रीमन्महाराजाधिराज श्री ५ महेंद्र महाराज के इहलोक के जीवन का अकस्मात अल्पायु में समाप्ति से हो रहा है। यद्यपि श्रीमन्महाराजाधिराज के शरीर में हृदयविकार होने की पूर्वसूचना थी, तो भी यह आशा थी कि योग्य उपचार और विश्राम के द्वारा रोग का नियमन होगा और सुदीर्घ काल उनका मार्गदर्शन प्राप्त होता रहेगा, परंतु श्री भगवान की इच्छा अतर्क्य है। उसको कोई रोक नहीं सकता। अतः दुर्भाग्य से जो अपने लिए योग प्राप्त होते हैं, उन्हें भोगना ही पड़ता है। श्रीभगवान की कृपा से मनःशांति प्राप्त हो सकती है। इस कठिन दुःख को सहने की शक्ति प्राप्त हो सकती है। इस कारण परम कारुणिक श्री परमात्मा के चरणों में मैं प्रार्थना करता हूँ। The king is dead, long live the king ऐसा अंग्रेजी में कहते हैं। नेपाल के पवित्र राजसिंहासन पर अधिष्ठित आज तक के युवराज, अब श्रीमन्महाराजाधिराज नेपालेश्वर श्री वीरेन्द्रजी महाराज, पितृवियोग के दुःख को सहकर अपने राज्यपालन के पवित्र कर्तव्य में उत्तरोत्तर अधिक सफलता प्राप्त कर, अपने इस हिंदू राष्ट्र का नाम पूरे जगत् में गौरवान्वित करने में यशस्वी हों, इस हेतु भगवान श्री पशुपतिनाथ के पास अंतःकरणपूर्वक प्रार्थना करता हूँ। इस पवित्र कार्य में आप सबका पूरा सहयोग श्रीमन्महाराजाधिराज को नित्य की भाँति उपलब्ध होता रहेगा और नेपाल का प्रत्येक व्यक्ति सुखी, समाज वैषम्यहीन और देश बलगुणान्वित होगा, इस विश्वास से हृदय के शोक को दबाकर सबके कुशल-मंगल के लिए भगवच्चरणों में याचना कर रहा हूँ। इधर सब कुशल है। आपके परिवार की कुशल चाहता हूँ।

८१. राजाजी एक कुशल मार्गदर्शक

श्री रंगास्वामी तेवर जी, चेन्नै २६ दिसंबर १९७२

पूजनीय राजाजी के दुःखद निधन की जानकारी मुझे कल शाम को प्राप्त हुई। विगत कुछ दिनों से उनके बिगड़े स्वास्थ्य की बात सुन रहा था। आशा थी कि वे पुनः स्वस्थ होंगे और अपने परिपक्व मार्गदर्शन का लाभ

कुछ और वर्षों तक हमें देंगे। किंतु ऐसा होना नहीं था। हमने इन कठिन परिस्थितियों में अपना एक कुशल मार्गदर्शक खो दिया। किंतु ईश्वरीय न्याय के आगे नतमस्तक होकर विनम्रतापूर्वक मौन से ही दुःख सहना होगा। किंतु इसी विश्वास के साथ कि उनके विचार इस देश के वातावरण में हमें पवित्र भारतमाता के उज्ज्वल भविष्य की ओर बढ़ने की शक्ति देंगे। उनके पुत्रों को तथा कन्याओं को मेरी संवेदनाओं का निवेदन करें।

उनके समर्पित जीवन को देखते हुए, यह निश्चित है कि इस ऐहिक संसार के पार गई हुई उनकी आत्मा को चिरशांति एवं चिरंतन आनंद प्राप्त होगा।

८२. पूर्व उत्कल विधानसभा अध्यक्ष को श्रद्धांजलि

श्री अशोक दास जी, ऍडवोकेट जनरल, कटक 　　　　　　१६ नवंबर १६६७

आपके पूज्य पिताजी के स्वर्गवास की वार्ता पढ़कर अत्यंत दुःखी हुआ। उनके साथ दीर्घकाल तक मेरा संबंध रहा है। उनका साथ बिछुड़ जाने से ममत्व के उस प्रकाश और सुयोग्य मार्गदर्शन के लाभ से अब मुझे वंचित होना पड़ रहा है। ईश्वर इस दुःख में हमें धैर्य व मनःशांति दे और उनके जाने से आ:ई रिक्तता भरने का सामर्थ्य दे, यह प्रार्थना करना ही अब हमारे हाथ में है।

वे लंबे समय से अनेक व्याधियों से ग्रस्त थे। डाक्टरों के अथक प्रयत्नों को कोई सफलता प्राप्त नहीं हो रही थी। औषधि भी कोई परिणाम नहीं कर रही थी। उन्हें सदैव बिस्तर पर ही पड़े रहना पड़ता था। ऐसे वेदनामय जीवन से मुक्त कर भगवान ने उनको अपने पास बुलाया, इस विचार से ही कुछ समाधान प्राप्त हो सकता है। परलोक में इस महान आत्मा पर ईश्वर की कृपा रहे– यही ईश्वर से प्रार्थना।

अपने समाज में ऐक्य एवं एकात्मता को पुष्ट करना जन्म से ही हमारा कर्तव्य है। वह तो हमारा सहज कर्म है। और जो हमारा सहज कर्म है, वह यदि दोषपूर्ण भी प्रतीत हो, तो भी त्यागना नहीं चाहिए।
– श्री गुरुजी

प्रकरण – ४
अन्य मतानुयायियों को लिखे पत्र

१. किसी से विरोध नहीं

श्री एस.करीमबक्श जी, नेल्लोर — २ नवंबर १९६५

....आपका लिखा विचार अच्छा है। हम लोग किसी व्यक्ति से विरोध नहीं करते, न ही ऐसा मानते हैं कि किसी समाज में सब अच्छे या बुरे होते हैं, परंतु हम लोगों ने प्रथम अपने हिंदू समाज को चारित्र्यवान तथा कर्तव्यनिष्ठ संगठित रूप देने का काम प्रारंभ किया है। पहले अपना घर ठीक करो, फिर औरों को उपदेश दे सकोगे, ऐसा जानकार कहते हैं। इसी के अनुसार यह काम चल रहा है। इसी कारण आपसे व्यक्ति इस नाते प्रेम, बंधुभाव तथा आदर रखते हुए भी प्रत्यक्ष कार्य से आप जैसे सज्जनों को संबंधित नहीं कर रहे हैं। कुछ काल के पश्चात् यह सुयोग भी प्राप्त होने की हमें आशा है। उसी दृष्टि से अपने हिंदू-समाज में अपने कार्य को द्रुत गति से बढ़ाने का प्रयास चल रहा है।

आपके सद्‌भाव से अति संतोष का अनुभव करता हुआ आपको आंतरिक धन्यवाद देता हूँ।

२. भेद का विचार नहीं करते

श्री अनीस अहमद, — २५ नवंबर १९६५

....आपका प्रश्न बहुत ठीक है। इसका स्थायी और सुखकारक हल निकाला जाना आवश्यक है। आप यह निश्चित ध्यान में रखें कि केवल किन्हीं आकस्मिक कारणों से किसी को इस्लाम ग्रहण करना पड़ा तो उससे भेद या दूरता का विचार हम लोग नहीं करते। इसके संबंध में कभी आपसे मिलना हो सका तो अच्छा होगा। देखें कब यह सुअवसर आता है। तब

तक श्री प्रभु कृपा से आप स्वस्थ सकुशल रहें, विद्यार्जन में आगे बढ़ते रहें और अपनी शुद्ध भावना सुदृढ़ रखें।'

३. छोटे भाई की भलाई करने में कौनसी बड़ी बात

श्री एम.ए.कादरी लश्कर, ग्वालियर २ सितंबर १९६६

आपका पत्र आया, तब मैं प्रवास में था। मैं कभी उधर आया तो आपसे मिलने का आनंद प्राप्त होगा ही। आपकी परीक्षा पूरी होकर आप सफल होंगे, यह इच्छा है। आगे आप किस स्थान पर काम करेंगे, उसकी मुझे सूचना अवश्य भेजिएगा, जिससे मैं उस तरफ जब जा सकूँगा, आपको सूचित कर सकूँगा।

यदि हम लोगों के कारण आपको कुछ सहायता पहुँची हो, तो उसके लिए बहुत आभारी होने का कारण नहीं है। अपने से छोटे भाई की भलाई के लिए जो हो सके, करना ही चाहिए। उसमें कौन सी बड़ी बात है? शेष कुशल है। आपका कुशल चाहता हूँ।

४. पारसी विदेशी नहीं

श्री ए.एच.डाक्टर, औरंगाबाद ९ सितंबर १९६८

इस विषय में आपकी एवं मेरी कल्पनाएँ तथा विचार समान हैं। वस्तुतः मेरा विचार यही है कि मूलतः पारसियों तथा हिंदुओं की धार्मिक एवं दार्शनिक पृष्ठभूमि एक-सी ही है। भारत में आने के पश्चात् सदियों से वे हिंदुओं के साथ दैनंदिन व्यवहार के विभिन्न पहलुओं में इस तरह एकरूप हो गए हैं कि उन सबका उल्लेख 'हिंदू' नाम से एक ही वर्ग में करूँगा। हमारे देश में पारसियों को 'विदेशी' कहना तथा पारसी और हिंदुओं के मन में एक-दूसरे के प्रति संदेह है, यह कहना केवल गलत ही नहीं, अपितु अन्यायपूर्ण भी है, इस बात में मैं आपसे सहमत हूँ।

हम सब देश में ऐसा स्वस्थ वातावरण निर्माण करने के लिए एकत्र काम करें कि नीरद चौधरी का अन्यायपूर्ण वक्तव्य कितना असत्य है, यह सिद्ध हो सके।

(मूल अंग्रेजी)

५. ईश्वरभक्ति के सभी मार्ग आदरणीय

श्री क.र.खैरतखान, कराड, सातारा १२ मार्च १९६९

आपका पत्र मिला। बहुत आनंद हुआ। आपने जिन बाधाओं का उल्लेख किया है, उनके विषय में अनेक बार मैं अपने विचार प्रकट कर चुका हूँ। इधर अभी-अभी ११ फरवरी को पुणे के सार्वजनिक भाषण में भी मैंने ये विचार रखे हैं। तथापि संक्षेप में लिखता हूँ।

अपने देश में जो हिंदू धर्म के नहीं हैं, उनकी संख्या बहुत अल्प है। शेष मध्यंतर के काल में कुछ कारणों से अन्य धर्ममत में गए हैं। अपनी इस पूर्वपरंपरा की स्मृति रखकर स्वदेश भारत तथा उसकी जीवन-परंपरा का अभिमान जागृत रखें। देशबाह्य निष्ठा-भक्ति न रखें। केवल स्वयं के धर्ममत के अनुसार, धर्मस्थान देश के बाहर हों तो केवल उसके लिए ही उचित आदर रखें। इसे छोड़कर देशबाह्य निष्ठा न हो। फलस्वरूप सद्यःकालीन उपासना-पद्धति में परिवर्तन न करते हुए भी हिंदूराष्ट्र में सम्मान का, समानता का स्थान स्वाभाविकतया ग्रहण करें। उन्हें हीन समझना असंभव ही है, क्योंकि हिंदू तत्त्वज्ञान के अनुसार ईश्वरभक्ति के सभी मार्ग आदरणीय हैं।

इसके अतिरिक्त जिन्हें मध्यावधि में अन्य धर्म स्वीकारना पड़ा, वे स्वेच्छा से अपने पुरातन पूर्वजों की धर्मपरंपरा में लौटने वाले हों, तो उन्हें हीन समझना कैसे संभव है? यदि अपना कोई भाई कुछ कारणों से पृथक हो गया और वह पुनः घर लौट आया, तो वह कितने हर्ष का विषय होगा, इसका आपको ज्ञान है ही। इस प्रकार पुनः घर लौटा हुआ तथा घर का उत्तरदायित्व अपने कंधों पर लेकर घर की उन्नति के लिए अन्य बंधुओं के कंधे से कंधा लगाकर सिद्ध हुआ परिवार के घटक के नाते सब प्रकार से प्रेम, विश्वास तथा आदर का अधिकारी होगा, यह पृथक रूप से कहने की आवश्यकता नहीं।

जनसंघीय पद्धति से पददलितों के उद्धार की बात मुझे नहीं समझी। परंतु स्पर्शास्पर्शादि अनिष्ट व्यवहार समाप्त कर जिनकी आर्थिक, शैक्षणिक आदि स्थिति उत्तम नहीं है, उन्हें सब प्रकार से सहायता कर उन्नत कहलानेवाले वर्ग के समकक्ष लाकर खड़े करने का उनका संकल्प हो, तो उसे हम सब बंधु सहायता करें तथा कृत्रिम और अनिष्ट भेद नष्ट करने को प्रयत्नशील हों।

मेरे इस पत्र से आपके मन की शंकाओं का निवारण होगा, ऐसी आशा है। (मूल मराठी)

६. पवित्र पर्व से भगवान की भक्ति का स्मरण

श्रीमान् मुहम्मद रफी जी, दिल्ली ३ मार्च १९७०

ईद तथा होली के पावन पर्व के उपलक्ष्य में आपने बधाइयाँ प्रकट की हैं। वह पत्र तो १७-२-७० को ही आ चुका था। परंतु मेरे नागपुर में न होने के कारण उसकी स्वीकृति अब इतने विलंब से देनी पड़ रही है, जिसके लिए आप क्षमा करें।

सभी पवित्र पर्व, किसी भी मत के क्यों न हों, मानव मात्र को भगवान की भक्ति उत्कटता से करने का स्मरण करा देते हैं। उनमें कुछ विचित्र प्रथाएँ भी बन जाती हैं। परंतु उनसे मूल हेतु को ग्रहण करने से सबका कल्याण हो सकता है। आपके पत्र से यह शुद्ध भाव गोचर हो रहा है, जिसके लिए आपका हार्दिक अभिनंदन करता हूँ। शेष भगवत्कृपा।

७. नवदंपति का अभिनंदन

श्री अनवर अली देहलवी, दिल्ली ५ सितंबर १९७२

प्रिय बंधु चि. श्री आसिफ अली तथा उनकी नवविवाह-सूत्र में आबद्ध सहधर्मचारिणी चि. सौ. शाहीन सुलताना का स्वागत तथा अभिनंदन करने के लिए आयोजित कार्यक्रम का निमंत्रण आज मिला। बहुत आनंद हुआ। यद्यपि मैं प्रत्यक्ष उपस्थित नहीं हो सकता हूँ, नवदंपति के प्रति मेरी शुभकामनाएँ समर्पित कर उन्हें सब प्रकार से सुखी, समृद्ध, सुदीर्घ आयुरारोग्य प्राप्त हो, धर्म तथा राष्ट्र सेवा में उनकी नित्य उन्नति हो, इस हेतु परमकृपालु श्री भगवान से प्रार्थना करता हूँ।

इस आनंदपूर्ण समारोह में सम्मिलित होनेवाले सभी भाग्यवान महानुभावों को मेरा सादर नमस्कार।

८. डा. एस.जिलानी की मृत्यु पर संवेदना

डा. सुजित धर, कोलकाता २४ नवंबर १९७२

१७.११.७२ को हमारे मित्र डा.एस.जिलानी की मृत्यु के समाचार से मुझे बहुत बड़ा आघात पहुँचा। मुझे ज्ञात हुआ कि उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं था, अतः उन्हें उपचार हेतु अस्पताल ले जाना पड़ा। अक्तूबर के आखिरी सप्ताह तथा नवंबर के पहले तीन दिन मैं मुंबई में मेरे अन्य

साथियों से मिला, किंतु आश्चर्य की बात यह है कि आपसे तथा इन साथियों से मुझे कोई सूचना नहीं मिली।

घटना तो हो गई। अब मेरी तरफ से एक कर्तव्य निभाना बाकी है– शोकसंतप्त परिवार के सदस्यों, उनकी पत्नी तथा बच्चों से मिलकर अपनी संवेदना प्रकट करने का कर्तव्य।

परमेश्वर उनकी आत्मा को शांति तथा आशीर्वाद दे। उनके पुत्रों से पहले जैसे ही घनिष्ठ संबंध बने रहेंगे, यही मेरी आशा है।

९. सज्जनों की सदिच्छा से स्वास्थ्यलाभ

श्री मुहम्मद युसुफ, दिल्ली २ दिसंबर १९७२

आपकी भावनाओं के लिए मै कृतज्ञ हूँ। आपके समान सत्पुरुषों की शुभेच्छाओं के परिणामस्वरूप मेरा स्वास्थ्य प्रायः ठीक हो गया। गले में सूजन के कारण पानी का घूँट पीने से भी पीड़ा होने लगी थी। अब कोई कठिनाई नहीं है।

समाज के संबंध में यह भावना रखी गई है कि वह उस सर्वशक्तिमान का चतुर्दिक अभिव्यक्त स्वरूप है, जो सभी के लिए अपनी–अपनी क्षमता एवं पद्धतियों से पूजनीय है। यदि ब्राह्मण विद्यादान के द्वारा बड़ा हो जाता है तो शत्रुओं का नाश करने से क्षत्रिय भी समान प्रतिष्ठा को प्राप्त करता है। वैश्य भी कम महत्त्व का नहीं, जो कृषि और व्यापार के द्वारा समाज को सुस्थिर रखता है अथवा शूद्र भी कम नहीं है, जो अपने कला–कौशल से समाज की सेवा करता है। इन सबके परस्पर एक–दूसरे पर निर्भर रहने तथा साथ–साथ पारस्परिक तादात्म्य भाव से उस समाज व्यवस्था का निर्माण हुआ था। – श्री गुरुजी

प्रकरण – ५

माता-भगिनियों को लिखे पत्र

१. प्रचार-प्रसार, संख्यावृद्धि में जल्दबाजी न करें

कु. कला और कु. शीला, हैदराबाद (सिंध) २२ दिसंबर १९४३

....श्री राजपाल पुरी के द्वारा प्राप्त एक पत्र से मुझे पता चला कि राष्ट्र सेविका समिति की शाखा हैदराबाद में प्रस्थापित हुई है। आपके पत्र से उसकी विस्तृत जानकारी भी प्राप्त हुई। मुझे यह जानकर खुशी हुई कि शाखा की स्थापना का विचार मन में क्षीण न होने देते हुए आपने प्रत्यक्ष प्रयास कर कार्य आरंभ किया है। अपने विचार-विनिमय में जो माताएँ उपस्थित थीं, उनके द्वारा कार्य आरंभ करते समय कितनी आस्था प्रकट हुई होगी, मैं नहीं जानता। कार्य का सही विचार एवं आवश्यक कार्यवाही के विषय में लोगों की अनुकूल मानसिकता निर्माण करना सचमुच कठिन है। परंतु काम के बारे में मैं युवा पीढ़ी पर अधिक निर्भर हूँ और मुझे विश्वास है कि वे इस कार्य को भली-भाँति समझकर उसे भक्तियुक्त अंतःकरण से तथा निष्ठा से करते हुए सफलीभूत अनुभव कर सकेंगे। कार्य के प्रचार-प्रसार एवं संख्यावृद्धि में हम जल्दबाजी न करें। आप जैसे कार्यनिष्ठों का एक छोटा सा समूह प्रारंभ में निर्माण करने की ओर हम ध्यान दें। ऐसा समूह निर्माण होने पर आपके मन में भी सही मनोधारणा के साथ अधिक संख्या में अपने परिचितों से कार्य के साथ संलग्न करने का विश्वास बढ़ेगा। इस प्रकार कार्यवृद्धि का प्रयास ठीक होगा। कार्य के प्रति निष्ठा की गहराई और संख्या में वृद्धि साथ-साथ होनी चाहिए। आपके कार्य का मुख्य कार्यालय वर्धा में है। वहाँ आपका पत्र मैं भेज रहा हूँ। श्रीमती लक्ष्मीबाई केलकर, जो प्रमुख संचालिका हैं, से पत्र-व्यवहार कर आप संपर्क प्रस्थापित करें।

(मूल अंग्रेजी)

२. मैं एक सामान्य मनुष्य हूँ

कुमारी वत्सला मोडक, मुंबई २३ नवंबर १९४९

'मुक्ति' का अर्थ क्या है और उस अवस्था का रूप क्या है, इत्यादि बातों के संबंध में कुछ विद्वानों के लिखे हुए शब्दों के अतरिक्त मुझे कुछ भी ज्ञान नहीं है। मैं एक सामान्य मनुष्य के नाते इस व्यावहारिक जगत् में विचरता हूँ। संघकार्य में मनुष्य अपना चारित्र्य निर्माण कर सकता है और बहुत बड़े प्रमाण में क्षुद्रता पर विजय प्राप्त कर सकता है, यही मेरा अनुभव है। मुझे इतना ही कहना है। जातिभेदों के विषय में भी वही बात है। उस विषय में मैं कुछ भी नहीं सोचता हूँ। उसका कारण है समाज-धारणा के लिए यदि आवश्यक हो तो वह रहेगा। समाज के हर व्यक्ति में समाजहित की व्यापक भावना निर्माण करना हमारा कार्य है। समाजहितैषी सब व्यक्ति जातिव्यवस्था रखना चाहें तो वह रहेगी। वे उसे समाप्त करना चाहें तो वह समाप्त होगी। अथवा अन्य किसी को समाज के सिर पर कुछ लादना योग्य कैसे होगा?

....संघ केवल हिंदुओं के लिए ही कार्य कर रहा है, यह सत्य है। उनकी संस्कृति उनके हृदय में जगाकर उनका जीवन उच्च, श्रेष्ठ तथा समर्थ बनाना ही संघ का कार्य है। अखिल मानव समाज को सुसंस्कृत करना कम से कम आज संघ का कार्य नहीं है। (मूल मराठी)

३. हम सब आपके पुत्र हैं

४ दिसंबर १९४९

आदरणीय माताजी, (स्व. श्री वसंत हरि पेंढरकर की माता)

आपने अपने दिवंगत पुत्र वसंत हरि पेंढरकर के स्मरणार्थ जो अष्टक रचा है, उसकी एक प्रति मेरे पास श्री मनोहर गणेश देवधर जी ने भेजी। वह प्राप्त हुई। अष्टक पढ़ा। हृदय में उमड़नेवाले कारुण्य रस का पूर्ण प्रभाव उसमें है। उसमें भी जो वसंत का संघप्रेम प्रकट हुआ है, वह तो हृदय को गद्‌गद कर देता है। इन विशुद्ध तथा उत्कट प्रेम भावनाओं को देखकर क्या लिखूँ, कुछ सूझता ही नहीं।

केवल इतना ही लिखता हूँ कि हम सब आपके ही पुत्र हैं। हम सब चिरंजीव वसंत के ही अगणित रूप हैं, ऐसी आपकी धारणा रहे। आप हमें सदैव अपना आशीर्वाद देती रहें, जिससे हमें अपनी कर्तव्यपूर्ति के लिए सामर्थ्य प्राप्त होता रहेगा।

(मूल मराठी)

४. भगवान रामकृष्ण को समझना कठिन

कु. वत्सला मोडक, मुंबई　　　　　　　　　　　　३० जनवरी १९५०

....इसके पूर्व के पत्र में मैंने लिखा था कि मैं एक सीधा-साधा व्यावहारिक विश्व में विचरनेवाला व्यक्ति हूँ। बड़ी-बड़ी तत्त्वज्ञान, मोक्ष विषयक बातों का आकलन करना मेरे लिए कठिन ही है। उसमें भी जब भगवान श्रीरामकृष्ण का उल्लेख आता है, तब मेरी मति कुंठित हो जाती है। उन्हें तथा उनके वचनों को समझनेवाले बहुत कम लोग हैं। फिर, उनके वचनों के अनुसार आचरण करनेवाले तो और भी कम हैं। उस प्रकार आचरण कर जीवन के मूल की अनुभूति प्राप्त करनेवाले तो अत्यल्प ही हैं। हम उन्हें उंगलियों पर गिन सकें, इतने कम हैं। तब उनका उपदेश मेरी समझ में कैसे आ सकता है?

इसीलिए मैं व्यवहार की ओर ध्यान देता हूँ और उसमें जो गुण मुझे आवश्यक प्रतीत होते हैं, उनकी ओर ही ध्यान देने का प्रयास करता हूँ। इसमें जिन्हें जीवन का अंतिम उद्देश्य आदि का विचार करना संभव हो सके, वे उसका अवश्य विचार करें। मेरे इस व्यावहारिक कार्य के द्वारा वह सधेगा अथवा नहीं सधेगा इसका भी विचार केवल वे लोग ही कर सकेंगे। अतः ऐसे गहन विषय के संबंध में भला मैं अधिक क्या लिखूँ?

(मूल मराठी)

५. मेरा कार्य

कु. मुक्ता देशपांडे, मुंबई　　　　　　　　　　　　३१ अगस्त १९५०

सब शाखाओं में, विचारों में तथा कृति में एकसूत्रता रखने के लिए सब स्थानों पर जाकर सबके विचारों को समझकर, उनका समन्वय करते हुए सबको समान रूप से वे विचार आकलन हों, इस दृष्टि से उन्हें कहनेवाले की आवश्यकता रहती है। ऐसी योजना रहने पर प्रत्येक के विचारों को योग्य स्थान भी प्राप्त होता है और कार्य के अंतर्गत विरोधमय विविधता निर्माण नहीं होती। फिर कार्य सुव्यवस्थित ढंग से और अबाध गति से चलता है। इस समय यह समन्वय साधने की जिम्मेदारी जिनके ऊपर है, उनमें मेरी भी गणना की जाती है।

(मूल मराठी)

६. निष्कलंक चारित्र्य अमूल्य अलंकार

वी.एस.राजलक्ष्मी देवी, तिरुची १८ नवंबर १९५०

आपकी इच्छा के अनुसार मैं आपको क्या उपदेश दूँ? हम सबको अपने व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन को आदर्श बनाने के लिए परिश्रम करना चाहिए। व्यक्तिगत जीवन में निष्कलंक चारित्र्य ही सबसे अमूल्य अलंकार है। मैं तो कहूँगा कि यही धारण करना एवं साध्य करना चाहिए। सामाजिक जीवन में निःस्वार्थ सेवावृत्ति महत्त्वपूर्ण है। महापुरुषों ने यही कहा है, मैंने केवल उनके शब्दों की पुनरुक्ति की है।

(मूल अंग्रेजी)

७. विद्यार्थी जीवन का आदर्श प्रस्तुत करें

उमा वर्मा, जबलपुर १६ दिसंबर १९५०

पढ़ाई की ओर आपका दुर्लक्ष्य होना उचित नहीं। उत्तम कार्य तो उसी से हो सकता है। जिसे अपनी अनेक जिम्मेदारियाँ ठीक प्रकार से सँभालनी हैं। कार्य करते समय समाज में जिनसे संपर्क आकर रहना होता है, वे याने अपने परिवार के, पड़ोस के तथा यदि किसी शाला आदि में पढ़ना चल रहा हो, तो उसके अधिकारी तथा सहाध्यायी इन सबसे उत्तम व्यवहार कर जीवन के इन सब पहलुओं में आदर्श खड़ा करना आवश्यक होता है। इस दृष्टि से अच्छा विद्यार्थी-जीवन आवश्यक है, याने परीक्षा में अच्छी प्रकार उत्तीर्ण होना और तदर्थ नियमित पढ़ाई करना आवश्यक है।

८. जीवन का एक वर्ष बीत गया

कु. इंदु, चेन्नै

१६ फरवरी १९५१

आज के दिन मेरे मन में विचार आ रहा है कि एक और वर्ष बीत गया, अभी तक ध्येयप्राप्ति नहीं हुई। इस विचार के बोझ से मैं चिंतित हूँ, तथापि हमें दुगने उत्साह से कार्य करना है। हमारी महान भारतमाता पूर्ण वैभव से शोभायमान हो, सारी दुनिया के लोग उसकी पूजा करें, यही हमारा ध्येय है।

(मूल अंग्रेजी)

९. दांपत्य जीवन परस्पर पूरक हो

कु. मुक्ता देशपांडे, मुंबई   १८ जून १९५१

तुम्हारा नवजीवन उत्तम रहे। दांपत्य जीवन में एक दूसरे के मन को समझकर व्यवहार करना चाहिए। आपस में एक दूसरे के पूरक बनकर जीवन उपयुक्त तथा सुखमय बनाना चाहिए। गृहस्थ जीवन श्रेष्ठ माना गया है। वही समाज का भरण-पोषण करनेवाला है। वह एक महत्त्वपूर्ण सामाजिक कर्तव्य है, केवल भोगपूर्ति का साधन नहीं। इसका ध्यान रखकर व्यवहार करने से जीवन सुख-समाधान से युक्त बनता है। इसी से आवश्यकता के अनुसार समाजसेवा की प्रेरणा की प्राप्ति हो सकती है। आप दोनों ही इस प्रकार विचार कर, स्वकर्तव्य पूर्ति का आदर्श-जीवन निर्माण करेंगे, ऐसी मुझे आशा है। परमेश्वर की कृपा से आपको ऐसा जीवन और सब प्रकार का सुख प्राप्त हो।

(मूल मराठी)

१०. नाम से काम श्रेष्ठ

सौ. शकुंतलाबाई नानल, पुणे   १२ दिसंबर १९५२

नवीन बालक का नाम क्या रखा जाए, इस विषय पर बहुत विचार हुआ। आजकल नाम रखने की प्रबल इच्छा विविध प्रकार से प्रकट होती है। पुणे की ओर नाविन्य बहुत है। इधर भी कुछ कम हो, ऐसी बात नहीं है। परंतु अपने परिवार पर उसका खास प्रभाव नहीं है। अतः नवीनता की उमंग पूरी होगी ऐसा नाम सूझना असंभव है। परंतु आपने नाम सुझाने के लिए लिखा है, इसलिए हम लोगों ने उस पर विचार किया। 'मार्तंड' यह नाम सम्मुख आया। वह यदि नहीं जँचा, तो 'मायेश' नाम का भी एक सुझाव आया है। इनका विचार करें। ये यदि आपको पसंद न हों, तो जो भी आप सब लोगों को भाएगा, वही नाम रखें।

नाम में क्या धरा है, ऐसा कुछ लोग कहते हैं। परंतु वह पूर्णतः ठीक नहीं है। नाम की अपेक्षा, व्यक्ति का कर्तृत्व, गुण आदि बातें अधिक महत्त्व की रहा करती हैं। विश्वविख्यात विज्ञानशास्त्रज्ञ आईन्स्टीन अपने गुणों से श्रेष्ठ बना, अन्यथा उसके नाम का सीधा-सादा अर्थ 'एक पत्थर' ही है। इस सम्बन्ध में वहाँ के सब लोग मिलकर निश्चित करें।

(मूल मराठी)

११. उच्चतर विचार करें

कु. इंदु, चेन्नै ११ अप्रैल १९५३

यह स्पष्ट है कि आप अंतर्द्वंद्व का अनुभव कर रही हैं। दुनियादारी में हम इतने उलझे रहते हैं कि अपनी इच्छा के अनुसार अभिव्यक्ति नहीं हो पाती है, तथापि हमें स्वतः को पराभूत नहीं होने देना चाहिए। हमें अधिक तीव्रता से उच्च और उच्चतर विचार करते हुए, हमारे आसपास के हर व्यक्ति तक अपने सद्‌विचार प्रस्फुरित करने चाहिए। धीरे-धीरे हमारे सद्‌भाव कृतिरूप में सुफलित होंगे।

मैंने जो कुछ भी लिखा, वह थोड़ा सा गूढ़ लगेगा, ऐसा मुझे लगता है। किंतु आप जैसी कुशाग्र बुद्धि के लिए इसका भावार्थ ग्रहण करने में कठिनाई नहीं होनी चाहिए।

(मूल अंग्रेजी)

१२. परदेशगमन असंभव

चि.सौ. उषा कमलाकर जोशी, शिराले १९ जुलाई १९५५

परमेश्वर की कृपा से आपके घर आने का मेरा संकल्प कभी न कभी अवश्य पूर्ण होगा। वह शीघ्र पूर्ण हो, ऐसा प्रयत्न करूँगा, क्योंकि आपके इस वास्तविक जीवन का आनंदमयरूप निकट से देखूँ। आप दो अब एकरूप हुए हैं, एकसाथ गृहस्थकर्म का उत्तरदायित्व निभा रहे हैं, आत्यंतिक सुख का अनुभव पा रहे हैं। यह सब प्रत्यक्ष देखूँ, ऐसी मेरे मन में तीव्र इच्छा है।

आप रंगून कब जा रहे हैं, यह पत्र में स्पष्ट नहीं किया है। वहाँ मेरे परिचय के कुछ मित्र हैं। यथावकाश उनके पत्र भी आते हैं। कभी किसी प्रसंगवश इच्छा होती है कि मैं भी वहाँ जाऊँ और सब मित्रों से मिलूँ। परंतु यहाँ कार्य का इतना बड़ा पहाड़ खड़ा है कि उसे टाल कर अन्यत्र जाने को मन नहीं करता। इसीलिए तो अनेक देशों में मेरे निकट परिचय के लोग होते हुए भी पत्र के द्वारा अथवा उनके भारत में आने पर ही उनसे मिलने का सुख मुझे प्राप्त हो सकता है। अतः आपसे मिलने का सुअवसर मुझे इस भू-प्रदेश में ही प्राप्त करना होगा, ऐसा लगता है।

आपके जीवन के भाग्यवान सहकारी श्री कमलाकर जोशी जी को स्मरणपूर्वक मेरे प्रणाम कहिए। (मूल मराठी)

१३. घर सँभालना भी एक कर्तव्य

चिरंजीव सौभाग्यवती मुक्ता सरदेसाई, २८ जनवरी १९५६

स्वयं के बारे में ऐसा न सोचें। इसमें से ही अच्छे प्रकार के कर्तृत्व के लिए मार्ग उपलब्ध होगा। गृह सँभालकर कर्तृत्व नहीं प्रकट किया जा सकता है, ऐसी तो कोई बात नहीं है। घर की ओर दुर्लक्ष्य न करना एक बड़ा कर्तव्य है। उसमें मग्न होने पर कुछ काल तक अकर्मण्यता का आभास निर्माण हो सकता है। परंतु उस कारण से ऊब जाना अथवा बहुत अधिक दुःख करना ठीक नहीं है। (मूल मराठी)

१४. राष्ट्रसेविका समिति का कार्य

कु. इंदु, चेन्नै २१ जून १९५६

अब तक समिति का कार्य भी पुनः प्रारंभ हो गया होगा। अनेक बाधाएँ होते हुए भी स्थिरता के साथ समर्पण भाव से कार्य करनेवाली महिलाओं को खोजकर, उनके माध्यम से आदर्श नारीत्व का निर्माण करने का प्रयत्न करना होगा। स्त्रियों की अनेक संस्थाएँ कार्य करती हैं, किंतु ऐसा दिखता है कि कुछ स्त्रियाँ हमारी अमर संस्कृति के दृढ़मूल बंधनों से तथा जीवन-मूल्यों से नाता तोड़कर इधर-उधर भटक रही हैं अथवा कुछ स्त्रियाँ केवल सेवा का प्रदर्शन कर ढोंग करती हैं। मानव की अथवा विशेष रूप से बाह्य आडंबर की नारी-प्रकृति के वशीभूत होकर कुछ स्त्रियाँ उसकी पूर्ति करती फिरती हैं। इन दोषों को टालकर, अपनी संस्कृति की दृढ़ता तथा उसके आदेश के अनुसार मजबूत संगठन बनाने पर लक्ष्य केंद्रित करना होगा। जिसका आधार है समर्पण भावयुक्त शुद्ध जीवन। अध्यवसाय से तुम्हें इस कार्य में इतना यश मिलेगा, जो विश्वविद्यालय की परिक्षाओं से भी अधिक होगा, ऐसी आशा करता हूँ। (मूल अंग्रेजी)

१५. चुनावबाजी को ही देशसेवा मानना गलत

सौ. कुसुमलक्ष्मी नाईक, वाशिम १ मार्च १९५७

....मेरा चुनावों से संबंध नहीं है। अतः कौन कहाँ से खड़ा है आदि बातों के संबंध में मैंने कभी पूछ-ताछ नहीं की। श्री दत्तोपंत नाईक जी वाशिम स्थान से खड़े हैं, यह प्रथमतः आपके पत्र से अभी ज्ञात हुआ।

.......उन्होंने आज तक मुझे अपने विचारों का पता भी नहीं लगने दिया। अतः मैंने ऐसा समझ लिया है कि मेरे आशीर्वाद का उन्हें कुछ मूल्य प्रतीत नहीं होता।

फिर भी आशीर्वाद देने में मेरा कुछ भी खर्च नहीं होता है। मेरे पास भिन्न-भिन्न पक्षों के जो भी लोग आशीर्वाद के लिए आए, उन्हें मैंने आशीर्वाद दिए। उसी समय मैंने अपनी पक्षनिरपेक्ष भूमिका सबको समझा दी। सूर्य सब को प्रकाश देता है। चाहे सत्प्रवृत्त व्यक्ति पास में आए, चाहे दुष्प्रवृत्त। वृक्ष सब को समान रूप से अपनी छाया देता है। उसी प्रकार मेरे आशीर्वाद भी सबके लिए हैं, अर्थात् अपने-अपने पुण्य के भरोसे, कर्तव्य के भरोसे, जागृत लोक-संग्रह करने के गुणों के भरोसे ही हरेक को यशापयश प्राप्त होगा। जिन्हें यश की प्राप्ति होगी, उनके अभिनंदन हेतु मैं परमेश्वर से प्रार्थना करूँगा, और जिन्हें अपयश प्राप्त होगा, उनकी सांत्वना करने के लिए भी मैं परमेश्वर से प्रार्थना करूँगा।

अर्थात् सब के साथ मैं श्रीमान् दत्तोपंत का भी अभीष्टचिंतन करता हूँ। परंतु चुनाव में खड़े रहने तथा विधानसभा अथवा तत्सम अन्य संस्थाओं का सदस्यत्व प्राप्त करने पर ही देशसेवा हो सकती है, देशसेवा करने के अधिक श्रेष्ठ और पवित्र मार्ग नहीं हैं, यह धारणा गलत है। चुनावों के मार्ग से अलिप्त रह कर, ठोस राष्ट्रसेवा करने के विशुद्ध तथा चिरपरिणामकारी मार्ग का अवलंब करते हुए, उस हेतु तन-मन-धन लगाते हुए, एक आनुषंगिक कार्य के नाते अथवा बाह्य दृष्टि से सहयोग करने के नाते कोई क्वचित् कभी चुनाव का मार्ग अपनाता है, तो वह अपवाद के रूप में चल सकता है। परंतु चुनावबाजी को ही देशसेवा मानना केवल गलत ही नहीं, अपितु राष्ट्रोन्नति के लिए हानिकर है, इस बात को स्पष्टतः ध्यान में रखकर श्री दत्तोपंत अपना व्यवहार करें, उनके एक चिरपरिचित हितचिंतक के नाते, हृदय से ऐसा प्रतीत होता है। (मूल मराठी)

१६. संस्कार को व्यवहार में लाना आवश्यक

सौ. मुक्ता सरदेसाई, मुंबई २६ जून १९५८

....निष्क्रियता तो अनेकों में आती है। परिस्थिति के अधीन हो जाने से ऐसा हो जाता है। दोनों ने मिलकर इसका उपाय खोजना चाहिए तथा अपने-अपने क्षेत्र में थोड़ा क्यों न हो, उद्योग करना चाहिए। बचपन

से अत्यंत उत्कटता से सँजोया हुआ ध्येय तथा तद्विषयक कार्यजन्य संस्कार आप दोनों की स्मृतियों में विद्यमान हैं। उसे प्रत्यक्ष व्यवहार में उतारना आवश्यक है। कोई भी बात कभी व्यर्थ नहीं जाती, यह सत्य है। परंतु स्वेच्छा से स्फूर्तियुक्त उद्योग से परिस्थिति का उपयोग करना तथा उसे इस दिशा में ले जाना ही सर्वकाल श्रेयस्कर है।

अब तुम कहोगी, यह लगा उपदेश करने। परंतु अपना मार्ग उपदेश करने का है ही नहीं। एक-दूसरे के मन में उद्भूत विचार एक-दूसरे के सम्मुख प्रकट करना, उनका आदान-प्रदान करना, फलतः स्वकर्तव्य में अधिकाधिक जागृति के साथ निमग्न हो जाना, यही हमारी कार्यपद्धति है। अतः जो भी मुझे सूझा, मैंने लिख दिया। यह भी केवल तुम्हारे अकेली के लिए नहीं है। तुम दोनों के लिए है। विकसनशील पीढ़ी को अपने उदाहरण के द्वारा योग्य संस्कार देना तुम्हारा स्वाभाविक कर्तव्य ही है।(मूल मराठी)

१७. उपचार में वैद्यकीय परामर्श महत्त्वपूर्ण

चि. सुधा देवधर, अहमदाबाद २० नवंबर १९५८

तुमने परीक्षा में उत्तम यश प्राप्त किया, यह पढ़कर आनंद हुआ। काम भी संतोषजनक चल रहा है, यह भी संतोष की बात है।

तुमने जिन प्रसंगों का वर्णन किया है, उनसे संभ्रमित होने का कोई कारण नहीं। अंडे खाने न खाने पर धर्म अवलंबित नहीं। डाक्टरी सलाह का पालन आवश्यक है। शरीर को धर्मपालन के लिए ही सुरक्षित रखने के लिए आपद्धर्म के नाते उपाय अपनाने में दोष नहीं, ऐसा अपने शास्त्रों का कथन है। जिह्वलौल्य के लिए ये चीजें खाना और बात है, परंतु वह रुग्ण महिला को उपचार हेतु देना दूसरी बात है। दोनों में महदन्तर है, यह तुम्हारे ध्यान में नहीं आ सका, यह आश्चर्यजनक है। तथापि इन वितंडाओं में न पड़ते हुये स्वकर्तव्य कर अपनी देखभाल में रहने वाले रोगियों को शरीरस्वास्थ्य के साथ-साथ शुद्ध भक्ति और श्रद्धा प्राप्त होगी, ऐसा सहजता से करते रहें। (मूल मराठी)

१८. महान क्रांतिकारक बारींद्र घोष को श्रद्धांजलि

२१ अप्रैल १९५९

श्रीमती बारींद्रबाबू घोष,

आपके महान जीवनसाथी श्री बारींद्रबाबू घोष के परलोक गमन

का वृत्त कल के समाचार पत्रों में पढ़ा। देश ने एक महान सुपुत्र खो दिया। उनका व्यक्तित्व इतना महान था कि दुनिया के निम्नस्तरीय लोग उनकी कदर नहीं कर सके। मुझे संदेह नहीं कि समय बीतने के बाद उनके विषय में लोगों की गलत सोच तथा वर्तमान संभ्रम दूर होकर वातावरण शुद्ध होगा। आनेवाली पीढ़ियाँ उनकी महानता तथा निःस्वार्थ सेवा को जानकर उनकी अमरस्मृति में अपने श्रद्धासुमन अर्पण करेंगी।

आप पर बड़ी आपत्ति आई है। परंतु उच्च आध्यात्मिक साक्षात्कारी महापुरुष की आप अर्धांगिनी हैं तथा आप स्वयं भी महान तथा आध्यात्मिक दृष्टि से संपन्न हैं। अतः धैर्य तथा मानसिक शांति आपके स्वाभाविक गुण हैं। मुझे विश्वास है कि आत्मबल से आप इस आपत्ति का सामना कर आधुनिक पीढ़ी के अधिक सुंदर एवं सुसंस्कृत जीवन के लिए, मार्गदर्शन करेंगी। (मूल अंग्रेजी)

१९. राखी मातृशक्ति का आशीर्वाद

श्रीमती लक्ष्मीबाई केलकर, वर्धा (विदर्भ) ३ सितंबर १९५९

रक्षाबंधन के दिन आपका भेजा हुआ पत्र एवं राखी प्राप्त हुई। संघ स्वयंसेवकों को आपकी ओर से राखी प्राप्त होना, याने मातृशक्ति का विजयशाली आशीर्वाद ही प्राप्त होना है। इसलिए कृतज्ञता से मैं नमस्कारपूर्वक आपका आभार मानता हूँ। (मूल मराठी)

२०. पढ़ो और सुयोग्य बनो

कु. इंदु, चेन्नै

१२ अक्तूबर १९५९

पढ़ो और अधिक गुणवत्ता प्राप्त कर सुयोग्य बनो। आवेशपूर्ण भाषा में लेखन करने की तुम्हारे पास नैसर्गिक शक्ति है। उसका पूर्णतः उपयोग करके विकास करना होगा। तुम जानती ही होगी कि लेखक या वक्ता के जीवन का आधार समुचित हो, तो उसके शब्दों को सच्चा अर्थ प्राप्त होता है। सद्भाग्य से जो कार्य तुमने चुना है, उसमें अधिक तत्पर रहो।

मेरे खराब हस्ताक्षर के लिए क्षमा, वे बिगड़ते ही जा रहे हैं।मा. वी.राजगोपालाचार्य जी तथा अन्य मान्यवरों को मेरा प्रणाम। (मूल अंग्रेजी)

२१. स्थिर आधार पर कार्य खड़ा हो

श्रीमती सिंधुताई फाटक, दिल्ली   १५ अगस्त १६६०

आपका जम्मू से लिखा हुआ पत्र प्राप्त हुआ। यह सत्य है कि कार्य बढ़ सकता है। मुझे लगता है कि उसमें परिस्थिति की प्रतिक्रिया अधिक है। उसमें से मार्ग निकालना होगा। भावना की दृढ़ता तथा स्थैर्य निर्माण करना आवश्यक है, तथापि हमें प्रयत्नशील रहना होगा। प्रतिक्रियात्मक तात्कालिक आवेश से मुक्त कर स्थिर विचार तथा स्थिर भावनाओं के आधार पर कार्य खड़ा करना होगा। सतत प्रयत्न करने पर ही यश की प्राप्ति होती है, यह तो ईश्वरीय संकेत ही है।

कार्य का पथ्यापथ्य आप जानती ही हैं। अतः दिल्ली से भी यदि सहायता प्राप्त हुई, तो भी उसे बहुत फूँक-फूँककर स्वीकारना होगा। उत्साह के आवेश में अनेक बार सारासार विचार दब जाता है। व्यक्तियों का चुनाव कभी गलत भी साबित हो सकता है।

...नागपुर के गुरुदक्षिणा उत्सव के अध्यक्ष नागपुर विद्यापीठ के राजनीतिशास्त्र के प्राचार्य डा. देशपांडे जी थे। उनका भाषण उत्तम रहा। ठीक हमारे ही विचार, परंतु निजी स्वतंत्र अध्ययन के आधार पर उन्होंने प्रकट किए। रहन-सहन, उद्योग व्यवसाय आदि बातों की दृष्टि से जो दूरस्थ प्रतीत होते हैं, वे यदि सचमुच विवेकशील हैं, तो किस प्रकार समान विचार रखते हैं, उसका एक उत्तम उदाहरण उनके भाषण से उपस्थित हुआ, ऐसा हम कह सकेंगे।

डाक्टर आबा तथा अन्य अनेक सहयोगियों के आग्रह के कारण बाध्य होकर मुझे उपचारों के लिए तथा विश्राम-योजना के लिए मान्यता देनी पड़ी। मेरा शरीर स्वस्थ है। अतः आपकी अथवा अन्य किसी बंधुभगिनी की मेरे लिए अपना आयुष्य प्रदान करने की कोई भी आवश्यकता नहीं है। अपने-अपने ढंग से सब ही कार्य करते रहते हैं। उनमें से एक का आयुष्य दूसरे को देने का अर्थ है, एक भूखे को भोजन के लिए दूसरे को क्षुधार्त रखना और मारना। उस दृष्टि से देखा जाए तो आपको कितनी भी सदिच्छा क्यों न हो, अपने आयुष्य की कालमर्यादा दूसरे को दान करना उचित नहीं होगा। श्री परमेश्वर की कृपा से आपके कार्यक्षेत्र में अधिकाधिक यश आपको प्राप्त हो। एतदर्थ आपकी कार्यशक्ति वर्धमान होती रहे।

श्री परमेश्वर पर जो विश्वास रखता है, उस पर स्वयं के बारे में निराश होने का अवसर नहीं आता, न उसे कभी आत्म-अवज्ञा करनी

पड़ती है। ईश्वरनिष्ठों में यह सब नहीं होना चाहिए। निरलस, ध्येय वृत्ति से कार्यमग्न रहना अपने हाथ में है। हमारी क्षमता है या नहीं, इत्यादि विचार किए बिना कार्यरत रहना आवश्यक है। जिसके मन में कुछ लालसा हो अथवा स्वार्थसिद्धि के लिए जो कृति करता हो, वह अपनी क्षमता के बारे में सोचे। हम तो अदृष्ट शक्ति की प्रेरणा से अकस्मात ही एक बड़े दायित्वपूर्ण कार्य में उपस्थित हैं। अतः हमारी क्षमता को आँकना, क्षमता कम हो तो उसे बढ़ाना, आदि कार्य उस शक्ति का है। उसके लिए हम क्यों व्यथित बनें? (मूल मराठी)

२२. पुण्यक्षेत्रों का बाहरी वायुमंडल बाधक

सौभाग्यवती मुक्ता सरदेसाई, पंढरपुर — १४ जनवरी १९६१

अनेक पुण्य क्षेत्रों में बाह्यांगदर्शन से मन में औदासीन्य निर्माण होता है। परंतु बाह्यांग से मन हटाकर देखने पर अतिभव्यता की अनुभूति होकर अनेक पीढ़ियों का संकलित माँगल्य असीम सुख देता है। इस अनुभूति में बाहरी वायुमंडल की सहायता तो दूर रही, बाधा ही होती है– यह सत्य है और अपने समाज-जीवन का यह दुर्भाग्य है।

चि. शैलेश के उपनयन का पवित्र संस्कार सद्भाग्यपूर्ण सिद्ध हो। शरीरबल, विशुद्ध चारित्र्य एवं ज्ञानसमृद्धि प्राप्त करने हेतु निरंतर प्रयत्नरत रहने का सद्गुण उसमें निर्माण हो। भविष्य में अपने राष्ट्र का एक दृढ़निश्चयी निरलस, स्वार्थशून्य सेवक इस नाते सफल जीवनयापन करने की आकांक्षा उसके हृदय में नित्य विद्यमान रहे, इसलिए श्री परमेश्वर के चरणों में प्रार्थना करता रहूँगा।

संघ पर आई आपत्ति विशेष चिंता करने योग्य नहीं मानना चाहिए। इस देश में स्वार्थी एवं अविवेकी नेताओं के कारण ऐसा ही चलेगा। इसी में से कुछ समय मार्गक्रमण कर भविष्यकाल में श्रेष्ठ राष्ट्रजीवन की निर्मिति देखने की अभिलाषा है। (मूल मराठी)

२३. सांत्वना

श्रीमती रुक्मिणी कुप्पण्णा, सेलम — २० मार्च १९६१

आदरणीय माताजी,

सेलम के कार्यकर्ता श्री शिवाराम के पत्र से पूज्य श्री कुप्पण्णा जी

के निधन का समाचार पत्रद्वारा मिला। इस शोकाकुल अवस्था में सांत्वना पर लिखना मेरी शक्ति के बाहर है। मैं परमदयामयी जगज्जननी माँ से यही प्रार्थना करता हूँ कि इस भीषण आघात को सहन करने के लिए वह आपको मनःशांति तथा धैर्य दे। पुण्यस्मरणीय पिताजी से आपने वेदांतप्रणीत मनःसंतुलन पाया है और सम दुःख-सुख की अवस्था आपको स्वभावतः प्राप्त होती है। इस आपत्ति के घने अंधकार में आपको बल प्राप्त हो।

२४. विदेशों में अपने नीतिमूल्यों का प्रसार सराहनीय

कु. अमृता रंगास्वामी, कैंब्रिज, इग्लैंड — २० अक्तूबर १९६१

आप वहाँ सकुशल पहुँच कर अपने अध्ययन में यशस्वी होने के लिए प्रस्तुत हो रही हैं, यह जानकर संतोष हुआ। अपने देशबांधवों को एकत्रित कर उनमें नैतिक मूल्यों के जागरण हेतु प्रयत्नशील हैं, यह वृत्त उत्साहवर्धक है। अध्ययन तथा अन्य कार्यों से व्यस्त जीवन में आपका स्वास्थ्य के प्रति दुर्लक्ष्य करना उचित नहीं। अतः अपने स्वास्थ्य पर ध्यान दो।

२५. श्रद्धापूर्वक स्मृति ही श्राद्ध

सौ. कुसुम देवधर, — ८ नवंबर १९६१

...पूर्व नियोजित प्रवास पूर्ण कर मैं ५.११.६१ को नागपुर आया। यथाविधि वर्षश्राद्ध कार्यक्रम पूर्ण हुआ होगा। एक वर्ष बीत गया। कालचक्र की गति कितनी तेज है। एक वर्ष का कालखंड स्वप्नवत् बीता, पर माननीय श्री दादासाहब के वियोग का दुःख पूर्ववत् पीड़ा दे रहा है।

सृष्टिक्रम ऐसा ही है। एक व्यक्ति के संसार से चले जाने के पश्चात् उस व्यक्ति का स्थान पूर्ण योग्यता से मंडित कर, उनके कार्य को सातत्य से चलाकर, उनकी स्मृति निरंतर कायम रखने हेतु श्रद्धापूर्वक किया हुआ 'श्राद्ध' ही सार्थ होता है। आप दोनों से मेरी वही अपेक्षा है। स्वर्गीय श्री दादासाहब के एक छोटे भाई के नाते आपसे असीम आत्मीयता के संबंध हैं, इसीलिए मैंने निःसंकोच यह अपेक्षा व्यक्त की है। (मूल मराठी)

२६. समाज की उदासीनता से विचलित न हो

सौ. मुक्ता सरदेसाई, पंढरपुर — २४ नवंबर १९६१

....पंढरपुर में कुछ कार्य प्रारंभ कर आप जो अनुभव प्राप्त कर

रही हैं, यही भाग्य सभी कार्यकर्ताओं का रहता है। अपना समाज उदासीन, अश्रद्ध और अकर्मण्य है, इसीलिए तो उसमें चैतन्य निर्माण करने हेतु लगन से कार्य करना आवश्यक है। स्वयं निराश होने से सामाजिक अवस्था का अनुभव कर चिढ़ने से या समाज के संबंध में अनादर की अथवा घृणा की भावना मन में निर्माण होना सर्वथा अनुचित है। ऐसी भावना या विचार अपने हृदय को स्पर्श न करने पाए। समाज के विषय में स्नेह, सद्‌भावना एवं आदर की भावना रखकर शुद्ध हृदय से प्रयत्नशील रहना ही उचित है। परमात्मा की कृपा से सफलता अवश्य मिलेगी। अपनी अपेक्षा से समय कुछ अधिक लगा तो चिंता न करें। कार्यकर्ता की धारणा ऐसी ही दृढ़ रहनी चाहिए। सबका यही अनुभव है। (मूल मराठी)

२७. अमरनाथ की यात्रा

सौ. वत्सला म्हसकर, १८ फरवरी १९६२

अमरनाथ दर्शनार्थ के लिए श्रावण पौर्णिमा को अत्यंत योग्य दिन माना जाता है। उसके पूर्व की पौर्णिमा भी उत्तम होती है। जहाँ तक हो पौर्णिमा ही दर्शन के लिए चुनें। श्रावण पौर्णिमा को बहुत लोग जाते हैं। सरकारी व्यवस्था भी रहती है। ठंड भी मामूली रहती है। आजकल रास्ते आदि होने से थोड़ा-सा अंतर पैदल चढ़कर जाना पड़ता है, जिससे थोड़ा परिश्रम होता है। परंतु एक बार गुफा में पहुँच कर श्री अमरनाथ की हिममय पिंडी का दर्शन हुआ कि थकावट आदि सब समाप्त होकर अवर्णनीय आनंद एवं चित्त की प्रसन्नता प्राप्त होती है। ऐसा मेरे माता-पिता का अनुभव है।

२८. स्मरण के लिए कृतज्ञता

श्रीमती शांताबाई, ७ मार्च १९६२

संपत्ति के संबंध में आपका झगड़ा कोर्ट में चालू है, ऐसा पता चला। ऐसी स्थिति में उस विषय में मेरा कुछ विचार व्यक्त करना अयोग्य है। आपने हिंदू, संघ आदि शब्दों का प्रयोग किया है। जिस समय आपसी झगड़े की भावना निर्माण हुई, उसी समय यदि इन शब्दों का स्मरण रहता तो अच्छा होता। इन शब्दों के कारण जिन व्यक्तियों के विषय में आत्मीयता, स्नेह, पारस्परिक विश्वास आदि सद्‌भावनाओं की अपेक्षा रहती

है, उनके द्वारा आपस में ही सब तय करने का प्रयास हुआ होता, तो वह शोभनीय हो जाता। परंतु ऐसा नहीं हो पाया। अब इतने विलंब से इन बड़े शब्दों का एवं सिद्धांतों का किसी सज्जन ने आपको स्मरण करा दिया है, ऐसा लगता है।

आपका पत्र पढ़ने के पश्चात् आपका या जिन्हें आप निकटस्थ आप्त समझती हैं, उनका मुझ पर संभवतः विश्वास नहीं है। यही आपके पत्र की प्रमुख व्यक्त भावना है। पत्र से मुझे इतना ही बोध हुआ कि मेरा कहीं भी, किसी भी समय, किसी प्रकार से भी संबंध न रहते हुए आपकी मुझ पर क्रोध व्यक्त करने की इच्छा थी और वह आपने अपने पत्र से पूर्ण की है। भला इस निमित्त से क्यों न हो, आप सबको मेरा स्मरण हुआ, इसलिए मैं कृतज्ञ हूँ।

२६. पति-पत्नी एक दूसरे के पूरक होते हैं

श्रीमती लक्ष्मीकुमारी, २२ मार्च १६६२

माताजी। आपका कृपा पत्र मिला। आपके पति महोदय के परामर्श से उनके मन के विचार आपने मुझे कहे हैं, किंतु उनके और मेरे बीच में किसी मध्यस्थ की आवश्यकता नहीं है। वे सीधे मुझे पत्र लिखें या स्वयं मिलने पर जो उनके मन में हो, निस्संकोच कहें। संघ के पास ऐसी कोई शक्ति नहीं है कि किसी की इच्छा के विरुद्ध उसे किसी काम में वह बाँध सके।

पति-पत्नी एक दूसरे के पूरक होते हैं, यह जो आपने लिखा है, वह अतीव सत्य है। संभवतः आपने इस सत्य पर गौर नहीं किया है, अन्यथा अपने पति के लिए या आप ही रहेंगी या संघकार्य, ऐसी अटपटी बात आपने नहीं लिखी होती। अस्तु। इस विषय में विवाद करने से लाभ नहीं होता।

अतः आप अपने पति महोदय से कहें कि आपने जो दो पर्याय उनके सामने रखे हैं, उनमें से किसी को भी चुन लें और वैसा मुझे सूचित करें। मेरी दृष्टि से यह दो पर्याय कहना ही त्रुटिपूर्ण है। हम लोग तो इनकी परस्परानुकूलता बनाने की इच्छा रखते हैं। कहीं-कहीं किसी व्यक्तिविशेष के स्वभाव से यह इच्छा अपूर्ण रहती है। फिर इस उलझन में पड़े अपने बंधु को सर्व विचार कर स्वेच्छा से उसे जँचनेवाला निर्णय करना होता है। उसके निर्णय में हम लोग संतुष्ट हैं और रहेंगे। शेष भगवत्कृपा।

३०. अब अंग्रेजों के स्वभाव में कुछ परिवर्तन होगा

कुमारी अमृता रंगास्वामी, कैंब्रिज (इंग्लैंड) १६ जुलाई १६६१

आपकी इच्छा के अनुरूप आपको आर्गेनाइजर की एक प्रति प्रति-सप्ताह नियमित भेजने हेतु मैंने अपने कुछ मित्रों से पूछा। आज मुझे जानकारी मिली कि एक वर्ष हेतु इसकी व्यवस्था हो गई है। आप यदि वहाँ अधिक अवधि तक ठहरने वाली हों, तो इसे और आगे बढ़ाया जा सकता है। किसी विषय का अभ्यास करने के प्रति आपके अनुकूल न होने पर, स्वयं को उस विषय के अध्ययन के लिए प्रवृत्त करने में जो कठिनाई होती है, वह मैं समझ सकता हूँ। इंग्लैंड में जाकर 'अंग्रेजी' विषय का अध्ययन का निर्णय तो आपका ही है। अतः पूर्ण एकाग्रता से अध्ययन कर परीक्षा में उच्च श्रेणी में नैपुण्यसहित सफलता प्राप्त करनी होगी।

अंग्रेज उनकी जीवनपद्धति में अब परिवर्तन अनुभव कर रहे हैं, यह अच्छी बात है और यह स्वाभाविक है। भारत में गर्वोद्धत अंग्रेज अधिकारी और अतिनम्रता का मुखौटा पहने पादरी ही हमने देखे हैं। सर्वसामान्य अंग्रेज यहाँ आए नहीं एवं उनका आना संभव ही नहीं था। परंतु वहाँ अपनी ही भूमि में अंग्रेज जैसा है, वैसा ही आप देख सकेंगी। अंग्रेज का बाहरी चेहरा कठोर दिखते हुए भी वह एक अच्छा, आदरणीय एवं स्नेह करने योग्य मानवीय नमूना होगा, ऐसा मुझे विश्वास है। जागतिक राजनीति में बहुत बड़े परिवर्तन के कारण अंग्रेजों के जीवनविषयक दृष्टिकोण में कुछ फरक आया होगा। पुरानी साम्राज्यवादी मनोवृत्ति का उसके जीवन में अब कोई स्थान न रहने से, संसार के नागरिकों के प्रति उसके द्वारा संयमित दृष्टिकोण अपरिहार्य है। यह बात सामान्य अंग्रेज पर अवश्य प्रभाव डालेगी तथा अब तक अप्रकट उनके स्वभाव के कुछ पहलू संभवतः प्रकट होंगे।

मुझे नागपुर में ही रहने हेतु कहा गया है, क्योंकि मेरी वृद्ध पूज्य माता द्रुतगति से अंतिम निद्रा की ओर बढ़ रही हैं।

पुनश्चः और एक छोटा बिंदु प्रतीत होता है कि आपका मस्तिष्क समय की गति से भी तेज है, क्योंकि आपने आपके पत्र का दिनांक ५ जुलाई लिखा है।

(मूल अंग्रेजी)

३१. कार्यकर्ताओं को दृढ़ वृत्ति आवश्यक

सौ. मुक्ता सरदेसाई, २४ जनवरी १९६२

पंढरपुर में आप कुछ काम शुरू कर जो अनुभव प्राप्त कर रही हो, वह सभी कार्यकर्ताओं के हिस्से में आते ही रहते हैं। समाज उदासीन, अश्रद्ध एवं अकर्मण्य है, इसलिए काम कर उसमें चेतना निर्माण करने के लिए श्रम करना आवश्यक है। स्वयं निराश होना एवं समाज के संबंध में अनादर या घृणा रखना सर्वथा श्रेयस्कर नहीं है। ऐसी भावनाओं, विचारों को अंतःकरण में कभी भी क्षणभर भी स्थान न दें। निष्काम भाव से समाज के प्रति स्नेह, सद्‌भाव एवं आदर रखकर प्रयत्न करते रहना ही योग्य है। श्रीप्रभु-कृपा से यश मिलेगा ही। अपने अनुमान से विलंब अधिक लगा तो भी उसकी परवाह न करें। कार्यकर्ताओं को ऐसी ही दृढ़ वृत्ति आवश्यक होती है, यह सबका अनुभव है।

३२. चीनी संकट के बारे में मैंने पूर्वसूचना दी थी

श्रीमती सुधाताई गोखले, बेलगाँव, कर्नाटक ३ नवंबर १९६२

....अपने देश पर आनेवाली आपत्ति के विषय में सबको सचेत करने में मेरी अदूरदृष्टि व्यक्त होती है, ऐसा आपने लिखा है। इससे मन में कुछ दुविधा सी निर्माण हुई है।

ऐसी आपत्ति के समय क्या करना उचित रहता है, इसकी आपको संभवतः जानकारी होगी। मेरी अल्पबुद्धि से मैंने भी विचार कर उसका निष्कर्ष राष्ट्रपति को अवगत कराया है। उनसे पुराना परिचय रहने से अनेक महत्त्वपूर्ण प्रश्नों पर हमारा विचार-विमर्श हुआ है। इस आशय का संक्षिप्त वृत्त वृत्त-पत्रों ने प्रकाशित किया है। प्रकट रूप में वक्तव्य प्रकाशित कर एवं सार्वजनीन सभा के प्रकट भाषण में हमें इस समय जो करना उचित है, मैंने कहा है। यह भी वृत्त-पत्रों में प्रकाशित हुआ है। इसकी कुछ भी जानकारी आपको संभवतः नहीं है। ....यह पढ़कर आपका समाधान होगा, ऐसी अपेक्षा है। (मूल मराठी)

३३. कुछ प्रसंगों का विस्मरण नहीं हो सकता

कुमारी विजया किंकर, पुणे १२ अप्रैल १९६३

अनेक दिनों के पश्चात् आया हुआ पत्र देखकर बहुत आनंद

हुआ। आपका या आपके परिवार में किसी का मुझे विस्मरण हुआ है, ऐसा आपको क्यों लगा? जीवन के उत्तरार्ध में विस्मरणशीलता निसर्गक्रम है और उसी का यह परिणाम है– ऐसा मानकर संभवतः आपने सोचा होगा कि मेरी स्मरणशक्ति क्षीण हुई है। यह सत्य होते हुए भी कुछ व्यक्ति एवं प्रसंगों का विस्मरण नहीं हो सकता। मैं भी समझ रहा था कि आपका नित्य बढ़ता हुआ अध्ययन, परिणामस्वरूप ज्ञान की व्यापकता और गहराई के कारण कुछ सामान्य-सी बातें मन से ओझल हुई होंगी। आधुनिक मनोवैज्ञानिक अनावश्यक क्षुद्र बातों के विवेकपूर्ण विस्मरण को उत्तम स्मरणशक्ति का आवश्यक लक्षण मानते हैं। आपका भी ऐसा ही हो सकता है, ऐसा विचार उत्पन्न होने तक आपने प्रदीर्घ काल मौन धारण किया था। मिलकर वार्तालाप भी संभव नहीं हो पाया। परंतु इस पत्र से विस्मरण की सब कल्पनाएँ असत्य सिद्ध हुई हैं और अतीव प्रसन्नता, आनंद अनुभव कर रहा हूँ।

संघ शिक्षा वर्गों के प्रवास में मैं पुणे में रहूँगा। श्री बाबा भिड़े के यहाँ मेरी निवास-व्यवस्था रहेगी। उस समय मुझे मिलने में आपको कोई असुविधा नहीं होगी। बीच में बहुत बड़ा कालखंड व्यतीत हो जाने से मेरी भी मिलने की उत्सुकता है। मेरे मन में आपका जो एक शिशुस्वरूप है, उसमें अब तक बहुत अंतर आया होगा। कालप्रवाह में आपके इस स्वरूप में हुआ परिवर्तन भी अनुभव कर सकूँगा। (मूल मराठी)

३४. स्वस्थ पत्रकारिता को आत्मसात करें

कुमारी इंदु अमृता रंगस्वामी, कैंब्रिज (इंग्लैंड) १४ अगस्त १९६३

एकाध महीने में आप भारत लौटेंगी, ऐसी अपेक्षा थी, परंतु अब लगता है कि उच्च अध्ययन हेतु अमरीका जा रही हैं। वहाँ सफलतापूर्वक अपना अध्ययन पूर्ण कर स्वस्थ पत्रकारिता में तज्ञ होकर यहाँ आएँगी, ऐसी अपेक्षा है। निम्न श्रेणी की पत्रकारिता, जिसे 'पीत पत्रकारिता' क्यों कहते हैं मैं नहीं जानता, समाज के लिए हानिकर सिद्ध हो, इस सीमा तक अपने देश में विद्यमान है। इस महत्त्वपूर्ण व्यवसाय में कुछ संयम और विवेक की आवश्यकता है। स्वयं अपने कर्तृत्व में आपका विश्वास क्यों कम है, मैं अनुमान नहीं कर पाया। आपने अभी तक पर्याप्त सफलता पाई है। और बहुत अधिक मात्रा में सुयश अवश्य ही प्राप्त करोगी, ऐसा मुझे पूरा विश्वास है। (मूल अंग्रेजी)

३५. शासनकर्ता अविवेकी हैं

सौ. मुक्ता सरदेसाई, मुंबई ३० सितंबर १९६४

....बिहार प्रांत के कारावास की घटना नगण्य सी है। सद्यः स्थिति में ऐसा हुआ तो आश्चर्य मानने का कारण नहीं है। शासनकर्ताओं का व्यवहार विवेकपूर्ण रहता तो अशांति एवं धन-जन-विनाश का अनिष्ट अवसर निर्माण ही नहीं होता। परंतु इस आपत्तिजनक परिस्थिति का अनुभव आ रहा है, इसका एक ही कारण है कि उनकी विवेकबुद्धि कार्यक्षम नहीं है। विवेक समाप्त हो जाने पर मेरे जैसे व्यक्ति का अल्पकाल कारावास भी कुछ कम आश्चर्यजनक नहीं है।

मेरी अपनी दृष्टि से तो वहाँ सुख की ही प्राप्ति होती है। कष्टप्रद केवल एक ही विचार है कि राष्ट्रहितार्थ स्वीकृत व्रताचरण में, चिंतन तो चलता रहता है, प्रत्यक्ष कृति करने में खंड आ आता है। परंतु अपना यह ईश्वरीय कार्य है। इससे भी सफलता का लाभ हो, ऐसी भगवान की इच्छा एवं योजना होगी। अतः उनके ही कृपाप्रसाद से प्राप्त सब प्रकार के अनुभवों में, उन्ही के श्री चरणों में पूर्ण श्रद्धा रहने से मन सदैव प्रसन्न रहता है।

मेरी जन्मपत्रिका का अध्ययन कर आगे कुछ समय कष्टप्रद है, यह जानकारी आपने दी है, यह उचित हुआ। परंतु उस आपत्ति से बचने हेतु अपना कर्तव्यपथ छोड़ अन्य कुछ करना किसी को भी शोभा नहीं देगा। अतः भविष्य के विषय में सब परमात्मा की कृपा पर निर्भर है, ऐसा सोचकर स्वकर्तव्यरत रहना यही मेरे लिए एकमात्र उचित मार्ग है।

(मूल मराठी)

३६. जीवन में सुख-दुःख भगवान की असीम कृपा

सौ. मीरा अत्रे, सोलापुर ६ अप्रैल १९६५

श्री यशवंतराव जी के स्वास्थ्य में निश्चित रूप से सुधार है। यह माननीय डा. काकासाहब मुले के पत्र से मुझे ज्ञात हुआ। श्री परमात्मा की कृपा रहने पर कुछ भी विपरीत नहीं होता। जीवन के खतरे में रहने जैसे प्रसंग अल्प कष्ट से मनुष्य पार कर लेता है। इसीलिए हृदय में श्री परमेश्वर के प्रति कृतज्ञ रहकर, उन्हीं के श्री चरणों में अनन्यभाव से शरण

लेकर प्रार्थना करें। कुछ प्राप्त करने की अभिलाषा से नहीं, विशुद्ध प्रेम के कारण, वह जैसा रखेगा वैसा ही रहने में, वह जो सुख-दुःख देगा, वह भी उसी की असीम कृपा के कारण है, यह अनुभूति जागृत रखकर, संतोष से एवं सुख से रहने में ही अपना अहोभाग्य है, ऐसा मानकर चलें। इससे सब प्रकार की आपत्ति में अपना रक्षण होकर जीवन में उत्कर्ष, सुख एवं स्वकर्तव्यपूर्ति का समाधान अवश्य ही प्राप्त होता है।

आपत्ति में श्री परमात्मा की कृपा का और उनकी सहायता का आपने अनुभव किया ही है। इसलिए उनके प्रति कृतज्ञता का सदैव स्मरण करते रहें। आप सबकी ओर से मैं स्वयं भी स्मरण करता हूँ। (मूल मराठी)

३७. जो प्रयोग यशस्वी होगा वही फलदायी

श्रीमती सिंधुताई फाटक, दिल्ली ४ सितंबर १९६६

रक्षाबंधन के पर्व पर आपसे रक्षासूत्र प्राप्त होने में आनंद का अनुभव कर रहा हूँ। वर्धा से श्रद्धेय 'मौसी' जी का भी पत्र रक्षासूत्र के साथ प्राप्त हुआ।

कार्य कठिन है। उसका स्वरूप कैसा हो, इस विषय में प्रयोग चल रहे हैं। जो प्रयोग यशस्वी होगा, उसी को अपनाने से कुछ फल मिलेगा, परंतु आज तो कार्य की प्रयोगावस्था ही है, यह सत्य है।

जिन्होंने नई शिक्षा ग्रहण की है और जो उसे ग्रहण कर रहे हैं, वे 'राष्ट्र', 'संगठन' आदि शब्दप्रयोग तो समझ सकते हैं, परंतु अपने जीवन की रचना एवं व्यवस्था का आधार स्वधर्म-स्वसंस्कृति से हट जाने के कारण कार्य का स्वरूप आकलन करने में उन्हें बाधा आती है। मनोरंजन एवं सार्वजनिक कार्यविषयक कल्पना भिन्न रहने से उनके हृदय में अपने कार्य की जड़ पकड़ना कठिन हो जाता है। व्यक्तिगत गृहस्थी-जीवन की और पारिवारिक जिम्मेदारियाँ निभाने में उनकी संपूर्ण शक्ति व बुद्धि निःशेष हो जाती है। यह वस्तुस्थिति गृहीत सत्य मानकर कार्यरचना का विचार आवश्यक होगा। परिवार के पुरुष और बालकों के वैचारिक एवं भावनात्मक सहकार्य के बिना किसी को सातत्य से काम करना संभव नहीं होगा। पारिवारिक बंधनों से पूर्णतया मुक्त स्त्री कार्यकर्त्री मिलना असंभव सा है। इस प्रकार की कार्यकर्त्री उपलब्ध होगी, ऐसी आप भी अपेक्षा नहीं करेंगी। ऐसी सब स्थिति समझकर ही आपको मार्ग निर्धारित करना होगा।

आप भी सोच सकती हैं। आप परिश्रम और दौड़-धूप करती रहती हैं। अपने अन्य सहकारियों के साथ इस प्रश्न का गहराई से विचार करना आपको अत्यावश्यक है। इसमें मेरा कोई उपयोग होने जैसी स्थिति मुझे दिखाई नहीं देती। क्वचित कुछ विशेष प्रसंग पर समय अनुकूल रहा, तो सोचा जा सकता है।

३८. आलोचकों के साथ वाद-विवाद निरर्थक

सौ. मुक्ता सरदेसाई, २ फरवरी १९६७

यह मास तो निर्वाचन हेतु होनेवाली दौड़-धूप का है। पारस्परिक आलोचना-प्रत्यालोचना का, अशिष्ट-अनिष्ट शब्दों के प्रचुर उपयोग का यह समय है। इसमें मुझे कोई भी काम नहीं है। अतः कुछ आनुषंगिक कर्तव्य पूर्ण करने के प्रयास हेतु मेरे लिए समय उपलब्ध है।

भगवान ईसा मसीह के जीवन में एक उद्‌बोधक प्रसंग है। उनका शरीर क्रॉस पर कीलें ठोक कर लटकाते हुए उनको मृत्युदंड देने का निश्चय हुआ। स्वयं अपने कंधों पर क्रॉस लेकर उन्हें वध-स्थान पर जाना पड़ा। जाते समय अनेक लोगों ने उनको पत्थरों से मारा, अपमानित किया। तब परमात्मा के चरणों में प्रार्थना कर उन्होंने इतना ही कहा- 'पिताजी, उन्हें क्षमा कीजिए। वे क्या कर रहे हैं, स्वयं नहीं जानते।' इसी वृत्ति को स्वीकार कर हम अपने आलोचकों को देखें। उनके विषय में अपने हृदय के स्नेह एवं आत्मीयता में कभी न्यूनता न आने दें। केवल वाद-प्रतिवाद से क्या निष्पन्न होगा? (मूल मराठी)

३९. श्रीराम का चरित्र कथन

डा. सुशीला देवधर, नागपुर २३ जुलाई १९६७

'रामकथा रहस्य' पुस्तक का मेरा वाचन पूर्ण हुआ। इसके पूर्व जबलपुर के श्री नावलेकर जी की अंग्रेजी पुस्तक में रामायण की घटनाओं का कूटनीतिक दृष्टि से वर्णित अन्वयार्थ मैंने पढ़ा था। आपने मराठी ओवीबद्ध स्वरूप में थोड़ा हेरफेर कर, उसी प्रकार राजनैतिक अर्थसंगति वर्णन की है। श्री रामचंद्र, भरत, वशिष्ठ, विश्वामित्र अगस्त्यादि महर्षियों ने मिलकर एक योजना की और दुष्ट रावण की अधिसत्ता जड़मूल से नष्ट

की, यह विचार अवश्य ही रोचक है। सद्यः परिस्थिति का प्रतिबिंब इस विवेचन में दृष्टिगोचर होना अपरिहार्य ही है, ऐसा लगता है। गोस्वामी तुलसीदास जी के 'रामचरित मानस' में भी रावणराज्य का वर्णन उस समय के अत्याचारी, धर्मविध्वंसक मुगल राज्य का ही वर्णन है। आपके इस 'रामकथा रहस्य' में स्वाभाविक रूप से ऐसा ही हुआ है।

श्रीराम का आदर्श पुरुष, पुरुषोत्तम, मर्यादा पुरुषोत्तम, इस नाते चरित्रकथन लाभदायक है। परमपुरुष की अवतारलीला, इस प्रकार धारणा रहने से अपने जीवन में उनके जैसा अनुसरण करना सर्वसामान्य मनुष्य के लिए असंभव है, ऐसा कहकर वैसा जीवनयापन के प्रयत्न से लोग स्वयं को मुक्त मानते हैं। परिणामतः उस श्रेष्ठ चरित्र का अनुसरण कर, स्वयं के जीवन में श्रेष्ठत्व निर्माण कर, श्रेष्ठ कार्य करना संभव नहीं हो पाता। आदिकवि महर्षि वाल्मीकि का अनुसरण कर मनुष्य के नाते रामचरित्र का वर्णन योग्य है।

परंतु श्रीराम के संबंध में हृदय भक्ति-भावना से ओतप्रोत हो जाने में जो सुख होता है, अपना जीवन पूर्णतः बदल कर परमशांति की अनुभूति होती है और जीवन कृतार्थ होता है। वैसी शुद्ध भक्ति एवं उत्कट भावना इस 'रामकथा रहस्य' में व्यक्त नहीं हुई, ऐसा लगा। इस गहन विषय के संबंध में विचार प्रकट करने का मेरा अधिकार नहीं है। तथापि वह पढ़कर मेरे मन पर हुआ परिणाम प्रकट न करना अनुचित होगा, इस कल्पना से मैंने यह निवेदन किया है।

आपकी अंतःस्फूर्ति के कारण अनेक पुण्यात्माओं की प्रेरणा अभिव्यक्त हुई और यह उत्कृष्ट वाङ्मय स्वरूप अमृत लोगों को सुविधा से उपलब्ध हुआ, यह श्रीराम प्रभु की कृपा ही है। 'रामकथा रहस्य' पुस्तक मुझे पढ़ने के लिए देकर आपने मुझ पर अनंत उपकार किए हैं। (मूल मराठी)

४०. प्रेरक ग्रंथ शीघ्र प्रकाशित हो

कुमारी वारेंद्र संधू, सहारनपुर (उत्तरप्रदेश) १३ सितंबर १९६८

हुतात्मा वीरवर सरदार भगतसिंह का परिवार अलौकिक है। देशभर में ऐसे अल्प ही परिवार मिलेंगे जिनमें पीढ़ी के बाद पीढ़ी राष्ट्रमुक्ति के लिए सर्वस्व का होम करनेवाले हुतात्मा जन्म लेते हों। हुतात्मा भगतसिंह का परिवार ऐसा असामान्य तेजोमय है। उनकी स्फूर्तिप्रद जीवन-गाथा

कालगति से नष्ट न हो, इस हेतु आपने उसे लेखबद्ध ग्रंथरूप में प्रकाशित करने का संकल्प किया है। वह देशवासियों पर महान उपकार है। शीघ्र ही वह प्रेरक ग्रंथ देखने को मिलेगा ऐसा विश्वास है।

आप स्वयं इसी तेजस्वी परिवार की एक दीपशिखा हैं। सरदार भगतसिंह और उनके अतुल राष्ट्रभक्त पूर्वजों की जीवन गाथा और उन्हीं के वंश में उद्भूत आप जैसी लेखिका, यह अपूर्व योग है। इससे यह ग्रंथ प्रमाणित तो होगा ही, साथ ही सजीव तथा प्रेरक होगा इसमें संदेह नहीं है। आपके उत्तरोत्तर वर्धमान यश की कामना करता हुआ।

४१. शिक्षाविषयक आदर्श दृष्टिकोण

३ जुलाई १९६९

श्रीमती राधादेवी गोयनका, अकोला, अध्यक्षा भारतीय सेवा सदन

'भारतीय सेवासदन' जो आपके अथक परिश्रम एवं उदारता की उपज है, शिक्षा प्रसार का आवश्यक कार्य कर रहा है, यह मुझे बहुत समय से ज्ञात है। सामान्य व्यावहारिक शिक्षा के साथ ही शील चारित्र्य-विकास की ओर संस्था का ध्यान है, यह भी आवश्यक और अभिनंदनीय है। आधुनिक विद्यालयों-महाविद्यालयों में शिक्षाप्राप्त व्यक्ति नौकरी पर ही दृष्टि लगाए रहता है। इससे उसकी मुक्ति का, श्रम की प्रतिष्ठा का बोध जगाना एवं देश की संपति में वह कुछ अपने बल पर वृद्धि कर सके, इस दृष्टि से उसे स्वावलंबी एवं परिश्रमी बनाना हितावह होगा, यह आपको विदित ही है। यह प्रयास अपनी इस देशहितार्थ चलनेवाली संस्था में सफल हो, यही इच्छा है। इस हेतु परममंगल श्री प्रभुचरणों में प्रार्थना है।

श्रीभगवत्कृपा से संस्था की उत्तरोत्तर प्रगति होकर उत्तम राष्ट्रसेवी, शीलवान, कर्तव्यदक्ष व्यक्ति इसके छात्रालयों में से विकसित हों। आवश्यक रूप से सहायता कर इसकी उन्नति में सब सत्प्रवृत्त बंधुगण योगदान दें, यह सबसे प्रार्थना कर, पत्र पूर्ण करता हूँ।

४२. पं. धुंडिराज शास्त्री के निधन पर संवेदना

श्रीमती मैत्रेयी देवी, पुणे

१६ जुलाई १९६९

....परमश्रद्धेय पं. धुंडिराज शास्त्री विनोद जी ने इहलोक की यात्रा पूर्ण कर परमगति प्राप्त की यह दुःखद वृत्त आज यहाँ दैनिक 'केसरी'

से ज्ञात हुआ। ऐहिक एवं पारमार्थिक जीवन के कर्तव्यपालन में आपके सर्वार्थ से श्रेष्ठ सहकारी एवं मार्गदर्शक चल बसने से आपको असीम दुःख होना स्वाभाविक है। उनकी साधना से जिन अनेक आर्त लोगों को सुख एवं मनःशांति प्राप्त होती थी, उन सबका एक श्रेष्ठ आधार अब नहीं रहा, इसका असीम दुःख असंख्य लोगों को होना भी स्वाभाविक है।

परंतु अनिवार्य और ईश्वरीय योजना से होनेवाली घटना तो होकर ही रहती है। उसे रोकना हमारे लिए संभव नहीं है। इसीलिए मन में दृढ़ता धारण कर वह दुःख सहन करना और जिनके देहावसान की व्यथा मन को चुभती है, उनकी सद्गति प्राप्त्यर्थ प्रार्थना करते रहकर उनसे निर्देशित पथ पर स्वकर्तव्य करते हुए अग्रेसर होना, इतना ही केवल हम कर सकते हैं। इसलिए आवश्यक मनःशक्ति एवं मनःशांति प्राप्त होने हेतु मैं परमात्मा के श्रीचरणों में प्रार्थना करता हूँ।

मातृत्व का अधिकार एवं पितृवत् स्नेह के कारण अनेक लोगों के कल्याण हेतु प्रयत्नशील महर्षिजी का रिक्त स्थान अब आपके कारण पूर्ण होगा, ऐसा विश्वास है। सभी शोकग्रस्तों की सांत्वना के लिए श्रीप्रभुचरणों में प्रार्थना करता हूँ। इससे अधिक मैं क्या कर सकता हूँ? (मूल मराठी)

४३. विकृति में आनंद लेने की प्रकृति

सौ. उषा बहन, मुंबई २ सितंबर १९६९

परिस्थिति जो है, वह स्पष्ट ही है। आज 'लेनिन स्ट्रीट' नाम से दुःख होता है, किंतु दिल्ली में तो 'औरंगजेब रोड' भी है। जब तक सच्चा राष्ट्रीय भाव और स्वाभिमान उदित नहीं होता, तब तक पराए, घिसे-पिटे, परंतु असफल सिद्ध हुए विचारों की दासता में आनंद लेना चलता रहेगा, तब तक दूसरी कोई अपेक्षा कैसी करें ?

इसलिए धैर्य से, सातत्य से, लगन से, बिना डगमगाए, बिना उतावली से व्यथित हुए योग्य दिशा से जनजागरण, राष्ट्र की विशुद्ध शक्ति जगाने के लिए अविरत प्रयत्न करना है। यश तो निश्चय ही मिलेगा, परंतु अनेक कष्टों से गुजरना होगा।

आपने भेजी पवित्र स्नेहसिक्त राखी प्राप्त कर बहुत आनंद हुआ है। भगवत्कृपा से यह स्नेह-सूत्र अटूट रहकर उसके बंधन में पूर्ण समाज बँध जाए- इस इच्छा से भगवच्चरणों में प्रार्थना के साथ प्रयत्नशील होना है।

४४. मैं नाम मात्र

आदरणीया श्रीमंत राजमाता विजयाराजे सिंधिया, ६ मार्च १९७०

आप तथा श्रीमंत महाराज माधवराव जी के प्रति बहुत कृतज्ञ हूँ। परमकृपालु श्री भगवान की कृपा से इतने वर्ष आप जैसे श्रेष्ठों की सेवा में काम करने के लिए मिल गए। आप सबकी शुभेच्छाएँ एवं उस दयाघन का आशीर्वाद प्राप्त रहे, यही श्री प्रभुचरणों में प्रार्थना है।

कार्य तो सब सहयोगी करते हैं। मैं नाममात्र होते हुए भी श्रेय का भागी बन रहा हूँ, यह बोध ही मेरा रक्षक है। अन्यथा सर्वप्रकार से जो स्वयं आदरणीय हैं, उनके द्वारा स्नेहादर प्राप्त होने से माथा खराब होने का भय रहता है। भगवत्कृपा से रक्षण होता आ रहा है। बचे हुए जीवन में उसकी कृपा इसी प्रकार रक्षा करती रहे।

बड़ी कठिनाई से इतना लिख पाया हूँ। फिर से आप सबको कृतज्ञतापूर्वक हार्दिक धन्यवाद समर्पण कर पत्र पूर्ण करता हूँ।

४५. कार्य आत्मनिर्भर रहे

श्रीमती सिंधुताई फाटक, ७ मार्च १९७०

....आपका पत्र पढ़ा। उस विषय में सोचने का भी प्रयास किया। मेरे हृदय में क्रोध की भावना थी, ऐसी आपकी धारणा क्यों बनी, समझ नहीं पाया। कोई भी कार्य अपने स्वयं के बल पर निर्भर बन कर खड़ा होता है, तभी वह चल सकता है। कोई सहायता करेगा– इस अपेक्षा से और वैसी सहायता की उपलब्धि गृहीत सत्य मानकर कार्य की योजना कितनी ही उत्साहपूर्ण रीति से कार्यान्वित की, तो भी वह उपयोगी सिद्ध नहीं होगी। ऐसा सोचकर वहाँ के स्वयंसेवक बंधुओं से प्राप्त सहायता और वह करते समय विवेकसीमा का अतिक्रमण अनुभव कर, मैंने स्वयंसेवकों की सहायता के अभाव में ही आपको अपना संकल्प पूर्ण करने को कहा था। मैंने यह भी कहा था कि इस समय स्वयंसेवक अपनी योजना कार्यान्वित करने का प्रयास न करें, ऐसा मैं सूचित करूँगा। मेरे इस कथन का हेतु आपको स्मरण रखना उचित होगा।

शेष विषय आपकी व्यक्तिगत भावना और उसी प्रकार की अन्य संस्थागत कामों के संबंध में है। इस विषय में डा. आबा आपसे विस्तृत

रूप में बातचीत कर सकेंगे।

मेरे जीवन में बहुत मात्रा में रुक्षता आई है। इससे बोलते समय मृदु मधुर वाणी आवश्यक अनुभव होकर भी अनेक बार विपरीत ही हो जाता है। मेरे शब्दों के कारण आपका मन प्रक्षुब्ध हो जाना स्वाभाविक है। आपके मन को हुए कष्ट के लिए मैं हृदयपूर्वक क्षमायाचना करता हूँ।

(मूल मराठी)

४६. जन्मदिन अपनी परंपरा के अनुसार मनाएँ

सौ. गोखले, मुंबई   २७ फरवरी १९७१

जिसे वर्षगाँठ का दिन माना जाता है, मेरे विचारों के अनुरूप व्यतीत करना संभव नहीं होता। अनेक आत्मीयों की इच्छा के अनुसार व्यवहार आवश्यक हो जाता है। इस वर्ष वर्धा (विदर्भ) में माननीय श्री आप्पाजी जोशी ने सत्यनारायण-पूजन का आयोजन निश्चित किया और मुझे उस समय वर्धा में उपस्थित रहना चाहिए, ऐसा आग्रहपूर्वक कहा। मुंबई में मेरी स्वास्थ्यचिकित्सा के पश्चात् सभी डाक्टरों ने समाधान व्यक्त किया, यह सत्यनारायण-पूजन का और भी एक निमित्त बन गया। मा. श्री आप्पाजी की इच्छा के विपरीत करने की सोचना भी संभव न होने से उस दिन वर्धा जाकर रात्रि को नागपुर लौट आया। जीवन में ऐसा ही कुछ हो जाता है। क्वचित् अनुकूल अवसर प्राप्त होकर स्वछंद वृत्ति से वह दिन व्यतीत करना मुझे संभव होता तो एकांत में बैठकर जीवन के कालखंड से एक वर्ष बीत गया, अभी ध्येयसिद्धि तो दूर है– इस प्रगाढ़ चिंतन में लीन हो जाता। प्रतिदिन जो विचार मन को क्लेश देता है, वही विचार वर्ष भर का संकलित स्वरूप धारणकर अधिक तीव्र भावना से प्रक्षुब्ध बनकर प्रतिवर्ष मन को व्यथित करता है। अनेकों के सहवास के कारण वह व्यथा दबी अवस्था में विद्यमान रहती है।

शेष सब कुशल है। चि. जीतू, चि. पूर्णा एवं चि. अनु को अनेकोत्तम आशीर्वाद। अन्यों को यथायोग्य सादर नमस्कार। (मूल मराठी)

४७. मुझे प्रकट भाषणों में आसक्ति नहीं

श्रीमती रमा चोपड़ा, अमृतसर   १९ अप्रैल १९७१

आपका कृपा पत्र मिला। उसके दो भाग हैं। एक में आपने मेरी स्तुति की है। किसी के पास मेरी अनुपस्थिति में वैसा प्रसंग आने पर

आपने यह कहा होता, तो कुछ समर्थनीय हो सकता था। कुछ भी हो, यह आपकी भावना तथा आपके विचार हैं, परंतु मुझे ही मेरी स्तुति सुनाना सर्वथा अनुचित और अशोभनीय है।

पत्र का दूसरा अंश। कार्यक्रम में आपको या अन्य मालाओं को प्रवेश देने के संबंध में क्या निश्चय किया था, मुझे ज्ञात नहीं। परंतु यदि केवल स्वयंसेवकों के लिए किसी कार्यक्रम की योजना होती है, तो उसमें अन्य किसी ने प्रवेश पाने का हठ करना अविवेकपूर्ण ही होगा। केवल स्वयंसेवकों के लिए आयोजित कार्यक्रम में आपको प्रवेश न होने से आपके पूज्य पिताजी को बड़ी ठेस लगी है, ऐसा लिखकर आपने उनके प्रति अन्याय किया है। वे जानकार स्वयंसेवक के नाते ऐसा कभी सोच भी नहीं सकते कि केवल स्वयंसेवकों के लिए आयोजित कार्यक्रमों में अन्यों को– केवल वे किसी स्वयंसेवक के साथ नाते के संबंध में जुड़े होने से– प्रवेश देना चाहिए, न दिया तो बहुत अन्याय हुआ। आपने जो लिखा है उससे उनके स्वयंसेवकत्व का अपमान ही हुआ है। इसका मुझे दुःख हुआ।

मैं प्रवास करता रहता हूँ। कभी प्रकट भाषणों का कार्यक्रम रहता है, कभी स्वयंसेवकों के लिए कार्यक्रम बनता है, तो कभी निमंत्रित कार्यकर्ताओं से वार्तालाप का कार्यक्रम रहता है। जिस समय आवश्यकतानुसार जो निश्चित किया जाता है, वही करना उचित रहता है। संघ के कार्य में मुझे केवल प्रकट भाषणों में आसक्ति रखनेवाला तो आपने समझ नहीं रखा है? आशा है, आप शांत चित्त से सोचेंगी। मैंने आपको कुछ अरुचिकर लिखा हो तो क्षमाप्रार्थी हूँ।

४८. जनताग्रणी विजय का विश्वास रख कर कार्य करें

१७ मार्च १९७२

आदरणीया श्रीमंत राजमाताजी,

आज अकस्मात श्री शेजवलकर जी नागपुर आए और उनसे मिलने का अवसर मुझे प्राप्त हुआ। अनेक विषयों पर बातें हुईं। स्वाभाविक रीति से मैंने आपके संबंध में पूछताछ की। शेजवलकर जी ने कहा कि इन दिनों आपका स्वास्थ्य कुछ दुर्बल चल रहा है। ज्वर भी हुआ है। यह समाचार चिंता उत्पन्न करनेवाला है। गत दो मास या अधिक आपने लगातार प्रवास किया, असंख्य भाषण हुए, शरीर की आवश्यकताओं की ओर दुर्लक्ष्य कर प्रचार-कार्य किया। उस अथक, अविराम, परिश्रम का यह परिणाम है। कुछ

समय के लिए अच्छा विश्राम तथा शरीर में पूर्ववत बल-उत्साह का संचार कर सकनेवाली सात्विक औषधि का सेवन कर इस तात्कालिक दुर्बलता को पूर्णतः दूर करना लाभदायी होगा।

आपके इतने परिश्रमों के विपरीत फल निकलने से मन पर कुछ आघात होना असंभव नहीं है। तथापि जनताग्रणी के नाते विजय का विश्वास रखकर बीच-बीच में उत्पन्न होने वाली प्रतिकूलता आदि से अविचल रहकर सब लोगों में उत्साह भरने का तथा आशा तथा विश्वासयुक्त हृदय से कार्य में पूरी प्रकार से संलग्न रहें, इस प्रकार का कार्य आपको करना है। इसमें आप सफल हों और आगे अपने सब साथियों को यश के मार्ग पर बढ़ाने में आपकी कार्यक्षमता तथा कुशलता अधिकाधिक प्रकट होती रहे, यह इच्छा है। परममंगलकारी सद्यशोमयी श्री जगज्जननी के चरणकमलों में इस हेतु प्रार्थना है।

शेष प्रभु कृपा। इति शम्।

४९. व्यापक पारिवारिक आत्मीयता की अभिव्यक्ति

श्रीमती लता खन्ना, लखनऊ २९ मार्च १९७२

....श्री भाऊराव जी के लखनऊ पहुँचने के समय से आप सबने उनकी शुश्रुषा उत्तम रीति से चलाई है। विशेषतः आप प्रतिदिन दोनों समय उनके लिए हितावह भोजन ले जाकर सब व्यवस्था अच्छी हो, इसपर स्वयं ध्यान देती हैं, यह समाचार प्राप्त हुआ। बहुत आनंद हुआ। आपके प्रति कृतज्ञता का भाव मन में उठा है, परंतु उसे व्यक्त करने में संकोच होता है। अपने कार्य में जो व्यापक पारिवारिक आत्मीयता है, वही अभिव्यक्त हो रही है। इस कारण कृतज्ञता व्यक्त करने में जो दूरता एवं औपचारिकता है, वह मुझे आपके प्रति मन में उठनेवाली भावनाओं को प्रकट नहीं करने देती। आपके श्रमों के परिणामस्वरूप श्री भाऊराव जी उत्तम स्वास्थ्य प्राप्त करेंगे और शीघ्र ही उत्साह से कार्य करने में सक्षम होंगे, यही इच्छा तथा श्री प्रभुचरणों में प्रार्थना है।

हमारे लिए यह संपूर्ण भूमि तपोभूमि है।

– श्री गुरुजी

प्रकरण - ९
प्रबुद्ध जनों को लिखे पत्र

१. नम्र प्रार्थना

श्री अण्णासाहेब खापर्डे ९ जुलाई १९४०

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के जन्मदाता, प्रमुख नेता, सरसंघचालक, हिंदूराष्ट्र के दृष्टा, परमपूजनीय डा. हेडगेवार जी के आकस्मिक स्वर्गवास का शोकपूर्ण समाचार आपको प्राप्त हुआ ही होगा। मन की अवस्था ऐसी हुई है कि सहजता से बात कर सकें, किसी को लिख सकें- यह नहीं हो पा रहा है। किंतु किसी विशेष कारण से जितना जमेगा, वैसा लिख रहा हूँ।

२१ जुलाई के दिन मासिक श्राद्ध निमित्त संघ ने उनके स्मरणार्थ सैनिक अभिवादन का निश्चय किया है। हम सभी की सहज इच्छा है कि इस कार्यक्रम में परमपूजनीय डाक्टरजी के श्रद्धास्पद, श्रद्धालु, मित्र, सहयोगी और सभी आत्मीय उपस्थित रहें। संघ प्रेमी सभी मित्रों को प्रार्थना-पत्र भेजे जा चुके हैं।

विशेष रूप से यह पत्र मैं आपको लिख रहा हूँ। परम पूजनीय डाक्टरजी से आपके स्नेहपूर्ण संबंधों से हम सभी परिचित हैं। मुझे तो इसकी विशेष जानकारी है। आपकी उपस्थिति अत्यावश्यक है, यह हमारी सहज भावना है। आपके मुझपर व्यक्तिगत स्नेह के कारण इस समारोह में आपसे भेंट की उत्कट इच्छा है। आप जैसे संघ के आत्मीयजनों से प्राप्त प्रोत्साहन से मुझपर जो उत्तरदायित्व आ पड़ा है, उसको मैं निभा सकूँगा, उससे मुझे धैर्य प्राप्त होगा। आपके आगमन से मुझे उत्साह और उल्लास मिलेगा। हम सभी की इच्छा का सम्मान कर इस प्रसंग पर आप कृपया पधारें। हमारी साग्रह प्रार्थना है कि आप आएँगे ही। इस विश्वास के साथ पत्र यहीं समाप्त करता हूँ। (मूल मराठी)

२. लोकमान्य तिलक के सहकारी को निमंत्रण

श्री नरसिंह चिंतामण केळकर, पुणे १६ जुलाई १६४०

संघकार्य को बढ़ाते हुए हम पूर्ण करेंगे। संघ का भवितव्य उज्ज्वल हो, इस दृष्टि से प.पू. डाक्टर जी ने उसको वैयक्तिक सामर्थ्य पर न खड़ा करते हुए चिरंतन तत्त्व को उसका स्थिर सक्षम अधिष्ठान बनाया। संघ अधिक जोर से और उत्साह से कार्यरत हो रहा है। दिनांक २१ के कार्यक्रम में आप जैसे वयोवृद्ध, ज्ञानवृद्ध, तपोवृद्ध महापुरुष उपस्थित होकर संघ को उपकृत करें। (मूल मराठी)

३. श्री गुरु गोविंदसिंह जी - अखंड प्रेरणास्रोत

संपादक, दैनिक प्रभात, अमृतसर २१ जनवरी १६४१

अमर श्री गुरुगोविंदसिंह जी के जन्मदिन की वर्षगाँठ के अवसर पर आप विशेषांक प्रकाशित कर रहे हैं, इस बात से बहुत संतोष हुआ। समय की कमी होने के कारण मैं इस विषय में लेख लिखने में असमर्थ हूँ। आपके वृत्त-पत्र के माध्यम से महान गुरु श्री गोविंदसिंह जी के चरणों में विनम्र अभिवादन करता हूँ। श्री गुरु गोविंदसिंह जी में संत, देशभक्त, संगठक तथा लोकनेता के गुण समाए हुए थे। उनका आदर्श जीवन सुप्त हिंदू समाज के जागरण का अखंड प्रेरणास्रोत है। हमारे निद्राधीन, खर्राटे भरनेवाले, स्वप्न देखनेवाले एवं नींद मे ही चलनेवाले बंधुओं के सुस्पष्ट पुनर्जागरण हेतु श्री गुरुजी की पवित्र स्मृति को आप जागृत कर रहे हैं, इसलिए आपका अभिनंदन करता हूँ। आपके वृत्त-पत्र के मार्गदर्शक श्री मास्टर तारासिंह जी को सादर प्रणाम। (मूल अंग्रेजी)

४. स्वतंत्र स्वायत्त संगठन है

मैनेजर, रोहतास इंडस्ट्रीज, डालमिया नगर ६ मार्च १६४२

...... राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ एक ऐसा संगठन है, जिसके कार्यक्रमों में शारीरिक प्रशिक्षण भी है। प्रशिक्षकों को अन्यान्य संस्थाओं को देने का यह संगठन नहीं। इसलिए मुझे खेद है कि हम आपकी सामान्य माँग पूरी नहीं कर सकेंगे। यदि आप सोचते हैं कि उस इलाके में हमारे कार्य के विस्तार हेतु आप अवसर दे सकते हैं और डालमिया नगर में

शाखा प्रारंभ की जा सकती है, तो कृपया सूचित करें। तदनुसार शाखा की स्थापना तथा संचालन की आवश्यक व्यवस्था करने हेतु सोच सकता हूँ।

५. हम अड़चन पार कर सकेंगे

प्रा. अप्पासाहेब फड़के, कोल्हापुर — १२ मार्च १९४२

...संघ के संबंध में आपके सहृदयतापूर्ण विचार देखकर मन को बहुत आनंद हुआ। श्री मेथे द्वारा समय-समय पर आपकी संघ के प्रति अत्यंत आत्मीयता व सहायता करने हेतु सदा सिद्धता के बारे में ज्ञात होता ही रहता था। इसलिए शीघ्रातिशीघ्र आपसे साक्षात् करने का संयोग प्राप्त हो, ऐसी इच्छा बहुत दिनों से हो रही थी। इसी बीच आपका पत्र भी प्राप्त हुआ, तब आपसे मिलने की आवश्यकता अधिक अनुभव हुई। इतनी आत्मीयता पैदा होने पर एक पग आगे बढ़ाकर पूर्ण तादात्म्य प्राप्त कर लिया जाए, यह प्रत्येक सौजन्ययुक्त व्यक्ति को लगना अपरिहार्य है। आपके सामने इस विषय में जो अड़चन पैदा हुई है, वह प्रामाणिकता से विचार करनेवाले को अनुल्लंघनीय लगना स्वाभाविक है। परंतु इसका दूसरा पहलू भी है। उसपर ध्यान देकर हम अड़चन पार कर सकेंगे, क्योंकि अपने विशाल धर्म में निरीश्वरवाद को भी स्थान है और अपने संपूर्ण छह 'आस्तिक' दर्शनों में भी निरीश्वरवादी... दर्शन है ही। इसका ज्ञान मुझसे आपको अधिक है। आपने इस विषय का गहरा अध्ययन किया है, ऐसी आपकी कीर्ति है। आपकी यह अड़चन मुझे बहुत कठिन नहीं लगती। परंतु इसके लिए आपसे भेंट होनी चाहिए। मैं २२.३.१९४२ को सांगली में हूँ। आप सांगली में पधारकर अपने दर्शन का लाभ दें। (मूल मराठी)

६. अंतरजातीय विवाह की मंगलकामना

श्री प्रतापचंद्र नवले, बी.ए. — ७ अक्तूबर १९४५

समाज-कल्याण के व्यापक दृष्टिकोण से एवं शुद्ध बुद्धि से आपने स्वयं जो जीवन-व्यवस्था की है, वह आपको व्यक्तिशः निरंतर सुखदायी हो और समाज जीवन में वैमनस्यशून्य एकत्व निर्माण करनेवाली हो, यही श्री परमेश्वर से मेरी प्रार्थना है। बुद्धि पुरस्सर एवं विशिष्ट ध्येय से प्रेरित होकर संबंध निर्माण करने से आपके सम्मुख सहज रूप से समाज के उत्कर्ष का लक्ष्य है। अतः यह विवाह परममंगलमय ही होगा, इसमें किंचित् भी संदेह नहीं। (मूल मराठी)

७. भारतीय संस्कृति की विशेषता

श्री एन.सुब्रम्हण्य अय्यर, त्रिवेंद्रम

८ अगस्त १९४९

....आपने मुझसे दो प्रश्न पूछे। दोनों ही प्रश्न ऐसे हैं कि जिनका पूरा स्पष्टीकरण देने में बहुत समय और जगह लगेगी। इसलिए मै आपका ध्यान संक्षेप में इन प्रश्नों पर खिचूँगा।

पहला प्रश्न : अपनी संस्कृति का एक शब्द में वर्णन किया जा सकता है। वह शब्द है– 'त्याग'। ईश्वर की उपासना करने के अनेक उपाय हैं, उसमें एक है लोगों की सेवा करना। ईशावास्योपनिषद् का पहला श्लोक यही वास्तविकता स्पष्ट करता है। अन्य लोग भोग में विश्वास करते हैं। उन्होंने भौतिक क्षेत्र में प्रगति करते हुए उसमें से सुख प्राप्त करने का प्रयास किया है। किंतु उससे उनकी इच्छाएँ और सुख प्राप्त करने की आकांक्षा और प्रबल हुई। इस स्थिति को शायद ही 'संस्कृति' कहा जा सकता है।

दूसरा प्रश्न : भौतिक और पारमार्थिक दोनों प्रकार का जीवन सामूहिक कल्याण के लिए बिताना, यह आदर्श है। आज की स्थिति में सामूहिक जीवन, याने समाज में स्थित विभिन्न समूहों का जीवन। व्यक्तिगत और सामूहिक अधिकार और कर्तव्यों के साथ एक दूसरे का भौतिक व्यवहार संतुलित करते हुए प्रायः यह जीवन बिताया जाता है। वह आर्थिक और राजनैतिक विषयों तक ही सीमित रहता है। इसे ही राज्य कहते हैं। राज्य यह लोगों के भौतिक और ऐहिक जीवन का एक साधन रहता है। हिंदू विचार, जीवन को पूर्णरूपेण देखते हुए इस वास्तविकता को मान्यता देता है।

मुझे पता है कि, यह पूरा स्पष्टीकरण नहीं है। किंतु गहरा चिंतन करनेवाले एक व्यक्ति के नाते आप की पहचान होने से मेरे कहने की भावना आप पूर्ण रूप से समझ लेंगे और अपने भाइयों को मुझसे अधिक प्रभावी ढंग से समझाएँगे, इसके संबंध में मेरे मन में कोई संदेह नहीं है।

अपनी कार्यपद्धति का यदि विचार किया जाए तो अपनी संस्कृति का पुनरुज्जीवन करना आज का सबसे आवश्यक कार्य है। इस प्रकार के पुनरुज्जीवन से लोगों को बंधुत्व के मजबूत सूत्र में बाँधकर हम समाज को शक्तिशाली बना सकते हैं। उसके बाद ही हमारे मन में संस्कृति का अभिमान पैदा होगा, जिससे हमें उसका अध्ययन करने की और उसके

तत्त्व दैनंदिन जीवन में सम्मिलित कर व्यवहार में लाने की प्रेरणा मिलेगी।

मुझे आशा है कि राष्ट्र-निर्माण के इस कार्य में आप जैसे लोग यदि जुट जाएँगे तो अपने समाजजीवन मे नई चेतना फूँकने में हम समर्थ होंगे। (मूल अंग्रेजी)

८. 'हितवाद' के संवाददाता को दिया हुआ संदेश

संपादक 'हितवाद' १५ अगस्त १९४९

इस ऐतिहासिक दिवस पर हम सब प्रण करें कि हम अपने निजी या पक्षगत स्वार्थ से ऊपर उठकर संपूर्ण देश के हित को ही सर्वोपरि मानेंगे और अपनी प्राचीन राष्ट्रीय संस्कृति के सुदृढ़ आधार पर देश में सामंजस्यपूर्ण सामूहिक जीवन खड़ा करने के लिए प्रयास करेंगे, जिससे हम सभी अंतर्गत और बाह्य समस्याओं का सामना शक्ति और साहस के साथ कर सकें।

(मूल अंग्रेजी)

९. निष्पक्ष समाचार-पत्रों की आवश्यकता

प्रिय श्री.एम.सी. शर्मा, २० अगस्त १९४९

'नेशनल गार्डियन' के स्वाधीनता-दिवस विशेषांक की प्रतियाँ मुझे मिलीं। आभारी हूँ। मैंने इस विशेषांक का हरेक पन्ना पढ़ा। मुझे हर एक पन्ने पर निष्पक्षता और साहस अंकित हुआ है, ऐसा लगा। यदि हमें किसी गुट, पार्टी या सत्ता का गुलाम न बनने वाले ऐसे समाचार-पत्र मिलें, तो लोगों का सहजता से यथायोग्य प्रबोधन होगा।

किंतु व्यक्तिशः मुझे थोड़ा संकोच हुआ है। आपने मेरे संबंध में ऐसा लिखा है कि स्वयं को पहचानने में मुझे कठिनाई हुई। अपने देश में ऐसे अनेक सम्माननीय व्यक्ति हैं, जिनको यह सम्मान देना चाहिए। यदि आप वैसा करते और मुझे बचाते, तो अच्छा होता।

किंतु मैं इसके संबंध में आपसे कुछ नहीं कह सकता, क्योंकि व्यक्ति के रूप में अपने 'लक्ष्य' को निश्चित करना व आपके पास जो जानकारी है, उसके आधार पर उसे लोगों के सम्मुख प्रस्तुत करना, यह अधिकार पूर्णतः आपको ही है। व्यक्तिगत संदर्भ छोड़कर यह विशेषांक विचारों को खाद्य देने के लिए पर्याप्त सक्षम है। पर्याप्त प्रतियाँ भेजने के लिए मैं आपका आभारी हूँ। (मूल अंग्रेजी)

१०. 'नेशनल गार्डियन' समाचार-पत्र से अपेक्षा

श्री एम.सी.शर्मा, मुंबई — १ दिसंबर १९४९

२६ जनवरी १९५० को 'नेशनल गार्डियन' के गणतंत्र दिवस के उपलक्ष्य में प्रकाशित होनेवाले संस्करण हेतु आपने स्नेहवश मुझसे संदेश भेजने के लिए कहा है। यद्यपि मै स्वयं को इस प्रकार के संदेश लिखने हेतु योग्य नहीं समझता हूँ। परंतु आपके प्रेम से अभिभूत होकर तथा अपने उस कार्य, जिसका मैं प्रतिनिधित्व करता हूँ, की ओर से कुछ पंक्तियाँ लिख रहा हूँ।

समाचार-पत्र संस्थाएँ एक या दूसरे राजनैतिक दल से अपने को प्रतिबद्ध कर लेती हैं और परिणामतः स्वतंत्र विचार के प्रसार-प्रचार का अधिकार खो देती हैं। प्रेस पर जिनका नियंत्रण हो, उन्हीं के विचार प्रसृत किए जाते हैं। आपने इनसे स्वतंत्र रहने का साहस किया हुआ है। किसी के भी नियंत्रण के अधीन न रहने के आपके साहसपूर्ण संकल्प के लिए आपका अभिनंदन करता हूँ। क्षुद्र विघटनकारी प्रवृत्तियों और दलगत स्पर्धाओं से ऊपर उठने का और उनपर साहसी प्रहार करने का आपको सुअवसर प्राप्त हुआ है। मुझे विश्वास है कि नेशनल गार्डियन स्वस्थ राष्ट्रीय वातावरण बनाने में प्रयत्नरत रहेगा तथा हमारे विघटित समाज में स्थायी एकता के सूत्र का निर्माण करेगा। व्यक्ति, घटना, मत-मतांतरों पर टिप्पणी एवं निंदा करने में मर्यादा का पालन करेगा। समाचार पत्र का शैक्षिक मूल्य सर्वोपरि है। पर आज के वातावरण में वह घृणा और आघात करने के निम्नस्तर तक उतर आया है। इस कारण संगठित समाज पर इनका बुरा परिणाम होता है।

मेरी इच्छा है कि 'नेशनल गार्डियन' अपने नाम को संपूर्णतः सार्थक करे। मैं उसकी सफलता के लिए प्रार्थना करता हूँ। (मूल अंग्रेजी)

११. 'कल्याण' में लिखे लेख की मर्यादा

श्री हनुमानप्रसाद जी पोद्दार, जौनपुर — २५ दिसंबर १९४९

न ही मैं लेखक हूँ तथा न ही अधिक शिक्षित, परंतु 'कल्याण' मासिक के 'हिंदू संस्कृति विशेषांक' हेतु कुछ लिखूँ, ऐसा आपने आग्रह किया है। आपके प्रति मेरे अंतःकरण में जो आदरभाव व श्रद्धा है, उसी प्रकार आपका मुझ पर जो प्रेम है, उसी कारण मैंने यह लेख लिखने का

साहस किया है। विषय अत्यंत व्यापक है, किंतु लेख की मर्यादा निश्चित होने के कारण विवेचन संक्षिप्त हो गया है। कह नहीं सकता, यह आपको पसंद भी आएगा अथवा नहीं। यदि आपको पसंद न आए तो इसे प्रकाशित न करें।

आज 'हिंदू' शब्द कहने में शर्म आती है तथा इससे जो बोध होता है, उसके प्रति उदासीनता नजर आती है। अति प्राचीनकाल से चला आ रहा सांस्कृतिक जीवन-प्रवाह नूतनतम सभी समस्याओं का निराकरण करने वाला, चिरंजीवी तथा चैतन्ययुक्त है। इस संस्कृति का विस्मरण कर अज्ञानवश अथवा भ्रामक युक्तिवाद के फलस्वरूप अन्य अहिंदू विचार-प्रणाली को स्वीकार करना ही अपने देश में प्रगतिशीलता मानी जा रही है। यह आत्मविस्मृति राष्ट्र-जीवन में संकट-निर्माण कर संपूर्ण जीवन का शोषण कर डालेगी। राष्ट्र की इस भावहीन अवस्था में उसकी रक्षा हेतु अपने दिव्य अमृतमयी सांस्कृतिक प्रवाह के यथार्थज्ञान को इस भाग्यहीन हिंदू समाज को देकर, फलस्वरूप समाज में उत्पन्न हुए नररत्नों एवं देवपुरुषों का आदर्श सब लोगों के सामने प्रस्तुत कर, उद्धार का अति श्रेष्ठ कार्य 'कल्याण' पत्रिका के द्वारा तथा विशेषतः इसके 'हिंदू-संस्कृति विशेषांक' द्वारा आप कर रहे हैं।

मैं यदि इस विषय में आपकी योग्य सेवा न भी कर सका हूँ, तो भी आशा करता हूँ कि आज पथभ्रष्ट हुआ अपना हिंदू समाज उपरोक्त विशेषांक को पढ़कर अपनी जीवन प्रणाली की श्रेष्ठता को समझेगा और इसे उत्तम जानकर स्वीकारते हुए तुच्छ अभारतीय विचारप्रवाह का परित्याग करेगा। परमपिता परमात्मा से मेरी यही प्रार्थना है कि वे हम लोगों पर कृपा कर अपनी अमर संस्कृति के आधार पर राष्ट्र जीवन निर्माण करने की प्रेरणा व ज्ञान दें व अपने प्रिय भारत वर्ष द्वारा विश्वशांति स्थापित कराएँ।

आपके इस श्रेष्ठ कार्य हेतु मैं धन्यवाद कैसे दूँ? क्योंकि आप में और मुझमें इतना परायापन तो है ही नहीं।

१२. अथर्वशीर्ष का अनुष्ठान

श्रद्धेय ज्योतिषाचार्य पं. रघुनाथशास्त्री पटवर्धन, ८ फरवरी १९५०

आपने गणपति अथर्वशीर्ष का कोटिजप अनुष्ठान करने की

योजना बनाई है– यह सुनकर बड़ी प्रसन्नता हुई। शास्त्र के अनुसार मंत्रजप करने से अभीष्ट सिद्धि होती है और निःस्वार्थ रीति से ऐसा जपयज्ञ पूरा होने के पश्चात् सर्वत्र सुख, शांति और माँगल्य का वातावरण निर्माण हो सकता है– ऐसा जानकारों का अनुभव है। उसमें ही विघ्नहर्ता और मंगलदाता इन नामों से जो जाना जाता है और जिस पर भक्तों की श्रद्धा है, ऐसे श्री गणपति का परमपवित्र मंत्रों द्वारा आह्वान होता है तो सभी प्रकार के संकटों का निराकरण करने के लिए आवश्यक बुद्धि और शक्ति राष्ट्र को प्राप्त होगी और समृद्धि के मार्ग की सब बाधाएँ समाप्त होंगी, इसके संबंध में संदेह नहीं।

यह परमेश्वरी कृपा ही योग्य दिशा से, दैवी संपदा से युक्त ऐसे आचरण से होनेवाले सुसंगठित प्रयास भारत को विश्व में सर्वश्रेष्ठ स्थान प्राप्त करा देगी, ऐसा मुझे लगता है। वैसा ही हो– ऐसी प्रार्थना प्रभु के सम्मुख करता हूँ और आपकी योजना सफल हो, ऐसी कामना करता हूँ।

(मूल मराठी)

१३. प्रस्तावना लिखने का अनुरोध न करें

श्री इ.इलिंजामिट्टन, मुंबई — २७ जनवरी १९५१

संघ पर लिखी जानेवाली पुस्तक की पांडुलिपि प्राप्त हुई। इस पुस्तक की प्रस्तावना लिखने के लिए आपने मुझे अनुरोध किया है, इसलिए मैं कृतज्ञ हूँ, तथापि मैं क्षमा चाहता हूँ। कारण, मैं समझता हूँ ऐसा करना उचित नहीं होगा तथा मुझे भय है कि ऐसा करने से अपने ही हाथों अपनी पीठ थपथपाने जैसे पाप का मैं भागीदार बनूँगा। मैंने पांडुलिपि पढ़ी है। संघ के कार्यकर्ता अथवा संघ के किसी सदस्य को लाभ पहुँचाने के बाह्य हेतु बिना केवल लोगों की भलाई के लिए ही कार्य करनेवाले इस संगठन के विषय में जो भ्रांत धारणाएँ लोगों में फैली हुई हैं, वे बहुत सीमा तक दूर हो जाएँगी। समाज से पूर्ण एकात्मता का भाव रखकर समाज में पूर्ण विलीनीकरण के सिवाय संघ अन्य कुछ चाहता है, इस तरह की भ्रांत धारणा संघकार्य की अंतर्भावना को ही न्याय नहीं देती।.....

मुझे लगता है आप मेरी कठिनाई से अवगत होंगे, अतः प्रस्तावना न लिखने के लिए मुझे क्षमा करेंगे। मुझे लगता है कि जो तटस्थ हैं, परंतु जिसने संघकार्य का अभ्यास किया है और जो निष्पक्षता से तथा पूर्वाग्रहरहित

दृष्टि से मूल्यांकन कर सकता है, ऐसे किसी से प्रस्तावना लिखवाना उचित होगा। (मूल अंग्रेजी)

१४. हस्ताक्षर-संग्रह का उद्योग अंग्रेजी ढंग का शौक

श्री रजनीकांत मुद्‍गल १६ सितंबर १९५१

....भिन्न-भिन्न लोगों की हस्ताक्षर-स्वाक्षरियाँ एकत्रित करने का उद्योग मुझे ठीक नहीं लगता। यह तो अंग्रेजी ढंग के शौक, जो अपने यहाँ के नवयुवक बुद्धि की गुलामी के कारण अपनाते हैं, उसी में से ही एक है। किसी का हस्ताक्षर पास रखने से यदि उस व्यक्ति के संबंध में मन में सद्‍भावना हो, तो उसके तत्त्व तथा अन्य गुण अपने जीवन में लाने का प्रयत्न करना उचित है। अतः मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप इस निरुपयोगी तथा बुद्धि की दासता का केवल परिचय देनेवाले तुच्छ उद्योग से अपने को हटाकर जीवन सुयोग्य बनाने की दृष्टि से ज्ञान तथा चारित्र्य, त्याग तथा नम्रता आदि समाजहित साध्य करने के गुणों की निरंतर उपासना करें। भगवान आपको सुबुद्धि एवं सुयश दे।

१५. राष्ट्रोत्थान साहसी युवक ही कर सकते हैं

श्री जे.एम.वाटाणे, विदर्भ महाविद्यालय, अमरावती २८ सितंबर १९५१

.....आपने मेरे संबंध में जो आदरयुक्त उल्लेख किया है, वह आपकी तथा शिष्टाचार की दृष्टि से यद्यपि ठीक हो, तथापि मैं तो आपका एक भ्राता मात्र हूँ। कालगणना के अनुसार आयु कुछ अधिक हो गई है, इससे अधिक कुछ नहीं। आपके इस उल्लेख से आपकी सुजनता व्यक्त हुई है, जिससे मुझे अतीव प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है।

आपके नेतृत्व में इस वर्ष का यह स्नेह-सम्मेलन सफलतापूर्वक संपन्न हो छात्रबंधुओं में विशुद्ध स्नेहभाव दृढ़तर करेगा, यह विश्वास है। ऐसा ही निःस्वार्थ, निरपेक्ष, एकात्म्य केवल अपने बीच ही नहीं, अपितु समस्त देशबांधवों में जागृत कर उत्कट राष्ट्रभक्तिपूर्ण समर्थ जीवन देश में प्रस्थापित करने की आवश्यकता है। इसी एकात्म्यपूर्ण राष्ट्रभक्ति से ही सच्चे चारित्र्यसंपन्न समाज तथा राष्ट्रसेवकों की परंपरा निर्माण हो सकेगी और इस प्रकार के श्रेष्ठ उदारचरित राष्ट्रसेवक अपनी पूज्यतमा मातृभूमि का मस्तक गौरव से ऊँचा उठा सकते हैं तथा ऐसा प्रभावी तथा सुखसमृद्धिपूर्ण

राष्ट्रजीवन निर्माण कर सकते हैं।

जीवन में भोगप्रवणता को त्याग केवल राष्ट्रहितसाधक, स्वार्थशून्य भाव भरकर यह राष्ट्रोत्थान कार्य सफल करने का साहस आज का युवक वर्ग ही कर सकता है। आप तथा अन्य छात्रबंधु अपनी इस श्रेष्ठता को पहचानते ही हैं। अतः सद्यःस्थिति में जो अनेकविध समस्याएँ राष्ट्र के सम्मुख खड़ी हैं, उन्हें नष्ट करने के दायित्व को निभाने के लिए योग्यतम बनने का उद्योग आप सब मिलकर करें।

१६. हिमालय-सा उत्तुंग राष्ट्रजीवन खड़ा हो

श्री नानकचंद जी, दिल्ली　　　　२६ दिसंबर १६५१

'wisdom of India' (भारतीय ज्ञान-संपदा) नामक आपकी पुस्तक मैंने सावधानी से पढ़ी। विषय तो महान है और उज्ज्वल भविष्य के निर्माण के लिए हम अपने देदीप्यमान इतिहास से समुचित प्रेरणा ग्रहण करें, इस दृष्टि से भी आवश्यक है। पाश्चात्यों के सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक व्यवस्थाओं के इतिहास से तथा अन्य देशों के नेताओं के जीवन से प्रेरणा ग्रहण कर अपने राष्ट्रीय जीवन के पुनर्निर्माण का प्रयत्न दासता की मनोवृत्ति का द्योतक है। विदेशी राज्यकर्ताओ द्वारा सदियों से हुए भीषण अत्याचारों के बाद भी राष्ट्रजीवन के पुनर्निमाण हेतु उनसे प्रेरणा लेने के प्रयत्न से कोई भी लाभ नहीं होगा। विदेशियों का जीवन तथा इतिहास अपनी प्रगति का लेखा-जोखा परखने, उसका तुलनात्मक अध्ययन करने के अतिरिक्त इससे हमारा कोई लाभ नहीं होगा। अपनी श्रेष्ठ परंपराओं का ध्यान रखते हुए हमें अपने राष्ट्रजीवन की नींव रखनी होगी, न कि परकीयों के अनुकरण से।

जब तक प्रत्येक व्यक्ति को अपने भूतकाल के प्रति समुचित गौरव की भावना नहीं होती, अपनी प्रगति का ज्ञान नहीं होता, उत्थान-पतन के विभिन्न पहलुओं का परिचय नहीं होता, राष्ट्र-जीवन से संबंधित इन अंगों के ज्ञान से वह परिपूर्ण नहीं होता तथा अपने पूर्वजों से देश के लिए परिश्रम करने की प्रेरणा एवं चेतना प्राप्त नहीं करता, तब तक उस राष्ट्र के उत्थान की अपेक्षा नहीं की जा सकती। आपकी पुस्तक सही समय पर प्रकाशित हुई है। इस पुस्तक से हमारे भूतकाल के विषय में फैली हुई भ्रांत धारणाएँ मिट जाएँगी तथा निःसंदिग्ध रूप से यह सप्रमाण सिद्ध होगा कि हमारा राष्ट्र जगद्गुरु था। अंधकार, अज्ञान तथा पशुतुल्य मानसिकता से

परिपूर्ण दुनिया के लोगों का नेतृत्व एवं मार्गदर्शन करने के लिए यह ग्रंथ हमें प्रेरणा देगा।

हमारा श्रेष्ठत्व इस पर निर्भर नहीं है कि दुनिया के लोग मानते हैं या नहीं। उसका श्रेष्ठत्व तो उत्तुंग अभेद्य हिमालय सा है। (मूल अंग्रेजी)

१७. भारतीय जीवन का परम आधार वेद ही है

पं. ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु, ३१ जुलाई १९५२

वेदवाणी का वेदांक प्रसिद्ध करने का आपका संकल्प अतीव आनंद देने वाला है। इस महत्त्वपूर्ण अंक में कुछ लिखने की मेरी योग्यता नहीं है। परंतु भारतीय जीवन का परम आधार प्रत्यक्ष परंपरा से वेद ही है। इतना ही नहीं, अखिल मानव की सर्वांगीण उन्नति एवं विकास के चिरंतन पथ-प्रदर्शक वेद ही हैं। उन्हीं से जीवन की सब समस्याएँ सुलझकर जगत् में सुख, शांति, ओज, तेज आदि से परिपूर्ण मानव-समाज की व्यवस्था होगी– यह मेरा दृढ़ विश्वास होने के कारण वेदों का प्रसार तथा श्रद्धा एवं बुद्धि से अभ्यास होना इस वेदभूमि में परम आवश्यक है, ऐसा मैं मानता हूँ और इस कारण आपके इस महान प्रयत्न के प्रति आदरयुक्त भक्ति रखता हुआ परमपिता श्री परमात्मा से उसकी सफलता की प्रार्थना करता हूँ।

१८. अन्य भाषाओं का साहित्य नागरी लिपि में प्रकाशित हो

पं. वनमाली मिश्र, ब्रह्मपुर २८ फरवरी १९५३

.... नागरी लिपि में उड़िया भाषा का मासिक 'सर्वोदय' देखकर और पढ़कर अतीव प्रसन्नता हुई। इस लिपि का अंगीकार करते ही उड़िया भाषा की दुर्बोधता समाप्त हो गई और मैं मासिक के उत्तम विचारपूर्ण लेख पढ़कर उत्कल प्रांत के साथ अनुभव में रहनेवाली एकात्मता को अधिक स्पष्ट साकार रूप से साक्षात् कर सका। अपने देश की विभिन्न भाषाओं ने कुछ अंश में क्यों न हो, अपना साहित्य नागरी में प्रकाशित किया तो अखंड भारतीय जीवन अतिशीघ्र सजग हो उठेगा। आपका यह आयोजन साहसपूर्ण तो है ही, साथ ही राष्ट्रीय ऐक्य का साधक होने के कारण आदरणीय है तथा अन्य भाषाभाषियों के लिए अनुकरणीय आदर्श है। मुझे आशा है कि अन्यान्य भाषाओं में भी यही प्रयत्न होकर भारत का मौलिक एकरस जीवन अविलंब प्रस्फुट होगा और समस्त भारतीय बांधव उसके

अनादिकाल से बहने वाले दिव्य प्रवाह में सुस्नात होकर विच्छेद के मल से मुक्त होंगे तथा फिर से जगत् में भारतीय राष्ट्र की अमर पताका का गुणगान एक स्वर में गूँजता सुनाई देगा।

१९. श्री वेंकटराम शास्त्री को श्रद्धांजलि

श्री टी.वी.राममूर्ति, चेन्नै — २ जुलाई १९५३

सत्य और न्याय के प्रति प्रेम, अत्याचार-अन्याय के प्रति घृणा, संघ के ध्येय, कार्यपद्धति तथा संघकार्य के प्रति प्रेम होने से श्री टी.आर. वी.शास्त्री जी ने बिना कहे हमारे भीषण संकटकाल में स्वयंस्फूर्ति से सहायता की। इस उपकार को मैं या संघ का कोई भी सदस्य कदापि नहीं भूल सकता। आयु की जिस वृद्ध-अवस्था में विश्राम करना तथा युवा पीढ़ी को मानवीय गुण अपनाने का उपदेश करना ही कर्तव्य बनता है, उस अवस्था में उन्होंने चेन्नै से दिल्ली, दिल्ली से नागपुर, नागपुर से सिवनी की (जहाँ-जहाँ मैं स्थानबद्ध था) अनेक बार यात्रा की।

उनकी स्मृति, शोकसागर में डूबे हम सबको शुद्ध जीवन, मातृभूमि, समाज तथा हमारी गौरवशाली परंपरा के प्रति निष्ठा रखने, अथक परिश्रम, सखोल अध्ययन, संतुलित विचार तथा सुव्यवस्थित रूप से गहन रचनात्मक कार्य करने की प्रेरणा दीपस्तंभ के समान देती रहेगी। ईश्वर हमें उनका अनुकरण कर उनकी स्मृति जीवित रखने की प्रेरणा दे। (मूल अंग्रेजी)

२०. भारतीय दर्शन के अध्येता संघकार्य में योगदान दें

प्रा. पी.शंकर नारायणन, चेन्नै — ३ सितंबर १९५३

हमारे संघ-कार्यकर्ताओं के संपर्क में रहकर उन्हें आप कार्य में व्यस्त रखेंगे तो हम पर बड़ी कृपा होगी। आपको ज्ञात ही होगा कि इस कार्य के लिए राजकीय दृष्टिकोण एवं मानसिकता रखनेवाले व्यक्तियों की नहीं, किंतु जिन्हें अपने प्राचीन राष्ट्रजीवन तथा उसके शाश्वत जीवनमूल्यों का परिपूर्ण ज्ञान है, जिनका अपनी संस्कृति के आदर्शों के अनुसार आचरण है तथा जो समाज में सांस्कृतिक मूल्यों का सही प्रसार करना चाहते हैं, उनकी हमारे कार्य के लिए अत्यंत आवश्यकता है। आप भारतीय दर्शनशास्त्र के विद्वान पंडित हैं तथा रामकृष्ण मिशन से जो भारतीय दर्शन का प्रत्यक्ष आचरण कर रहा है, संबंधित हैं। आप इस कार्य में बहुमूल्य

योगदान दे सकते हैं। मुझे आशा है कि आप इस विषय पर विचार कर हमारे कार्यकर्ताओं से विचार-विनिमय करेंगे और आपके कथनानुसार उज्ज्वल भविष्य निर्माण हेतु आदर्श शुद्ध जीवन अनुभव प्रदान करेंगे।

(मूल अंग्रेजी)

२१. जनता की स्मृति जागृत रखी जाए

श्री लाला हरदेवसहाय जी, दिल्ली ६ नवंबर १९५३

....जनसाधारण की स्मरणशक्ति अति सीमित होने के कारण वह इसे (गोहत्या-निरोध नितांत आवश्यक है) भूल गई है। यह देखकर जनता की स्मृति जागृत रखने में सदैव सचेष्ट रहने की आवश्यकता अधिकाधिक प्रतीत होती है। अपना संघकार्य यद्यपि किसी व्यक्तिविशेष के भले बुरे भावों की स्मृति का काम नहीं, तथापि जो स्थायी राष्ट्रश्रद्धा के निर्माण एवं जागरण तथा चिरसंरक्षण के लिए अनिवार्य हों, ऐसी घटनाएँ, विचार, कथन आदि को प्रमाणों के नाते सम्मुख रखकर अपने अंदर राष्ट्रसेवा का शुद्ध निश्चय रखने का, राष्ट्र सेवा के कर्तव्य के संस्कार को प्रज्ज्वलित रखने का, होने के कारण दिन-प्रतिदिन शुद्ध राष्ट्र संस्मरण के इस महनीय कार्य की निरपवाद महत्ता हमारी समझ में आ सकती है।

जो हो, इस वर्ष की गोपाष्टमी तक के आंदोलन से इस कार्य का समारोप नहीं होता। कानून से गोवंश की हत्या बंद होने के बाद भी गोपालन एवं संवर्धन का कार्य करवाना शेष रहता ही है।

२२. धर्मांतरण रोकने का उपाय– जनजागरण

श्री कृष्णानंद जी, त्रिवेंद्रम २५ नवंबर १९५३

आपकी 'The Myth of St.Thomas Exploded' नामक पुस्तक पढ़ी। आपने ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर यह संपूर्णतया सिद्ध कर दिखाया कि केरल में सेन्ट थॉमस का कार्य कपोल-कल्पित है। इसे सत्य का कोई आधार नहीं। एक सच्चे इतिहास-अन्वेषक की भूमिका निभाते हुए, ईसा के नाम से स्थानीय ईसाई मिशनरियों के प्रक्षोभक प्रचार के बावजूद आपने अत्यंत संतुलित भाषा में– जो कार्य बहुत कठिन है– किसी की भी कटु आलोचना न करते हुए विषय की जो चर्चा की है, उसके लिए मैं आपका अभिनंदन करता हूँ।

इस सत्य के आविष्कार के बाद भी ईसाई मिशनरियों का हिंदू समाज की बदनामी करने का तथा अराष्ट्रीय प्रवृत्ति के विदेशी मत-प्रचार का कार्य बंद नहीं होगा। इसके लिए लोगों के पास जाकर, उन्हें समझाते हुए, उनका दैनिक जीवन कठिनाइयों से मुक्त कर अधिक सुकर बनाने की आवश्यकता है।

मुझे आशा है कि अपने बंधुओं को तथाकथित ईसाई उत्पात से बचाने के इस विधायक पक्ष पर ध्यान केंद्रित किया जाएगा तथा लोगों में अपने परंपरागत धर्म के प्रति समुचित आस्था जगाकर उनका मार्गदर्शन किया जाएगा। आपकी पुस्तक के समयोचित प्रकाशन से यह कार्य सिद्ध होगा। (मूल अंग्रेजी)

२३. उत्पादक उद्योगों की शिक्षा आवश्यक

श्री पं. पुरुषोत्तमदास तिवारी, २ अप्रैल १९५४

आपसे टेक्निकल एजुकेशन एसोसिएशन इंडिया (इलाहाबाद) के संबंध में जानकारी प्राप्त की तथा उसकी शिक्षा-योजना तथा संस्था के संचालन आदि विषयों को जान लिया।

औद्योगिक शिक्षा का प्रसार देश में आवश्यक है— यह बात सर्वमान्य है। यद्यपि शिक्षा का मूल उद्देश्य मनुष्य को आदर्श मानव बनाना इस योजना में स्पष्टतया दिखता नहीं, तथापि मनुष्य को स्वतंत्र रूप से, स्वकष्ट से, स्वाभिमान से जीवन-निर्वाह करने की तथा साथ ही देश की संपत्ति समृद्ध करने की पात्रता करा देना भी शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण अंग होने से इस संस्था के द्वारा आपने एक महत्त्व का कार्य उठाया है, यह निस्संदेह है। केवल चाकरी करने की शिक्षा का अब समय नहीं। उत्पादक उद्योगों की शिक्षा देकर आगामी पीढ़ी देश को संपन्न कर सके, इसी बात की विशेष आवश्यकता है। अतः आपकी इस योजना का मैं हृदय से स्वागत करता हूँ।

२४. कृतज्ञता ज्ञापन

स्टेशनमास्टर, भोपाल २३ जुलाई १९५४

मुझे बताने के लिए नागपुर से जो दुःखपूर्ण समाचार (श्री गुरुजी के पिता श्री की मृत्यु का समाचार) आपके पास पहुँचा, उसे आपने इतनी

शुद्ध सहानुभूतिपूर्ण भावना से मेरे पास पहुँचाया कि उससे मेरे हृदय में आपके संबंध में गहन श्रद्धा एवं आदर निर्माण हुआ। समाचार अनपेक्षित होने के कारण मुझे जो मनःक्षोभ हुआ था, उसे संवरण करने में मैं आपके प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करना भूल गया। आपने अति तत्परता तथा सुजनता से मुझे समाचार देने की कृपा की, उस निमित्त इस पत्र द्वारा मैं अपनी तथा मेरे यहाँ के सब बंधुओं की ओर से आपको अंतःकरणपूर्वक धन्यवाद देता हूँ। आशा है आगे आपसे अधिक परिचय होकर प्रत्यक्ष में ही मैं आपके प्रति अपनी श्रद्धा अर्पित कर सकूँगा।

२५. गजेंद्रशुंडा से उत्पाटित कमल-पुष्प

श्री बाबूराव सोमण, २७ अगस्त १९५४

मेरा एक पुराना मित्र तथा सहयोगी और आपके सुपुत्र हेमंत की गोवा मुक्ति संग्राम में मृत्यु हो जाने का आकस्मिक समाचार आज पढ़ने को मिला। मातृभूमि की मान-मर्यादा रक्षणार्थ शहीद होकर वह धन्य हुआ है–

द्वाविमौ पुरुषव्याघ्र सूर्यमंडलभेदिनौ।
परिव्राड् योगयुक्तश्च रणे चाभिमुखो हतः।।

(महाभारत, ३३-६१)

उसकी मृत्यु के दुःख के कारण मन की अवस्था बहुत विचित्र है। कुछ दिन पूर्व उसके द्वारा अपनी पूज्य माताजी को लिखा हुआ पत्र प्रकाशित हुआ, तब आप दोनों ने कितना गौरव अनुभव किया होगा कि पुत्र हो तो ऐसा हो। उस अभिमानपूर्ण शुद्ध भावना के साथ उसकी कुशलता का योग होता तो? दैव से वह नहीं देखा गया तथा उसने यह समझकर कि दुःख के बिना मानो निकटवर्ती का श्रेष्ठत्व पहचानने की दृष्टि प्राप्त नहीं होती, उसने आप पर यह आघात किया तथा आप दोनों को वृद्धावस्था में शोकसागर में धकेल दिया। आप धीरज धारण करें, लाखों में एकाध को प्राप्त होनेवाली दिव्य मृत्यु का उसने वरण किया, इस गौरव-भावना से आप अपने मन को दृढ़ करें। ईश्वर तथा हेम की दुःखी माता को सांत्वना दें, यही प्रार्थना।

धन्य है वह माता, जिसने राष्ट्र को ललामभूत पुत्र देश के लिए

बलि देकर कुल-नाम अमर किया। वीर सावरकर की इन पंक्तियों का स्मरण कर आप धीरज रखें–

अनेक फूल खिलते हैं, खिलकर सूख जाते हैं–
कौन उनकी महत्ता की, गिनती करता है ?
परंतु जो गजेंद्रशुंडा से उत्पाटित होकर हरि के लिए चढ़ा
कमल-फूल वह अमर हुआ, मोक्षदायी पावन।
ऐसे ही सभी फूल खिलें, श्रीरामचरणों में अर्पित हों
कुछ सार्थकता हो, इस नश्वर देह की
अमर है वह वंशलता, ईश-कार्यार्थ निर्वंश जिसका।।
दिगंत में फैले सुगंधता, उसके परिमल की।।

(मूल मराठी)

२६. जीवन-साधना

(देश के श्रेष्ठ पुरुषों से संपादक महोदय द्वारा मननीय विचार आमंत्रित किए गए थे, उसके उत्तर में–)

श्री सत्यकाम विद्यालंकार, संपादक, 'धर्मयुग', मुंबई २९ सितंबर १९५४

"मैं नहीं, तू ही!"

२७. समस्त देशबंधुओं का दुःख अपना ही दुःख है

श्री शिवनारायणजी बंग, राजमहेंद्री ५ अक्तूबर १९५४

आपको राजमहेंद्री मारवाड़ी व्यापारियों की तरफ से बिहार के बाढ़-पीड़ित बंधुओं की सहायता के निमित्त भेजा हुआ धन प्राप्त हुआ। बड़ा अनुग्रह हुआ। आपकी इच्छा कि इस धन का विनियोग वस्त्र-वितरण के लिए हो, मैं बिहार में इस कार्य को चलानेवाले स्वयंसेवक कार्यकर्ताओं को सूचित कर रहा हूँ। आप विश्वास रखें कि इस धन का सही उपयोग होगा।

जिन बंधुओं ने इस धन के रूप में अपनी उदारबुद्धि का, पर-पीड़ा से द्रवित होने की करुणा का, सात्विकता का यह परिचय दिया है, समस्त देश के बंधुओं का दुःख अपना ही दुःख है, यह योग्य और आवश्यक धारणा प्रकट कर एक उत्तम उदाहरण उपस्थित किया है। उन सबका मैं अभिनंदन करता हूँ। सब दुःखी बंधुओं की ओर से इस सामयिक कृपा के लिए सबको अंतःकरणपूर्वक धन्यवाद देता हूँ।

२८. दयानंद महर्षि की प्रेरणा फिर जाग उठेगी

श्री भारतेंद्र नाथ, १० अक्तूबर १९५४

.... महर्षि दयानंदजी की स्मृति में आप अतिरिक्तांक प्रकाशित कर रहे हैं, वह उचित ही है, क्योंकि आधुनिक भारत के निर्माण में सर्वप्रथम प्रेरक के नाते उनका स्थान अनन्य है। अपनेपन का उद्दीप्त स्वाभिमान लेकर उन्होंने सोए समाज को जागृत किया। अनुकरण की दासवृत्ति पर प्रहार कर स्वतंत्र प्रतिभायुक्त राष्ट्रीय अस्मिता का संदेश दिया। जीवन का कोई क्षेत्र उनके तेजस्वी विचारों से अछूता नहीं रहा। उनके उपकारों से उऋण होने के लिए उनके निर्दिष्ट स्वाभिमान को लेकर जाति-जागरण का कर्तव्य पूरा करने के हेतु सचेष्ट रहना यही उचित होगा। केवल स्मरण-समारोह आदि बाह्यांगों से क्या होगा? अतः उनकी पवित्र स्मृति को अंतःकरण में धारण करनेवाले सब व्यक्तियों को आत्मनिरीक्षण कर उनके उपदेश एवं जीवनचरित्र में प्रकट गुणों को सब कितना चरितार्थ कर रहे हैं, इसकी जाँच-पड़ताल कर योग्य जीवन निर्माण की ओर सतर्कता से ध्यान देना आवश्यक है। आशा है, महर्षि की प्रेरणा फिर जाग उठेगी और जीवन में उत्तम तेजस्विता प्रकट होगी।

२९. यंत्र और मानव का सामंजस्य आवश्यक

श्री रामेश्वर सहाय शंखधर, उझनिया, जि. बदायूँ ११ अक्तूबर १९५४

....स्वयं जिस बात का मंडन करने की इच्छा हो, उसका आचरण करना आवश्यक रहता है।

प्रत्येक बात में एक मध्य मार्ग रहता है। पूर्वकाल में अपने पूर्वजों ने यंत्रों का सर्वथा परित्याग किया था, ऐसा इतिहास नहीं है। यंत्र और मानव का सामंजस्य आवश्यक ही है। वैसा प्रयत्न होना चाहिए। अत्यधिक यांत्रिकीकरण का आजकल का आग्रह हानिकारक है। वैसे ही यंत्रहीन जीवन-पालन भी असंभव होने के कारण यंत्रत्याग की घोषणा भी ठीक नहीं। विवेक से त्याग तथा भोग ग्रहण कर समाज को अधिकाधिक सुखी बनाना आवश्यक है।

दूसरी बात यह कि केवल खान-पान आदि की विपुलता यही मानव का लक्ष्य नहीं हो सकता। व्यवहार में समाज, राष्ट्र के रूप में जागतिक श्रेष्ठत्व, सामर्थ्य एवं सम्मान तथा श्रेष्ठ गुणों व त्यागमय जीवन

की उपासना करते हुए, जीवन के अंतिम तथा पूर्ण लक्ष्य की प्राप्ति के बिना मानव-जीवन केवल पशु-जीवन ही सिद्ध होता है। इस प्रकार सर्वंकष विचारकर समाज धारणा हेतु योग्य का स्वीकार तथा अयोग्य का त्याग करना पड़ता है।

आशा है, मेरे विचार आपके श्रेष्ठ विचारों से एकरूप सिद्ध होंगे।

३०. जीवन पढ़ रहा हूँ

श्री कृष्णगोपाल माहेश्वरी, इंदौर ४ दिसंबर १९५४

आपके कालेज की पत्रिका में मैं कुछ लिखूँ तो लिखने का मुझे अभ्यास नहीं। प्रोत्साहन पर या उपदेश के रूप में कुछ लिखूँ तो मैं भी आप सब बंधुओं जैसा एक विद्यार्थी ही हूँ। जीवन पढ़ रहा हूँ। उसके लक्ष्य की प्राप्ति, लक्ष्य समझकर चलने के मार्ग में एक बहुत निर्बल पथिक, मार्ग की सुगमता-दुर्गमता का अभ्यासी, इतना ही मैं अपने विषय में कह सकता हूँ।

तथापि श्रेष्ठों से सुनी हुई एक बात आपकी सेवा में प्रस्तुत करता हूँ। विद्यार्जन करते समय किसी-किसी के सामने लक्ष्य न रहता हो, केवल विद्या, विशेषतः उपाधि प्राप्त करनेवाली तथा अर्थकरी विद्या प्राप्त करना आजकल शिष्ट माना जाता है। अतः विद्यालयों में एक के बाद दूसरी श्रेणी इस प्रकार पढ़ते जाना इतना ही विचार रहता है। कुछ व्यक्ति ऐसे होते ही हैं कि अपने सम्मुख कोई आकांक्षा रखकर तत्पूर्त्यर्थ वे ज्ञानार्जन करने के निमित्त प्रवृत्त होते हैं। आकांक्षा के स्वरूप पर मनुष्य की श्रेष्ठता-कनिष्ठता निर्भर है। जो केवल व्यक्तिसुख, मान-सम्मान, पद-प्राप्ति आदि के लिए ही कार्यरत रहते हैं, उनकी आकांक्षा छोटी, संकीर्ण अतएव अनभिनंदनीय नहीं मानी जाती। दूसरे कई अपना समाज, राष्ट्र श्रेष्ठ हो, एतदर्थ परिश्रम करते हुए श्रेष्ठ जीवन का सम्मान प्राप्त करते हैं। धन-वैभव प्राप्त कर व्यक्ति तथा राष्ट्र– दोनों के उत्कर्ष में राष्ट्रहित को भुलाते हुए उसके लिए उद्यम करते हैं। किंतु कुछ अतीव ज्ञान-तपस्यादि गुणों से व्यक्ति विकास कर अपने शुद्ध-पवित्र अनुच्छिष्ट जीवन को राष्ट्र के हेतु समर्पित कर देते हैं। यह पूतभाव पुष्ट करने हेतु ही विद्यार्जन करते हैं। राष्ट्रदेव के चरणों में समर्पण करने योग्य जीवन हो, इस दृष्टि से ज्ञानसंचय, गुणसंचय करते हैं। यही उनकी आकांक्षा रहती है कि सर्वगुणसंपन्न, सर्वकर्तृत्वसंपन्न होकर राष्ट्रसेवा में इतने लीन हों कि अपना नाम भी न हो। केवल राष्ट्रगौरव उन्नत होता रहे। यह श्रेष्ठ आकांक्षा है। इसकी उपासना हमें करनी है।

विद्यार्जन करने की सुव्यवस्था में यह दृढ़ निश्चय करना, जीवन की फुलवाड़ी में उछल-कूद करनेवाली तितली न मान कर आत्मसमर्पण से अमरत्व प्राप्ति का यह अवसर परमात्मा ने अपने को दिया है, ऐसा समझकर अति शुद्ध, पवित्र, चारित्र्यसंपन्न, तपस्वी बनकर शुद्ध राष्ट्रज्ञान से युक्त उसके सर्वस्वार्पित अनन्य सेवक बनने की दिव्य आकांक्षा से हृदय भरकर उमंग से आगे बढ़ना यही हम सब आज के विद्यार्जनेच्छु नवयुवकों का जीवनोद्देश्य हो। श्रेष्ठ महानुभावों से सुने हुए अनेक विचारों में से यह एक कण आपकी सेवा में प्रस्तुत है।

३१. विदेशस्थ हिंदू बांधवों की समस्या मुखरित करें

श्री सी.आर.कृष्णस्वामी, चेन्नै — २६ मई १९५५

'हिंदू' में प्रकाशित आपका पत्र ध्यानपूर्वक पढ़ा। विदेशस्थ हिंदुओं का प्रश्न अत्यंत महत्त्वपूर्ण एवं उसकी व्यापकता विशाल है। बाली का उल्लेख आपने किया। मॉरिशस तथा अफ्रीका में भी हिंदुओं की संख्या बहुत है। दुनिया के सुदूरस्थ भागों में बसे हुए इन बंधुओं से अपने धर्म एवं तत्त्वज्ञान के आधार पर जीवनसंपर्क बनाए रखने का प्रश्न मेरे मन को बहुत समय से विचिलित कर रहा है। इस दिशा में कुछ कार्य हो– यह आपका सुझाव स्वागत योग्य है।

सरकार किस मर्यादा तक यह कार्य कर सकेगी, यही प्रश्न है। कारण स्पष्ट है। उसका हेतु कितना भी उदात्त तथा राजकीय श्रेष्ठता के प्रदर्शन से विरहित हो, सरकार को लगेगा कि इससे लोगों के मन में संदेह पैदा होगा। दूसरा यह कि सरकार के सिर पर निर्धार्मिकता का भूत सवार होने से इस कठिनाई को कैसे पार करना, यह कोई नहीं जानता। निजी तौर पर ही यह काम हो सकेगा। इस कार्य में आनेवाली कठिनाइयों की आप कल्पना कर सकते हैं। किंतु हिंदुओं को इस महत्त्वपूर्ण कर्तव्य के प्रति सजग करना पड़ेगा। आपने इस विषय पर पहल की, इसका मुझे संतोष है। यदि प्रमुख समाचार-पत्रों में इस विषय पर समय-समय पर लेख आते रहें तथा कुछ प्रतिष्ठित सज्जनों को इस दिशा में कार्य करने के लिए अपना वजन डालने को प्रोत्साहित किया गया तो शीघ्र ही कुछ अच्छे लोग यह कार्य करने के लिए धैर्य जुटा सकेंगे।

इस दिशा में लोगों की रुचि जागृत करने का कार्य आप जारी रखेंगे, ऐसी आशा करता हूँ। (मूल अंग्रेजी)

३२. अमर चेतना का ज्वलंत प्रतीक

श्रीमान सेठ देवीप्रसादजी गुप्त, मथुरा ६ जुलाई १९५५

कुछ दिन पूर्व आपके सुपुत्र श्री अमीचंद जी की गोवा आरक्षियों द्वारा हत्या किए जाने का समाचार प्राप्त हुआ।

श्री अमीचंद जी का यह समर्पण अपने भारतीय जीवन की तेजोमयी परंपरा की अमर चेतना का ज्वलंत प्रतीक है। यह सब ठीक होते हुए भी आपका पितृहृदय तथा घर के अन्य लड़के, बच्चों आदि का हृदय असह्य वेदना से कराह उठेगा, इसमें कोई संदेह नहीं। पहले जब मुझे समाचार मिला, तब मैं अपने मन को पूर्णतया स्वस्थ नहीं कर पाया। फिर आपका क्या कहें? आपके इस दुर्धर शोक को हल्का करने की, उसे सहकर अपना परिवार चिरंजीव कीर्ति से उज्ज्वल हो उठा है इसका अनुभव करते हुए सब छोटे-बड़ों को अमीचंद जी के आदर्श सामने रखने की प्रेरणा देते रहने का सामर्थ्य आपको देने की शक्ति केवल श्री परमात्मा में ही है। मैं उस दयाघन के चरणों में नम्रतापूर्वक प्रार्थना करता हूँ कि आपको ऐसी धृति, शक्ति, मनःशक्ति वह प्रदान करे कि आगे आनेवाली पीढ़ियाँ आपका एक अतिश्रेष्ठ धैर्यमेरुजनक के रूप में आदर्श सामने रख आदरपूर्वक आपका स्मरण करते रहें।

३३. पराभूत मनोवृत्ति तथा आत्मग्लानि का भाव छोड़ें

श्री नरसिंह प्रसाद जी तिवारी, ८ जुलाई १९५५

'भारतीय लोकजीवन संस्था का प्रारूप तथा उद्देश्य' नामक प्रपत्र कल प्राप्त हुआ। आगामी १५.०८.१९५५ से लोकजीवन नाम से त्रैमासिक पत्रिका चलाने तथा उसके द्वारा संस्था के उद्देश्यों का प्रसार करने का आपका विचार अभिनंदनीय है।

राष्ट्रीय एकता निर्माण हेतु लोकजीवन का परिचय, उसमें रुचि, उसका अभिमान आवश्यक है। जिन पहलुओं का अध्ययन तथा अभिव्यक्तीकरण करने का उद्देश्य सामने रखा गया है, उसमें राष्ट्रजीवन की सांस्कृतिक धारा का पोषण जिससे होता है, ऐसी महत्त्व की बात ही उपेक्षित दिखाई देती है। साथ ही इस प्रकार संस्था भारत-गणराज्य के लोकजीवन के भूत तथा वर्तमान के अध्ययन द्वारा देश के लोक जीवन को संसार के अन्य समुन्नत राष्ट्रों के लोकजीवन के स्तर पर लाने का प्रयत्न करेगी। इस वाक्य में

समुन्नति का मापदंड आर्थिक तथा वैज्ञानिक प्रगति रखा है तथा अपना राष्ट्र हीन है, अन्य समुन्नत हैं, ऐसा आत्मग्लानि का तथा पराभूत मनोवृत्ति का विचार संस्था का प्रेरक है, ऐसी धारणा होती है। इस प्रकार के भावों को लेकर स्वाभिमानयुक्त, आत्मविश्वासपूर्ण प्रगतिपथ पर उत्साह से आत्मनिर्भर होकर अग्रसर होनेवाला एकात्म राष्ट्रजीवन कैसे निर्माण हो सकेगा, यह मेरी समझ में नहीं आया।

तथापि अपनी-अपनी श्रद्धा के अनुसार अपने राष्ट्र की सेवा करनेवाला प्रत्येक व्यक्ति तथा संस्था आदरणीय है। उनके सद्भावप्रेरित प्रयत्न अभिनंदनीय हैं। इसी कारण से मैं आपका अभिनंदन करता हूँ।

मेरी शुभकामना माँगकर आपने मेरी वास्तविक योग्यायोग्यता को भुलाकर मेरा अत्यधिक गौरव किया है, किंतु आत्मीयता में अपने प्रेमपात्र को अच्छे ही दिखाने का गुण होने से यह गौरव आपके हृदय के शुद्ध स्नेहभाव का परिचायक है, मेरी योग्यायोग्यता का नहीं, ऐसा ही मुझे लगता है। इस स्नेह के लिए मैं आपका ऋणी हूँ। सरल भाव से मैंने अपने मन में उठे विचार आपकी सेवा में उपस्थित किए हैं। न्यूनाधिक्य के लिए क्षमाप्रार्थी हूँ।

३४. अहिल्यादेवी का पुण्यस्मरण स्फूर्तिप्रद

श्री उदयभानुजी, इंदौर (मंत्री, अहिल्योत्सव समिति) ७ अगस्त १९५५

श्रीमती अहिल्या देवी का पुण्यस्मरण प्रत्येक भारतीय के लिए स्फूर्तिप्रद है। आदर्श चारित्र्य, दृढ़ धर्मश्रद्धा, निर्भीक राजनीतिपाटव आदि अनेकविध गुणों से सुशोभित यह पवित्र जीवन आज भी अपनी पीढ़ी को मार्गदर्शन कर राष्ट्र पुनर्निर्माण-कार्य में सबको सफल होने की शक्ति एवं प्रेरणा दे। अहिल्योत्सव समिति इस उत्सव के रूप में इस श्रेष्ठ स्मृति को जागृत रखने का उत्कृष्ट कार्य कर रही है। अतः आप तथा अन्य सब सदस्यबंधु अभिनंदन के पात्र है।

३५. वेदों का अर्थ लगाना विद्वानों का काम

श्री आर.एन.खोसला कश्यप, दिल्ली ७ सितंबर १९५५

'ऑर्गनायजर' पर मेरा नियंत्रण है, यह मैं नहीं जानता। इस साप्ताहिक को पढ़ने की मुझे कभी-कभी संधि मिलती है। इसलिए साप्ताहिक

का संचालन करनेवाले लोगों को क्या छापना चाहिए– इस विषय में मैं कुछ नहीं कह सकता।

वेदों की ऋचाओं का सही अर्थ मुझे ज्ञात है– यह दावा तो मैं नहीं करता, मैं तो स्वयं ही आप जैसे विद्वानों का इन पवित्र ऋचाओं के स्पष्टीकरण हेतु सहारा लेता हूँ। विवादित लेख मैंने नहीं पढ़ा। परंतु मुझे नहीं लगता कि वेदों का अपमान या निंदा करने का लेखक का हेतु हो। उन्होंने वेदों के प्रति पूर्ण श्रद्धा रखते हुए कुछ ऋचाओं का स्पष्टीकरण जैसा उन्हें अच्छा लगा, वैसा ही किया हो। संभवतः वह पूर्णतः अप्रस्तुत हो। किंतु मैं उनपर विकृत मनोवृत्ति का आरोप नहीं करूँगा। वेदों के द्वारा ही हमारे हृदयों में बसी गोमाता के प्रति दृढ़मूल श्रद्धा को उन्होंने आघात किया है। अतः लेखक से ही उसके बारे में स्पष्टीकरण माँगना तथा इसमें साप्ताहिक के संपादक का सहयोग प्राप्त करना उचित होगा। मेरी व्यस्तता के कारण वैदिक ऋचाओं का अर्थ लगाने का कार्य मुझसे संभव नहीं एवं वेदों में दिव्य आध्यात्मिक ज्ञान तथा आनंद का जो अथाह स्रोत है, उससे मैं अनभिज्ञ हूँ। (मूल अंग्रेजी)

३६. भारत में अनेक प्रांतीय राज्य मुझे मान्य नहीं

श्री महीपसिंह, खालसा कालेज, मुंबई १२ सितंबर १९५५

भाषा के संबंध में मैं कुछ नहीं लिखता क्योंकि भाषा का आधार लेकर केवल अलग राज्य बनाना ही बचा है। भारत में अनेक प्रांतीय राज्य और उनका एक federation यह मुझे मान्य नहीं, यह आप जानते ही हैं। इसलिए भाषा का प्रेम भी क्यों न हो, वह यदि विच्छेद के लिए प्रयुक्त हो तो त्याज्य ही माना जाना चाहिए।

इस कारण सब सोचनेवालों को वायुमंडल के जोश से अलग रहकर शांतचित्त से योग्य विचार, भावनाएँ तथा श्रद्धा का प्रसार करते रहना चाहिए। आपसे यही आशा है। आपके द्वारा ऐसे सद्विचार-प्रसार का दायित्व केवल सिख-हिंदू बंधुओं में करना नहीं, अपितु सब हिंदू-बंधुओं में करने का है, ऐसा मैं समझता हूँ। आप तथा अपने अन्यान्य संघ-बंधुओं को एकहृदय से परिश्रमपूर्वक वायुमंडल अतीव शुद्ध करने की चेष्टा करना आवश्यक है। इसी की आशा रख पत्र पूरा करता हूँ।

३७. विवाह-विच्छेद अधर्म्य

श्री धर्मेंद्र देव जी, विराटनगर　　　　　　　　　　२२ सितंबर १९५५

अब आप 'वज्रांग' का विवाह-विच्छेद विधेयक के विरुद्ध विशेषांक प्रसिद्ध कर रहे हैं, यह अभिनंदनीय है। विवाह-विच्छेद अधर्म्य तो है ही, परंतु धर्म न माननेवालों की दृष्टि से भी वह मनुष्य की कोमल भावनाओं का पूर्ण निरादर करनेवाला होने के कारण मानवता के लिए कलंक है। एक बार जिसे स्नेहभाजन के रूप में ग्रहण किया, उसे किसी रोगपीड़ित अवस्था में छोड़ अन्यत्र विषयोपभोग के निमित्त लालायित होकर छोड़ना केवल पशुत्व ही कहलाया जा सकता है। अतएव सद्विचारी तथा सत्प्रवृत्त सज्जनों को इस क्रूर राक्षसी विधेयक का विरोध करना आवश्यक है। मैं आशा करता हूँ कि अनेक श्रेष्ठ महानुभाव इस विशेषांक का लाभ उठाकर अपने योग्य विचार प्रकट कर जनता में आवश्यक भाव जगाने का कर्तव्य पूरा करेंगे।

३८. गुणग्राहकता

श्री गोपालराव पाठक, नागपुर　　　　　　　　　　२८ सितंबर १९५५

आपकी पुस्तक 'माझी पृथ्वी प्रदक्षिणा' परसों शाम को मुझे प्राप्त हुई। कल की नागपुर-दिल्ली यात्रा मे रेलगाड़ी में वह पूरी पढ़ी। ....पुस्तक में अमरीका के विविध स्थान, शिल्प-विद्या, शैक्षणिक सुविधाएँ, रहन-सहन, तत्स्वरूप अभिव्यक्त, उनकी मनोरचना इत्यादि का वर्णन सहज सुन्दर है। स्वयं विश्वदर्शनार्थ निकल जाने की इच्छा उत्पन्न करने की शक्ति उसमें है। संपूर्ण प्रवास में आपने अपना भारतीय स्वाभिमान उत्कटता से प्रकट किया- यह अत्यंत अभिनंदनीय है। परंतु इस स्वाभिमान से अंधे न होते हुए विश्व के अन्य मानव-बंधुओं के गुणों का, प्रगति का आपने अनादर नहीं किया, अपितु उनसे अपने जीवन के अनेक क्षेत्रों में बहुत कुछ सीखने लायक है, यह प्रांजलता से स्वीकार कर जहाँ-जहाँ श्रेष्ठता, गुणवत्ता, सुव्यवस्था आदि दिखाई दी, उसका गौरव करने का सही शुद्ध भारतीय सद्गुण आपने स्वभावतः प्रकट किया, यह उससे भी कई गुना अधिक शोभनीय तथा अभिनंदनीय है।

मुझे लगता है कि यात्रा-वर्णन के साहित्य में आपकी यह छोटी पुस्तक एक अमूल्य योगदान है। एक छोटी-सी सूचना है। कुछ स्थानों पर

'हिंदी' शब्द का उपयोग हुआ है। वह अंग्रेजी 'Indians' का अर्थहीन स्वाभिमानशून्य एतद्देशीय पर्याय है। परंतु अपना देश भारत है, इसलिए मेरी दृष्टि से उससे संबद्ध भारतीय शब्द प्रयुक्त होना चाहिए था। (मूल मराठी)

३९.एकात्म शासन-व्यवस्था हो

डा. डी.डी.साठे २७ अक्तूबर १९५५

देश का भाषा के आधार पर या अन्य प्रकार से विभाजन विषय पर आपका टंकमुद्रित पत्र २५.१०.१९५५ को यहाँ पहुँचा। एक देश, एक राष्ट्र, एक राज्य, एक विधानसभा तथा संपूर्ण देश का शासन, भाषा आदि भेद छोड़कर केवल शासन की सुविधा तथा लोकसंख्या देखकर केंद्रीय सरकार द्वारा जिलों का निर्माण कर चलाया जाए, यह आपका आशय पढ़कर अत्यंत आनंद हुआ। हमारे वर्तमान श्रेष्ठ नेता संपूर्ण संविधान बदलकर ऐसे योग्य मार्ग का अनुसरण करेंगे, तो बहुत उत्तम होगा, अन्यथा आजकल जो परस्पर विद्वेषपूर्ण कटुता चल रही है, उससे राष्ट्र छिन्न-विच्छिन्न होकर पूर्ववत स्थिति पैदा होगी। फलस्वरूप स्वतंत्रता से हाथ धोना पड़ेगा तथा चिरकालिक दासता में पड़े रहने की दुर्धर और लज्जाजनक अवस्था निर्माण होगी। देखें, क्या होता है। परंतु जब सभी विचारवान पुरुष प्रादेशिक राज्यों का विरोध कर हमेशा एक देश, एक राज्य, एक ही विधानसभा का उद्घोष उपलब्ध साधनों द्वारा कर वायुमंडल शुद्ध करने का प्रयत्न करेंगे, तभी नेताओं को भी ऐसा उचित कदम उठाने की हिम्मत होगी। (मूल मराठी)

४०.समाज संघमय हो

श्री यशोधर मेहता, अहमदाबाद २७ अक्तूबर १९५५

मेरे द्वारा प्रतिपादित विचारों को सुनकर आप जैसे सज्जन व्यक्ति ने सराहना की, इसका मुझे संतोष है। मुझे ज्ञात हुआ है कि कुछ वृत्त-पत्रों ने ऐसा वातावरण उत्पन्न किया है कि संघ के विराट रूप में बढ़ने से मानो भयानक परिस्थिति उत्पन्न हुई है। मैं तो चाहता हूँ और सभी सुबुद्ध हिंदुओं को आह्वान करता हूँ कि संघ को विराट बनाने के कार्य में वे मेरी सहायता करें तथा उसे इतना विराट बनाएँ कि संघ की तुलना हिंदू समाज की एकरूपता से की जाए। कोई व्यक्ति ऐसी कल्पना भी कैसे कर सकता

है कि सुसंगठित हिंदू समाज लोगों के लिए संकट एवं भय का कारण बनेगा। ऐसी बात वे ही कर सकते हैं, जो अहिंदू हैं। इतना ही नहीं, जो हिंदू समाज के अस्तित्व के ही विरोध में हैं, इसलिए उसके संपूर्ण विनाश की कामना करते हैं। किंतु हम ऐसे समय में रह रहे हैं कि जब छोटे-छोटे पृथकतावादी तत्त्वों का बोलबाला है और राष्ट्रीय एकात्मता निर्माण करने की ओर घृणा से देखा जाता है। यह कैसा विरोधाभास है, कैसी विडंबना है। परंतु सौभाग्य से सुबुद्ध हृदय के लोग, उनमें आप भी एक है, विद्यमान हैं। मेरा आपको सादर प्रणाम। (मूल अंग्रेजी)

४१. 'सत्कथा अंक' की उपादेयता

श्री हनुमानप्रसाद जी पोद्दार   पट्टांबी(केरल), २५ फरवरी १९५९

'कल्याण' का 'सत्कथा अंक' गत मास में ही मिला था। मैं यहाँ पट्टांबी (केरल) में कुछ चिकित्सा कराने ३१.०१.१९५९ को आया तो अंक साथ लेता आया। यहाँ साधारण एकांत और पूरा विश्राम करने का आदेश होने से अंक का पठन करने के लिए पर्याप्त अवकाश तथा शांति प्राप्त हुई। यह अंक साथ होने से शारीरिक उपचारों के साथ-साथ मन-बुद्धि आदि की भी इसमें दी हुई कथाओं के द्वारा उत्तम चिकित्सा हुई। यह आपका अनुग्रह है।

अंक के विषय में संपादकीय निवेदन के प्रथम दो परिच्छेद में जो लिखा है, वह सर्वथा योग्य है। इसकी उपादेयता सद्यःस्थिति में इस प्रकार के ज्ञान, चारित्र्य आदि की शिक्षा का वितरण अनिवार्य होने से निर्विवाद है। इससे मेरे हृदय को अतीव शांति मिली। जगत् में चिरसुख-शांति की प्रस्थापना के हेतु यह पहचान आवश्यक ही है कि मानव एक है और उसके भाव समान हैं। एक ही सत्तत्व सब में प्रकाशित हो रहा है। इस अंक में वर्णित विविध कालखंडों की, भिन्न-भिन्न देशों की, जातियों की उत्तम कथाएँ इसी एकता का उद्‌बोधन करती हैं। इतने उपयुक्त पवित्र भावपूर्ण अंक के संकलन तथा प्रकाशन के लिए आपको मैं धन्यवाद भी क्या दूँ? आपका तो यह सहज स्वभाव है। अतः मेरा धन्यवाद देना धृष्टता मात्र होने की संभावना है।

परमकृपालु श्री भगवान आपको उत्तम स्वास्थ्ययुक्त प्रदीर्घ जीवन प्रदान कर आपके द्वारा अपने तथा अपने जनों के लीला-चरित्र एवं ज्ञान

का अधिक से अधिक प्रसार कर जगत् भगवदाश्रित मानवता का शीघ्र पुनः संस्थापन करे।

४२. राष्ट्रीय अस्मिता का सही मूल्यांकन हो

श्री सुमंत बंकेश्वर, बंगलौर   १ सितंबर १९५६

आपका लेख ध्यानपूर्वक पढ़ा। आपने जिन संकटों की ओर निर्देश किया है, वे यथार्थ हैं मैं भी इन संकटों की चर्चा करता आया हूँ। लोगों को इस विषय से अवगत कराने हेतु बहुत कुछ करना पड़ेगा। एक बार समुचित दृष्टिकोण अपनाया गया कि अन्य बातें निसर्गतः साध्य हो जाएँगी। दुर्भाग्यवश जो लोग परिस्थिति का सही मूल्यांकन करना चाहते हैं, सत्ताधारी दल की तीखी आलोचना करने में ही संतुष्ट रहते हैं। यह नकारात्मक दृष्टिकोण है। अपनी राष्ट्रीयता का रचनात्मक ज्ञान कराना ही आवश्यक है।

वह कम खतरनाक प्रतीत होता है। किंतु विश्व में दिन-प्रतिदिन की घटनाएँ देखने पर लगता है कि इस खतरे को दुर्लक्षित नहीं किया जा सकता। अतः मूलगामी सुदृढ़ राष्ट्रीय जीवन का निर्माण ही इन संकटों से उबरने का उपाय है। यदि अपनी राष्ट्रीय चेतना को पुनर्जागृत कर, राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय नीतियों को निर्धारित कर लोगों को सजग करने के कार्य में सभी सत्प्रवृत्त, विचारी लोग जुट जाते हैं, तो इस देश का राजकीय एवं आर्थिक पुनरुत्थान करने हेतु एक प्रबल दल निर्माण होकर इस दुरवस्था से देश बाहर निकलेगा।

हमारे जीवन-मरण के संघर्ष वाले इन अति महत्त्वपूर्ण प्रश्नों के विषय में आपका प्रयत्न तथा अभ्यास अभिनंदनीय है। (मूल अंग्रेजी)

४३. सज्जनवृंद उदासीनता छोड़ें

श्री हरिभाऊ उपाध्याय जी, अजमेर   १ सितंबर १९५६

अनेक घटनाओं से मुझे प्रतीत हुआ कि सत्तारूढ़ दल के अंतरराष्ट्रीय दृष्टिकोण में साम्यवाद के वर्धमान प्रभाव के फलस्वरूप एक प्रकार का भयबोध विद्यमान है और उसका प्रजातांत्रिक स्वांग रचानेवाले गठबंधन की ओर झुकाव है।

पत्र के साथ का लेख ध्यानपूर्वक पढ़ा। देश में जो अनवस्था है

तथा अपने-अपने मंतव्यों को चाहे वे ठीक भी न हों, पूरा करने के हेतु अशांतिमय आंदोलन, सत्याग्रह, अनशन आदि रूप धारण कर प्रगति के मार्ग में बाधा के रूप में खड़े हो रहे हैं और फिर सुव्यवस्था एवं निर्बंध (Law and Order) का अनादरपूर्वक भंग करने की हिंसकता के प्रयोग में परिणित होते हैं। मन की इसी व्यथा में से आपका लेख प्रकट हुआ दिखता है।

किंतु आप अहमदाबाद में उन दिनों हो रही बातों को दो दिन देखने के लिए रुकते तो संभवतः यह न लिखते। वहाँ पर जो घटना हुई है, उसका सत्याविष्कार अभी नहीं हुआ है। वृत्त-पत्रों में जो आता है, वह पक्षनिष्ठ प्रचार के कारण एकांतिक रहता है। मैं किसी भी राजनैतिक दल का न होने के कारण एवं भाषावाद तथा भाषा के आधार पर अनेक राज्यों का गठन कर एकात्म शासन के स्थान पर संघात्मक शासन को उपयुक्त या उपादेय माननेवाला न होने के कारण मैंने पक्षनिरपेक्ष रहकर वहाँ की परिस्थिति को समझने की कुछ चेष्टा की। तो भी अभी गुण-दोष का बँटवारा न्याय्य रीति से कर सकने की क्षमता मुझमें नहीं है। कुछ समय बीत कर वायुमंडल का प्रक्षोभ शांत होने पर सत्य प्रकट होगा और तब ही माननीय मोरारजी भाई के अनशन का योग्य मूल्यांकन हो सकेगा।

एक बात स्पष्ट है कि सज्जनों ने अपनी उदासीनता छोड़कर उद्यमशील होना तथा अपने सौजन्य का प्रभाव पड़ सके इस निमित्त देशव्यापी, पक्षनिरपेक्ष, शुद्ध, राष्ट्रार्पित भावसंपन्न संगठित शक्ति के रूप में खड़ा होने कि लिए यत्नशील होना अतीव आवश्यक है। यह आपका विचार अत्यंत योग्य है। हम सब इस दिशा में प्रयत्न करने हेतु सजग हों।

४४. कश्मीर का प्रश्न

४ मार्च १९५७

श्री माधवराव सप्रे,

माननीय पंडित जवाहरलाल नेहरू के नाम आपके द्वारा भेजे गए खुले पत्र की प्रतिलिपि आज आपसे प्राप्त हुई। आप चहुँओर की समस्याओं का बहुत गंभीरता से विचार कर रहे हैं। कश्मीर का प्रश्न ऐसा ही अत्यंत गंभीर है। उसमें कौन-कौन सी उलझनें, अंदरूनी समझौते आदि होंगे, यह पता नहीं चलता। परंतु सर्वसाधारण नागरिक को जितनी जानकारी प्राप्त हुई है, उससे लगता है कि माननीय पंडितजी को कश्मीर की, विशेषतया बहुसंख्यक मुसलमान जनता पर हिंदू सांस्थानिक का राज असहनीय लगा

हो और वह राज, राजा तथा उसकी स्मृति से संबंधित सभी नष्ट करने के लिए कश्मीर के पंथाभिमानी मुसलमान नेताओं को देशभक्त कहकर, सेक्यूलर कहकर आगे लाने के लिए उन्होंने कमर कसी हो। उसमें से ही अपरिहार्य रूप से आगे के सारे प्रश्न पैदा हुए हैं।

आपने जो मार्ग सुझाया है, वह कहाँ तक स्वीकार्य होगा, यह प्रश्न है। मुसलमान को मुसलमान के रूप में पृथक समझने की प्रवृत्ति मान्यवर पंडितजी की स्पष्ट होती है। इसलिए आपका उपाय उन्हें जँचेगा नहीं। उसी प्रकार उन्हें हिंदू-राष्ट्र शब्द भी रुचेगा नहीं। हिंदू शब्द की व्याप्ति विशाल है, यह सिद्ध करने की आपने लाख कोशिश की तो भी उसका उपयोग होनेवाला नहीं। उसी प्रकार अब विशाल हिंदू भावना युक्त हिंदू-राष्ट्र का उद्घोष विलंब से सूझी बुद्धिमत्ता समझा जाएगा। केवल अपनी घोषणा से विश्व के अन्य देश या सुरक्षा परिषद् अपना विचार परिवर्तित कर सकती तो कश्मीर का पूर्ण विलीनीकरण होने की घोषणा के बाद वह प्रश्न पुनः पैदा नहीं होता। विश्व के सुरक्षा परिषद के सदस्य भी स्वार्थप्रेरित हैं, इसलिए भारत की गुटनिरपेक्ष नीति उन्हें खटकती है। अतः यह विचार कर निश्चित अंतरराष्ट्रीय नीति के बिना वहाँ अपने देश के प्रति भी अनुकूल मत होगा, ऐसा दिखाई नहीं देता। क्या सुरक्षा-परिषद् या आक्रमण की धमकी देनेवाला पाकिस्तान या अन्य तत्सम देशों को 'चुप रहो' कहने की राष्ट्रीय सामर्थ्य रहे बिना अनुकूलता प्राप्त होना संभव नहीं है। राष्ट्रीय सामर्थ्य चाहिए तो राष्ट्र की विशुद्ध धारणा, अर्थात् हिंदू राष्ट्र की स्पष्ट धारणा व्यक्ति-व्यक्ति में दृढ़ होना आवश्यक है। हिंदूराष्ट्र सद्यः माननीय पंडितजी को रुचता नहीं, अर्थात् उसके लिए कश्मीर क्या और भी भू-भाग चला गया तो भी चलेगा, ऐसी उनकी धारणा रह सकती है। संप्रति चुनाव की धूमधाम है, उसके शांत तथा उनका आसन स्थिर होने पर कश्मीर के प्रश्न का सच्चा स्वरूप प्रकट होने लगेगा तथा कदाचित् वह गँवाने की स्थिति भी पैदा हो सकती है। जनता ने चुना है, इसलिए जनता की यही इच्छा है- ऐसा अपप्रचार करने का अवसर मिलकर सब कुछ श्मशानवत समाप्त हो जाएगा। ये सारी बातें देखते हुए ऐसा लगता है कि आपके विचार अरण्यरोदनवत साबित होंगे।

तथापि आपने इतना गहराई से विचार किया, इसका मुझे अत्यंत हर्ष हुआ। अनेक लोग ऐसा ही स्वतंत्र रूप से विचार करने का निश्चय कर जनसाधारण को शिक्षा देने का उद्यम करें तो शीघ्र ही योग्य जनमत तैयार

होकर सभी समस्याएँ सुलझाने के लिए आवश्यक अनुकूलता पैदा हो सकेगी। ऐसा शीघ्र हो, ऐसी इच्छा व्यक्त करते हुए मैं आपका अभिनंदन करता हूँ। (मूल मराठी)

४५. सरस्वती के सच्चे उपासक का सम्मान

डा. यू.कृष्णराव, चेन्नै ७ नवंबर १९५७

श्री वी.एस.गोपालकृष्ण अय्यर से अनेक वर्षों तक घनिष्ठ संबंध था तथा जैसे समय बीतता गया, वैसे उनके प्रति मेरा सम्मान एवं श्रद्धा बढ़ती गई। ऐसे महानुभाव का आदर करना मेरे लिए गर्व की बात है।

शिक्षा-क्षेत्र में उनका कर्तृत्व विशेष था तथा अपना कर्तव्य अच्छी तरह जानते हुए अथक श्रद्धा से वे अपने कर्तव्य से जुड़े हुए थे। दुर्भाग्यवश अध्यापन क्षेत्र से ऐसा उदात्त कार्य करनेवाला वर्ग लुप्त हो रहा है तथा अध्यापन-कार्य पैसा कमानेवाला व्यवसाय बन गया है। इसलिए यह आवश्यक है कि जो प्रामाणिक व सच्चे शिक्षक हैं, धनलोभी नहीं हैं, उनका सत्कार किया जाए। नई पीढ़ी के सच्चे शिक्षक एवं मार्गदर्शक निर्माण करने के लिए तथा सरस्वती के सच्चे उपासकों के आदर्शों का अनुकरण एवं अनुसरण करने हेतु उनके कौशल्य एवं गुणों को प्रकट करने वाला उनका जीवन-पट नई पीढ़ी के सामने प्रस्तुत किया जाए। मेरे मित्र श्री. वी. एस. गोपालकृष्ण अय्यर को ईश्वर स्वस्थ एवं निश्चिंत जीवन का लाभ देकर देश में प्रामाणिक शिक्षाकार्य करने हेतु यश दे। (मूल अंग्रेजी)

४६. २५ दिसंबर को हम 'बड़ा दिन' क्यों कहें?

श्री रामरूप गुप्ता, लखनऊ २७ मार्च १९५८

संवत् २०१५ (शकाब्द १८८०) का सूचना-पंचांग मिला। उसका उत्तम उपयोग होगा, क्योंकि तिथि अंग्रेजी तथा नूतन राजकीय दिनांक और पंचांग के संबंध की अन्य आवश्यक बातें उत्तम रीति से एकत्रित मिलती हैं। ....अभी (पंचांग) देख रहा था। उसमें पिछले अंग्रेजी दिनों के अवशेष के रूप में २५ दिसंबर को 'बड़ा दिन' कहा है (पर्व और त्यौहार पृष्ठ ३०) यह देखकर आश्चर्य हुआ। दिनमान की दृष्टि से दिन बहुत छोटा है। उसका महत्त्व ईसा मसीह के जन्म के उपलक्ष्य में होने से अंग्रेजी काल में उसे 'बड़ा दिन' कहना एक ईसाई राज्य के लिए ठीक था, किंतु अब तो

उसे केवल 'ईसा मसीह जन्म दिन' कहना ही पर्याप्त है, ऐसा मुझे लगता है। परंतु अन्य अनेक दृष्टियों से यह प्रकाशन बहुत उपयुक्त होने के कारण वह मेरे पास रहे ऐसी इच्छा थी, जो आपने पूरी कर दी है।

४७. सहधर्मचारिणी सद्गुणी हो

श्री एस.एन.सिंह, ३१ मार्च १९५८

कई बार व्यक्ति अपना स्वयं मूल्यांकन समुचित ढंग से नहीं कर पाता। वह अपने बड़प्पन के बारे में पूरी होने योग्य भ्रांत धारणाएँ मन में रखता है। विवाह के विषय में यह बात विशेषतः देखी जाती है। ऐसी अनेक घटनाएँ मुझे देखने को मिली हैं। अतः आप अपेक्षाएँ बहुत ऊँची रखें एवं वे पूरी न हों, तो यह आश्चर्य की बात नहीं है। यही समय है कि थोड़ा जमीन पर आएँ। सौम्यता, गांभीर्य तथा यथार्थ दृष्टिकोण धारण करें। युवक भावमय अज्ञानवश तितली के पीछे दौड़ता है। वैसा न कर गुणी वधू की खोज करें। तब आपका जीवन सुखी व उद्देश्यपूर्ण होकर आपको समाजसेवा करने का अवसर मिलेगा एवं पुरुषार्थ भी प्राप्त होगा।

(मूल अंग्रेजी)

४८. गायनाचार्य पं. विनायकबुवा पटवर्धन का गौरव

श्री मुकुंदराव गोखले, पुणे २ जुलाई १९५८

गायनाचार्य पं. विनायकबुवा पटवर्धन का षष्ट्यब्दिपूर्ति समारोह सम्मिलित रूप से संपन्न हो रहा है, यह पढ़कर बहुत प्रसन्नता हुई। प्रायः ३४ वर्ष पूर्व मैंने उन्हें नागपुर में देखा था तथा उनका शास्त्रशुद्ध उत्कृष्ट गायन श्रवण कर आनंदित हुआ था। मुझे इस शास्त्र का कुछ भी ज्ञान नहीं है, परंतु पूर्णतः स्वाभाविक रूप से अपने शुद्ध शास्त्रोचित, शास्त्रीय अभ्यास के बल पर प्रकट होनेवाला गीत ही नहीं, स्वर-रचना भी मन को सुख देती है। संप्रति 'भावगीत' आदि मोहक नाम से भावशून्य संगीत पैदा होकर संगीत की जो दुर्दशा हो रही है, वह रोकने का बहुमूल्य कार्य करने के कष्टप्रद प्रयत्न जिन महापुरूषों द्वारा किए जा रहे हैं, उनमें पं. विनायकबुवा का स्थान श्रेष्ठ है। उनका स्वागत, सच्चे संगीत का सम्मान है। इसलिए आपके इस उत्कृष्ट कार्य में मनःपूर्वक सहयोगी होकर कार्यक्रम की सफलता के लिए श्री प्रभु चरणों में प्रार्थना कर रहा हूँ। माननीय पंडितजी को मेरा सादर साष्टांग प्रणाम। (मूल मराठी)

४९. उचित परिभाषा 'महाजनो येन गतः स पंथाः'

श्री गोकुलदासजी डागा, कोलकाता (बंगाल) ३ जुलाई १९५८

आपने यह पत्र मुझे क्यों लिखा— यह समझ में नहीं आया। आपने तो महात्मा गाँधी तथा कांग्रेस का उल्लेख किया है। उनकी क्या परिभाषा उक्त शब्दों के विषय में है और आपने क्या समझा है— इसका उल्लेख नहीं है। उन शब्दों के संबंध में मेरी परिभाषा जानने की आपकी इच्छा क्यों है, जानने की क्या आवश्यकता है और मुझे जब उचित प्रतीत हो, तब मुझे जँचेंगे ऐसे शब्दों का विवरण करने का मेरा स्वाभाविक विचार होते हुए असमय पर या अन्य कारण पृच्छक बने हुए महानुभावों के लिए मैं अपने विचार क्यों व्यक्त करूँ? यह कुछ भी समझ में नहीं आया। तथापि एक प्राचीन वाक्य उद्धृत कर पत्र पूर्ण करता हूँ— 'महाजनो येन गतः स पंथाः।' आशा है, आप समझ लेंगे।

५०. यज्ञ की फलप्राप्ति हेतु निरंतर प्रयास

कॅ. श्री. बालकृष्ण मेनन २८ अगस्त १९५८

पालघाट में ३.९.५८ से प्रारंभ होनेवाले गीताज्ञान यज्ञ के उद्घाटन समारोह का आपके द्वारा भेजा गया निमंत्रण प्राप्त हुआ।

यज्ञ के व्यावहारिक काम की चिंता करनेवाले आप सब और शाश्वत एवं परम सुख का संदेश अपनी अनुपम जीवंत शैली में प्रदान करनेवाले श्री स्वामी चिन्मयानंदजी की उपस्थिति के कारण यज्ञ पूर्णतः सफल होकर लोगों के हृदय पर अपना अमिट असर अवश्य ही निर्माण करेगा। शुद्ध हृदय से श्रेष्ठ पुरुषों के द्वारा किए गए परिश्रम कभी व्यर्थ नहीं होते। इसलिए सब प्रकार की अनावश्यक चिंता और अशोभनीय अस्वस्थता त्यागकर यज्ञ से प्राप्त सुफल संचित करें और उन्हें अपने जीवन से संबंधित व्यवहार करते समय चिंतन में सदैव जागृत रखें।

जड़वाद एवं अधार्मिकता की बाढ़ सबको निगल रही है, केवल मृगमरीचिका की बाढ़ सिद्ध होगी और अपने धर्म का चिरपुरातन सत्यस्वरूप तथा उसके तात्त्विक एवं व्यावहारिक सभी पहलू आलोकित होकर अपने धर्म का निर्दोष, अतुलनीय, देदीप्यमान स्वरूप संसार देखेगा। परंतु केवल सदिच्छापूर्ण कल्पना विलास से या केवल चिंता करने से यज्ञ से अपेक्षित

फलप्राप्ति असंभव है। कठोर परिश्रम, निरंतर जन-जागृति का प्रयास, लोगों को सुशिक्षित, एकत्रित और सुसंगठित करना अनिवार्य रूप से आवश्यक है।

परमात्मा की कृपा से एवं पू. स्वामी जी के आशीर्वाद से वांछित सुपरिणाम निकटवर्ती भविष्य में प्रकट होंगे, इसमें मुझे संदेह नहीं है। श्री स्वामी जी के चरणों में मेरे विनम्र प्रणाम कृपया अर्पित करें। (मूल अंग्रेजी)

५१. जनसाधारण का उचित मार्गदर्शन अपेक्षित

श्री सूर्यप्रसाद उपाध्याय, काठमांडू — १२ सितंबर १९५८

आप पर कार्य का बहुत भार है। वहाँ की अस्थिर अवस्था में प्रत्येक को अपनी-अपनी इष्ट सिद्धि की दृष्टि से कार्यक्षेत्र से अनुपस्थित न रहने की इच्छा रहना स्वाभाविक है। आप जैसे महानुभाव अपनी सत्प्रवृत्ति के कारण जनसाधारण का उचित मार्गदर्शन कर अखिल हिंदू की एकता जागृत रखेंगे तथा गत कुछ वर्षों से जो अनेक अहिंदू गतिविधियाँ वहाँ बल पकड़ रही हैं, देशबाह्य, राष्ट्रबाह्य, धर्मबाह्य प्रवृत्तियाँ अपनी चालों से जनता में प्रसृत हो रही हैं, उन्हें रोककर पूर्णतया परास्त करने में सफल हों, यही कामना है।

आगे कभी आपका इधर आना हो सकेगा तो आप अपनी ही सुविधा से आने की कृपा करें तथा पूर्व सूचना दें तो आपका स्वागत कर हम लोग अपने-आपको कृतार्थ समझेंगे। ऐसा शुभ अवसर शीघ्र आने की प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

५२. भारतीय शासन द्वारा भारतीय आत्मा का हनन

श्री श्रीनिवासदास पोद्दार — १८ नवंबर १९५८

अभी अपने धर्मप्राण, धर्मप्रवण परमपुनीत भारत में भी गोवंश की रक्षा नहीं होती, हत्या चल रही है, उसे रोकने के निर्बंध (कानून) बनाने में आनाकानी हो रही है। जो भी निर्बंध हैं, उनका पालन कराने के लिए शासन अनुत्सुक दिखता है। गोरक्षा-गोसंवर्धन आदि शब्दों के आडंबर रचकर गोवंश के आहार की सामग्री नष्ट करने के बड़े-बड़े आयोजन बन रहे हैं, यह स्थिति असहनीय है। भारतीय आत्मा का हनन भारतीय शासन द्वारा अभारतीय तत्त्वों की खुशामद के हेतु हो रहा है। इस दुरवस्था को बदलने के लिए जो महानुभाव यत्नशील हैं, उन्हें यशाशक्ति हम लोगों द्वारा

सहायता हो रही है। आप भी अपनी पूर्ण पवित्र सद्भावना से उनके प्रयत्नों को प्रत्यक्ष या परोक्ष में सहयोग का बल प्रदान करें, तो कार्य सफल होने की पूरी आशा है। गोपूजक भारत, गोवंश की अनवस्था तथा हत्या के कलंक से मुक्त होकर अपने आध्यात्मिक तेज से जगमगाते ही जगत् पर उसका प्रकाश पड़कर सब देशों में गोपूजा का भाव जगाने में सौकर्य आएगा।

५३. गृहस्थाश्रम की सफलता

श्रद्धेय श्री हनुमानप्रसाद जी पोद्दार, गोरखपुर २६ मार्च १९५९

चि. सौभाग्यकांक्षिणी राधादेवी तथा चि. श्री जगदीशप्रसाद अग्रवाल के विवाह के मंगल-प्रसंग पर नवदंपति को अंतःकरणपूर्वक शुभाशीष देना मेरा अतिप्रिय कर्तव्य है। परमकृपालु श्री परमात्मा से मैं साग्रह प्रार्थना करता हूँ कि नवदंपति को सुदृढ़, स्वस्थ, नीरुज सुदीर्घ आयु प्रदान करे। परस्पर अनुकूल, स्नेहयुक्त रहकर दोनों का धर्माचरण में परस्पर सहयोग रहे, एक दूसरे को प्रोत्साहन मिले, सर्व मनोवांछित सुख समृद्धि का लाभ उन्हें नित्य हो तथा गार्हस्थ्य धर्म परिपालन में वे नित्य तत्पर एवं दक्ष रहकर जीवन साफल्य प्राप्त करें। जीवन के अनेक व्यामोहों से रक्षा करनेवाला गृहस्थाश्रम, उसके आश्रय से शुचितासंपन्न रहकर स्वतः के लिए सदाचारयुक्त हो, आचारधर्म पालन करना तथा अपनी शक्ति, बुद्धि, संपत्ति से समाजरूपी, राष्ट्ररूपी श्रीभगवान की सेवा निःस्वार्थ तथा निरलस भाव से होकर करने से ही गृहस्थाश्रम सफल हो सकता है। इस कर्मयोग के आचरण के साथ श्रीपरमेश की विमल भक्ति-साधना करते रहने से तो बेड़ा पार होकर मानव-जीवन पूर्णतया सार्थक होगा, यह निस्संदेह सत्य है। यह शुद्ध निःस्वार्थ, कर्मयुक्त, भक्तिपूर्ण, राष्ट्रार्पित, भगवद्अर्पित जीवन उन्हें प्राप्त हो, यही प्रार्थना करता हूँ।

५४. 'केसरी' का मूल रूप प्रकट हो

श्री भाऊसाहेब मोडक, माधव नगर ७ अप्रैल १९५९

'केसरी' की विश्वस्त-समिति में आपको चुना गया है, यह आनंददायी समाचार पढ़ने को मिला। समाचार पढ़कर कुछ आश्चर्य हुआ, परंतु निरतिशय हर्ष हुआ। आदरणीय तात्यासाहेब करंदीकर की मृत्यु से हिंदुत्व

का कट्टर समर्थक चल बसा तथा 'केसरी' संस्था की अपरिमित हानि हुई। अन्य व्यक्ति हैं, परंतु यह प्रश्न है कि साहस से हिंदू-राष्ट्र के निर्विवाद सिद्धांत पर अंतःकरण में निष्ठा रखकर उसके अनुसार सभी प्रश्नों की चर्चा करने की स्वतःसिद्ध तत्परता, प्रेरणा तथा इच्छा रखनेवाला कौन होगा? परिवेश के वैचारिक संभ्रम में प्रवाहपतित के समान दूसरों की 'हाँ' में 'हाँ' मिलाना तथा बाद में अभिनिवेश से उसका मंडन करना, यही हो रहा है। जिनके हृदय में 'केसरी' के प्रति निरंतर आत्मीयता है तथा अतुलनीय राष्ट्रनायक श्री लोकमान्य तिलक की प्रत्यक्ष स्मृति के रूप में 'केसरी' उच्च तथा पवित्र राष्ट्र-विचारों से ओतप्रोत, शासनाधिकारियों द्वारा प्रसृत विकृत विचारों का विदारण करनेवाला, अराष्ट्रीय तथा बाहर से आयातित मानव-कल्याण के फटे बुरके की ओट में राष्ट्र की अस्मिता नष्ट करने की घात में बैठे तथा उनके कथित विचारों का खंडन करनेवाला, तथा इस खंडन-मंडन में अपने लिखने का गंभीर, उच्च स्तर बनाए रखने वाला हो, ऐसी उत्कट इच्छा है, उन्हें 'केसरी' का हो रहा (कुछ प्रमाण में हो चुका) परिवर्तन निस्संदेह दुःखदायी है। इस अंधःकारमय परिस्थिति में आप जैसे हिंदू-राष्ट्र के प्रबल समर्थक के चुने जाने से सूक्ष्म किरण रूप में क्यों न हो, आशा का प्रकाश दिखाई देने लगा है। विश्वास है कि 'केसरी' की गर्जना सभी विपक्षियों को भयभीत कर विजयशालिनी दुर्गारूपी भारत-राष्ट्रमाता के पूर्व वैभव से प्रकट होने की साक्ष्य दश-दिशाओं में देगी। इसी अत्यंत आनंद में आपका अभिनंदन करने को यह संक्षिप्त पत्र लिख रहा हूँ। (मूल मराठी)

५५. मार्मिक परीक्षण

श्री राजीवलोचन अग्निहोत्री, रीवा, ८ अप्रैल १९५९

आप द्वारा भेजी हुई दो पुस्तकें 'शकारि विक्रमादित्य' तथा 'बघेल वंश वर्णनम्' प्राप्त हुईं। पुस्तकें अच्छी हैं। 'विक्रमादित्य' में एक बात स्पष्ट होना आवश्यक था कि उसके प्रभाव तथा प्रयत्न से सबको सूत्रबद्ध किया गया और आक्रांताओं का विनाश हो सका। यह पर्याप्त स्पष्ट नहीं है।

दूसरी बात कि पिता के वध के समाचार से उतावला सा हो कर उसने तुरंत उज्जयिनी पर धावा बोलने का निश्चय किया, ऐसा पुस्तक से प्रकट होता है। इतने श्रेष्ठ पुरुष के इतने महत्त्वपूर्ण प्रसंग में पारिवारिक

स्नेह तथा प्रतिशोध की भावना प्रोत्साहित करनेवाली हो, यह उसके श्रेष्ठत्व का पोषण करनेवाली बात कहलायी जा सकेगी क्या? लेखक की कठिनाइयाँ लेखक ही जाने। मेरे जैसे कुछ लोग दोषस्थल खोज सकने पर भी लेखक की प्रतिभा को पा नहीं सकते। यह सत्य होने के कारण मेरे द्वारा कुछ दोषदर्शन जैसा लिख गया हो तो उससे व्यथित न हों, यह मेरी आपसे प्रार्थना है।

'बघेल वंश वर्णनम्' इतिहास तथा काव्य– दोनों ही दृष्टि से उपयुक्त होगा। हिंदी तथा अंग्रेजी अर्थ तथा अन्यान्य आवश्यक बातों से उसकी उपयुक्तता विद्वानों के लिए बढ़ी है। अंग्रेजी अनुवाद में श्लोक ७१ (पृष्ठ १७) का अनुवाद कुछ जँचा नहीं। एक ही मोती होने के कारण दूसरा मोती कर्णभूषण के लिए पार्वती द्वारा माँगा जा सकता है। उसके समान दूसरा मोती अप्राप्य है, बड़ी समस्या खड़ी होगी। इस समस्या का हल निकालने के हेतु शंकर जी ने पार्वती को अपने शरीर के अर्धांग के रूप में अपने शरीर में समाविष्ट कर उसका एक ही कान शेष रहे, यह व्यवस्था की। एक कान में एक मोती दूसरा कान शिव का, पार्वती का नहीं। अतः उसकी चिंता पार्वती को होने का कारण नहीं, इस विचार से वे अर्धनारीनटेश्वर हो गए, ऐसा भाव श्लोक का लगता है। अंग्रेजी अनुवाद में यह व्यक्त न होकर और कुछ व्यक्त होता है। आपको यह ठीक लगे तो स्वयं देखकर योग्य हो, वह करें।

५६. यज्ञ में संगतिकरण महत्त्वपूर्ण

२४ अप्रैल १६५६

श्री मोतीलाल जी,
श्री विष्णुयाग महोत्सव श्री बोंदरू महाराज,
ग्राम खरगोन, जिला निमाड़ (म.प्र.)

तत्रस्थ सब धर्माभिमानी बंधुओं को सादर प्रमाण। एक सूचना, कि केवल यज्ञयाग का कार्यक्रम पर्याप्त नहीं। यज्ञ में संगतिकरण महत्त्व का है। सामग्री तथा उससे महत्त्व का, याने समाज का संगतिकरण अर्थात् समाज का संगठन, यह लक्ष्य होना चाहिए। इस पवित्र विष्णुयाग में सम्मिलित हो रहे सब बांधवों को इसकी प्रेरणा श्री परमात्मा की कृपा से हो, यही उसके श्रीचरणों में प्रार्थना करता हूँ।

५७. हिंदू विरोध के लिए ही धर्मनिरपेक्षता

श्री लाला हरदेव सहाय, दिल्ली २७ अप्रैल १९५९

आपने सीतामढ़ी की दुर्घटना का जो कारण कहा, वह ठीक ही दिखता है। किंतु अपना शासन तो 'सेक्यूलर' होने के कारण समझता है कि हिंदू-धर्म, हिंदू-समाज से विरोध यही मानो सेक्यूलॅरिज्म है, और संभवतः इसी कारण जो-जो तत्त्व हिंदू-विरोधी होंगे, उनसे शासन अत्यधिक प्रेम करता है, उनकी ओर पक्षपात करता है, उन्हीं से समझौते करने को उत्सुक रहता है। उदाहरण अनेक हैं। पंजाबी सूबा आदि की घोषणाएँ करनेवालों से प्रेमपूर्ण समझौते चलते हैं, क्योंकि उनके नेता कभी-कभी हिंदू को सबसे बड़ा शत्रु कहते हैं। ख्रिस्ती लोगों के प्रति भी इसी कारण आकर्षण दिखता है कि वे हिंदू-समाज को समाप्त करने पर तुले हुए हैं। मुसलमान सबसे अधिक प्रिय इसलिए हैं कि हिंदू-धर्म तथा हिंदू-समाज का सर्वांगीण विरोध करना ही उन्हें अपना धर्म मालूम होता है। इसलिए उनकी उद्दंडता, उनके द्वारा हुआ विध्वंस-कार्य, हिंदू-समाज के मूलभूत नागरिक अधिकारों को रोकने की चेष्टाएँ प्रिय एवं समर्थनीय लगते हैं। इन कामों में शासन का उन्हें अप्रत्यक्ष सहाय ही प्राप्त होता है। कम्युनिज्म भी इसलिए प्रिय है कि वह अपने धर्म तथा जीवनश्रद्धाओं को समूल नष्ट करने के लिए दृढ़प्रतिज्ञ है। आजकल की गतिविधियों से ऐसे अनुमान निकल सकते हैं। देशभर में ऐसे अनुमानों की पोषक कितनी ही विचित्र घटनाएँ मिलेंगी।

शासन ने यह जो नीति अपनाई है, यही सारे दंगों को प्रोत्साहन देती है। गोवध चलते रहना तो इस नीति का एक छोटा-सा अंग है। हिंदू समाज कब सचेत होकर इस नीति को बदलवाने हेतु कटिबद्ध एवं संगठित होगा, यही प्रश्न है। उनका जागृत होना, संगठित होना, सब विरोधी तत्त्वों को निष्प्रभ करने की शक्ति से युक्त होकर आत्मविश्वासपूर्ण जीवन प्रस्थापित करना, यही इन सब दुर्घटनाओं से रक्षा होने का एकमात्र पूर्ण फलदायी मार्ग है। देखें, श्री परमात्मा कैसी बुद्धि देता है।

५८. देशविभाजन से योग्य पाठ सीखें

श्री जी.वी.सुब्बाराव गारू, अमलापुरम् (आंध्रप्रदेश) ३० अप्रैल १९५९

आपका लिखा 'Partition of India 1947' ग्रंथ पढ़कर यह पत्र

लिख रहा हूँ। उस वक्त की परिस्थिति तथा इस शोकांतिका में भाग लेनेवाले महत्त्वपूर्ण कलाकारों की मानसिकता पर प्रकाश डालनेवाले आवश्यक तथा महत्त्वपूर्ण दस्तावेजों का संग्रह इस ग्रंथ में अच्छी तरह से किया है। हमारे नेताओं और सामान्य जनता ने राष्ट्रजीवन को कलंकित करनेवाली इस घटना से कौन-सा पाठ ग्रहण किया, यह देखना महत्त्वपूर्ण है। किंतु इस घटना को सही परिप्रेक्ष्य में समझा गया या यह स्वयंसिद्ध पाठ समझने का प्रयास हुआ है, इस बात का कोई संकेत नही मिलता। जब तक अपने राष्ट्र की अस्मिता का सम्यक्ज्ञान, उसके फलस्वरूप आनेवाली जिम्मेदारी, राष्ट्रीय एकात्मता की दृष्टि से विभिन्न समाजों के ऐतिहासिक तथा दैनंदिन व्यावहारिक संबंधों का मूल्यांकन तथा इसी प्रकार के कई तथ्यों का ठीक प्रकार से परिशीलन होकर उसके अनुसार साहसपूर्ण आचरण नहीं होता, तब तक कोलकाता, नोआखाली में जिस प्रकार का क्रूर, भयानक रक्तरंजित नरसहांर तथा अन्य वैसी घटनाएँ हुईं, वैसी अनेक घटनाएँ होना सुनिश्चित है। मध्यप्रदेश, उत्तर प्रदेश और बिहार में जो घटनाएँ हुईं, वे अपने समाज की वर्तमान दुर्गति एवं अपमान का प्रमाण है। हम आशा करते हैं कि अंत में योग्य विचार, योग्य उक्ति, योग्य कृति का हमारे नेतागण अनुसरण करेंगे तथा हमारी वर्तमान दुरवस्था नष्ट होकर हम शक्तिशाली, स्वाभिमानी, विश्ववंद्य प्रभावी राष्ट्र के रूप मे उभरेंगे।

इस ग्रंथ के प्रकाशन के लिए आपका अभिनंदन। मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह ग्रंथ विचार प्रेरक एवं भविष्यकालीन कार्यवाही में मार्गदर्शक होगा। (मूल अंग्रेजी)

५९. देखना है अंग्रेजियत कब जाती है?

श्री लाला हरदेव सहाय, दिल्ली — १ जून १९५९

अंग्रेजों के समय से एक नीति चलती आ रही है कि अहिंदुओं ने हिंदू समाज की भावनाओं को ठुकराना तथा दँगा-मारपीट आदि करना और उस सेवा के बदले में उन्हें पीठ पर थपथपी मिलना, मानो उन्होंने बड़ा श्रेष्ठ सत्कार्य किया हो। और पीड़ित हिंदुओं को दंड देकर उनकी श्रद्धाएँ, विश्वास तथा आत्मविश्वास को तोड़ना। अंग्रेजी नीति का प्रभाव आज के बहुतांश नेताओं पर इतना हुआ है कि आज भी विभाजन आदि के अत्यंत कटु अनुभव प्रत्यक्ष होने के पश्चात् भी वे इसी नीति का

अनुकरण एवं समर्थन करने में अपने आपको धन्य मानते हैं। देखें, कब यह अंग्रेजियत जाती है और स्वदेश एवं स्वराष्ट्र की संस्कृति की कोरी बातें लेकर अंग्रेजियत का ही पोषण करनेवाले भ्रम फैलाने की विचित्र गति समाप्त होती है। सच्चा स्वराष्ट्र, स्वसंस्कृति प्रेम एवं तदनुरूप व्यवहार जितना शीघ्र अवलंबित किया जाएगा, उतना ही अपना जीवन सुखी तथा सम्मानित होगा।

६०. साप्ताहिक 'साम्ययोग' अपना व्रतभंग न करे

श्री संपादक 'साम्ययोग', वर्धा ५ जुलाई १९५९

शुक्रवार, ३ जुलाई १९५९ के आपके उत्तम साप्ताहिक में पृष्ठ १९७ पर 'केरल का तूफान' नामक शीर्षक के अंतर्गत सुप्रसिद्ध सर्वोदय कार्यकर्ता श्री गोविंदन के लेख का अनुवाद प्रकाशित हुआ है। उसमें एक वाक्य है– 'गुरुवायूर आदि स्थानों में हिंदु-मुसलमानों के दंगे का बीज आर.एस.एस. तथा मुस्लिम लीग ने बोया है।' वह पढ़कर आश्चर्य हुआ। आर.एस.एस. अर्थात् संघ का इन झंझटों से प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष किसी भी प्रकार का संबंध नहीं, इसकी मुझे प्रत्यक्ष जानकारी है। इसलिए संघ के बारे में यह उल्लेख सर्वथा असत्य है। इसकी ओर आपका ध्यान खींचना चाहिए, ऐसा मैंने अनुभव किया। संघ के बारे में ऐसी असत्य बातें प्रकाशित करने से 'सर्वोदय वाद' को सफलता मिलती हो तो आप उनकी कल्पना कर अवश्य प्रकाशित करें। यदि आपका संघ के लिए इस तरह से उपयोग हुआ, तो हमें संतोष ही होगा। परंतु श्रेष्ठ आध्यात्मिक तथा शुद्ध नैतिक भूमिका के आधार पर समाज-क्रांति करने को कटिबद्ध हुए कार्य को तथा उसके अधिकृत मुखपत्र 'साम्ययोग' को क्या यह शोभा देगा, इसका विचार कर इस विषय में निश्चय करें।

नागपुर में या प्रवास में 'साम्ययोग' उपलब्ध हुआ तो मैं उसे इस भावना से पढ़ता हूँ कि उसमें असत्य को न मानने का संकल्प हो। अधिकांश समाचार-पत्र प्रायः नहीं पढ़ता, क्योंकि मैं समझता हूँ कि उनमें पक्षाभिनिवेश के कारण तोड़-मरोड़कर सत्य प्रस्तुत किया जाना संभव है। अब 'साम्ययोग' भी उसी राह पर न चले, इस भावना से यह पत्र लिखा है। न्यूनाधिक के लिए क्षमस्व !

(मूल मराठी)

६१. भगवद् साहित्य अधिकाधिक प्रभावी हो

श्री गो.नी.दांडेकर, तलेगाँव (महाराष्ट्र) १२ जुलाई १९५९

'कृष्णायन' प्राप्त हुआ। आपकी शैली में साहित्य का ललित पक्ष प्रकर्षता से अनुभव होता है, जिससे भगवान के अतर्क्य जीवन की गंभीरता सौम्य होकर बच्चों-कच्चों को भी रुचिपूर्ण लगेगी, परंतु मूल सूत्र से असंगत नहीं हुआ, इतना अच्छा हुआ है। फिर भी अनेकों को व्याकुल करनेवाला वह गांभीर्य बीच-बीच में व्यक्त होता तो मेरी प्रवृत्ति को अधिक प्रिय होता। यह स्पष्ट है कि प्रत्येक की पसंदगी-नापसंदगी एक ही कृति से संतुष्ट होगी, यह अपेक्षा करना व्यर्थ है। इसलिए यह दोष नहीं माना जा सकता।

श्री परमेश्वर-कृपा से आपकी लेखनी से सत्प्रवृत्ति को आह्वान करनेवाला साहित्य अधिकाधिक प्रभावी स्वरूप में प्रकट होता रहे।

(मूल मराठी)

६२. जातीयता विकृत है

श्री गोविंदराव ठाकरे, अमरावती ४ सितंबर १९५९

आपके द्वारा भेजी गई प्रश्नपत्रिका कल प्राप्त हुई। मेरे विषय में आपकी कुछ भ्रांत धारणा हो गई है। लगता है कि आपने मुझे वेद, धर्म, समाजशास्त्र का जानकार समझकर ये प्रश्न भेजे हैं। परंतु मैं शास्त्रों का ज्ञाता नहीं हूँ। अपने समाज का एक सीधा-सादा स्वयंसेवक हूँ। असंगठितता के कारण स्वयं का उत्कर्ष करने के लिए आवश्यक एकता तथा चारित्र्य का हमारे समान अभाव हो गया है, इसलिए इन दोषों को हटाकर परस्पर प्रेमपूर्ण संगठित व्यवहार प्रस्थापित करना चाहिए, इतना ही अल्प-सा ज्ञान मुझे प्राप्त हुआ है। यह ज्ञान कितना है, यह भी कहना कठिन है। ऐसी स्थिति में आप मेरी जो परीक्षा ले रहे हैं, उसमें मेरा उत्तीर्ण होना सर्वथा असंभव है।

आपके प्रश्नों को मैं पूर्णतः समझ नहीं पाया हूँ। वैदिक और हिंदूधर्म भिन्न वस्तु है, यह भी आपके पत्र से ही ज्ञात हुआ है। समाज में जातियाँ हैं, तथापि जातीयता विकृति है, यही शिक्षा मुझे प्राप्त हुई थी। परंतु आपके प्रश्न से दिखाई देता है कि जातीयता भी अस्तित्व में थीं। क्या सच है, क्या झूठ है, यह केवल केवल पंडित ही जानें।

पत्राचार द्वारा धर्म का स्वरूप बताना संभव नहीं है। इसलिए योग्य धर्मवेत्ता, जिस पर आपका विश्वास हो, के पास जाकर जिज्ञासाबुद्धि से समझ लेने का प्रयत्न किया तो कुछ समझ में आएगा, अन्यथा सब वृथा कष्ट करना होगा।

अब हम क्या करें इस प्रश्न का उत्तर सरल है। शुद्ध भाव से सारे हिंदू समाज पर नितांत प्रेम करना चाहिए। पड़ोसियों के कल्याण के लिए कष्ट सहना पड़े, हानि उठानी पड़ी तो भी वह सहर्ष सहें। सुसूत्र, संगठित शक्तियुक्त समाज होने के लिए प्रत्यक्ष पोषक, अपने को स्वीकार्य तथा रुचिकर कार्यक्रम अपनाना चाहिए। ऐसा करते समय जिससे मतभिन्नता है, उसके विषय में भी निष्कपट स्नेह तथा मित्रभाव रखें तथा संपूर्ण समाज के सामने अपना पवित्र जीवन आदर्श रहेगा, ऐसे सद्गुणों तथा भगवद्भक्ति की भावना का पोषण करें, परंतु मैं आदर्श हूँ, इस अहंकार से कदापि ग्रस्त न हों। ज्येष्ठ पुरुषों से मैंने ऐसा सुना है। उसका जो अल्प-सा अंश स्मरण रहा, वही यथाशक्ति, यथामति उद्धृत किया है, परंतु मुख्य बात यह है कि आप ही विचार कर योग्य मार्ग निश्चित करें। आपके प्रश्नों के उत्तर देने में मैं असमर्थ हूँ, इसलिए क्षमाप्रार्थी हूँ। (मूल मराठी)

६३. गोहत्या के बारे में राजनैतिक दृष्टिकोण अनुचित

श्री मुकुंदलालजी, मुंबई　　　　　　　　　　२४ मार्च १९६०

गोहत्या के विषय में जो कुछ शासन की नीति है, उससे सभी परिचित हैं। नए-नए कत्लखाने खोलने का उनका विचार अब कार्यान्वित होने जा रहा है। उस संबंध में जनजागरण का आयोजन चल रहा है। शासन केवल उदासी नहीं, अपितु प्रत्यक्ष गोहत्या तथा अवैध गोहत्या को प्रोत्साहन देता हुआ दिखता है। जब तक जनसाधारण में सतर्क रहने का गुण उत्पन्न नहीं होता, कोई योजना सफल होना कठिन है। अतः जनजागरण करने में 'गोहत्या निरोध समिति, दिल्ली' संलग्न है। जिनका-जिनका सहयोग प्राप्त हो सकता है, लेने का प्रयास होता है। राजनैतिक संस्थाएँ प्रत्येक आयोजन को राजनैतिक चुनाव-संबंधी स्वार्थ का दास बनाना चाहती हैं, अतः वह स्वार्थ यहाँ न दिखने के कारण योग्य सहयोग नहीं देतीं। कभी-कभी उनकी बाधा भी होती है। सहयोग-प्राप्ति का प्रयत्न चल रहा है।

अपने राजनैतिक स्वार्थ के कारण भी ये संस्थाएँ एकत्र नहीं आतीं। मैं तो इन सबसे पृथक हूँ। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का संगठन-रूप

कार्य करने में लगा हूँ। फिर भी सबको किसी न किसी कारण से एक मंच पर लाने का प्रयास करने के लिए उन्हीं में से कुछ महानुभावों के आग्रह से उद्यत हुआ था। किंतु उनकी परस्पर अविश्वास आदि की प्रवृत्ति देखकर मैं उस प्रयास से उपरत हो गया हूँ। आगे क्या होता है, देखना है। आशा तो छोड़ी नहीं है।

६४. वीर पुरुषों को आदरांजलि

१८ मार्च १९६१

श्री जगदीशचंद्र सिंहल जी, संयोजक, भगतसिंह स्मृति-दिवस समारोह

'सरदार भगतसिंह स्मारक समिति' की ओर से इस वर्ष भी सरदार भगतसिंह तथा उनके साथियों का स्मृति-दिवस आगामी २३ जून ६१ को मनाने का आयोजन किया गया है, यह समाचार तथा समारोह में सम्मिलित होने के लिए निमंत्रण का पत्र प्राप्त हुआ। मेरे पूर्व-नियोजित कार्य में अनिवार्य रूप से व्यस्त होने के कारण समारोह में उपस्थित होने के सौभाग्य से मुझे वंचित रहना पड़ रहा है। अतः इस पत्र द्वारा ही भारत की स्वतंत्रता-प्राप्ति हेतु उत्कट राष्ट्राभिमान से प्रेरित होकर अपने जीवनपुष्प की सहर्ष बलि चढ़ानेवाले इन असामान्य धीर-वीर पुरुषों की पुण्यवान स्मृति में सश्रद्ध अंतःकरण से आदरांजलि समर्पित करता हुआ उनकी स्मृति को जागृत रखकर राष्ट्र में निःस्वार्थ भाव से निर्भयतापूर्वक जीवन सर्वस्व का समर्पण करनेवाली दिव्य प्रेरणा जगमगाती रखने की आपकी निष्ठा तथा उद्योग का हार्दिक अभिनंदन करता हूँ।

समारोह में उपस्थित होनेवाले भाग्यवान महानुभावों को सादर प्रणाम।

६५. शब्दार्थकल्पतरु संस्कृतनिघंटु की समीक्षा

२५ मार्च १९६१

परममान्यवर्यान् श्री शुद्धचैतन्य स्वामिमहोदयान् प्रति,

सादर प्रणामं निवेद्यते।

श्रीमद्भिः परमात्मीयतया प्रेषितः 'शब्दार्थकल्पतरुः' तदनुप्रेषितेन पत्रेण सह यथावसरम् अधिगतः। निरंतरप्रवासादिविविधकार्यव्यापृतत्त्वाद् यथापेक्षितं ग्रंथाभिप्रायात्मकं पत्रं प्रेषितुं नावसरोऽलभ्यत। इदानीं ग्रंथावलोकनांते

पत्रमिदं लिख्यते।

१३० वर्षेभ्यः प्राक् प्रकाशितस्य शब्दार्थकल्पतरोः पुनः संस्करणं मुद्रणं च कृत्वा श्रीमद्भिः गीवार्णवाक्सेवकेषु महान खलु उपकारः कृतः। ईदृशः कोशग्रंथाः न कस्यापि एकाकिनः पुरुषस्य प्रयत्नेन सहसा प्रकाश्यन्ते। एतादृग्ग्रंथनिर्माणं हि वाङ्मयतपः कल्पमेव मन्येऽहम्। सप्तशताधिक -सहस्रपृष्ठात्मकस्य अस्य बृहदाकारस्य ग्रंथस्य मूल्यमपि प्रकाशनसमित्या अत्यल्पं निर्धारितम् इति सर्वथा धन्यवादास्पदमेव। संस्कृत शब्दानाम् आन्ध्रीय पर्याय शब्दप्रदानेन सर्वेषाम् आन्ध्रबंधूनां कृते निघण्टुरयं नितांतं साहाय्यप्रदःस्यादिति आशासे।

कोशेऽस्मिन् शब्दक्रमनिर्धारणे श्रीमद्भिः उपयोजिता पद्धतिः सर्वथा अभिनवा एव। भवदीयं पत्रं पठित्वा सा पद्धतिः अस्माभिः आकलिता। अस्मत्सविधे प्रेषिते ग्रंथे कोऽपि प्रास्ताविक लेखो नासीत्। प्रास्ताविक लेखो नासीत्। प्रास्ताविके लेखे स्वीयां शब्दक्रमनिर्धारणपद्धतिम् उद्दिश्य स्पष्टीकरणात्मकं किमपि अवश्यं लिख्यताम् इति सविनयं सूचयामि।

अत्र महाराष्ट्रे स्वर्गीयेण विदुषा श्री आप्टे महाशयेन लिखितः संस्कृताङ्ग्लकोशः सविशेषं लब्ध प्रचारः। तस्य च कोशस्य नवीनं त्रिखंडात्मकं संस्करणं पुण्यपत्तने सद्य एव प्राकाश्यत। तत्र प्रति शब्दम् आङ्ग्लीयपर्याय शब्दैःसह विविधात्मनाम् अर्थानां सम्यग् आविष्कारार्थम् आकलनार्थं च काव्य नाट्यादि ग्रंथगतानि मूलसन्दर्भवाक्यानि ग्रंथकृता समुल्लिखितानि तैश्च परस्सहस्रैः वाक्यैः स कोशः अतीव उपयोगार्हः सञ्जातः। न केवलं संस्कृत शब्दनामेव अपितु समग्रस्य संस्कृत साहित्यस्य सम्यगाकलनं तैः सन्दर्भवाक्यैः जिज्ञासूनां जायते। भवदीयस्य।

शब्दार्थ कल्पतरोः द्वितीयावृत्तिः शीघ्रमेव प्राकाश्यं यास्यतीति नितांतम् आशासे। द्वितीयावृत्तिप्रकाशनावसरे सन्दर्भ वाक्यानां निर्देशः तत्र तत्र यावच्छक्यं भवतु इति मदीयापेक्षा।

भवदीयेन पत्रेण ग्रंथेन च भवद्दर्शनस्मृतिराविर्भूता एवमेव यथावसरं पत्र प्रेषणेन वर्धनीयः स्नेहः इति प्रार्थयते।

हिंदी अर्थ :- आपके द्वारा परम आत्मीयता से प्रेषित 'शब्दार्थ कल्पतरु' ग्रंथ तथा संलग्न पत्र प्राप्त हुए। निरंतर प्रवास और अन्य व्यस्तताओं के कारण ग्रंथ-विषयक अभिमत लिखकर भेजना संभव नहीं हुआ। ग्रंथ के अवलोकन के पश्चात् अब लिख रहा हूँ-

१३० वर्ष पूर्व प्रकाशित 'शब्दार्थ कल्पतरु' के नवीन संस्करण एवं मुद्रण से आपने संस्कृत भाषासेवकों का बड़ा उपकार किया है। इस प्रकार के ग्रंथ अकेले के प्रयास से तुरंत प्रकाशित नहीं किए जा सकते। इसे मैं 'वाङ्मय तप' मानता हूँ। एक हजार सात सौ पृष्ठ वाले इस बृहद् ग्रंथ का मूल्य अत्यंत कम रखा है, यह सर्व प्रकार से धन्यवादार्ह है। आशा करता हूँ कि संस्कृत शब्दों के तेलुगु भाषा के पर्याय देने से आंध्र बंधुओं को यह निघंटु बहुत सहायक होगा।

इस शब्दकोश में शब्दक्रम निर्धारित करने हेतु आपने जो पद्धति स्वीकार की है, वह सब प्रकार से अभिनव है। मुझे आपने जो प्रति भेजी थी, उसमें प्रस्तावना नहीं थी। मेरा विनम्र सुझाव है कि अपेक्षित प्रस्तावना में निर्धारित पद्धति का थोड़ा-बहुत स्पष्टीकरण दिया जाए।

यहाँ महाराष्ट्र में स्वर्गीय विद्वान श्री आप्टे द्वारा लिखित संस्कृत अंग्रेजी कोश प्रचार में है। उसका नया संस्करण तीन खंडों में पुणे से प्रकाशित हो चुका है। उसमें योग्य अर्थ समझने के लिए अंग्रेजी शब्दों सहित काव्य-नाटक आदि मूल ग्रंथों के संदर्भ दिए हैं। अतः वह ग्रंथ अत्यंत उपयोगी है। केवल शब्दों का नहीं, अपितु समग्र संस्कृत साहित्य का सम्यक् आकलन उन संदर्भ वचनों के कारण जिज्ञासुओं को संभव है।

आपके 'शब्दार्थ कल्पतरु' की द्वितीय आवृत्ति शीघ्र प्रकाशित हो, यह मेरी उत्कट आकांक्षा है। उसमें संदर्भों का निर्देश यथासंभव और योग्य स्थान पर दिया जाए।

आपके ग्रंथ एवं पत्र से आपके दर्शन का स्मरण हुआ। यथावसर पत्र भेजने की कृपा करें। तद्द्वारा पारस्परिक स्नेह बढ़ता रहे।

६६. सैनिक शिक्षा देना संघ का प्रयत्न नहीं

श्री अमरेंद्र गाडगील, पुणे — २४ मार्च १९६१

'गोकुल' मासिक पत्रिका का 'सैनिक शिक्षा विशेषांक' आप प्रकाशित करने जा रहे हैं, यह पढ़कर संतोष हुआ। सेना राष्ट्र-जीवन का एक महत्त्वपूर्ण अंग होने से बाल्यकाल से ही सब लोगों को उसकी साधारण जानकारी एवं उसके महत्त्व का ज्ञान करा देना आवश्यक ही है। आपका वैसा संकल्प अभिनंदनीय ही है।

विशेषांक में जिन विषयों का समावेश होने वाला है, उनकी सूची देखी। उसमें सैनिक शिक्षा के लिए 'महाराष्ट्र में हुए अब तक के प्रयत्न' शीर्षक से प्रस्तावित लेख में आपने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का भी समावेश किया है, यह देख कर आश्चर्य हुआ। संघ का प्रयत्न 'सैनिक शिक्षा' देने का है यह जानकारी मुझे नहीं है। सब का जीवन सुव्यवस्थित, संयमित एवं अनुशासनबद्ध हो एवं उसे प्रत्येक नागरिक स्वयं में आत्मसात करे, इस दृष्टि से संघ की शिक्षा की योजना है, मुझे ऐसा ही ज्ञात है। इससे भिन्न अभिनव खोज कोई करनेवाला हो एवं संघ वैसा ही है, ऐसा आग्रह से बतलानेवाला हो, तो उसका मुँह कौन बंद कर सकता है। आपके इस विशेषांक में संघ के विषय में किसी ने लिखा, तो लिखनेवाले को कितनी गलतफहमी है एवं संघ के संपर्क में रहकर भी स्वंय की कल्पनाओं से ही चिपके रहकर उस दृष्टि से संघ की ओर देखने की विचित्रता किसमें है, यह ध्यान में आएगा। (मूल मराठी)

६७. १८५७ के स्वतन्त्रता संग्राम की विफलता का कारण

श्री आदित्यकुमार वाजपेयी, २९ मार्च १९६१

आपकी ओर से 'अमर हिंदू' नाम की आप द्वारा लिखी पुस्तक मुझे दी गई थी। उसे पढ़ने के लिए बहुत विलंब से अवसर प्राप्त हो सका। नागपुर के एक विद्वान साहित्याचार्य श्री बालशास्त्री हरदास जी को भी पुस्तक पढ़ने का अवसर मिला। सन् १८५७ की विफलता में हिंदू-मुस्लिम एकता की भ्रांत चेष्टा कारणभूत हुई थी, यह आपका विश्लेषण उन्हें बहुत जँचा और कुछ दिन पूर्व एक व्याख्यानमाला में कृतज्ञतापूर्वक उन्होंने आपके कथन का उल्लेख तथा समर्थन किया।

हिंदू जन-मन में आत्मविश्वास जगाने का, भ्रांत धारणाओं को दूर कर स्वराष्ट्रस्वरूप का यथार्थ दर्शन करा देने का गुण आपकी इस पुस्तक में अवश्य है। आशा है कि हिंदू-बंधु इसका पठन कर लाभ उठाएँगे तथा विशुद्ध राष्ट्र-प्रस्थापन में जुट जाएँगे।

६८. समाधान

श्री अमरेंद्र गाडगील, पुणे ५ अप्रैल १९६१

मेरे मन में जो प्रश्न पैदा हुए थे, उसका आपने समाधान किया,

यह पढ़कर बहुत संतोष हुआ। आपकी ओर से संघ के संबंध में अपसमझ धारण किया गया था ऐसा मेरा अपसमझ नहीं था, एवं नहीं है। फिर भी एकाध बार एकाध विषय के अत्यधिक उत्साह में अनजाने कुछ अनपेक्षित व्यक्त होने की संभावना रहती है। संघ के प्रति जिनकी आत्यंतिक निष्ठा एवं उत्तम ज्ञान है, उनकी ओर से भी अनवधान से किए गए कुछ शब्द-प्रयोग मुझे ज्ञात हैं। आप जैसों की ओर से वैसा न हो, इस विचार से ही इसके पूर्व का पत्र लिखा था। उसमें लेख लिखनेवाले संघ की ध्येय-नीति संपूर्णतः जाननेवाले या माननेवाले होंगे ही, ऐसा निश्चित कहना कठिन है। इसी कारण वैसा लिखकर आपको सतर्क करना मुझे योग्य लगा। (मूल मराठी)

६९. पं. रामकिंकर जी अनुग्रहप्राप्त हैं

श्री पं.रमेशचंद्र त्रिवेदी, छिंदवाड़ा १७ अगस्त १९६१

मेरे व्यस्त कार्यक्रमों में से समय निकालकर वहाँ उपस्थित होना संभव दिखता नहीं। क्षमाप्रार्थी हूँ।

समारोह सानंद सोत्साह संपन्न होगा ही। रावण जैसे आततायियों के अंतक, प्रभु रामचंद्रजी का कल्पांतकारी स्मरण कर उनके आदर्शों से स्फूर्ति पाने का आदेश श्री गुँसाई जी ने दिया है। उस आदेश के पालन का दृढ़ निश्चय श्री गुँसाई जी के जयंती-समारोह पर उनकी पुण्यवान स्मृति को साक्ष रखकर हम सब करें, यही श्री प्रभुचरणों में प्रार्थना कर रहा हूँ।

श्रद्धेय श्री किंकरजी की जिह्वापर साक्षात् सरस्वती का वास है। श्री गुँसाई जी का उन्हें अनुग्रह प्राप्त है, ऐसी मेरी धारणा मैंने कानपुर में एक बार उनका प्रवचन सुना था, तब से अविचल है। उन्हें इस अवसर पर प्राप्त करना आपके श्रेष्ठ भाग्य का लक्षण है। उनके पास मेरे प्रणाम पहुँचाने की कृपा करें।

७०. किसी भी दल को सुझाव देना उचित नहीं

श्री प्रकाश मोहता, कोलकाता २० अगस्त १९६१

'हिंदूवादी' सारी संस्थाएँ, जो राजनीति के कार्यक्रमों में लगी हैं, एक अंतःकरण से चलें, यह उचित ही है। ऐसा एक प्रयत्न मैं स्वयं तथा राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ राजनीति से सर्वथा पृथक होते हुए भी (हिंदु

महासभा तथा जनसंघ के मित्रों के आग्रह के कारण) मैंने कर देखा था। फल कुछ निकला नहीं। अतः मैंने वह बात मन से निकाल दी। यद्यपि आपके स्वर्गीय पूज्य पिताश्री का सदैव अंतःकरण से आग्रह रहता था कि मैं और प्रयत्न करूँ, उसका वैयर्थ्य देखकर मैंने कुछ करने का साहस नहीं किया। मेरा यह अनुभव है कि राजनीतिक क्षेत्र में मेरी कुछ सुनवाई नहीं है। यह स्वाभाविक भी है। अतः किसी भी दल को कुछ सुझाव देने का प्रयत्न निष्फल तथा मेरे लिए धृष्टतापूर्ण ही होगा। आप सबसे परिचित हैं ही। आप ही आवश्यक व्यक्तियों से मिलकर अच्छा निर्णय निकाल सकते हैं। आपको इसमें यश मिले तथा आगामी चुनाव में सफलतापूर्वक आगे जाने का अवसर आपको प्राप्त हो, यही इच्छा है।

७१. क्षणिक आवेश लाभदायक नहीं

श्री टी. बालकृष्ण मेनन, पालघाट　　　　　　१ सितंबर १९६१

ऐसी विचित्र घटनाएँ हो रही हैं और जब घोर विनाशकारी परिस्थिति उत्पन्न होती है, तब हिंदू-समाज आक्रोश करने लगता है और सिर्फ थोड़े समय के लिए आवेशयुक्त कार्यों में जुट जाता है। बाद में फिर से निर्विकार अकर्मण्य अवस्था में चला जाता है तथा उसके अस्तित्व को ही जकड़नेवाले विकट जाल की ओर से आँखें मूँद लेता है। हमें समाज को जागृत कर उसका एक शक्तिशाली संगठन खड़ा करना होगा। आज हिंदू अनुभव करने लगा है कि वर्तमान परिस्थिति में वह सुरक्षित नहीं है। अतः इस परिस्थिति में हमें अपना कार्य करना लाभदायक सिद्ध होगा। हम सब यदि इस दिशा में कार्य करते हैं, तो हमारा यश दूर नहीं। (मूल अंग्रेजी)

७२. राजनीति में सत्प्रवृत्त लोग आएँ

श्रीमान् विजयभूषण सिंहदेव, जशपुरनगर　　　　　　२० अक्तूबर १९६१

आपका तार कल प्राप्त हुआ। आपका संकल्प अभिनंदनीय है। मेरा राजनैतिक गतिविधियों से संबंध न आने के कारण अलीगढ़ का चुनाव-क्षेत्र आपको कितना अनुकूल या प्रतिकूल होगा, इसका अनुमान लगाना मेरे लिए असंभव है। साथ ही किन-किन दलों के प्रत्याशी आपके विरुद्ध रहेंगे और इस कारण आपके लिए कितनी मात्रा में अनुकूलता रहेगी, इसका मुझे पता नहीं है। मेरा आपसे अनुरोध है कि उस प्रांत के

राजनैतिक क्षेत्र में कार्य करनेवालों से प्रथम परामर्श कर लें, पश्चात् ही निश्चय पक्का करें।

इस क्षेत्र में सत्प्रवृत्त लोगों का आगे आना आवश्यक है। आप जैसे श्रेष्ठों के कारण राजनैतिक वायुमंडल धर्मानुकूल होने में अच्छी सहायता होगी। अतः आपके निश्चय के लिए मैं आपका अभिनंदन करता हूँ। श्री परमात्मा की आप पर कृपा रहे, मेरी यही प्रार्थना है।

७३. ईश्वर-विषयक पृच्छा

राजकुमारजी, सिरसा, पंजाब १७ फरवरी १९६२

आपका पत्र मिला। ईश्वर के संबंध में उसको जाननेवाले से ही प्रश्न करना लाभदायक होगा। मैं जानता नहीं। आपने जैसा पुस्तकों में पढ़ा है, वैसा मैंने भी कभी-कभी पढ़ा है। देखा तो नहीं। पुस्तकों में वर्णित महानुभावों के अनुभवों पर विश्वास करके चलता हूँ, क्योंकि उनके समान अनुभव प्राप्त करने का मुझमें सामर्थ्य नहीं। आप विश्वास नहीं करते, क्योंकि आपका अपनी बुद्धि पर विश्वास है। यह भी ठीक ही है।

आपकी जिज्ञासा का समाधान मैं नहीं कर सकता। मेरी असमर्थता को देखकर कृपया मुझे क्षमा करें।

७४. इस महान सौभाग्य से मैं वंचित

श्री हरभजनलाल शास्त्री, दिल्ली १८ फरवरी १९६२

गंगाशहर बीकानेर में आगामी ४-५ मार्च को अणुव्रत समिति का बारहवाँ वार्षिक अधिवेशन आयोजित है और उसमें उपस्थित होने के लिए आपने अतिस्नेह से मुझे आमंत्रित किया है। उक्त सम्मेलन का मैं उद्घाटन करूँ, ऐसी आपकी इच्छा है। परमवंदनीय आचार्य तुलसी के पुनीत दर्शन, संभाषण तथा सहवास का लाभ होने की आशा से आपके निमंत्रण के अनुसार वहाँ उपस्थित होने को जी चाहता है। उद्घाटन करने के लिए मैं अपने आपको अयोग्य मानता हूँ, परंतु अधिवेशन में उपस्थित होने का मन में आकर्षण है, तथापि इस महान सौभाग्य से प्राप्त सुअवसर से मुझे वंचित रहना पड़ रहा है। इधर लगभग दो मास से पूज्य माताजी अत्यंत रुग्ण हैं तथा दिन-प्रतिदिन स्वास्थ्य गिरता जा रहा है। इस स्थिति में मेरा कहीं जाना संभव नहीं हुआ। आगे जो श्री भगवान की योजना हो। किंतु इस

अपरिहार्य कारण से आचार्य श्री तुलसीजी से मेरी अनुपस्थिति के लिए क्षमाप्रार्थना करने का अनुरोध करना पड़ रहा है। इति। तत्रस्थ सभी श्रेष्ठ जनों को सादर प्रणाम।

७५. विधायक का कर्तव्य

श्री बालकृष्ण पालधीकर, मझौली, जबलपुर १० मार्च १९६२

आप विधानसभा के सदस्य बने हैं। अपने क्षेत्र के बंधुओं के प्रश्नों का गहराई से अध्ययन कर जो-जो समस्या दिखे, उसका समाधान कराने हेतु प्रयत्नशील रहना चाहिए। क्षेत्र के सब लोगों से प्रस्थापित संबंध दृढ़तर होते जाएँ तथा आप सबके विश्वासभाजन बन कर रहें, ऐसा व्यवहार अतीव सौजन्य का, सहानुभूति का होना लाभदायक होगा। समग्र राज्य के जो प्रश्न हैं, देश के प्रश्न हैं, उनका अध्ययन करना, अपने दल की उनके सम्बन्ध में नीति क्या है, वही ठीक क्यों हैं आदि सब आवश्यक बातों का यथोचित समर्थन करते बनना, जगत् के विचार प्रवाह, परस्पर संबंध तथा अपने देश पर हो सकनेवाला परिणाम समझना और ऐसे अध्ययन-चिंतन-व्यवहार के आधार पर विधानसभा में अच्छा विधायक दृष्टि से सोचनेवाला सदस्य इस नाते से मान्यता पाना, निर्भीकता से सत्य एवं राष्ट्रहितकारक विचारों को व्यक्त करनेवाला सम्मान प्राप्त करना आवश्यक है।

मैं स्वयं राजनीति के कार्य में नहीं हूँ, किसी दल विशेष में नहीं हूँ, न ही किसी दल विशेष के प्रति अन्याय पक्षपात करने की मेरी प्रवृत्ति है। विधानसभा आदि की कार्यपद्धति से भी अपरिचित हूँ, तथापि एक साधारण सोचनेवाला व्यक्ति अपने विधानसभा के प्रतिनिधिभूत सदस्यों से क्या अपेक्षा रख सकता है, उसका कुछ अंश लिखा है। आपकी सफलता के लिए आपका हार्दिक अभिनंदन कर पत्र पूर्ण करता हूँ।

७६. विजय पर बधाई

श्री राजासाहब सिंगरामउ, ठा. श्रीपालसिंह जी, लखनऊ १५ मार्च १९६२

निर्वाचन में आपकी सफलता पर हृदय से आपको बधाई देता हूँ। आपकी शारीरिक दुर्बलता आदि अनेक बाधाएँ होते हुए भी आपने विजय पाई है, यह आपके व्यक्तित्व का ही प्रभाव है। श्री परमात्मा की कृपा से आपका यह उत्तम प्रभाव नित्य बढ़ता रहे और जिस क्षेत्र में काम करने का

भार आपने उठाया है, उसमें उत्तम राष्ट्रसेवा करने में आपको उत्तरोत्तर अधिक यश प्राप्त हो। इस यशप्राप्ति के लिए आप उत्तम स्वास्थ्य का शीघ्र लाभ करें। मैं आपके सुदृढ़ सुदीर्घ जीवन हेतु तथा आपकी निरंतर सफलता हेतु परमकृपालु श्री भगवती जगज्जननी के पास विनम्र प्रार्थना करता हूँ।

नागपुर में वर्षप्रतिपदा (५ अप्रैल १९६२) को परमपूजनीय डाक्टर जी के स्मृति-मंदिर के उद्घाटन समारोह पर आप उपस्थित रह सकेंगे क्या? मेरी ओर से इस पत्र को निमंत्रण मानने की कृपा करें।

७७. स्मृति-मंदिर उद्घाटन समारोह का निमंत्रण

श्री श्रीनिवास मूर्ति जी, बंगलौर — १५ मार्च १९६२

आपने समाधि पर जड़ने के लिए एक बड़ा पत्थर, अच्छी तरह से तराशकर तथा चमकदार बनाकर भेजा था, यह आपको ज्ञात होगा। अब स्मृति-मंदिर के निर्माण का कार्य पूर्ण हो चुका है। ५ अप्रैल १९६२ को वर्षप्रतिपदा के दिन उसका औपचारिक उद्घाटन होनेवाला है। इस अवसर पर संपूर्ण देश के संघप्रेमी मित्र तथा संघ के प्रमुख कार्यकर्ताओं को निमंत्रित किया गया है। इस सुखद शुभ अवसर पर वे सब उपस्थित रहेंगे, ऐसी अपेक्षा है। मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप नागपुर पधारकर हमें अपने सहवास का लाभ प्रदान करें। समाधि पर जड़े गए सुंदर पाषाण-खंड, जिसे देखते ही उसकी स्मृति सदैव मन में रहेगी, जिन्होंने अत्यंत सावधानी पूर्वक बनाया है, उस शिल्पकार को देखने की हमारे सब मित्रों की तीव्र इच्छा है। उस पाषाण-खंड का सौंदर्य तथा भव्यता दर्शनीय है।

बंगलौर स्थित हमारे कार्यकर्ता आपको निश्चित आमंत्रित करेंगे तथा आप मेरे विशेष अतिथि के रूप में उपस्थित रहें, ऐसी मैं आशा करता हूँ। आप निमंत्रण स्वीकार कर, अपनी उपस्थिति से कार्यक्रम की शोभा बढ़ाएँ, यही प्रार्थना है। (मूल अंग्रेजी)

७८. सजीव प्रतिमा के निर्माता का अभिनंदन

श्री नानाभाई गोरेगांवकर, मुंबई — १६ मार्च १९६२

परमपूजनीय डा. हेडगेवारजी का स्मृति-मंदिर पूर्ण हो चुका है। उसका उद्घाटन वर्षप्रतिपदा के दिन होनेवाला है। आपने प्रतिमा का निर्माण जी-जान से किया है। कुछ दिनों पूर्व मैं श्री मोरोपंत पिंगले के साथ

देखने गया था। थोड़ी देर देखते रहे। प्रतिमा सजीव है, मानो अब बोल उठेगी– ऐसा भास हुआ। प्रतिमा की उत्कृष्टता के संबंध में इससे अधिक कुछ कहना संभव नहीं। सजीवता का आभास निर्माण करा सकनेवाली प्रतिमा से उत्तम प्रतिमा हो ही नहीं सकती। स्मृति-मंदिर में जीवंतता निर्माण करने का श्रेय आपको ही है। इसलिए उद्‌घाटन के अवसर पर आप उपस्थित रहें, ऐसी यहाँ के सब लोगों की तथा विशेष रूप से मेरी मनःपूर्वक इच्छा है। (मूल मराठी)

७९. सामाजिक गिरावट का चर्वित-चर्वण न करें

श्री दयाशंकर मिश्र, पत्रकार, फतेहपुर (उ.प्र.) १८ अप्रैल १९६२

आपको व्यथित करनेवाली चिंता के कारण स्पष्ट हैं। उनका आपने उल्लेख किया है। बहुत वर्षों से यह गिरावट आती जा रही है। उसका चर्वित-चर्वण करने से लाभ नहीं, केवल अपना मन अधिक खराब एवं दुःखी होता है। अतः पार्टियों की गुटबंदी, स्वार्थपरता आदि को दूर रखकर व्यक्ति-व्यक्ति के मन में ईश्वर के प्रति तथा ईश्वर के साक्षात्-स्वरूप स्वराष्ट्र के प्रति श्रद्धा जगाना, उस श्रद्धा के परिणामस्वरूप राष्ट्र की विशुद्ध गुणसंपदा को आत्मसात करने की प्रेरणा निर्माण करना, यही करणीय दिखता है। अपने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का यही प्रयास है। यश देना श्री भगवान की कृपा पर निर्भर रख, निरलसता से स्वकर्त्तव्य करने में हम सब जुटें, यही उचित लगता है।

८०. सही मूल्यांकन हो

डा. दामोदरपंत नेने, बड़ोदरा १० जुलाई १९६२

आप एक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ लिख रहे हैं। मान्यवर पं. जवाहरलाल नेहरू जी का चरित्र, विचार आदि सभी चमत्कारपूर्ण हैं और अनेक बार दुर्बोध हैं। वह सुबोध कर दिखाने का संकल्प आपने अपने ग्रंथ के माध्यम से किया है। इसमें मेरा और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का संबंध रहने का कारण नहीं, परंतु आपको संवंध दिखाई देता है। आपने उसके अनुसार जो लिखने का विचार किया है, उसका सूत्र रूप से दिग्दर्शन आपने पत्र में किया है। अनेकों से भेंट कर, मुझसे भी मिलकर, कुछ संबंधित साहित्य पढ़कर, यह निष्कर्ष आपने निकाले हैं, इसलिए उन्हें वैसे ही ग्रंथ में

प्रामाणिकता से देना योग्य होगा। आपने अपने पत्र में लिखा है कि आपके मत मुझे कटु लगेंगे। वास्तविकता, स्पष्टवादिता तथा निर्भीकता से बिना संकोच के मुझे जो जँचा, वह व्यक्त किया, ऐसा आपने लिखा है। इससे मुझे परम संतोष हो रहा है, क्योंकि कुछ निकटवर्ती तथा कुछ दूरस्थ महानुभाव मेरी कृति तथा निर्णय का समर्थन और सराहना करते हैं। उसके साथ दूसरा पहलू भी सामने आना चाहिए। इससे लोग सही मूल्यांकन कर सकेंगे।

आपने जो लिखा है, उसके संबंध में मेरे पक्ष का, अर्थात् मेरे स्वयं का मेरे द्वारा किया गया समर्थन आप चाहते हैं, परंतु मेरे स्वभाव के कारण वह मुझे संभव नहीं होगा। कुछ घटनाओं का सही मूल्य कालांतर के बाद ज्ञात होता है। उसपर चढ़ा मुलम्मा तब तक हट जाता है और उसका सही रूप स्पष्ट दिखता है। भले-बुरे का सही निर्णय उसी समय होता है। मुझे लगता है कि वैसा समय अभी नहीं आया है। परंतु वह बहुत दूर नहीं है। इससे अधिक इस विषय पर कुछ लिखना-बोलना मुझे ठीक नहीं लगता।

आप मराठी समझ पाते होंगे, इस धारणा से यह पत्र मराठी में लिखा है। मैं अच्छी अंग्रेजी नहीं जानता तथा दो मराठी-भाषी विदेशियों की भाषा में पत्र-व्यवहार करें, यह अटपटा-सा लगता है। अतः मैं मराठी में लिख रहा हूँ। आपको यह अरुचिकर लगे, तो कृपया आप मुझे क्षमा करें।

इति। (मूल मराठी)

८१. स्वदेशी आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति

१२ जुलाई १९६२

डा. राम मूर्ति, चेन्नै

स्वदेशी आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति के एक प्रबल समर्थक हमें छोड़कर चल बसे। उनके एक सहकारी तपस्वी बाबासाहब परांजपे के द्वारा मैं श्री लक्ष्मीपतिजी के आयुर्वेद-पुनरुज्जीवन विषयक प्रयत्नों के बारे मे जानता था। प्रतिकूल परिस्थिति में भी आपके श्वसुर महोदय ने आयुर्वेद के समर्थन में जिस प्रकार दृढ़तापूर्वक कार्य किया, वैसा प्रयास करनेवाला क्वचित ही कोई होगा। सुप्रतिष्ठित शास्त्रीय चिकित्सा पद्धति कष्टसाध्य व्याधियों को रोकने एवं दुरुस्त करने में गुणकारी और अनुसंधान एवं प्रगति के लिए सदैव सिद्ध, ऐसी अपनी आयुर्वेद चिकित्सा-पद्धति को पुनः प्रस्थापित करने में उनके द्वारा किए गए राष्ट्रभक्तियुक्त उत्साहपूर्ण प्रयासों के कारण अपना संपूर्ण देश उनके प्रति कृतज्ञ है। हम आशा करें कि उनके

द्वारा प्रदीप्त कार्यनिष्ठा की ज्योति के प्रकाश में जो कार्य अब तक होता रहा, वह आगे भी आयुर्वेद प्रमुखों के द्वारा अधिक गतिमान होगा।

(मूल अंग्रेजी)

८२. महोत्सव की मंगल कामना

न्यायरत्न श्री धुंडिराज शास्त्री विनोद २३ जुलाई १९६२

श्री व्यासपूजा महोत्सव की निमंत्रण-पत्रिका १६.७.६२ को ही प्राप्त हुई। पत्र रूप से कार्यक्रम में सम्मिलित होने का भी अवकाश नहीं था। आजकल तीर्थरूप माताश्री के अस्वस्थ होने से मैं नागपुर छोड़कर जा नहीं सकता। वह जीवन-मरण के कगार पर विगत लगभग एक मास से हैं। ऐसी अवस्था है कि किसी भी समय ज्योति अनंत में विलीन हो सकती है।

आपका यह महोत्सव सबके कल्याण के लिए है, उसमें मेरा भी मंगल हो, इसलिए आपकी इच्छाशक्ति एवं शास्त्र-वचन का प्रयोग होगा ही। कृतज्ञतापूर्वक आपकी इस कृपा के प्रति आभार मानकर पत्र पूरा करता हूँ।

(मूल मराठी)

८३. भाषा-संबंधी निर्णय विशुद्ध राष्ट्रभक्तिपूर्ण हो

डा. रघुवीर, नई दिल्ली ६ अगस्त १९६२

अखिल भारतीय भाषा सम्मेलन में अवश्य उपस्थित रहता, परंतु यहाँ पूज्य माताजी की अवस्था बहुत चिंताजनक हो चुकी है। अतः मेरा नागपुर से बाहर जाना असंभव हुआ है। मेरी इस स्थिति को सोचकर मुझे आप क्षमा करें, यही प्रार्थना है।

यह सम्मेलन संपूर्ण देश का प्रातिनिधिक होकर भाषा-संबंधी विशुद्ध राष्ट्रभक्तिपूर्ण निर्णय अपने देशवासियों के समक्ष रखेगा तथा दास भाव से उत्पन्न परकीय भाषा के प्रेम तथा व्यवहार का स्पष्ट शब्दों में निषेध करेगा, ऐसी आशा है। श्री भगवान से सम्मेलन की यशस्विता के लिए प्रार्थना करता हूँ।

८४. धुंधली स्मृतियों को याद करना दूभर

श्री ग.दि.माडगूळकर, मुंबई १० अगस्त १९६२

पत्र-लेखन छोड़कर अन्य प्रकार के लेखन का मुझे बिलकुल

अभ्यास नहीं है। आपने सूचित किया हुआ विषय अत्यंत कठिन है, यह ध्यान में लेने पर मुझे नहीं लगता कि कुछ लिख सकूँगा। स्वतः के जीवन की ओर ध्यान न होने से अनेक स्मृतियाँ धुँधली हो गई हैं। वर्तमान की बहुविध समस्याएँ हल करने के प्रयत्नों में शक्ति, बुद्धि एवं समय खर्च होता है। इससे उन धुँधली स्मृतियों को याद करना दूभर हो गया है। अतएव मैं आपसे क्षमा माँगकर विनम्र विनती करता हूँ कि मुझे इस संकट में न डालें।

अनेक श्रेष्ठ देशभक्तों की स्मृतियाँ, जो स्वयं उन्होंने भेजी हैं, संग्रहित होने से 'शब्दरंजन' का प्रथमांक अत्यंत लोकप्रिय एवं मार्गदर्शक सिद्ध होगा, इसमें कोई संदेह नहीं। (मूल मराठी)

८५. 'देश की पुकार' पुस्तक पर अभिप्राय

श्री ल.ज.खरे, औरंगाबाद — ५ सितंबर १९६२

'देशाची हाक' पुस्तक प्राप्त हुई। बच्चों के लिए सरल-सुलभ भाषा में लिखी एवं सबके हृदय को छू ले, इतनी तीव्र व्याकुलता से भरी हुई है। इसका अच्छा लाभ होकर स्व-कर्तव्यनिष्ठा यदि पैदा हुई, तो उन्नति होने में अधिक देरी नहीं लगेगी। देशप्रेम, लक्ष्य का अत्यंत स्पष्ट ज्ञान एवं निष्ठा रहने पर अनेक सद्‌गुणों का आविर्भाव हो सकता है। अपने यहाँ प्रचंड मुनष्य बल है, परंतु योग्य गुणों एवं मार्ग के अभाव में वह बिलकुल व्यर्थ जाता है। इतना ही नहीं, तो परस्पर स्पर्धा, ईर्ष्या, द्वेष आदि अवगुणों से युक्त होकर अंतर्कलह में खर्च हो जाता है एवं विचारों को ऐसी आशंका होने लगी है कि इसके अति भयानक परिणाम होंगे। ऐसी अवस्था में ऐसा उत्तम मार्गदर्शन करानेवाला सरल साहित्य, गद्य-पद्य आदि सब रूपों में संपूर्ण समाज में प्रसारित होना चाहिए। उसका अध्ययन एवं उसके अनुसार जीवन ढालने की ओर ध्यान खींचा जाना चाहिए, यह स्पष्ट है।

आपकी छोटी-सी, परंतु बहु-अर्थपूर्ण पुस्तक की विशेषता यह है कि इसमें खोखला शब्दाडंबर एवं शुष्क उपदेश नहीं है। आपने स्वयं देशप्रेम से ओतप्रोत, स्वार्थशून्य, सर्वसंग्राहक एवं बहुविध मार्ग से समाजहित के लिए समर्पित जीवन बिताया है। आपकी वही वृत्ति एवं व्याकुलता आपकी आज की परिपक्व वृद्धावस्था में समाज को सन्मार्ग दिखाने के लिए प्रयत्नशील है। यह पुस्तक इन्हीं प्रयत्नों का एक अभिव्यक्त स्वरूप है। आपने स्वयं आचरण किया हुआ है इसलिए स्वभावतः इसके प्रत्येक शब्द में परिणामकारक शक्ति है। (मूल मराठी)

८६. स्वास्थ्य की सावधानी

डा. नामजोशी, मुंबई ६ सितंबर १९६२

आप विगत एक सप्ताह से K.E.M. अस्पताल में उपचार के लिए भर्ती हैं। वहाँ संपूर्ण विश्रांति एवं विशेषज्ञों के उपचारोपरांत अपने नित्य के कामों पर जा सकें, इतना ठीक होने में थोड़ा-बहुत समय लगेगा। परंतु निश्चित रूप से ठीक होने का विचार आप अपने मन में रखें। ऐसी दुर्बलता में मन ही विशेष अस्वस्थ होता है, जिससे औषधि लागू होने में बाधा आती है एवं ठीक होने में अधिक समय लगता है। यह ध्यान में रखकर आप निश्चय से मन को नियंत्रित कर शीघ्र ठीक होने का विश्वास धारण करें।

आपका स्वास्थ्य उत्तम रहा तो हमारा भी स्वास्थ्य ठीक रहने का हमें विश्वास लगता है। इस दृष्टि से भी आप शीघ्र ठीक होने का विचार करते रहें।.... मैं ८.९.६२ को महाराष्ट्र प्रांत के प्रवास के लिए रवाना हो रहा हूँ। इस प्रवास में आपसे भेंट होगी। यह आशा है कि तब आपके स्वास्थ्य में सुधार दिखाई देगा। मैं श्री परमेश्वर से प्रार्थनापूर्वक याचना करता हूँ कि आप स्वस्थ होकर उत्साह से अपने नित्य के काम में हाथ बँटाने लगें। (मूल मराठी)

८७. परम गोभक्त लाला हरदेव सहाय जी को श्रद्धांजलि

श्री लाला ओंकारप्रसाद जी, सातरोड, हिस्सार ३ अक्तूबर १९६२

अति दुःख का यह समाचार दो दिन पूर्व मिला कि आपके पूज्य पिता श्रद्धेय हरदेव सहाय जी हम सबको छोड़कर स्वर्गलोक सिधारे हैं। एक श्रेष्ठ लगन के गोभक्त कार्यकर्ता का अभाव हो गया। उसकी पूर्ति होना कठिन ही नहीं, असंभव-सा प्रतीत हो रहा है। अपना जीवनसर्वस्व ध्येयसिद्धि के लिए लगाकर पूर्ण त्यागमय जीवन व्यतीत करने का जीता-जागता आदर्श उन्होंने सहज ही प्रस्तुत किया था, जिससे प्रभावित होकर तथा उनके स्नेहपूर्ण व्यवहार से आकृष्ट होकर कितने ही बंधु उनके स्वयंस्फूर्त सहकारी बने थे। अब वह आदर्श तथा स्नेह प्रत्यक्ष देखना, अनुभव करना अपने भाग्य में नहीं रहा। इस मनोव्यथा में ही आप सब कुटुंबीय सुहृज्जनों को सांत्वना प्राप्त होकर मनःशक्ति मिले, इस हेतु परमपिता श्री परमात्मा से प्रार्थना कर रहा हूँ। दिवंगत आत्मा की पुण्यशीलता तथा गोसेवा के कारण

उन्हें श्री भगवान के चरणकमलों में आश्रय मिलेगा, इसमें संदेह नहीं है। अतः उनके लिए दुःख करना उचित नहीं है। दुःख तो उनके वियोग के कारण हम सबको हो रहा है। उससे श्री परमात्मा की कृपा ही शांति दे सकती है। अतः उसी दयामय के श्री चरणों में नतमस्तक हो प्रार्थना कर रहा हूँ। आप सब पर उसकी कृपा सदैव बनी रहे।

८८. संस्था का अभिनिवेश अनुचित

श्री श्री.ग.बापट, मुंबई　　　　१ नवंबर १९६२

आपकी भावनाओं को देखकर बहुत अच्छा लगा। उस आवेश में आपने मुझे भला-बुरा भी कहा, यह भी अच्छा ही हुआ। मन में जो विचार आएँ, उन्हें स्पष्ट रूप से प्रकट करने में कोई आपत्ति नहीं है।

शत्रु का आक्रमण होने पर उसके निवारण के लिए शासन की ओर से जो प्रयत्न होते हैं, उसमें पूरा हाथ बँटाना एक काम है। इस विषय में शासन के योग्य व्यक्तियों से विचार चल रहा है। इस प्रकार के प्रयत्नों में अलग संस्था के नाते कुछ लाभ अपने पल्ले प्राप्त कर लेने की दृष्टि से लेन-देन का व्यवहार करना अप्रशस्त है। इसलिए यह हाथ बँटाने का कार्य समाज के स्तर पर किया जाए, ऐसा सभी प्रमुख कार्यकर्ताओं से कहा गया है। अन्य कार्यकर्ताओं से भी भेंट कर रहा हूँ, परंतु संस्थाभिनिवेश से कोई कहेगा, ऐसा नहीं लगता। बात करेगा तो उसका विचार सांगोपांग होगा ही।

मोर्चे पर जाने का काम सेना में भरती होकर ही हो। कोई भी उत्साह के आवेश में कुछ भी करने लगा तो हाथ आया हुआ यश नष्ट हो जाएगा। फिर आज की विकट परिस्थिति में तो वह घातक होगा। परंतु और एक महत्त्व का काम है। वह करने के लिए मन शांत रखना आवश्यक है। प्रक्षुब्ध भावनाएँ चिढ़ पैदा कर सकती हैं, परंतु दीर्घकालीन संघर्ष के लिए लगनेवाली लगन, धैर्य एवं अविरत परिश्रम साध्य नहीं होंगे। आज जो युद्ध उपस्थित हुआ है, वह अपनी सहनशीलता की परीक्षा लेनेवाला है। 'War of nerves' ऐसा कुछ अंग्रेजी में कहते हैं। इसमें जो उतावला होगा, वह नष्ट होगा। इसलिए संपूर्ण समाज में दृढ़ निश्चय एवं युद्ध के लिए आवश्यक सामग्री की पूर्ति करने हेतु अखंड परिश्रम करते रहने की वृत्ति बनाए रखना अत्यंत आवश्यक है। आप इन सब बातों का अवश्य विचार करें।

देश की अन्य हलचलों के बारे में आपको कितनी जानकारी है,

यह मैं कह नहीं सकता। उन पर ध्यान रखना अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि वे पीठ में छुरा घोंपने का काम कर सकती हैं। इस काम के लिए पराकाष्ठा का शांत मन चाहिए, परंतु आप मुझे बता रहे हैं कि सब स्वयंसेवकों की भावनाएँ उत्तेजित कर उन्हें उतावलापन करने को कहा जाए।

इस परिस्थिति में आपका क्रोधित होना ठीक ही है, परंतु जो स्वयंसेवक मोर्चे पर जाने को इच्छुक हैं, उन्हें प्रोत्साहन ही है, यह मुझे जाननेवाले स्वयंसेवक बंधु जानते हैं। आप चिढ़कर ही क्यों न हो, संघ के बारे में एवं मेरे बारे में आत्मीयता से विचार कर रहे हैं, यही मुझे पर्याप्त संतोष देनेवाला है। (मूल मराठी)

८९. हम निमित्त हैं

श्री गोविंदस्वामी आफले, पुणे ४ नवंबर १९६२

आपने श्री स.गो.बर्वे के करकमलों द्वारा श्री राममंदिर की नींव रखने का समारोह आयोजित किया है। इस कार्यक्रम का निमंत्रण-पत्र प्राप्त हुआ।

श्री राम प्रभु सर्वसामर्थ्यवान हैं। अज्ञ जीव सन्मार्गगामी बनें, इसके लिए वे स्वंय मंदिरादि रूप में श्रद्धास्थानों का निर्माण करवा लेते हैं। हम लोग केवल निमित्त होते हैं। निमित्त होने का सौभाग्य भी श्रेष्ठ है। वह आपको प्राप्त हुआ, यह उसकी कृपा ही है। यही कृपा सदैव आप पर रहे तथा आपका सत्संकल्प सिद्ध हो, ऐसी श्रीपरमेश्वर के चरणों में नम्र प्रार्थना कर रहा हूँ । (मूल मराठी)

९०. राष्ट्रदृष्टि से हिंदुत्व का मूल्य

राजरत्न श्री भा.स.आप्टे, इंदौर १५ दिसंबर १९६२

आप लोगों के आशीर्वाद से राष्ट्रदृष्टि से हिंदुत्व का मूल्य सब समझें तथा विशुद्ध हिंदू-जीवन उसमें प्रविष्ट अनिष्ट बातों से मुक्त होकर प्रस्थापित हो- इसमें ही राष्ट्र का एकात्म तथा भावी उत्कर्ष का विश्वास समाया है। सद्यःकालीन संघर्ष-काल में राष्ट्रदृष्टि शुद्ध न रही तो भिन्न-भिन्न घरभेदियों को आलिंगन देने के अज्ञानमूलक प्रयत्न चालू रहकर बाहरी आक्रमण के साथ देश में घोर दुरवस्था निर्माण होने का भय है। इसके कारण सुरक्षितता, आंतरिक शांति तथा सुव्यवस्था संकट में पड़ने के

अमंगलसूचक संकेत भी दिख रहे हैं। इस परिस्थिति में आप जैसे विचारवालों ने राष्ट्रीयत्व और हिंदुत्व का एकात्म स्वरूप अधिकारवाणी से समझाया तथा सारे समाज को सावधान करने का उपक्रम किया, तो मुझे विश्वास है कि संकट टल जाएगा तथा राष्ट्र यश-श्रीयुक्त होकर खड़ा होगा। आपके पत्र के लिए मैं आपका आभारी हूँ। (मूल मराठी)

९१. उपन्यास का स्वरूप अभिनंदनीय

श्री अनंतराव करंबलेकर, मुंबई १६ मार्च १९६३

प्रवास से लौटने पर आपकी 'प्रत्यंचा' पुस्तक पढ़ी। उस काल के शब्द प्रयोग साधारण आयु के पाठकों को कठिन लगना संभव है। उन शब्दों के प्रयोग से उस काल का वातावरण पाठकों के मनश्चक्षु के समाने खड़ा करने में सहायक होता है। उस काल के रोमहर्षक संघर्ष में स्वयं ही सम्मिलित होने का भास होकर संपूर्ण कथावस्तु से पाठक समरस होने लगता है। मुझे लगता है कि उस काल में समरस होते समय भी सद्यःकाल का अपना जीवन सब दृष्टि से विस्मृत होना असंभव होने से कथावस्तु के व्यक्ति एवं विचार वर्तमान काल के रंगमंच के पात्रों से एकरूप होकर आज की समस्याएँ हल करने में योग्य प्रेरणा प्राप्त हो सकती है। इसलिए, आपके उपन्यास का स्वरूप अभिनंदनीय है। विश्वविजेता सिकंदर को विजेता के रूप में खड़ा कर अपने राष्ट्र का स्वत्वाभिमान, आत्मविश्वास, निर्भीक पौरुष जागृत करने का आपका यह उपक्रम प्रशंसा का पात्र है। मुझे इतना ही कहना है कि यदि इस पराक्रमी, त्यागी राष्ट्रभक्त का जीवन-चरित्र अधिक प्रस्फुटित किया जाता तो विशेष परिणामकारकता आ सकती थी। आज के संघर्ष-युग में इस प्रकार की तेजस्वी भावनाएँ जगानेवाले साहित्य का ललित वाङ्मय द्वारा निर्माण आवश्यक और अपेक्षित है। ये अपेक्षाएँ आपके द्वारा अधिकाधिक मात्रा में पूरी होती रहें। (मूल मराठी)

९२. श्री दादाराव परमार्थ को पत्ररूप श्रद्धांजलि

श्री जुलेकर, अध्यक्ष, डोंबिवली नगरपालिका ६ जुलाई १९६३

अपने राष्ट्र के जागरण तथा समाज को सर्वभेदातीत संगठित शक्तिरूप में खड़ा करने के लिए श्री दादाराव ने संपूर्ण भारत में प्राणप्रण से परिश्रम किए। उनके समान मँजा हुआ कर्तृत्ववान कार्यकर्ता सद्यःकालीन

संकटमयी परिस्थति में काल ने छीन लिया, यह हम सबका बहुत बड़ा दुर्भाग्य है। अपने ध्येय पर अविचल श्रद्धा तथा उसके लिए सर्वस्वार्पण करने की श्रेष्ठ सिद्धता क्वचित् ही दिखती है। श्री दादाराव में ये गुण प्रकर्ष से विद्यमान थे। उनका स्वास्थ्य वैसे उत्तम था। उन्हें कोई व्याधि भी नहीं थी। परंतु अकस्मात अल्पावधि के ज्वर से हृदय-विकार हुआ और वे इहलोक छोड़कर चले गए। अपने संघकार्य की अपरिमित हानि हुई है। सबको बहुत बड़ा आघात पहुँचा है। मेरा एक अत्यंत पुराना निष्कपट स्नेही तथा सहयोगी बिछुड़ने से मन अति व्यथित और उदास-सा हो गया है। आप जैसों के स्नेह का ही आधार है। ऐसे असंख्य बंधुओं की सहानुभूति के बल पर मन का दुःख सहकर स्वकर्तव्य में अंतःकरण रम जाएगा ऐसा विश्वास रखता हूँ। इन सारे अकृत्रिम स्नेह करनेवालों का आभार कैसे माना जाए, यह सूझता नहीं। कृतज्ञता से हृदय भर आया है तथा शब्द सूझते नहीं हैं, तथापि आप और नगरपालिका के सभी सदस्य बंधु मेरे और संघ के सब स्वयंसेवक बंधुओ के आभार इन्हीं टूटे-फूटे शब्दों मे ग्रहण करें, यही नम्र विनती करता हूँ। (मूल मराठी)

९३. संस्कृत में स्वामी विवेकानंद

श्री सीतानाथ गोस्वामी, कोलकाता   १५ अगस्त १९६३

आपका पत्र और पुस्तक 'वर्तमान भारतम्' मिली। पुस्तक का अध्ययन किया। संस्कृत भाषा की दृष्टि से आप जैसे उस विषय के विद्वान को कुछ कहना मेरे अधिकार के बाहर की बात है। तो भी कहीं कहीं पर अच्छा नहीं लगा। अतः यहाँ के संस्कृत मित्रों से परामर्श किया, तो उन्होंने और भी कुछ स्थान दिखाए जहाँ के प्रयोग उन्हें ठीक नहीं लगे। आप पुनः पढ़कर सब त्रुटियाँ यदि संभव हो तो दूर करें, यही प्रार्थना है।

संस्कृत में श्री स्वामी जी के शब्द ग्रथित होने से अमर होंगे, क्योंकि जहाँ अन्य भाषाएँ परिवर्तनशील होने के कारण कुछ समय के पश्चात् दुर्बोध हो जाती हैं, पर संस्कृत ही ऐसी भाषा है, जिसमें यह संभव नहीं। आज लिखा हुआ सहस्रों वर्षों के पश्चात् भी समझा जा सकेगा, क्योंकि शास्त्रशुद्ध निश्चित व्याकरण से वह आबद्ध होगा। श्री रामकृष्ण विवेकानंद मिशन का इस संबंध में क्या विचार है, यह मैं नहीं जानता। किंतु यह संस्कृत अनुवाद करने का उपक्रम अति उपयुक्त होगा, ऐसा मेरा मत है।

६४. अन्याय के सामने घुटने टेकना लज्जास्पद

२१ अगस्त १९६३

श्री ग.म.पुणतांबेकर, संपादक 'नागरिक' मालेगाँव, जिला नासिक

मालेगाँव में जो हुआ, उसमें आश्चर्यजनक कुछ भी नहीं है। गुंडागर्दी के सामने झुकना, फलस्वरूप अन्याय से समझौता कर स्वयं के स्वाभाविक अधिकार छोड़ने को सिद्ध होना, गुंडागर्दी करनेवालों की सुरक्षा तथा अनेक बार उन्हें प्रोत्साहित करने जैसा शासन का व्यवहार, उनकी सुरक्षा के लिए हिंदू-समाज के सभी न्याय्य अधिकारों का हनन, ये चल रहा है। अंग्रेज जो कर रहे थे, वही थोड़ा बढ़ाकर आज हो रहा है।

हाल ही मैंने पढ़ा कि कुछ गाँवों में इस नवरात्रोत्सव में रथ, पालकी, शोभायात्रा आदि द्वारा शांतताभंग न हो, इसके लिए धारा १४४ धारा लगा दी गई है। सदा की परिपाटी के अनुसार इसकी पीड़ा अपने धार्मिक उत्सव करनेवाले हिंदुओं को होना असंभव नहीं। वास्तव में इन उत्सवों में बाधा डालकर शांतताभंग करनेवालों पर रोक लगाना शासन का कर्तव्य है, परंतु इन दिनों ऐसा सद्विचार करनेवाला अधिकारी कौन है?

इस स्थिति में परिवर्तन हो सकता है। अपने ही घर में अपनी पद्धति से अपने देवी-देवताओं का उत्सव निर्बाध रूप से, निर्भयता से न कर पाने जैसी लज्जाजनक बात नहीं, यह मन में रखकर कुछ भी हो तो भी अन्याय से, गुंडागर्दी से समझौता नहीं होगा, इस दृढ़ निश्चय से खड़े होकर गुंडागर्दी करनेवालों में भय पैदा हो, ऐसा नित्य जागृत संगठित जीवन निर्माण करना, यही इस परिस्थिति में परिवर्तन लाने का एकमात्र उपाय है। घुटने टेकने की वृत्ति से आचरण करना और उसे उदारमतवादिता का चोला पहनाना निर्लज्जता है। उसे छोड़ना चाहिए, अन्यथा इसी प्रकार मार खाते हुए, अपमान सहते हुए तुच्छ जीवन जीना पड़ेगा। ऐसा जीना भी बहुत समय तक नहीं चलेगा। प्रत्येक के अंतःकरण में यह बोध स्पष्टता से अंकित हुआ तो इस वर्ष की दुःखद घटनाओं से समाज के लिए हम सब ने जो योग्य है, वही ग्रहण किया- ऐसा सिद्ध होगा।

आप सब बंधु समाज का नीति-धैर्य विचलित नहीं हो, निष्कारण उद्दंडता न हो तथा गाँव में शांतता तथा सम्मानपूर्ण जीवन का वायुमंडल प्रस्थापित रहे, इस प्रयास में लगे हुए हैं। पक्षोपपक्ष, पंथोपपंथ आदि अज्ञानजन्य भेदों को मिटाकर, भूल दूरकर, संपूर्ण समाज की एकता अक्षुण्ण रखने के आप जो प्रयत्न कर रहे हैं, वे सफल हों। (मूल मराठी)

९५. भगवान की उपासना के भाव से नौकरी करें

श्री एस.सिंह, अलीगंज उ.प्र. २३ सितंबर १९६३

प्रिय पुत्र वियोग से आपके हृदय पर आघात हुआ है, यह स्वाभाविक है। किंतु पूर्वकर्मानुसार भाग्य में जितने दिन अपना किसी से ऋणानुबंध रहता है, उतने ही दिन उसका सहवास प्राप्त होता है। इसमें किसी का वश नहीं है। अपरिहार्य, अवश्यंभावी घटनाओं को सहकर मन शांत संतुलित रखना यही अपना काम है। प्रयत्न करने पर श्री भगवान की सहायता मिलती है।

आप सरकारी नौकरी में हैं। अच्छा है। अपनी सरकार है। उसकी ओर से अपने समाज का भला करने का काम आपको मिला है। आपके क्षेत्र में आपके हाथों में अधिकार भी हैं। अनाथों को अपनाकर अन्याय-पीड़ितों को अन्यायमुक्त कर सबमें स्नेह, सहकार भाव रहे, आपस के क्षुद्र झगड़े करने की प्रवृत्ति दूर हो, शिक्षा, रोग-मुक्ति के साधन सुगमता से उपलब्ध हों, इत्यादि पवित्र कार्यों में रत रहकर आप को उत्तम मनःशांति प्राप्त हो सकेगी। यह सब केवल कर्तव्यबुद्धि से भगवान की उपासना का स्वरूप समझकर करें, तो जीवन सफल हो सकेगा।

व्यर्थ व्यथित, विचलित होने से क्या लाभ? पूज्य श्री विनोबाजी से आप मार्गदर्शन प्राप्त करने का सोच रहे हैं। यह विचार बहुत लाभदायक होगा। उनकी तपस्या, ज्ञान, अनुभव, मानव के प्रति करुणा, जगदात्मभाव आदि श्रेष्ठ गुणों के कारण मार्गदर्शन देने के लिए उनके जैसा योग्य व्यक्ति मिलना कठिन है।

आपकी कुशलता के लिए श्री भगवच्चरणों में प्रार्थना करता हूँ।

९६. 'शिवभाव से जीवसेवा'

श्री ओमप्रकाश गुप्त, १७ दिसंबर १९६३

श्रीमान् स्वामी विवेकानंद जी की जन्मशताब्दी के संबंध में वर्षभर कुछ कार्यक्रम होते रहें, ऐसी अनेकों की इच्छा थी। अब आप वर्ष पूरा होते आने से उसका समारोप करने जा रहे हैं, यह पढ़कर बहुत आनंद हुआ। आपने आयोजित की वक्तृत्व स्पर्धा आदि के कारण नवयुवकों में श्री स्वामी जी के पवित्र तपस्वी जीवन का अनुकरण करने की तथा उन्होंने दर्शाये मार्ग पर चलकर भगवदाराधना तथा तत्साधनरूप मातृभूमि की भक्ति,

हिंदू-समाज का संगठन तथा राष्ट्र की सर्वांगीण उन्नति के लिए जीवनशक्ति पूर्णतः प्रदान करने की प्रेरणा तथा निश्चय जागृत हो। 'शिवभाव से जीवसेवा' का उनका महामंत्र सबके अंतःपटल पर अमिट रूप से अंकित हो, जिससे कार्य करते समय स्वार्थ, सम्मान, प्रतिष्ठा, सत्ता आदि की तुच्छ लालसा हृदय में प्रवेश ही कर न पाए।

इस हेतु आपका संपूर्ण कार्यक्रम सांगोपांग सफलता प्राप्त करे, यही उस दिव्य महामानव के श्री चरणों में प्रार्थना करता हूँ।

९७. अभिनंदनीय प्रयास अधिकाधिक सफल हो

श्री मोहनलाल श्रीवास्तव, दिल्ली — १ अप्रैल १९६४

इसी मार्च मास के प्रवास मे 'ऋतंभरा' पढ़ने के लिए समय मिला, जब बिहार शासन की कृपा से लगभग २४ घंटे कारागार में मुझे कुछ एकांत तथा नित्य कार्य से विश्राम प्राप्त हुआ था। श्रेष्ठ साहित्यिकों की अंतःप्रेरणा काव्यवेष में परिधान कर प्रकट हुई है, इस का पृष्ठ-पृष्ठ पर, पंक्ति-पंक्ति में अनुभव हुआ। मन को अतीव प्रसन्नता का अनुभव हुआ।

आपके आगामी प्रकाशन की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। इस बार विशुद्ध राष्ट्रभक्ति, मातृभूमि के प्रति उत्कट भाव तथा राष्ट्र सेवार्थ सर्वस्व समर्पित करने की पुनीत प्रेरणा देनेवाली कृतियों का संग्रह प्रकाशित होगा, ऐसा आपके पत्र से ज्ञात हुआ। अतीव समयानुकूल यह कार्य होगा। सब की स्वार्थपरता, व्यक्तिगत अहंकार, राष्ट्र के स्थान पर संस्था तथा दल का दुरभिमान इन अनिष्ट प्रवृत्तियों का बोलबाला हो रहा है। राष्ट्रीय चारित्र्य सब पहलुओं में गिर रहा है। राष्ट्रविरोधी आत्मघातकी विचार, भाव भड़कानेवाला तथाकथित साहित्य आँधी की भाँति जन-जन के अंतःकरण पर आघात कर रहा है। कभी राष्ट्रचेतना दिखाई पड़ी तो वह भी अल्पकालिक क्षुद्र प्रतिक्रिया के रूप में ही दिखती है। शुद्ध, सात्विक भावात्मक, उच्च्व विचार प्रवर्तक, चिरंतन सत्य दिग्दर्शक, सद्गुणोत्पादक, पवित्र, तेजपूर्ण साहित्य का विपुल निर्माण कर राष्ट्र के सच्चे पुनरुत्थान में सफल होने का, सर्व विरोधी भावनाएँ, विचार एवं तत्त्वों को सदा के लिए परास्त ही नहीं तो पूर्णतया नष्ट करने की शक्ति संचारित करने का आपका प्रयास अभिनंदनीय, स्पृहणीय है। आपका आगामी प्रकाशन सर्व अपेक्षाओं को पूर्ण करनेवाला श्रेष्ठ हो तथा उत्तरोत्तर इस राष्ट्रकार्य में आपको अधिकाधिक सफलता प्राप्त हो।

९८. शहीदों का स्मारक

श्री गणेशसिंह पख्तून, नई दिल्ली २० अप्रैल १९६४

पेशावर ग्विसाखानी बाजार नरसंहार में शहीद हुए शहीदों का दिल्ली में स्मारक बनाने हेतु विचार-विनिमय करने के लिए बुलाई बैठक में आमंत्रित करने के लिए धन्यवाद। यदि यह स्मारक इन शहीदों के रक्त से पावन हुए स्थान पर ही बनाया जाता तो उससे पेशावर तथा पूरे प्रांत के लोगों का भारत के साथ जो अटूट संबंध एवं श्रद्धा है, उसे पुनर्जागृत करने में सहायक होता। इसका दूरगामी परिणाम यह होता कि दोनों राज्यों के लोगों को अपने भ्रातृत्व का संबंध प्रस्थापित करने की इच्छा होती, क्योंकि दुर्भाग्यवश एक अखंड देश के लोग दो टुकड़ों में बँट गए हैं। दिल्ली में स्मारक बनाने से कुछ लोगों को संतोष होगा कि उन्होंने देश की स्वतंत्रता के लिए प्राणार्पण करनेवाले शहीदों के प्रति कृतज्ञता प्रकट की है। कुछ दिनों तक मैं नागपुर छोड़कर बाहर जाने में असमर्थ हूँ, अतः आपने बुलाई बैठक के विचार-विनिमय में भाग नही ले सकूँगा। मुझे लगता है कि मेरी उपस्थिति आवश्यक भी नहीं है। मुझे विश्वास है कि बैठक में शहीद स्मारक की रूपरेखा तैयार कर, उसकी सफलता के लिए व्यवस्था बनाई जाएगी। (मूल अंग्रेजी)

९९. सत्य की विजय होती ही है

श्री चंद्रशेखर पांडेय जी, सुंदरगढ़ कारागार, उत्कल २९ अप्रैल १९६४

आप सब लोगों को कारावास में बंद किया जाना बहुत विचित्र लगता है। इसमें भी प्रांतीय अभिनिवेश, भिन्न प्रांतों के, परंतु कई वर्षों से रहकर स्थानीय जीवन में समरस हुए लोगों के प्रति दूरता का, मानो वे सब विदेशी अवैध रूप से घुसे हुए हों, इस प्रकार की भारत की एकात्मकता की हत्या करनेवाली भावना का जो व्यवहार दिखाई दे रहा है, वह अत्यधिक विचित्र है। इससे आगे बड़े संकटों की संभावना हो सकती है। आशा है कि पूर्वाग्रहदूषित, विकारपूर्ण व्यवहार का त्यागकर जो राष्ट्रीय (पक्षीय नहीं) हित में हो, वह करने की सत्प्रेरणा, सज्जनों का दमन करनेवालों को प्राप्त होगी।

हम सबको शांति व प्रसन्नता से यह समय बिताना है। सत्य की विजय होती ही है। अल्पकाल में ही वह स्पष्ट रूप से अनुभव में आएगी।

आप सबका स्वास्थ्य अच्छा रहे और मन अधिकाधिक सुदृढ़ बनता रहे, यही परमकृपालु श्री परमात्मा से प्रार्थना है।

१००. हमारी भलाई के लिए ही है

श्री मोतीरामजी मीरचंदानी, जोधपुर २४ जून १९६४

'दुर्घटना' के विषय में आपने चिंता व्यक्त की इसलिए मैं आपका आभारी हूँ। मुझे आश्चर्य तो इस बात से हुआ कि पाकिस्तान रेडियो ने यह समाचार देकर शरारत-भरे आरोप करते हुए कहा कि सेना के सभी लोग दुर्घटनाग्रस्त कार के यात्रियों की सहायतार्थ दौड़े, इतनी गहरी साँठगाँठ आर.एस.एस. और सेना के बीच है। मुझे बताया गया कि दिल्ली के वृत्त-पत्र 'वीर अर्जुन' ने यही समाचार, 'सेना की मदद एवं हमारे घनिष्ठ संबंध' इस विषय में बिना किसी मूर्खतापूर्ण असत्य का सहारा लिए प्रकाशित किया। यह तो अतिसाधारण घटना थी। ऐसा लगता है कि सैनिकी ट्रक का चालक नौसिखिया था। वैसे तो हमारे प्रवास में विभिन्न प्रकार के सैनिकी वाहन आते-जाते हुए मिले। हमारा अनुभव है कि वाहन चालक अपना काम पूर्णतया जानते थे और जहाँ भी चौड़ा रास्ता मिला, वहाँ वे सौजन्य से मोटर गाड़ियों को आगे बढ़ने के लिए रास्ता देते थे। मामूली मोटर-टक्कर के बड़े मानसिक आघात भी प्राणघातक सिद्ध हो सकते हैं। दयालु परमेश्वर ने हमें बचा लिया। परमेश्वर पर हमें सदा पूर्ण विश्वास रखना चाहिए, क्योंकि परमेश्वर जो कुछ करता है, हमारी भलाई के लिए ही करता है। (मूल अंग्रेजी)

१०१. नाम के अनुरूप कार्य हो

९ जुलाई १९६४

श्रीमान् भागचंद जैन, अध्यक्ष, डोंगरगढ़ शिक्षण मंडल, डोंगरगढ़

'जवाहरलाल नेहरु मेमोरियल कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय' के उद्घाटन समारोह की निमंत्रण-पत्रिका प्राप्त हुई। सर्व ज्ञानमय श्री परमात्मा से मैं प्रार्थना करता हूँ कि जिस महापुरुष के नाम से विभूषित हो यह महाविद्यालय खड़ा हो रहा है, उसकी महनीयता के अनुरूप वह बने तथा उसमें शिक्षा प्राप्त करनेवाले उस असामान्य व्यक्तित्व के अनुरूप अपने जीवन में भी विद्या की सांगोपांग उपासना तथा निरलस राष्ट्र-सेवावृत्ति भरकर भारतमाता के सुपुत्रों की परंपरा को समृद्ध करने में सफल हो।

१०२. अपेक्षाभंग के लिए क्षमा याचना

एम. रामचंद्रन, बंगलौर १४ सितंबर १९६४

आपके द्वारा भेजा गया 'ज्ञान-विज्ञान' ग्रंथ प्राप्त होकर एक मास से अधिक समय बीत चुका है। ग्रंथ-प्राप्ति के समय मैं यहाँ नहीं था। मुंबई और अन्य कुछ स्थानों पर प्रवास के लिए २६.८.६४ को ही प्रस्थान किया था। प्रवास में मैं इस ग्रंथ को पढ़ सकूँगा, इस आशा से उसे ले गया था, परंतु मेरे लिए वह संभव न हो सका। सोचा था कि ग्रंथ के वाचन के पश्चात् ही आपको लिखूँ, परंतु अभी तक मैं उसे सरसरी तौर पर देख पाया और यह सोचते हुए कि आपके पत्र एवं ग्रंथ-प्राप्ति की सूचना आपको न देने से न्यायोचित मर्यादा का उल्लंघन हो रहा है, मैं इस पत्र को लिख रहा हूँ। पत्रोत्तर में विलंब तथा आपके द्वारा लिखित मूल्यवान साहित्य-पठन में असमर्थ रहा, इसलिए क्षमायाचना करता हूँ। अगले दो सप्ताह में उसे ध्यानपूर्वक पढ़ने के पश्चात् कर्तव्यपूर्ति के आत्मसंतोष से आपको लिख सकूँगा। (मूल अंग्रेजी)

१०३. संघ प्रशिक्षण उग्र नहीं

श्री पी.सी.राय, दिल्ली १४ सितंबर १९६४

आपके द्वारा भेजी गई सूचनाओं के लिए मैं बहुत आभारी हूँ। अब देखना है कि अपने सीमित साधनों के साथ चल रहे कार्य में उनसे किस प्रकार लाभ होगा।

आक्रामक प्रवृत्ति बढ़ाने के लिए प्रशिक्षित करने के विषय में हमें अपनी मतभिन्नता स्वीकार करते हुए चलना ही ठीक होगा। आप उसके पक्ष में हैं और हम उसमें अत्यल्प उपयोगिता और बहुत अधिक प्रमाण में अहितकर हिंसाचारी प्रोत्साहन ही देखते हैं।

जो भी हो, परंतु मैं आपके स्नेहभरे स्वाभाविक मार्गदर्शन के लिए बहुत आभारी हूँ। (मूल अंग्रेजी)

१०४. विश्व में वेदों का संदेश

श्री डी.जे. जिज्ञासु, आर्य समाज, चेन्नै १७ सितंबर १९६४

चेन्नै में अंतरराष्ट्रीय आर्य समाज के एक केंद्र की स्थापना के अवसर पर आप स्मरणिका प्रकाशित कर रहे हैं, यह जानकर मुझे संतोष

हुआ। वेद हमारे धर्म की नींव हैं और हमारा राष्ट्रीय पुनरुत्थान वेदों का अमर संदेश संसार में फैलाने से ही हो सकता है। अतः वेदों के अध्ययन में लोगों की रुचि पुनर्जागृत करना आवश्यक है। इस नए केंद्र द्वारा वेदों के ज्ञान का प्रसार करना चाहते हैं, यह बात सराहनीय है। आप इस उद्देश्य में सफल हों, यह प्रार्थना करता हूँ। (मूल अंग्रेजी)

१०५. दान का उपयोग

श्रीमान सेठ जुगलकिशोर बिड़ला, कोलकाता ९ जनवरी १९६५

कोलकाता में आपके दर्शन किए उस समय मुझे पता नहीं था कि आपकी प्रेरणा से 'अखिल भारतीय आर्य (हिंदू) धर्म सेवा संघ' की ओर से संयुक्त मंत्री श्री जनार्दन भट्ट जी ने श्रीमन्महाराजाधिराज नेपाल नरेश जी के नागपुर में संकल्पित सत्कार के लिए एक सहस्र रुपया भेजा है। नागपुर आने पर यह समाचार मिला। श्री जनार्दन भट्ट जी का पत्र भी मिला। उनके पास प्राप्ति-सूचना गई है।

किंतु आज पता चला कि नेपाल नरेश जी की नागपुर यात्रा स्थगित हो गई है। कारणों की अभी सूचना नहीं मिली है। जिस समारोह के लिए वह धन था, वह समारोह अब होगा नहीं। अतः इस धन का कहाँ कैसा उपयोग करें, इस संबंध में आपकी सूचना मिलना आवश्यक है। बिना आपके आदेश के उसका कहीं व्यय करना मुझे उचित प्रतीत नहीं होता।

मेरा एक नम्र सुझाव हैं। मध्यप्रदेश के बिलासपुर जिले में कुष्ठ का बहुत व्यापक आक्रमण है। केवल ईसाई मिशनरी द्वारा उपचार के प्रयत्न चल रहे हैं, परंतु उनके लिए यह ईसाई मत-प्रसार का प्रभावी साधन मात्र दिखता है। अतः कुछ मित्रों ने चाँपा नामक स्थान पर केंद्र बनाकर कुष्ठपीड़ितों के उपचार तथा सेवा के लिए 'भारतीय कुष्ठ निवारण संघ' नाम से संस्था प्रस्थापित कर कार्यारंभ किया है। उनके पास नित्योपयोगी औषधियों के लिए धन का बड़ा अभाव है। तथापि स्वार्थत्यागपूर्वक कुछ सहयोगियों ने ग्राम-ग्राम में जाकर उपचार करने का कार्य उत्साह से चालू रखा है। यदि आपकी अनुमति हो और 'अखिल भारतीय आर्य (हिंदू) धर्म सेवा संघ' की सहमति मुझे प्राप्त हो, तो यह धनराशि 'भारतीय कुष्ठ निवारक संघ' चाँपा के पास भेजने का प्रबंध करूँगा। सहमतिदर्शक-पत्र शीघ्र देने की कृपा करें। अन्यथा आपकी जो इच्छा हो सूचित करें, वैसा ही किया जाएगा। {२५१}

१०६. पठनीय साहित्य

नी.ना.ह.आप्टे, कोरेगाँव

१० जनवरी १९६५

'जवानांचा जीवन धर्म' पुस्तक प्राप्त हुई। बहुत वर्षों पूर्व आपकी कुछ पुस्तकें मैंने पढ़ी हैं। उनके प्रति मन में जो अत्यंत आदर निर्माण हुआ है, वह कभी कम नहीं हो सकता। उत्तम संस्कार अंकित हों एवं व्यक्ति सुसंस्कृत, शीलवान, पराक्रमी, उद्यमी हो, इस दृष्टि से आपने ललित वाङ्मय कृतियों को सुंदर रूप दिया है। इसलिए अपने मित्रों को भी आपकी पुस्तकें पढ़ने का आग्रह करता हूँ। इधर विगत कुछ वर्षों से कार्य का विस्तार होने से पुस्तकें पढ़ना संभव नहीं हो पाता। फिर भी पुरानी स्मृतियाँ एवं संस्कार साथ हैं ही। उसमें इस नई पुस्तक से और वृद्धि होगी इस विश्वास से मैं यह पुस्तक पढ़ूँगा। बाद में पुनः पत्र लिखूँगा।

(मूल मराठी)

१०७. श्रद्धेय पं. ब्रह्मदत्तजी 'जिज्ञासु' को श्रद्धांजलि

६ मार्च १९६५

पं. युधिष्ठिर जी मीमांसक, संपादक 'वेदवाणी', वाराणसी

आज 'वेदवाणी' का फाल्गुन संवत् २०२१वीं का अंक प्राप्त हुआ। उसे पढ़कर अवाक् रह गया, क्योंकि श्रद्धेय पं. ब्रह्मदत्तजी 'जिज्ञासु' महाराज के इहलोक की यात्रा संवरण कर महाप्रस्थान कर जाने की मुझे इसके पूर्व सूचना नहीं थी। निरंतर प्रवास और उसमें वृत्त-पत्र पढ़ने का अत्यल्प अवसर, इस कारण इस असहनीय आघात का मुझे कुछ भी ज्ञान नहीं हुआ था। आज अकस्मात 'वेदवाणी' के इस अंक को देखकर मेरे मर्मों पर ही आघात हुआ है।

श्रद्धेय 'जिज्ञासु' जी के प्रथम दर्शन मैंने लाहौर में उनके आश्रम में ही किए थे। २३-२४ वर्ष पूर्व की बात होगी। आश्रम में अपने संघ का एक छोटा-सा सम्मेलन था। संघ का रूप प्रारंम्भिक था। अतः सम्मेलन भी छोटा-सा ही था। किंतु 'जिज्ञासु' जी की दूरदृष्टि में उसकी भावी प्रगति का क्या चित्र साकार हो उठा, यह मैं कह नहीं सकता, किंतु उन्होंने असीम आत्मीयता तथा प्रेम से सम्मेलन का प्रबंध कर आशीर्वाद प्रदान किया। तब से पंजाब प्रांत में संघकार्य का विस्तार होता गया और 'जिज्ञासु' जी की कृपा भी उत्तरोत्तर वृद्धि प्राप्त करती गई। फिर विभाजन कांड आदि

दुर्घटनाओं में सब जीवन ही अस्तव्यस्त हो गया। आत्मीय जन बिछुड़ गए। हम संघ के लोग भी बेघरबार से भटक कर दिल्ली, जालंधर आदि स्थानों में बसने की चेष्टा करने लगे। मैं लगभग दो वर्षों के पश्चात् वाराणसी गया तो सहसा श्रद्धेय 'जिज्ञासु' स्वयं ही स्नेह से आकर उपस्थित हुए। मुझे घर बैठे अनायास चिर अभिलाषित मिलने से जो सुख हुआ, उसका वर्णन करना संभव नहीं। वाराणसी में पुनः अथ से प्रारंभ कर वेदविद्या, गीर्वाण वाणी का प्रचार सुचारु रूप से चल पड़ा। संस्कृत व्याकरण 'अष्टाध्यायी' कितनी सुगमता से आत्मसात की जा सकती है, यह उनसे प्रत्यक्ष सुनकर मैं आश्चर्यचकित रह गया था। मुझे विश्वास है कि उस सुगम प्रणाली का सर्वदूर प्रचार कर संस्कृत दुर्गम होने के भ्रम का निवारण करने में आप अत्यल्पकाल में सफल होंगे। आचार्य 'जिज्ञासु जी' के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त करने का यही उचित मार्ग है कि उनके प्रिय कार्य को अबाध गति से आगे बढ़ाया जाता रहे। उनके ज्ञान भंडार के आप जैसे विद्वान उत्तराधिकारी इसमें कृतसंकल्प होने के कारण मुझे पूर्ण विश्वास है कि परम आदरणीय आचार्य ब्रह्मदत्त 'जिज्ञासु' जी की अमर वाङ्मयमूर्ति आविष्कृत कर उनकी पुनीत स्मृति को आप अमर कर करेंगे।

आगे कब वाराणसी आना होगा, आज कह नहीं सकता। किंतु जब कभी आ सकूँगा, आपके दर्शन कर स्वर्गीय 'जिज्ञासु' जी के स्नेह को आपसे भी प्राप्त करने का प्रयत्न करूँगा। मन कुछ अधिक ही भारी है। संसार में जन्म लेनेवालों को मृत्यु को स्वीकार करना ही पड़ता है, यह समझते हुए भी श्रद्धास्पद प्रियजन का वियोग अन्यमनस्कता ला रहा है।

१०८. राजे अप्पासाहेब के निधन पर

६ मार्च १९६५

श्रीमंत माधवराव पटवर्धन, सांगली

प्रजावात्सल्य, उन्नतिशील योजनाओं के प्रेरक, उद्योगशीलता के साथ श्रद्धायुक्त धर्मनिष्ठा एवं अपने तत्त्वज्ञान का अनुशीलन आदि दुर्लभ गुणों से विभूषित उनका जीवन, यथार्थता से उन्हें राजर्षि-परंपरा में अटल उच्च स्थान दिलानेवाला है। अपने संघ की दृष्टि से विचार करें, तो यह स्पष्ट है कि बिल्कुल प्राथमिक अवस्था में कार्य था, तब से उनका वरद्हस्त सभी कार्यकर्ताओं पर होने से उनके आधार पर संघ बढ़ने लगा एवं शीघ्र ही फैलने लगा। अब महाराष्ट्र का एक आधार ओझल हो गया है। जिनके शुभाशीर्वाद से धन्य होकर हमारे जैसे असंख्य साधारण लोग बड़े-बड़े कार्यों

का दायित्व ग्रहण करने को साहस से आगे बढ़ते थे, उन्हें ईश्वर ने उठा लिया है। हमारे सामने यह प्रश्न खड़ा हो गया है कि अब किसके प्रेममय आशीर्वाद से हम सब कठिनाइयाँ एवं समस्याएँ रहते हुए भी धीरज एवं उत्साह से कार्य करते रहें?

उनके सार्थक जीवन की परिसमाप्ति शांतिपूर्वक हुई। फिर शोक करने का क्या कारण है? उनकी कीर्ति की वृद्धि करने के लिए हमें प्रयत्नशील रहकर उन्हें सच्ची श्रद्धांजलि अर्पित करना ही अपने सामने कर्तव्य है। श्री परमेश्वर कृपा से आप सदैव सफल एवं सारे कुल को भूषणभूत हों, यही इच्छा है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि आपके कारण संघ के कार्यकर्ताओं को खलनेवाली आधार की कमी दूर होगी।

१०९. विकृत मनोवृत्ति

डा. पी.एस.नारायण जी, बंगलौर १९ मार्च १९६५

आपका पत्र और उसके साथ आपके द्वारा राष्ट्रपति डा. राधाकृष्णन के नाम भेजे गए पत्र की प्रतिलिपि प्राप्त हुई। यह विषय अनेक सज्जनों का लक्ष्य आकर्षित कर रहा है और अगले माह वृंदावन (उ.प्र.) में जो सम्मेलन होने जा रहा है, उसमें गोवंश की हत्या पर रोक लगाने तथा देश में कहीं भी आधुनिक यांत्रिक कसाईखाने खोलने के विरोध में शासन को बाध्य करने का प्रयत्न किया जाएगा। वास्तविक रूप से यह बात किसी के भी समझ के बाहर है कि तिरुपति जैसे पवित्र स्थान में कसाईखाने खोलने की बात शासन के दिमाग में कैसे आई? मैं मान्य करता हूँ कि आपके पत्र में यह पढ़कर मैं इस धृष्टतापूर्ण कल्पना से ही दिङ्मूढ़ रह गया ।

जब तक सर्वसाधारण जनता शासन की ऐसी अपवित्र योजनाओं के विरोध में संगठित रूप से दृढ़तापूर्वक खड़ी नहीं होगी, तब तक शासन की वर्तमान नीति बदलने की हम अपेक्षा भी नहीं कर सकते।

इसलिए यह अत्यावश्यक है कि जिन्हें भारतीय जीवन-मूल्यों के प्रति प्रेम है, वे संगठित हों; केवल इस प्रश्न के लिए नहीं, अपितु सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय आदि सभी क्षेत्रों में अपनी प्राचीन एवं अमर परंपराओं को प्रभावित करनेवाले सभी प्रश्नों के लिए एक जुट हों।

(मूल अंग्रेजी)

११०. कश्मीर का प्रश्न

श्री बाबूरामजी चौहान, चंडीगढ़ — २१ मार्च १९६५

आपका १२.३.६५ का पत्र व कश्मीर संबंधी पुस्तक कल प्राप्त हुई। पुस्तक पूर्ण पढ़ी। संविधान तथा अंतर्देशीय विधि की दृष्टि से आपने समस्या का स्वरूप स्पष्ट कर उसे सुलझाने के वैधानिक मार्ग भी दिग्दर्शित किए हैं। उससे सिद्ध हो जाता है कि कश्मीर को अलग मानकर चलने की नीति अपने मन की विकृतियों में से भूत का निर्माण कर उससे डरने के समान मिथ्यात्व पर चल रही है। परंतु कश्मीर के प्रश्न पर लोगों ने राजनैतिक, धर्मपंथाभिमान से पुष्ट अनेक असंबंधित प्रश्न जोड़ने का प्रयास चलाया है। अपने बड़े-बड़े नेतागण भी इस हानिकारक चाल में हैं। जागतिक राष्ट्र संघ (यू.एन.ओ.) के नाम पर अमरीका, इंग्लैंड आदि अपने-अपने राजनैतिक स्वार्थ के निकष पर इस समस्या का हल ढूँढने की चेष्टा कर रहे हैं। न्याय, सत्य आदि का किसी को कुछ भी महत्त्व नहीं। केवल तात्कालिक हित ही उनके विचारों का प्रेरक दिखता है। इस वायुमंडल में अपनी राष्ट्रशक्ति के आत्मविश्वास से अपने न्याय्य पदक्षेप के कारण निःशंक अंतःकरण से दृढ़ता की नीति अपनाना तथा आपने अनेक जागतिक ख्याति के विद्वानों के समकक्ष खड़े होकर जो सुझाया है, उसे त्वरित कार्यान्वित कर कश्मीर का शेष भारत के साथ जो अनैसर्गिक अलगाव अभी तक भासमान हो रहा है, उस अलगाव को सिद्धांततः वैधानिक रीति से तथा व्यवहारतः सदा के लिए समाप्त कर देने के अतिरिक्त अन्य योग्य हितकारक मार्ग नहीं है। अलगाव की यह विचित्र अप्राकृतिक अवस्था जितने दिन बनी रहेगी, नए-नए संकटों को निमंत्रित कर समस्या की जटिलता बढ़ती रहेगी और अधिक विलम्ब होने से जैसे रोग असाध्य बनकर प्राणहरण कर लेता है, वैसी विषैली स्थिति इस समस्या की बन जाएगी। अभी देश-विदेश में जिस प्रकार भारत के प्रतिकूल प्रचार चलने दिया जा रहा हैं, उससे यही लगता है। यह विष बहुत ऊपर तक चढ़ चुका है और उसका परिणाम वही होगा जो १९४६-४७ के पूर्व मुस्लिम लीग के प्रचार को बढ़ने देने का, उससे समझौता करने का तथा कथित उदार नीति का हुआ है।

आपने वैधानिक दृष्टि से अपने नेताओं के हाथों में न्याय्य बल भरने का प्रयास किया है। हम सब मिलकर श्री भगवान से प्रार्थना करें कि

इसका उचित उपयोग कर अपने देश पर जो कालिख लगी हुई है, उसे धो डालने की कर्तव्यदक्षता एवं आत्मसम्मान, राष्ट्राभिमान की प्रबल उर्मि से उनके देह, वाणी, मन, बुद्धि को भर दे तथा वे अविलंब दिग्दर्शित पग उठाने में न झिझकते हुए आगे बढ़कर यश प्राप्त करें। आगे कभी हम लोग मिलेंगे, तब और विचार हो सकेगा।

१११. गोवा में हिंदुत्व का जागरण करें

श्री विष्णु जी क्षीरसागर — २२ मार्च १९६५

आप गोवा जानेवाले हैं। उस क्षेत्र में अपने समाज के अतिरिक्त अन्य धर्म-मत स्वीकार किए हुए लोग हैं। अनेक परिवार पहले बलप्रयोग या मोह के शिकार होकर, अनेक छल-कपट से अन्य धर्म-मत में चले गए हैं। उनमें अब भी अपने पुराने धर्म, संस्कृति, समाज, हिंदूपन का ज्ञान है। वहाँ इस प्रकार विषय रखा जाए जिससे उनका स्वाभिमान जागृत हो तथा मध्यावधि में उन पर पड़े हुए अन्य मत के अवांच्छित प्रभाव से मुक्त होने की इच्छा पैदा हो। अकारण अहंकार प्रकट न करते हुए स्वधर्म की श्रेष्ठता समझाना, उनके वर्तमान धर्म-मत की निंदा आदि न करना, उन्हें न दुखाते हुए स्वधर्म में (हिंदू धर्म में) पुनः आने की उत्कंठा निर्माण करना लाभदायी होगा। इतने वर्षों में जिनका वियोग हमें सताता रहा, उनके पुनर्मिलन का सुख प्राप्त होगा। आपके इस नियोजित प्रवास में जो अनुभव आपको होंगे तथा मन पर जो छाप पड़ेगी, उसके विषय में यथावकाश ज्ञान होगा ही।

(मूल मराठी)

११२. 'शिवाजी' महाकाव्य पर अभिप्राय

पं. श्यामनारायण पांडेय, मु.पो. डुमराव, आजमगढ़, १ अप्रैल १९६५

'शिवाजी' महाकाव्य पढ़कर आपके आदेशानुसार कुछ पृष्ठ प्रस्तावना के रूप में लिखकर भेज रहा हूँ। पांडुलिपि भी भेज रहा हूँ। सद्यःकालीन वायुमंडल में सुस्पष्ट 'हिंदू' शब्द का प्रयोग करने का साहस होता नहीं, ऐसा अनुभव होता है। अभी-अभी मैंने वृत्त-पत्रों में पढ़ा कि महाकवि भूषण का 'इंद्र जिमि जंभ पर' जैसे पद को पाठ्यक्रमों की पुस्तकों से हटा दिया गया है। इसी के परिणाम का अनुभव 'शिवाजी' में भी हो रहा है। उदाहरण के रूप में पृष्ठ २४५ पर 'बहू बेटियों से गलत प्रेम जोड़े' ऐसा विचित्र शब्द-प्रयोग स्पष्ट 'बलात्कार' कहने की झिझक के कारण हुआ है,

ऐसा आभास होता है।

काव्य के गुणों की चर्चा करने की मेरी पात्रता नहीं है। किंतु आपने श्री छत्रपति शिवाजी के प्रति अपार श्रद्धा से इसकी रचना की है, इस बात की झलक सर्वत्र दिखती है। इसमें यदि कुछ अधिक तेजस्विता आप भर सकें तो बहुत श्रेष्ठ होगा।

शिवाजी को एक आदर्श राष्ट्रभक्त, धर्मभक्त, पराक्रमी, नीतिनिपुण, शुद्ध चारित्र्यवान, विजयशाली महापुरूष के रूप में उपस्थित करना अधिक प्रेरक हो सकता है। भगवान का अवतार बोलने पर उनके कार्य स्वाभाविक रीति से दैवी, अतः मनुष्य को अनुसरण करने के लिए असंभव मानने की प्रवृत्ति उत्पन्न होने का भय रहता है। एक मानव अपनी प्रतिभा से, शुद्धता से, ध्येयप्रवणता से, लगन से, साहस-पौरुष से, लक्ष्य प्राप्ति की धुन में सुख-दुःखों से आहत न होने की सुदृढ़ स्थितप्रज्ञता से कितना श्रेष्ठ बन सकता है, उसका यथार्थ वर्णन अन्य मनुष्यों को भी उन गुणों का संपादन कर स्वयं उनके समान बनने की (कम से कम उनके चरणचिह्नों पर चलने की) प्रबल प्रेरणा देकर उनका उत्थान करने में अतिसफल सहायक सिद्ध हो सकता है। इस महाकाव्य में इस दृष्टि को अपनाया गया होता तो बहुत लाभ होता।

आपको पता होगा ही कि श्री वाल्मीकि ने रामायण में श्रीराम प्रभु का एक मानव के रूप में ही वर्णन किया है। उनके अवतारी होने का उल्लेख तो रावणवध के पश्चात् थोड़ा-सा ही आता है।

ऐसे कुछ विचार मन में उठे हैं। आपकी रचना श्रेष्ठ है। जनप्रिय होगी, इसमें संदेह नहीं। परंतु कभी ऐसा लगता है कि जैसा जमना चाहिए वैसा ओजयुक्त जमा नहीं। क्या इसमें कुछ परिवर्तन कर उसकी परिणामकारिता बढ़ाई जा सकती है ?

११३. भैयाजी दाणी को श्रद्धांजलि

श्रद्धेय श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार, गोरखपुर ५ जून १९६५

आपका संवेदनापूर्ण सांत्वना पर कृपापत्र प्राप्त हुआ। माननीय श्री भैयाजी दाणी का देहावसान अपने संगठन पर बहुत बड़ा आघात है। प्रारंभ से ही वे स्वयंसेवक थे। अनेक क्षेत्रों में अपनी कुशलता से उन्होंने सफलता से कार्यारंभ किया। अनेक क्षेत्रों में कार्य का विस्तार एवं दृढ़ीकरण करने

में असामान्य कर्तृत्व प्रकट किया। छोटे-बड़े सभी स्वयंसेवक बंधु स्नेह का, विश्वास का अचूक मार्गदर्शन प्राप्त करते थे। मेरे लिए तो उनका तिरोधान ऐसा है, मानो पैरों तले की भूमि ही खिसक गई है।

परम दयाघन श्री भगवान की इच्छा सर्वोपरि है। यही उन्हें मान्य था, तो हम लोग भी नतमस्तक हो उनकी इस व्यवस्था को स्वीकार कर चलें, भले ही वह हमें असहनीय दुःख देनेवाली प्रतीत हो। इस विपत्ति में उसी का सहारा है और इस क्षति की पूर्ति कर कार्य यश की ओर आगे बढ़ने में उसी के कृपाशीर्वाद की प्राप्ति का विश्वास लेकर चल रहा हूँ।

आपके पत्र से मेरे भग्न हृदय को बहुत बल प्राप्त हुआ है। आपके प्रति कृतज्ञता किन शब्दों में व्यक्त करूँ, यह समझ में नहीं आता। अतः नम्रतापूर्वक आपको वंदन कर श्री भगवत्स्मरण से यह पत्र यहीं पूर्ण करता हूँ।

११४. विचार परिप्लुत मार्गदर्शक पुस्तक

श्री राधेरमण सक्सेना जी, गोरखपुर — १६ अगस्त १६६५

आपकी पुस्तक Indian Integration आद्योपांत पढ़ने के लिए समय मिल सका। उसमें लिखे हुए अनेक विचारों से किसी भी राष्ट्रीय हितचिंतक का असहमत होना संभव नहीं दिखता। पुस्तक के उत्तरार्ध में धर्म आदि का उल्लेख भी आवश्यक था, क्योंकि भारतीय जीवन की भित्ति का ज्ञान उसके बिना असंभव है, परंतु वह अंश जितना सुस्पष्ट होना चाहिए, उतना दिखा नहीं, ऐसा मुझे लगा। हो सकता है कि उस क्लिष्ट विषय को समझने की मेरी शक्ति के अभाव से ऐसा लगा हो।

एक प्रश्न आपके भी सम्मुख है। एकत्व का यह भाव प्रचारित करने के लिए कोई प्रयत्नशील नहीं है। राजनैतिक एवं सामाजिक क्षेत्रों में ऐसी नीतियों का अवलंबन हो रहा है जिनसे भेद अधिकाधिक गहरे तथा दुस्तर बनें। यही खेद का विषय है। वायुमंडल इतना दूषित हो चुका है कि सरलता से कोई दिग्दर्शित किए सत्य को सुनने के लिए भी उत्सुक नहीं दिखता। कुछ अपवाद अवश्य हैं। वही आशा की किरण है।

अहिंदू पंथीय बंधुओं के लिए आपका मार्गदर्शन योग्य है। उन्हें अपनी वास्तविकता का बोध हो तो सब ठीक हो सकेगा। कई वर्ष पूर्व मैंने प्रकट भाषणों में यही आह्वान किया था, परंतु अभी तक उसका परिणाम नहीं निकला। तब भी अंतिम यश पर दृष्टि रखकर प्रयत्न चलाना है।

आपकी पुस्तक का अध्ययन होना लाभदायक है, परंतु वे उसे जिस परिमाण में पढ़ना चाहिए, पढ़ेंगे क्या? यही जटिल प्रश्न है।

आपके विचार परिप्लुत मार्गदर्शक पुस्तक के लिए आपका सादर अभिनंदन कर यह पत्र यहीं पूर्ण करता हूँ।

११५. स्वास्थ्य की चिंता करें

श्री गिरिराज किशोर कपूर, मध्यप्रदेश २१ अगस्त १९६५

मुझे विश्वास है कि चिकित्सकों की सूचनाओं का पालन कर आप अत्यल्पकाल में उत्तम स्वास्थ्य-लाभ कर कार्य के लिए सिद्ध हो जाएँगे। सभी रोगों की सर्वश्रेष्ठ चिकित्सा तो भगवत्कृपा से होती है। अतः रसायनश्रेष्ठ भगवन्नाम भक्तिपूर्ण अंतःकरण से लेते रहना उत्तम। तथापि शरीर भौतिक है, उसकी सुस्थिति भौतिक साधनों से करवाना उचित रहता है और मानसिक आध्यात्मिक दुःखों की तदनुरूप चिकित्सा भगवन्नाम के रूप में होती है। यह तो सर्वथा सत्य है कि 'औषधं जाह्नवी तोयं वैद्यो नारायणो हरिः।' यह भी 'अच्युतानंद गोविंद नाम स्मरण भेषजात्। नश्यन्ति सकला रोगाःसत्यं सत्यं वदाम्यहम्।' यह सब सोचकर शारीरिक व्याधियों की भौतिक चिकित्सा उस शास्त्र के तज्ज्ञों से करवाना आवश्यक है। परममंगल भगवत्कृपा पर निर्भर रह पूर्ण सुदृढ़ स्वास्थ्य प्राप्त करें और हम सबको चिंता से मुक्त करें, यही आपसे प्रार्थना है।

११६. गीता व्याख्या

एम.रामचंद्रन, गीताश्रम, बंगलौर २२ अगस्त १९६५

आपके द्वारा किए गए विवरण के विषय में मैंने अधिक नहीं लिखा, क्योंकि मेरा विचार था और वह अभी भी है। आप एक अन्य ग्रंथ प्रकाशित करने का सोच रहे हैं। इस ग्रंथ में गीता के प्रत्येक श्लोक का अर्थ और स्पष्टीकरण उद्धृत किया जाएगा, जिससे वह अधिक परिपूर्ण होकर, आपके द्वारा पूर्ण समर्थ रूप में प्रस्तुत 'ज्ञानविज्ञान' प्रबंध प्रमाणित होगा। आपको लिखने से पूर्व उस परिपूर्ण विवरण को ध्यानपूर्वक पढ़ने का मैंने सोचा था। आपका जो ग्रंथ अब मेरे पास है, उसमें प्रत्येक श्लोक के स्पष्टीकरण की पूर्वास्वाद की माधुरी है और इसी कारण पूर्ण विवरण-ग्रंथ की चाह मेरे मन में जाग उठी है।

जो भी हो, मुझे संतोष इस बात का है कि आपके द्वारा लिखित इस श्रेष्ठ ग्रंथ को मैं पढ़ सका। इसमें मौलिक विचारों की अभिव्यक्ति है और वह पाठकों की मानसिकता पर गहरा असर करता हुआ परमेश्वर-प्राप्ति तथा समर्पण-बुद्धि से कर्म करने के लिए प्रोत्साहित करता है।

निकटवर्ती भविष्य में यदि मेरा बंगलौर जाने का कार्यक्रम बनता है तो आपसे मिलने का मैं प्रयास करूँगा। परमेश्वर एवं धर्म के प्रति दृढ़ भक्ति से अनुरक्त महानुभावों से मिलना भी एक दुर्लभ पुण्यकारक योग ही होता है।

(मूल अंग्रेजी)

११७. 'रणेचाभिमुखोहतः' व्यक्ति का वंश धन्य

श्री गोविंदराव गोरे, रायपुर — ३० सितंबर १९६५

आपके सुपुत्र मेजर यशवंतराव मातृभूमि की रक्षा में रणांगण में शहीद हुए, यह समाचार विदित हुआ। मुझे पहले ही यह ज्ञात हुआ था परंतु और एक 'गोरे' कुलनामक के वीरगति को प्राप्त होने से ये मेजर यशवंतराव भी उसी पुण्यमार्ग से स्वर्गस्थ हुए, यह समझने में संभ्रम हुआ। कल प्राप्त हुए वृत्त से एक ही कुलनाम के ये दो अधिकारी (दोनों परिचित तथा अत्यंत आत्मीय बंधु) राष्ट्रसेवा में समर्पित हुए, यह स्पष्ट हुआ।

पुत्रवियोग के दुःख में 'अपने पुत्र ने वंश धन्य किया' यह अभिमानास्पद बोध आपको सांत्वना दे। इस समय मेरी अवस्था ठीक नहीं है। राष्ट्र के रक्षणार्थ बलिदान होनेवालों में मेरे अनेक स्नेहास्पद बंधु हैं। धर्मयुद्ध में वीर मरण उन्होंने स्वीकार किया तथा स्वकर्तव्य पूर्ण कर कृतकार्य हुए। उनके शौर्य, धैर्य, निष्ठा आदि अलौकिक गुणों के प्रति धन्यता प्रतीत होती है। तथापि जगत् की परिपाटी के अनुसार प्रियजनवियोग का दुःख भी हो रहा है। इस स्थिति में मन को समझाकर धीरज दे रहा हूँ कि सूर्यमंडल को भेद कर मनुष्य-जीवन सार्थक करने वालों में 'रणेचाभिमुखोहतः' व्यक्ति का भी समावेश है। ऐसे ये अपने निकटवर्ती संसारचक्र पर विजय प्राप्त कर सके, यह अपना अहोभाग्य है। अतएव शोकमग्न न होते हुए अन्य अनेक युवकों को आपके सुपुत्र के समान राष्ट्र-सम्मान रक्षणार्थ निर्भयता से युद्ध क्षेत्र का आह्वान स्वीकार करने की स्फूर्ति होगी तथा उसमें स्वकर्तव्य करते-करते मृत्यु वरण करना पड़ा तो भी उसे तुच्छ मानकर कार्यरत रहने की धृति अधिकाधिक प्रबल होगी, ऐसा व्यवहार ही योग्य व शोभनीय है।

मैं आपको क्या सांत्वना दे सकता हूँ, परंतु समाज की दृष्टि से आप और आपका वंश धन्य है। परम मंगलमय श्री प्रभु के साक्षात् संबंध के बिना ऐसा वीर पुत्र परिवार में पैदा नहीं होता। यह प्रभुकृपा आपको मनःशांति, धीरज तथा बल प्रदान करे इसके लिए मैं उस जगत्पिता के चरणों में नम्रता से प्रार्थना करता हूँ। (मूल मराठी)

११८. गुरुनिंदा

श्री जयदयाल डालमिया जी, १३ जनवरी १९६६

आपका कृपापत्र ८.१.६६ को आया। अन्य सामग्री ११.१.६६ को पहुँची। आपको पत्र-प्राप्ति की सूचना भेजी गई है, परंतु मैं आज ही प्रवास से लौटा हूँ और आने पर यह सब देख सका हूँ।

सत्ता का मद और उससे उत्पन्न विवेकभ्रष्टता का स्पष्ट उदाहरण लोकसभा के उस प्रसंग में प्राप्त होता है, जिसमें पूज्यपाद श्रीमज्जगद्गुरु गोवर्धन पीठाधीश शंकराचार्य महाराज के प्रति अनादर के शब्दों का व्यवहार किया गया है। इस संबंध में मैंने अपने भाषणों में तथा पत्र-संवाददाताओं से बातचीत में स्पष्ट किया है कि प्रश्नकर्ता व उत्तर देनेवाले, दोनों ने ही पूज्य श्री जगद्गुरु जी के शब्दों को पढ़ा नहीं या उन्हें समझा नहीं। यदि समझकर भी ऐसे अपमानकारक भावों को उन्होंने व्यक्त किया हो, तो जिस उच्च स्थान पर (शासन व्यवस्था में) वे विराजमान हैं, उस स्थान को वे शोभा नहीं देते। इसका आगे क्या किया जा सकेगा, इस संबंध में मैं जानकारों से परामर्श कर रहा हूँ।

आपने विस्तार से सब आक्षेपों का निराकरण कर बड़ा उपकार किया है। शेष भगवत् कृपा। इति शम् ।

११९. रामायण के पात्र सत्कर्म की शिक्षा देते हैं

श्री तात्यासाहेब घारपुरे, औरंगाबाद ७ फरवरी १९६६

विश्व हिंदू परिषद् की बैठक २२, २३, २४ जनवरी को थी। अत्यंत उत्साह से संपन्न हुई। सब दर्शन, पंथ के प्रमुख एक ही मंच पर आए थे। उन्होंने संपूर्ण हिंदू समाज की एकता पर बल दिया। यह देख-सुन कर सब धन्य हुए। जिन्हें परिषद् की कल्पना सूझी तथा जिन्होंने उसे ऐसा भव्य लुभावना मूर्त रूप प्राप्त करा दिया, वे भी धन्य हैं।

आपने बहुत बड़ा काम हाथ में लिया है। वह अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। सद्यःपरिस्थिति में अत्यंत आवश्यक है। वाल्मीकि रामायण यथार्थ मार्गदर्शन करने वाला ग्रंथ है। श्री रामचरित्र प्रत्येक क्षेत्र में प्रेरणादायी तथा पथप्रदर्शक है। उसके पात्र भी क्या करें, क्या न करें की प्रत्यक्ष सोदाहरण शिक्षा देनेवाले हैं। वर्तमान संभ्रमित वातावरण को योग्य मोड़ देकर सत्वसंपन्न, स्वाभिमानी, शीलसंपन्न, पौरुषयुक्त, आत्मविश्वासी, विजिगीषु वृत्ति का इसमें से पोषण होगा। इस दृष्टि से आपने यह प्रचंड उद्योग प्रारंभ किया है। भारत का अधिष्ठाता धर्मरक्षक, अधर्म विनाशक श्री परमेश्वर आपको वह पूर्ण करने के लिए शक्ति, अनुकूलता तथा आयुरारोग्य देगा, ऐसा विश्वास रखकर तदर्थ श्री भगवच्च्चरणों में प्रार्थना करता हूँ।

अधिक क्या लिखूँ? आपको आशीर्वाद देने की आयु, विद्वता, योग्यता आदि किसी भी दृष्टि से मेरी पात्रता नहीं है। इसलिए श्री परमेश्वर के निकट आपके लिए प्रार्थना कर रहा हूँ। (मूल मराठी)

१२०. अलौकिक तूफानी राष्ट्रार्पित जीवन

तिरून्नलवेली, २६ फरवरी १९६६

श्री विश्वास सावरकर, सावरकर सदन, मुंबई

अखंड उद्योगमय, तूफानी, विविध कार्यों से विभूषित राष्ट्रार्पित जीवन की कृतकार्य संतुष्टता से आहूत यह समाप्ति, असंख्य देशभक्तवासियों को अतीव दुःख देनेवाली है। स्वातंत्र्यवीर सावरकर जैसे अलौकिक राष्ट्रपुरुष शताब्दियों में क्वचित् ही होते हैं। उनका शरीर कालवश हुआ है, परंतु चैतन्य देशवासियों को उत्स्फूर्त करता हुआ अमर रहेगा। उनकी कीर्ति जगद्व्याप्त कर, कालगति का उल्लंघन कर चिरंजीवी है।

उनकी पवित्र स्मृति सदैव प्रेरणास्रोत के रूप में अंतःकरण में रहे, यही श्रीभगवान से प्रार्थना है। दिवंगत जीव को शतशः प्रणाम।

१२१. सबकुछ त्रिकालज्ञ के हाथों में

श्री परसराम जेठानंद जी, १६ मार्च १९६६

आपके द्वारा अभिव्यक्त हृदयस्पर्शी भावनाओं के लिए मैं बहुत कृतज्ञ हूँ। जगज्जननी माँ के आशीर्वाद के फलस्वरूप और इतनी अधिक संख्या में मित्र एवं हितैषी मेरे स्वास्थ्य एवं दीर्घायु की कामना कर प्रार्थना कर रहे हैं, अतः उस बारे में चिंता करते हुए समय नष्ट करने का मेरे लिए

कोई कारण नहीं है। यदि हम ईमानदारी से विश्वास करते हैं कि परमात्मा त्रिकालज्ञ है, तो क्या हम ऐसा सोचें कि हमारे और हमारे कार्य के कल्याण के विषय में वह अनभिज्ञ है? क्या उसे स्मरण करा देने की आवश्यकता है? क्या इसका अर्थ यह नहीं होगा कि वह विस्मरणशील, चिंताहीन और निद्रित है?

इस दृढ़ विश्वास को लेकर कि जगज्जननी माँ सदैव हमारे कल्याण की ही चिंता करती है, हम मन में शांति धारण करें और लगन से अपना कार्य करते हुए आगे बढ़ें। (मूल अंग्रेजी)

१२२. सभी हिंदू-राष्ट्रीयता में सम्मिलित हों

कुं. देवेन्द्र प्रताप सिंह सोलंकी, २१ मार्च १६६६

आपका पत्र तथा रहीम की राष्ट्रीयता की टंकलिखित पांडुलिपि पहुँची। परंतु इतने कामों का बोझा आ पड़ा है कि पूरा पढ़ नहीं सका। फिर प्रवास चालू होने जा रहा है, अतः आगे पढ़ने की आशा भी दिखती नहीं। साथ ही अधिक समय लगाना और आपके पास साहित्य पहुँचने में विलंब करते जाना अनुचित जानकर पांडुलिपि अपने मित्र श्री ब्रह्मदेवजी के साथ आपके पास भेज रहा हूँ।

आधे से अधिक अंश पढ़ लिया होने से जो लिख रहा हूँ, उसकी अपूर्णता का मुझे अनुभव हो रहा है। 'राष्ट्रीयता' इस शब्द का अत्यधिक प्रयोग हुआ है। किंतु वह कैसी है, किस प्रकार रहीम के काव्य में वह व्यक्त हुई है, यह स्पष्ट नहीं होता। एक बात समझ में आती है कि अहिंदू-समाज ने भारत की धर्म, संस्कृति, परंपरा को समुचित आदर के साथ ग्रहण करना (अपने पंथ का सार्थक अभिमान रखते हुए भी) इस देश में राष्ट्रीयता का लक्षण है। सभी पंथों-मतों का आदर करना तो हिंदू-स्वभाव ही है। हिंदू धर्म-तत्त्वज्ञान के सिद्धांतों की यह स्थायी शिक्षा है। अतः हिंदू को अन्य मतावलंबियों का तथा उनके मत का आदर करने के लिए कहना अनावश्यक है। हिंदू को भारत की धर्म, संस्कृति, परंपरा उसी की होने के कारण उसका आदर करने के लिए कहना पिष्ट-पेषण है। मूलतः हिंदू स्वभावसिद्ध राष्ट्रीय है। अन्य समाजों को इस राष्ट्रीयता में सम्मिलित होना उचित तथा आवश्यक है। इस योग्य परिवर्तन के लिए प्रेरक आदर्श चरित्र इस नाते आपने रहीम का वर्णन विशद रूप से किया है, यह समयानुकूल तथा आवश्यक ही है।

आपने ग्रंथ के प्रारंभ में अनेक संतों के नाम तथा उनकी श्रेष्ठता का संक्षेप में उल्लेख किया है। प्रारंभ में कुछ नाम देने पर हिंदू संतों के नाम दिए हैं। हिंदू नामोल्लेख के पूर्व अन्य संतों में महात्मा दादू तथा श्री गुरु नानक देव के नाम हैं, जिससे अनुमान होता है कि आप इन पुरुषों को हिंदू नहीं मानते। मैं समझता हूँ कि अनवधान से यह हुआ है, क्योंकि ये तो हिंदू-समाज के चिरप्रकाशी दीपस्तंभ हैं। आपका अभिनंदन कर पत्र पूर्ण करता हूँ।

१२३. केवल भावुकता काम में नहीं आती

श्री सत्यप्रकाश व्यास, घाटकोपर, मुंबई २० अप्रैल १९६६

जब समाज जागृत रहता है, अपने धर्म का परिपालन करता है, तब धर्म पर आघात जहाँ से होता है, उनके साथ उचित व्यवहार करने के लिए उन्हें किसी प्रकार का समर्थन या सहयोग न देने के लिए सिद्ध रहता है। धर्म के मानबिंदुओं की रक्षा के लिए प्रयत्न करने में स्वार्थ को बीच में नहीं आने देता तथा संगठित एकमुखी शक्ति बनकर अपने जीवन की सांगोपांग उन्नति करने को खड़ा होता है, तभी वह अपमान से मुक्त, सम्मानित जीवन का अधिकारी बन सकता है। केवल भावुकता काम में नहीं आती। अन्य के प्रति घृणा, तिरस्कार या विरोध-भाव प्रकट करते रहने से कुछ हो नहीं सकता। अतः समाज को धर्म, संस्कृति, मातृभूमि के प्रति अटूट श्रद्धा तथा विशुद्ध राष्ट्रप्रेम के संस्कारों से युक्त बनाते हुए उससे अधिकाधिक व्यक्तियों को स्वार्थरहित कर्तव्य-भाव से अनुप्राणित कर अभेद्य संगठन के रूप में खड़ा करना यह सब समस्याओं का सच्चा उत्तर होता है। यही संगठन-कार्य द्रुत गति से बढ़े, इस हेतु जीवन की शक्ति लगाना इस समय प्रत्येक सद्विवेकसंपन्न सद्भावयुक्त व्यक्ति का कर्तव्य है। यह मेरी अल्पमति का विचार है। आप इसे सोचने योग्य मानें, तो सोचकर कार्य निर्धारित करें। इससे अधिक मेरी बुद्धि चलती नहीं।

१२४. जन्मदिन शुभकामना का उत्तर

डा. वी.एन.ढोलकिया जी, जामनगर, गुजरात २० अप्रैल १९६६

इहलोक में मेरा शरीर साठ वर्ष तक सक्षम रहा। इस उपलक्ष्य में आपके द्वारा भेजे गए पत्र से आपके आशीर्वाद और सदिच्छाएँ मुझे ज्ञात

हुई हैं। इसलिए मैं बहुत ऋणी हूँ और आपका हृदय से आभार मानता हूँ। हम आशा करें कि सर्वशक्तिमान श्री परमात्मा की कृपा से सीमित क्षमता से युक्त यह शरीर अंतिम क्षण तक अपने पवित्र राष्ट्र की सेवा करता रहे। मैं विश्वासपूर्वक आशा करता हूँ कि सक्रिय कार्यरत रहने से और अपने कार्यकर्ता तथा अधिकारियों के सहयोग से अपना कार्य उस सर्वोच्च उन्नत अवस्था को प्राप्त करेगा, जिसके लिए हम हर रोज प्रार्थना करते हैं।

(मूल अंग्रेजी)

१२५. श्रद्धेय मालवीय जी के प्रति श्रद्धांजलि

श्री ईश्वरप्रसाद वर्मा, वाराणसी १३ जुलाई १९६६

व्यस्तता के कारण मैं अपनी इच्छा के अनुसार क्या कर सकूँगा, यह कहना कठिन है। यद्यपि काशी हिंदू विश्वविद्यालय का छात्र एवं महामना मालवीयजी का भक्त, सार्वजनीन जीवन में हिंदूधर्म, संस्कृति एवं समाज की भक्तियुक्त सेवा करने की प्रेरणा लेकर चलने की चेष्टा करनेवाला अनुयायी होने के नाते उस महापुरुष की स्मृति को शब्द-कुसुमांजलि समर्पित करने के इस सुअवसर का लाभ उठाने का प्रयत्न करना मेरे लिए स्वाभाविक है, तो भी इस कार्यबाहुल्य के कारण मन मसोसकर रहना पड़ रहा है। आप सबके प्रयास सफल हों। उसी में मेरी क्षीण आवाज से मैं महामना मालवीय जी की पवित्र स्मृति में अपनी श्रद्धा समर्पित करता हूँ।

१२६. सामान्यों की सूची में मेरा नाम रखें

श्री माधवराव पाठक, मुंबई १७ जुलाई १९६६

'स्वातंत्र्यवीर सावरकर राष्ट्रीय स्मारक' की मराठी और अंग्रेजी प्रति प्राप्त हुई। इस योजना को स्वीकृति देनेवाले व्यक्तियों की नामावली में मेरा नाम जोड़ने की आपकी इच्छा मुझे अकारण सम्मान देना है। आपके पत्र के 'Outstanding personalities' शब्दों से जिन श्रेष्ठ व्यक्तियों का निर्देश होगा, उनकी पंक्ति में बैठने की मेरी योग्यता नहीं है। आपकी इच्छा के अनुसार यदि मैंने हामी भरी, तो योग्यता न रहते हुए भी उस पंक्ति में बैठने की इच्छा के अहंभाव से मैं ग्रस्त हूँ– ऐसा उसका अर्थ होगा। आपकी इच्छा को नकारना स्वातंत्र्यवीर का अनादर करना होगा। आपने मुझे विचित्र धर्म-संकट में डाल दिया है।

इसमें से एक मार्ग निकल सकता है। इस भव्य और आवश्यक योजना को मनःपूर्वक मान्यता देनेवाले सामान्य श्रेणी के व्यक्तियों की आप उपेक्षा नहीं करेंगे। उनकी जो सूची आप बनाएँगे, उसमें मेरा नाम डालें। इससे मैं इस शृंगापत्ति से मुक्त हो जाऊँगा।

योजना की साधारण रूपरेखा ज्ञात हुई, तथापि उसे मान्यता देनेवालों को उस विषय में क्या करना चाहिए तथा किस प्रकार का प्रत्यक्ष सहयोग अपेक्षित है, यह ज्ञात होना आवश्यक है। इससे मुझे ज्ञान हो सकेगा कि मुझे सौंपा गया दायित्व पूर्ण करते समय योजना में मेरा कहाँ तक उपयोग होगा।

मेरी अपात्रता रहते हुए भी केवल आत्मीयता के कारण आप मुझे इतना ऊँचा सम्मान देने को प्रवृत्त हुए, इसके लिए अंतःकरणपूर्वक आपका आभारी हूँ। (मूल मराठी)

१२७. विदेशों में हिंदू एक रहें

श्री. वासुदेव गोयनका जी, १९ जुलाई १९६६

आपके सामने जो समस्या है, उसका मूल कारण है देश-समाज की एकता की अनुभूति न होना, इस कारण प्रांत-भाषा आदि के संकुचित अभिमान उत्पन्न होकर अन्य देशवासियों के प्रति पराएपन और द्वेष की भावना का निर्माण होना। इसमें किसी प्रांतविशेष के बंधुओं को अधिक और दूसरों को कम दोषी मानने का कारण नहीं है। भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में पढ़ने के लिए, नौकरी के लिए या व्यापारादि के लिए किसी प्रांतविशेष के बंधु जाते हैं तो स्थानीय समाज से आत्मीय संबंध स्थापन न करते हुए अपने ही भाषाभाषी, अपने प्रांत के, अपनी जाति के लोगों के साथ ही रहते हैं। सब सामाजिक कार्य उत्सवादि मनाते हैं। अफ्रीका आदि दूरस्थ देशों में जाने के पश्चात् भी इस अनिष्ट प्रवृत्ति को छोड़ते नहीं। उधर भी गुजराती, पंजाबी, आर्यसमाजी, सिख आदि अलग-अलग संस्थाओं को बनाकर टूटा-फूटा समाज बनाकर रहते हैं। इसी कारण विपुल संख्या होते हुए भी उनका जीवन संकटग्रस्त, अपमानित, कभी भी उध्वस्त होने को उद्यत दिखाई देता है।

इसी परिस्थिति का अनुभव आपको आ रहा होगा, तो आश्चर्य नहीं। इसलिए दूर के सुपरिणामों की ओर दृष्टि रखकर अपने पूर्ण समाज

की एकात्म-भावना जागृत कर, संकुचितता से बने हुए भेदों को हृदय से जड़-मूल से हटाने का काम करने की आवश्यकता है। अपने संघ की ओर से यह प्रयास चल रहा है। उसे प्रभावी एवं सफल बनाने के लिए शुद्ध अंतःकरण से काम करनेवाले व्यक्ति स्थान-स्थान पर आवश्यक हैं। तभी कार्य द्रुत गति से बढ़ सकेगा, समाजव्यापी बन सकेगा और उसके विशुद्ध प्रभाव के कारण क्षुद्र भाव नष्ट होकर एकात्म, स्नेहपूर्ण समाज-जीवन संपूर्ण भारत में अभिव्यक्त होगा। अन्य दूसरा मार्ग नहीं है। अतः आपसे प्रार्थना है कि आप इस कार्य की ओर पूरी शक्ति से ध्यान दें।

१२८. संगठन कार्य में सम्मिलित हों

श्री एस.वामन पै, आलप्पी, केरल — १६ जुलाई १६६६

समस्या सब जानते हैं, परंतु कोई कुछ करता नहीं। केवल अन्य लोगों पर क्रोध करने से काम नहीं होता। केरल प्रांत में अपने हिंदू-समाज को जागृत एवं संगठित करने का प्रयास चल रहा है। उसमें आप जैसे महानुभाव प्रयास करने के लिए आगे बढ़ें तो संकट से मुक्त होने का उपाय हो सकेगा। परंतु अपने-अपने उद्योग-व्यवसाय करनेवाले बंधु स्वयं समय लगाकर परिश्रम करने के लिए प्रस्तुत होते नहीं। इस प्रवृत्ति से अपने ही स्वार्थ के उद्योग में रमे रहने से और समाजहित के लिए श्रम करने में पीछे रहने से कुछ काम बनेगा नहीं।

अतः आपसे मेरी यही प्रार्थना है कि वहाँ जो समाज जागृति का, समाज-संगठन का कार्य चल रहा है, उसमें पूर्ण शक्ति से सम्मिलित होकर कार्य को संपूर्ण समाज और प्रत्येक व्यक्ति के अंतःकरण तक पहुँचाने हेतु प्रस्तुत हों।

आपने सतर्कता से इन समस्याओं की ओर ध्यान दिया है। इसलिए आपको हार्दिक धन्यवाद।

१२६. कष्ट के लिए क्षमायाचना

श्री राय मथुराप्रसाद जी, पटना — २० जुलाई १६६६

वहाँ (पटना) आए हुए बंधुओं को मैंने पूछा कि पटना सिटी स्टेशन पर कोई आनेवाले हैं क्या? तो मुझे बतलाया गया कि कोई आएँगे नहीं, क्योंकि किसी को सूचना नहीं है। बाद में पता चला कि आप सिटी स्टेशन

पर आए थे और दरवाजा बंद देखकर चले गए मित्रवर डा. थत्ते जी को आपके आने-जाने का आभास होने के कारण वे जल्दी से आपसे भेंट करने गए, परंतु तब तक गाड़ी चल पड़ी थी और वह आपको मिल नहीं सके।

मुझे जब यह पता लगा तो बहुत दुःख हुआ। अब मैं कोई अन्य उपाय न रहने के कारण आपको असुविधा तथा कष्ट हुए उसके लिए क्षमा माँगता हूँ और आपसे भेंट करने का अवसर चला गया, इसलिए अपने दुर्भाग्य को कोस रहा हूँ। (मूल मराठी)

१३०. श्री. अटलबिहारी वाजपेयी का गौरव

श्री नारायणराव गोडबोले, २७ जुलाई १९६६

पुणे में श्री अटलबिहारी वाजपेयी का सत्कार होने जा रहा है, इसकी मुझे जानकारी नहीं है, परंतु ऐसा कोई कार्यक्रम आगे-पीछे होनेवाला हो, तो एक योग्य व्यक्ति का सम्मान करने का श्रेय पुणेवासियों को प्राप्त होगा। पुणे बुद्धिनिष्ठ, पारखी लोगों का भंडार है। उनकी संतुलित बुद्धि को पक्षाभिनिवेशरहित विचार कर सम्मान करने योग्य व्यक्ति का योग्य सम्मान करना ही मान्य होगा। इस दृष्टि से यह संकल्पित सम्मान श्री अटलबिहारी वाजपेयी तथा पुणे के नागरिक– दोनों को ही भूषणीय है।

भारतीय संसद में जिनके हाथों में सत्ता नहीं है, उनके विचार सुनने की जनता में उत्सुकता कम ही थी। स्वस्थ लोकतंत्र के विकास की दृष्टि से यह विघातक था। क्रमशः यह अवस्था परिवर्तित हो रही है, यह शुभ लक्षण है। परंतु वैसा अनिष्ट वायुमंडल होते हुए भी जिनके भाषण, विचारों, जानकारी, संतुलन तथा उत्कट देशप्रेम की लगन की दृष्टि से श्रवण-मनन करने योग्य होते थे, होते हैं, उनमें प्रथम स्थान स्व. डा. श्यामाप्रसाद मुखर्जी को देना पड़ेगा। उनके बाद आचार्य कृपलानी, श्री. ह. वि.कामथ प्रभृति पुराने प्रथितयश नेताओं ने अपने भाषणों से संसद की कार्यवाही में चैतन्य निर्माण किया है। उन श्रेष्ठ पुरुषों से आयु में छोटे होकर भी विद्वत्ता, विचार, भाषा-सौष्ठव, आलोचना करते समय भी गांभीर्य और संतुलन रखने की सतर्कता आदि सभी दृष्टि से श्री अटलबिहारी वाजपेयी ने अपनी छाप डाली है तथा अपनी अनन्य-साधारण प्रतिभा तथा राष्ट्रभक्ति उत्कटता से अभिव्यक्त की है। संसदीय प्रणाली में वे अल्प समय में उच्च स्थान प्राप्त करेंगे, ऐसे लक्षण उनमें दिखते हैं।

अतः समाजकल्याण के लिए प्रसिद्ध पुण्यपत्तन उनका सत्कार करे, यह अत्यंत शोभनीय तथा अभिनंदनीय है।

इस संदर्भ में आप अपने स्वतंत्र निष्पक्ष प्रकाशन 'जनसंदेश' में उनके विषय में लेख आदि प्रकाशित कर एक विशेषांक निकालने वाले हैं, यह भी योग्य ही है। आपके इस उपक्रम में अनेकों का सहयोग प्राप्त होकर आपका विशेषांक उद्‌बोधक, आकर्षक हो तथा स्वराष्ट्रप्रेम के विविध पहलू उसमें से अभिव्यक्त होकर पाठकों का मार्गदर्शन हो। आपको उत्तम यश प्राप्त हो, इसके लिए श्री प्रभुचरणों में प्रार्थना करता हूँ। (मूल मराठी)

१३१. अतिप्रिय कार्यक्रम का आयोजन

श्री भालजी पेंढारकर, कोल्हापुर — ५ अगस्त १९६९

ज्ञात हुआ है कि मेजर जनरल श्री शंकरराव थोरात का ६१वाँ जन्मदिन आपके स्टुडियो में संपन्न होने जा रहा है। आपने एक अतिप्रिय कार्यक्रम का आयोजन किया है। अपने राष्ट्र के इस विख्यात, रणधुरंधर, यशस्वी सेनापति का वास्तव में उत्तम गौरव होना चाहिए। आयु के ६० वर्ष पूर्ण कर परिपक्व अनुभव से युक्त हुए वे राष्ट्र को सुरक्षा विषय में योग्य मार्गदर्शन करने को इसके आगे सुदीर्घ काल तक आरोग्य संपन्न रहें। उनके आयुरारोग्य के उत्कर्ष के लिए उनका अभीष्ट चिंतन करता हूँ। उनके लिए श्री जगन्माता के चरणों में प्रार्थना करता हूँ। (मूल मराठी)

१३२. विश्व हिंदू परिषद् राजनीति से अलिप्त

श्री रमा प्रसाद मुखर्जी, — ७ अगस्त १९६९

विश्व हिंदू परिषद् के संविधान के अनुसार उसकी नियामक समिति में किसी भी ऐसे व्यक्ति को नहीं लिया जा सकता, जो किसी राजनैतिक दल का पदाधिकारी हो। अतः श्री नित्यनारायण जी के कार्यकर्ताओं को इस नियम के अनुसार ही विश्वस्त मंडल के सदस्य बनाया जा सकता है। मैंने यह भी लिखा था कि वे विश्व हिंदू परिषद् के कार्य में राजनीति लाने का प्रयत्न न करें। ऐसा होता है तो दोनों का विलीनीकरण हो सकता है। यद्यपि श्रीमान् नित्यनारायणजी आपके साथ होनेवाली बातचीत में सब कुछ मान्य कर लेंगे, परंतु उन्हें भी अपने कार्यकर्ताओं से परामर्श करने के बाद ही निर्णय लेना पड़ेगा। इसलिए वे पहले अपने कार्यकर्ताओं से परामर्श कर

उनसे अधिकृत अनुमति प्राप्त कर लें, तब आपसे वार्ता करें। यदि उनके प्रस्ताव विश्व हिंदू परिषद् के उद्देश्यों से मेल न खाते हों, तो उन्हें वैसा अंतिम रूप से स्पष्ट कहा जा सकता है।

मेरा पत्र आपको मिलने तक आपकी श्री दादासाहब आप्टे जी से भेंट होकर उनके साथ इस प्रकरण पर पूर्ण चर्चा हो चुकी होगी। श्रीमान् नित्यनारायण जी से प्राप्त हुए पत्र से मेरी यह धारणा बनी है कि उनकी संस्था का दृष्टिकोण परिष्कृत नहीं है। परंतु श्री आप्टे जी के साथ भेंट होकर विचार-विनिमय के बाद आप इस प्रकरण में स्वयं निर्णय ले सकते हैं। (मूल अंग्रेजी)

१३३. गोवंश की सर्व प्रकार से रक्षा हो

श्री गोपीकृष्ण गोयल, जयपुर　　　　　　　　१३ अगस्त १६६६

आपका कृपापत्र मिला। आपकी भावनाओं को देखकर आदर से मेरा सिर आपके सम्मुख झुक गया है।

हिंदू जनता की श्रद्धा का प्रश्न गोवंश की सर्व प्रकार से रक्षा करने का है। जनता ने इसे सुलझाकर श्रेय प्राप्त करना उचित है। जनता के धार्मिक, सांस्कृतिक प्रतिनिधि स्वरूप साधु-महात्माओं ने आंदोलन प्रारंभ किया है, उन्हें समर्थन देना तथा इस माँग को देशव्यापी बनाना प्रत्येक व्यक्ति का काम है। संस्था-विशेष की ओर अंगुलिनिर्देश कर अपने दायित्व से बचने का प्रयास करना किसी भी व्यक्ति के लिए उचित नहीं होगा। संघ की दृष्टि से समाज को यश तथा श्रेय मिलने के लिए जो-जो आवश्यक होगा, वह हो रहा है। आप क्या चाहते हैं, यह आपके पत्र से मेरी समझ में नहीं आया।

सरकार के प्रति कटु शब्दों का प्रयोग करना यह मानो एक फैशन सी हो गई है। अनिवार्य रूप से आलोचना करना आवश्यक हुआ तो योग्य शब्दों में वैसा करना ठीक हो सकता है। परंतु ऐसी फैशन को व्यवहार में स्थान देना मुझे अच्छा नहीं लगा।

गोवंश-हत्या पूर्णरूप से देश में बंद होने की माँग सफल करने के लिए जो प्रयास चल पड़ा है, उसमें कौन-कौन सहयोग देते हैं, यह देखना है।

१३४. सभी स्तरों पर हिंदी का प्रयास हो

श्री रामप्रसाद पांडेय, आजमगढ़ १३ अगस्त १९६६

हिंदी का व्यवहार उत्तरप्रदेश में न होने के कारण संपूर्ण देशभर में उसके प्रति आकर्षण एवं रुचि उत्पन्न होती नहीं। हिंदी का विरोध कर अंग्रेजी को सुप्रतिष्ठित रखनेवालों के हिंदी-विरोधी तर्कों में यह भी एक तर्क है, जिसका प्रतिवाद करना कठिन है। अतः यदि संविधान पर वास्तविक श्रद्धा हो, हिंदी सार्वदेशिक राज्यव्यवहार भाषा के रूप में सर्वत्र समादरपूर्वक प्रचलित होने की सच्ची इच्छा हो, तो अपने प्रांतों में सब स्तरों पर राज्यव्यवहार में, नागरी जीवन में हिंदी ही प्रयुक्त होनी चाहिए। इस आग्रह को लेकर आप समिति गठित कर काम करने को उद्यत हैं, यह अभिनंदनीय है। शांतिपूर्ण उपायों से प्रबल जनमत का दबाव निर्माण कर आप अपने आंदोलन को सफल करेंगे। इस विश्वास से आपके यश के लिए श्री भगवच्चरणों में प्रार्थना करता हूँ।

१३५. प्रश्न सुलझाने में वैचारिक सहयोग करें

श्री अनंत गणेश गोखले, रत्नागिरि (महाराष्ट्र) २० अगस्त १९६६

आपका पत्र मिला। आपके विचार में से जो आशंकाएँ निष्पन्न हुईं, वे ध्यान में आईं। उन्हें समझने का प्रयत्न कर रहा हूँ। जो घटित होगा, वह परमेश्वर के अधीन है। कार्य बहुत ही व्यापक होने से उसमें विकास की दृष्टि से पड़नेवाले पग धीमी गति से ही बढ़ेंगे। आपसे अधिक निकट का संबंध होता तो अच्छा होता। तब ऐसे प्रश्न उपस्थित करने के स्थान पर उन्हें सुलझाने में आप विचारों से महत्त्वपूर्ण सहयोग कर सकते थे।

शेष सब यथावकाश आपके सामने आएगा ही। आपकी कुशलता के लिए श्री प्रभुचरणों में प्रार्थना करता हूँ। (मूल मराठी)

१३६. सभी समस्याओं का सही हल

श्री डी.आर.सेन सुप्रतिष्ठित विचारक, कोलकाता ३१ अगस्त १९६६

सभी समस्याएँ एक ही विचार का दिशाबोध कर रही हैं। यह हृदयस्थ भावना कि भारत एकसंघ देश है, हमारी मातृभूमि है, उसके सत्पुत्र के नाते हम अपने श्रेष्ठ हिंदू-समाज के अंगभूत हैं। इसी कारण हम

एक-दूसरे के प्रति प्रेम एवं बंधु-भावना के अटूट स्नेहबंधन में आबद्ध हैं। इस सुदृढ़ व्यवस्था में सतही स्तर पर दिखनेवाले जाति, वंश, पंथोपपंथ और भाषा आदि के भेद अपना अस्तित्व ही खो बैठते हैं। इसी कारण हमारा एक राष्ट्र है और वह हिंदू राष्ट्र है। इस वैचारिक भावना को जागृत कर और इस जागरण के आधार पर अपने हिंदू समाज को इस राष्ट्र की सुरक्षा, सर्वांगीण उन्नति एवं पूर्व गौरव-गरिमा की प्राप्ति हेतु स्वार्थशून्य, निरपेक्ष समर्पित भावना से कार्यशील सुदृढ़, सुसंगठित समाज के रूप में संसार में प्रस्तुत करें। इसी से हमारी आज की और भविष्य में निर्माण होनेवाली सभी समस्याओं का सही हल निश्चित है। इसी से अपने सब बंधुओं की सुरक्षा एवं सम्मान का निश्चित ही सरंक्षण होगा। (मूल अंग्रेजी)

१३७. मैं श्रेष्ठ कोटि का प्रतिष्ठित नहीं

४ सितंबर १९६६

बक्षी जगदेव सिंह जी, इंटरनेशनल सिख ब्रदरहुड, दिल्ली

आप को ज्ञात होगा कि मैं संघकार्य के लिए वर्षभर प्रवास करता रहता हूँ। अतः दूसरे कार्यों के लिए मेरे पास बहुत ही कम समय बचता है। किंतु आपका कार्य मुझे हृदय से भाता है, इसलिए आपके कार्य में साथ देने का मैं भरसक प्रयत्न करूँगा। संस्था के 'पैट्रन' बनने का प्रश्न मेरे जैसे सामान्य व्यक्ति की योग्यता के बाहर है। मै 'पैट्रन' बने बिना ही आपको सहायता करूँगा, लेकिन यह सम्मान आप अपने समाज के प्रतिष्ठितों के लिए सुरक्षित रखें। देश के श्रेष्ठ कोटि के प्रतिष्ठितों में मेरी गणना नहीं होती, यह बात आप भी स्वीकार करेंगे। मैं आपकी सेवा के लिए कुछ समय निकालने का प्रयत्न अवश्य करूँगा। (मूल अंग्रेजी)

१३८. गोवंश की हत्या रोकने का उपाय

श्री मुकुंद रामदासी, गोविंद धाम टेंभू, जि. सातारा ५ सितंबर १९६६

आपकी भावना और सिद्धता आपके साधु-जीवन की दृष्टि से स्वाभाविक है। आप जहाँ रह रहे हैं, उस क्षेत्र के ग्राम-ग्राम में यह प्रबल प्रचार हो कि किसी भी स्वार्थ, मोह या धन के प्रलोभन में न आकर अपने गाय, बैल आदि पूज्य प्राणियों के बारे में कृतज्ञता का भाव रखकर उनके बुढ़ापे में या रोग से उपयोगहीन अवस्था में उनका त्याग करने की या

कसाई को बेचने की अघोरी राक्षसी लालसा सर्वथा छोड़ देंगे। वैसी स्थिति में अधिक करुणा व प्रेम से उनका रक्षण तथा भरण-पोषण करेंगे। ऐसा हुआ तो गोहत्या बंदी का एक बड़ा काम होगा। इसके साथ ही ऐसे निरुपयोगी समझे जानेवाले गाय-बैलों के गोबर-मूत्र का योग्य प्रकार से संचय कर उपयोग किया जाए तो उनके पालन-पोषण पर होनेवाले खर्च से कई गुना अधिक मूल्य का खाद उपलब्ध होगा तथा कृत्रिम रासायनिक खाद से कृषि-भूमि की खराबी नहीं होगी तथा भूमि की उर्वरक शक्ति बढ़ेगी, फसलों का उत्पादन भी बढ़ेगा और सद्यःकालीन अन्न-संकट का निवारण भी होगा। (मूल मराठी)

१३९. प्रजातांत्रिक अधिकार

श्री सदाजीवतलालजी, मुंबई ६ सितंबर १९६६

आपका पत्र मिला। उसके साथ श्री ए.शंकर अल्वा के पत्र की प्रतिलिपि भी प्राप्त हुई। उसमें नवीन बात कुछ नहीं है। प्रजातांत्रिक प्रयत्न तो इतने वर्षों से चल रहे हैं। उनमें कितनी सफलता मिली, यह सब जानते ही हैं। इन वर्षों में जनता द्वारा बार-बार माँग की जाने पर भी प्रजातंत्र की पद्धति ने गोहत्या बढ़ाई ही है। गोवंश के शरीर से बनी वस्तुओं का विदेशों में निर्यात बढ़ता ही जा रहा है। आधुनिक यांत्रिक बूचड़खाने तिरुपति जैसे पवित्र तीर्थस्थान में भी खोलने के प्रस्ताव आते रहे हैं। इन बातों का ज्ञान श्री शंकर अल्वाजी को होगा ही। उन्हें अब यह सोचना चाहिए कि प्रजातंत्र में प्रजा का मन सुव्यवस्थित रूप से संगठित करने का महत्त्व का मार्ग आजकल बना हुआ है। अतः उसका समर्थन करना प्रजातंत्र की आजकल की पद्धति का समर्थन करना ही है। उन्हें यह भी सोचना चाहिए कि गत इतने वर्षों में संसद-सदस्यों ने इस विषय की अक्षम्य उपेक्षा की है और अभी भी कर रहे हैं। उनके ही ऊपर यह प्रश्न छोड़ दिया तो कुछ ही वर्षों में गोवंश भारत में नष्ट हो जाएगा। उनको यह भी सोचना उचित होगा कि श्री मौनी बाबा आदि साधु-महात्मा सरकार को कष्ट देने के लिए नहीं, किंतु गोहत्या के कारण बने हुए विषाक्त, पापमय वायुमंडल से व्यथित होकर आमरणांत अनशन करके इस पापपूर्ण वातावरण से छुटकारा पाना चाहते हैं। यदि इस प्रकार के अनशन से सरकार संकट का अनुभव करती है, तो पहले ही अंतर्बाह्य संकट से घिरी अवस्था में यह

और एक संकट क्यों सरकार मोल ले रही है? गोवंश की हत्या पूर्णतया संपूर्ण भारत में बंद करने का कानून बनाकर उसे दृढ़ता से लागू कर इस संकट से बचने के लिए कदम क्यों नहीं उठाती? संकटों का, आक्रमण के भय का, खाद्यान्न के अभाव का हौआ उठाकर इस पुनीत विषय की उपेक्षा करना ठीक नहीं है।

श्री शंकर अल्वा तथा अन्य बंधु जो इस प्रश्न में ऐसे युक्तिवाद प्रस्तुत करेंगे, उन्हें उपरिनिर्दिष्ट प्रकार से समझाने का प्रयत्न करना चाहिए और साथ ही आंदोलन को व्यापक एवं शक्तिशाली बनाने में कोई कसर नहीं रहने देनी चाहिए। श्रद्धेय श्री गंगेश्वरानंद जी आदि की आज्ञा से श्री शंकर अल्वा को उचित उत्तर भेजें।

१४०. चुनावी हार के प्रति दृष्टिकोण

कुँवर श्रीपालसिंह जी, जौनपुर   ३१ मार्च १९६७

इस बार चुनाव में आप असफल होंगे, ऐसा मैंने कभी सोचा भी नहीं था। किंतु चुनाव भी एक द्यूत ही है। पासा कैसा पड़ेगा, इसका भविष्य बताना अति कठिन रहता है। किंतु चुनाव जैसे प्रसंग में कभी हार, कभी जीत– यह चलता ही रहता है। अतः इस बार के परिणाम से चिंतित होने का कारण नहीं है।

वैसे भी, एक क्षत्रिय के नाते 'कुरु कर्मैव तस्मात्त्वं पूर्वैः पूर्वतरं कृतम्' तथा 'मामनुस्मर युद्ध्य च' यह श्री भगवान श्रीकृष्ण का उपदेश आपके लिए अनुसरणीय है। भगवत्प्राप्ति के लिए अंतःकरण से स्मरण, चिंतनादि करते हुए भी स्वकर्म करते रहना श्री भगवान ने उचित कहा है। आप भी इसी मार्ग से श्रेयः प्राप्ति कर सकेंगे– ऐसा मुझे विश्वास है।

आपके मंगल की कामना करता हुआ श्री भगवच्चरणों में प्रार्थना करता हूँ।

१४१. सहयोग-प्राप्ति के लिए प्रतीक्षा

महाराजाधिराज यदिंद्रसिंह, पटियाला   २ अप्रैल १९६७

आपका १.४.६७ का पत्र मिला। हम सबको बहुत निराशा हुई। जिन तिथियों को आपका कार्यक्रम रखा गया था, उन्हीं दिनों आपके आदरातिथ्य का आस्वाद लेने हेतु विदेशी अतिथि आनेवाले हैं, इसलिए

आप निरुपाय हैं। लगता है कि अधिक सुविधाजनक अन्य किसी सुयोग की हमें प्रतीक्षा करनी होगी। जब मैं दिल्ली आऊँगा, तब सर्वप्रथम आपकी सेवा में उपस्थित होऊँगा। उस वक्त आपने जिस महान उद्देश्यों के पूर्ति के लिए अपने प्रभाव का उपयोग करने तथा संपूर्ण शक्ति लगाने का निश्चय किया है, उसके लिए कार्यान्वित की जानेवाली योजना बनाएँगे। मुझे विश्वास है कि अपनी पवित्र भूमि में वैभवशाली एकात्म राष्ट्रीय जीवन-निर्माण करने में हम सफल होंगे तथा परमेश्वर हमारे पवित्र प्रयत्नों को आशीर्वाद देगा। (मूल अंग्रेजी)

१४२. नोबेल पुरस्कार विजेता का अभिनंदन

श्री बक्षी जगदेवसिंह जी, ५ जुलाई १९६७

आपका पत्र मिला। अपनी कार्यव्यस्तता से मुक्त होकर आपके अभिनंदन के शुभ समारोह में उपस्थित रहूँ, इसके लिए समय बहुत ही कम है। यह दूसरा अवसर है, जब स्वीडिश अकादमी ने पुण्य-भू भारत के सुपुत्र का नोबेल पारितोषिक के लिए चयन कर सम्यक् दृष्टिकोण का परिचय देकर अपना गौरव बढ़ाया है। इससे डा. गोपालसिंह का गौरव बढ़ा या नहीं, यह तो मैं नहीं जानता, किंतु यह निश्चित है कि एक असाधारण साहित्यिक रत्न उनकी मालिका में जुड़ने से उसका तेज एवं आकर्षण वृद्धिंगत हुआ होगा। अपने ही एक देशवासी द्वारा यह सम्मान देश को प्राप्त हुआ, इसलिए अभिनंदन समारोह की शोभा राष्ट्रपति द्वारा बढ़ाई जाए, यह अपेक्षा स्वाभाविक अपेक्षा है। (मूल अंग्रेजी)

१४३. अनेक प्रेरणास्रोत निर्माण हो सकते हैं

डा. कैलास, मुंबई ५ अक्तूबर १९६७

मुझे पता लगा कि आपने मुंबई में कार्यालय में जाकर वहाँ के अपने बंधुओं से संपर्क घनिष्ठ करने का प्रयत्न चालू रखा है। अपने सहयोगियों से मैंने बात की है। आपके पास आज अनेक समाजोपयोगी सत्कार्य हैं, उनमें से समय मिले और उन कार्यों को क्षति न पहुँचते हुए उन्हें बढ़ावा ही मिल सके, तो अपने कार्य से संबंधित अनेकविध कामों में या प्रत्यक्ष अपने संगठन के कार्य में आपका सक्रिय सहयोग प्राप्त हो, ऐसा आपसे परामर्श कर प्रयत्न करने के लिए कहा है। मुझे संगठन का यह कार्य

अधिक महत्त्व का प्रतीत होता है। इससे अनेक प्रेरणास्रोत निर्माण होकर पोषण पा सकते हैं। अतः यह मौलिक कार्य है, ऐसी मेरी धारणा है।

अन्य काम अच्छे हैं ही। योग्य दृष्टि रखकर उन्हें चलाया तो समाज का संगठित जीवन-निर्माण करने में उनका अति महत्त्व का योगदान होगा। अतः व्यक्तिविशेष की रुचि, मन के झुकाव आदि का विचार कर कार्य का निर्णय लाभदायक होता है।

आप निकट से संघकार्य देखें, उसे अंतर्बाह्य देखकर समझ लें और सबके साथ परामर्श कर जो उचित एवं सद्यःफलदायी होगा, उस मार्ग से हम लोगों को सहयोग देकर कृतार्थ करें। यही आपसे प्रार्थना है।

१६ अगस्त के (नागपुर) कार्यक्रम में आप उपस्थित हुए, सबको स्फूर्ति एवं मार्गदर्शन देनेवाला संदेश सुनाया। वह भी अल्पकाल की सूचना मिलने पर, इसलिए मेरे मन में आपके प्रति जो कृतज्ञता की भावना है, उसे शब्दों में व्यक्त करने की शक्ति मुझमें नहीं है। आशा है आपका स्वास्थ्य पूर्णरूपेण अच्छा होगा। वह अच्छा रहे, सुदीर्घकाल आपका मार्गदर्शन एवं सेवा समाज को प्राप्त होती रहे, एतदर्थ परममंगल श्री प्रभुचरणों में नम्रता से प्रार्थना करता हूँ।

१४४. डा. भगवानदास जन्मशताब्दी समारोह समिति

डा. कुमारपाल, नई दिल्ली — ६ अक्तूबर १९६७

जिस महापुरुष की जन्मशताब्दी आप एवं आपके साथी मना रहे हैं, उस महापुरुष के प्रति नितांत आदर के साथ मैं कहता हूँ कि मुझे जन्मशताब्दी समारोह समिति का सदस्य बनाया, यह मैं अपना सम्मान समझता हूँ। आपने बड़ी उदारता से मेरा 'विशेष प्रभाव एवं प्रतिष्ठा है' यह विशेषण मेरे नाम से जोड़ दिया है। किंतु यह मेरा नम्रतापूर्वक कहना है कि किसी का ध्यान आकर्षित हो जाए ऐसा मेरा कोई प्रभाव एवं प्रतिष्ठा नहीं है, तथापि निवेदन में मेरा नाम समाविष्ट करने से मेरा कोई उपयोग होता है, तो मै स्वयं को धन्य समझूँगा। (मूल अंग्रेजी)

१४५. शाकाहार का शास्त्रीय समर्थन

श्री अमृतलाल जिंदल जी, दिल्ली — ६ अक्तूबर १९६७

दिल्ली में 'विश्व शाकाहारी सम्मेलन' होने का समाचार प्राप्त

हुआ। बहुत आनंद हुआ कि सर्वजगत् के मानव हिंस्रता को छोड़कर मनुष्य के लिए शोभनीय आहार-विहार की ओर आकृष्ट हो रहे हैं, जिसका एक छोटा-सा प्रमाण यह आयोजित सम्मेलन प्रतीत हो रहा है।

'प्रोटीन्स' के लिए मांसाहार का सुझाव अनेक लोग देते हैं। जिन पशुओं के शरीर से यह मांस प्राप्त होता है, उनके शरीर में यह 'प्रोटीन' किस आहार से उत्पन्न हुआ? इस प्रश्न का विचार करने पर स्पष्ट होगा कि घास-पत्ते आदि शाकाहार से ही इन प्राणियों ने अपने शरीर में मांस-मज्जा आदि सब धातु निर्माण किए हैं। मानव-शरीर के लिए शाकाहार से सब आवश्यक 'धातु' बनाना और स्वस्थ, सुदृढ़, दीर्घ जीवन का सुखभोग करना– यही स्वाभाविक दिखता है। वैसे भी यदि किसी ने मांस-भक्षण किया तो पाचन-क्रिया में प्रथम उसकी प्रोटीन अवस्था को तोड़कर कार्बोहायड्रेट स्थिति में लाना ही पड़ता है, अन्यथा उनका पाचन हो नहीं सकता। पाचन संस्था पर यह अकारण अधिक भार डालने के समान है। कार्बोहायड्रेट का पाचन सरल है और आगे उसी से शरीर के लिए आवश्यक प्रोटीनयुक्त मांसादि बनाने की शक्ति पाचन-संस्थान में है। इस स्थिति में मांस भक्षण करना पाचन-संस्थान पर व्यर्थ का बोझ डालने के समान है, जो अंततोगत्वा हानिकर सिद्ध होने की संभावना है।

ऐसे विचित्र विचार मन में आते रहते हैं। उनको सुसूत्र कर मैं लिख नहीं सका हूँ। कोई जानकार इस प्रकार विचार कर सप्रमाण कुछ लिखे, यही इच्छा है। देखें, कोई मनुष्य हिंस्र पशुत्व का त्यागकर मानवता के पवित्र जीवन को अपनाकर यह कार्य करने के लिए कब आगे आता है।

१४६. गलत तुलना

श्री प्रदीपकुमार, लखनऊ   ११ अक्तूबर १९६७

आपका कृपापत्र पढ़ा। आपने मुझे संघ के संबंध में जो ज्ञान एवं सूचना दी है, उसके लिए आपका अत्यंत आभारी हूँ। जनसंघ के बारे में जो आपने लिखा है, वह ठीक है या नहीं, यह तो जनसंघ के कार्य में रुचि न होने के कारण मैं उधर ध्यान नहीं देता और इसलिए उसकी बुराइयाँ मुझे ज्ञात नहीं हैं। मैं अपने समाज की ओर देखने की चेष्टा करता हूँ, उसके व्यक्ति किस दल में हैं, इसे सोचने की आवश्यकता अनुभव नहीं करता।

मुस्लिम लीग के National Guard के साथ संघ की तुलना करने का विचार आपके मन में क्यों आया होगा, इसका मैं अनुमान नहीं कर सका। तुलना में संघ की अच्छाई आपने लिखी है, यह ठीक है, किंतु तुलना करने की इच्छा ही क्यों हो? संघ का अपना स्वतंत्र विचार, स्वतंत्र कार्य है। यह किसी की तुलना में श्रेष्ठ उतरने के लिए या किसी के साथ प्रतिक्रिया रूप होकर चलने के लिए तो स्थापन नहीं हुआ। फिर ऐसा विकृत भाव आपके हृदय में कैसे आया होगा, यह मेरी समझ में नहीं आ रहा है।

जो हो आपके समयोचित गंभीर मार्गदर्शन के लिए कृतज्ञतापूर्वक आप को हार्दिक धन्यवाद देता हूँ।

१४७. विचारी पुरुष अधिकाधिक दायित्व उठाएँ

श्री रमेश पटेल जी, अहमदाबाद — १३ अक्तूबर १९६७

आपने मेरे अवगुण मुझे दिखाकर मुझपर बड़ा उपकार किया है। उनसे मैं अपने को मुक्त कर सकूँगा, ऐसा आप भी नहीं समझते और मुझे भी विश्वास नहीं है। एक आशा की किरण है कि मेरा जीवन अब समाप्ति की ढाल पर है और जो दिन बचे हैं, उनमें मैं कुछ अनिष्ट कर सकूँगा, ऐसी मेरी शक्ति नहीं है।

अब आप जैसे विचारी पुरुषों को आगे आकर राष्ट्र के मंगल के लिए अधिकाधिक दायित्व उठाना आवश्यक प्रतीत होता है। आशा है कि राष्ट्र की डाँवाडोल स्थिति में आप निराश नहीं करेंगे, अपितु अपने कर्तृत्व से राष्ट्र का उत्थान कर देश के सर्वश्रेष्ठ धुरीण का स्थान ग्रहण करेंगे। अत्यंत उत्कंठा से उस शुभ अवसर की ओर दृष्टि लगाए बैठा हूँ।

१४८. गोवंश बचेगा तो गोसंवर्धन होगा

पं. विश्वंभर प्रसाद शर्मा, दिल्ली — १४ अक्तूबर १९६७

सम्मेलन सफल हो। गोवंश रहेगा तो गोसंवर्धन की बात चरितार्थ होगी। जिस द्रुत गति से देशभर में गोहत्या हो रही है, उसे देखते हुए कुछ ही वर्षों में गाय का चित्र दिखाकर 'ऐसा प्राणी अपने देश में था, जिसको लोग माता मानते थे', इस प्रकार आगे आनेवाली हिंदू प्रजा को गोमाता का ज्ञान करा देने की स्थिति निर्माण होने की भीषण संभावना प्रतीत होती है। इसका विचारकर सम्मेलन अपने विचार स्थिर करे, यही आप सबसे करबद्ध प्रार्थना है।

वन विभाग की ओर से 'वन्य पशुओं की रक्षा करो' के बड़े-बड़े सचित्र फलक अनेक प्रमुख स्थानों पर लगे हैं। वन्य पशुओं के प्रति यह चिंता और माता के रूप में पालन पोषण देनेवाली गौ और अथक परिश्रम कर आमरणांत मानव के उदर-भरण के लिए खेती आदि में कष्ट करनेवाले बैल, इस गोवंश की सर्वनाशकारी हत्या को नवनवीन उपकरणों के आयात द्वारा प्रोत्साहन, कैसी विडंबना है? आशा है सम्मेलन में उचित नीति-निर्धारण होगा।

१४६. वनवासी बंधु हिंदू समाज के अभिन्न अंग हैं

श्री सफाराम बारदोलाई, बोकारवाट   १४ अक्तूबर १६६७

आपने उत्तम हिंदी में पत्र लिखा है। आपने श्री लोखिमन जी महाराज के मार्गदर्शन में कारबी बंधुओं को श्रीराम भक्ति तथा रामनाम जप सिखाकर बड़ा ही सेवाकार्य किया है। ये कारबी बंधु हिंदू-समाज के जीवंत अंग हैं– यह हम अनुभव कर रहे हैं तथा आपको भी ज्ञात होगा, परंतु दुःख की बात है कि हमारे समाज-शरीर के इस भाग की दीर्घकाल तक न हमने चिंता की, न इसकी ओर ध्यान दिया। यह दोष हमें सुधारना होगा।

आपने इतनी उत्तम हिंदी में लिखा है कि आपसे हिंदी में ही पत्र-व्यवहार किया जाए, ऐसा मुझे लगता है। मेरे लिए भी हिंदी में लिखना सुकर होगा। श्री लोखिमन जी महाराज को सादर प्रणाम तथा आपके अन्य साथियों को प्रेमपूर्वक नमस्कार। (मूल अंग्रेजी)

१५०. उत्कल के नीलकंठ दास जी के प्रति श्रद्धांजलि

श्री अशोक दास जी, एडवोकेट जनरल, कटक   ६ नवंबर १६६७

आपके पूज्य पिताजी पंडित नीलकंठ दास जी की मृत्यु का समाचार पढ़कर अतीव दुःख हुआ।

उनसे मेरा दीर्घकालीन परिचय था। उनके सुबुद्ध मार्गदर्शन एवं स्नेह के प्रकाश में मैं सुस्नात हुआ हूँ, अतः उनकी मृत्यु मेरे स्वयं के लिए अपूरणीय क्षति है। ईश्वर हमें मनोधैर्य, मनःशांति, शक्ति तथा सहनशीलता प्रदान करे, यही प्रार्थना मैं कर सकता हूँ। बहुत समय तक वे ऐसी बीमारी से पीड़ित थे कि जिसके लिए वैद्यशास्त्र में कोई उपाय ही नहीं था। इसीलिए दयालु परमात्मा ने उन्हें इस दुःखपूर्ण संसार से शारीरिक एवं

मानसिक पीड़ा से मुक्त कर अपने चरणों के पास जगह दे दी। यही बात हमें मनःशांति प्रदान कर सकती है। इहलोक से पार गए आपके महान पिताजी पर ईश्वर की कृपा सदैव रहे। (मूल अंग्रेजी)

१५१.महर्षि दयानंद सरस्वती ने पौरुष जगाया

श्री के.ई.रामस्वामी, चेन्नै १५ नवंबर १९६७

आपकी इच्छानुसार, महर्षि दयानंद जी पर लिखना कठिन ही नहीं, मेरे लिए असंभव है। कृपया मुझे क्षमा कीजिये।

यह विषय उदात्त है। महर्षि दयानंद सरस्वती की पावन स्मृति में विनम्रतापूर्वक नतमस्तक होते हुए मैं यही कहूँगा कि उन्होंने वैचारिक प्रबोधन एवं बौद्धिकता से अपने धर्म और राष्ट्र के मूल स्रोत वेदों के प्रति श्रद्धा जगाकर नवयुग निर्माण किया और लोगों में अपना पौरुष एवं दिव्यत्व प्रकट करने हेतु जनजागरण किया। (मूल अंग्रेजी)

१५२. श्रम संस्कार शिविर : सराहनीय उपक्रम

श्री दामोदरराव बेले, वर्धा १३ मार्च १९६८

आपके द्वारा आयोजित होने वाले श्रमशिविर का यह विचार कि सभी अपने राजनैतिक भेद-भाव और शत्रुता भूलकर देश को समृद्धशाली बनाने के काम में एकत्र होकर हाथ बँटाएँ, अत्यंत समयानुकूल है। विभिन्न राजनैतिक दल मानो परस्पर शत्रु हैं, इस प्रकार की कृति और उक्ति है। देश और राष्ट्र का विचार धूमिल तथा दलीय स्वार्थ सर्वतोपरि हो गया– ऐसा दुःखद और चिंताजनक दृश्य है। ऐसी अवस्था में आपने शुद्ध एकात्मता के जागरण के लिए यह प्रयत्न प्रारंभ किया है, इसलिए मुझे अत्यंत सुख हो रहा है।

आपकी सूचना के अनुसार मैं इस शिविर में अवश्य उपस्थित होता, परंतु अप्रैल की २५ या २६ को प्रस्थान कर मुझे केरल जाना है। जून के अंत तक प्रवास चलेगा। यह प्रवास प्रतिवर्षानुसार ही है। इसलिए आपके द्वारा आयोजित श्रम-शिविर में उपस्थित रहकर एकत्र होनेवाले सब बंधुओं के सहवास में कुछ समय रहने का मुझे सौभाग्य नहीं। पूर्णतः निरुपाय हूँ। आप सब मुझे क्षमा करें, यही प्रार्थना। (मूल मराठी)

१५३. आनेवाली आपत्तियों को झेलना भी एक काम है

श्री स्वामी ब्रह्मानंद शास्त्री, लखनऊ 　　　　　　　　　　　　　　१६ मार्च १९६८

१२ मार्च सायंकाल लौट आने पर आपका पत्र पढ़ सका। अति भावपूर्ण पत्र है। आपके पत्र का कोई उत्तर मुझे सुझाई नहीं देता। जनसंघवाले क्या उत्तर दे सकेंगे, यह अनुमान करना मेरे लिए असंभव है।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ में अपने सब प्रवासी कार्यकर्ता ऐसे ही अकेले प्रवास करते आ रहे हैं। केवल मेरे साथ एक बंधु संघकार्य में सहायक के नाते (संरक्षक के नाते नहीं) रहते हैं। कार्य करना अपना काम है, उसमें आनेवाली आपत्तियों को झेलना भी एक काम है। तो भी उस दुर्घटना में हम लोगों ने यदि सतर्कता से काम नहीं किया, ऐसा माना जाए, तो इस अपराध को स्वीकार करना तथा अपनी अयोग्यता को स्वीकार करना भी हमारा ही काम है। और क्या लिखूँ?

तीस वर्ष से ऊपर जिसपर कनिष्ठ भ्राता के रूप में ग्रहण कर प्रेम किया, जिसके कर्तृत्व के ऊपर विश्वास रख निश्चिंतता का अनुभव करता रहा, उसके वियोग के कारण निर्मित घाव पर आपने नमक छिड़कने का काम किया है। परममंगल श्री भगवान की संभवतः यही इच्छा हो।

१५४. तिरुकुरल का हिंदी अनुवाद

श्री मु.गो.वेंकटकृष्णन, प्राध्यापक, करैकुडी 　　　　　　　　　　　२१ मार्च १९६८

परमश्रेष्ठ सद्ग्रंथ तिरुकुरल का श्रद्धेय स्व. वि.वि.एस.अय्यर कृत अंग्रेजी अनुवाद मैंने बहुत वर्ष पूर्व पढा था। तभी से अपने देशवासियों को इस महान ग्रंथ का अध्ययन करने का आह्वान मैं समय-समय पर करता आ रहा हूँ। अब मेरे पास आपने किया हुआ दोहारूप हिंदी अनुवाद कल आया है। कल ही रात्रि में उसका बहुतांश मैंने पढ़ लिया। अति मधुर अनुवाद है। यह अनुवाद है, यह बात यदि किसी ने नहीं कही, तो इसे मूल ग्रंथ माना जा सकेगा, इतना सहज सरल सुंदर यह बना है। हिंदी पढ़ सकनेवाले अपने भाइयों के ऊपर आपने महान उपकार किया है। शैक्षणिक संस्थाओं को बिनामूल्य एक-एक प्रति भेंट करने के निमित्त एक सहस्र प्रतियाँ वितरित करने हेतु श्रद्धेय वि.वि.एस.अय्यर के सुपुत्र डा. कृष्णमूर्ति जी ने प्रस्तुत की है। यह बड़ा अभिनंदनीय उपकार हुआ है। मैंने अभी डा. कृष्णमूर्ति जी के नाम पत्र लिखकर उनको मेरे धन्यवाद अर्पित किए हैं।

आपका हार्दिक अभिनंदन करते हुए अपने देश पर आपके महान उपकार के लिए आपको अंतःकरण से शतशः धन्यवाद देता हूँ।

१५५. वेदपठन की परंपरा अखंड चालू रहे

श्री एकनाथ महाराज, होळी (नांदेड) मराठवाड़ा   १६ अप्रैल १९६८

आपके द्वारा भेजे गए परिपत्रक में 'चतुर्वेदेश्वर' की स्थापना की सूचना है। इसका मतलब क्या है, इसका बोध नहीं हुआ। कई स्थानों पर वेदमंदिर अर्थात् एक काल्पनिक पुरुषरूप पुतला एवं उसके सामने चारों वेदों के ग्रंथाकार पाषाण शिल्प हैं। उस पुतले की पूजा अर्चा होती है एवं वेदपाठ का अभ्यास भी होता है। क्या ऐसा कुछ आपका भी संकल्प है?

वेदपाठ सर्व विकृतिरहित शुद्ध स्वर में कहनेवाले विद्वान आज अल्प संख्या में उपलब्ध हैं। उनकी संख्या बढ़े इसलिए अनेक स्थानों पर छोटे-बड़े प्रयास निजी प्रयत्नों से हो रहे हैं। इसमें आपका पूरक प्रयास अत्यंत उपयुक्त है।

इसके साथ ही वेदों के शुद्ध अर्थ के अभ्यास के लिए व्यवस्था हो सकेगी क्या? उपनिषदों का अध्ययन एवं प्रत्यक्ष साधना की व्यवस्था की जा सकती है क्या? उपनिषदों का अध्ययन एवं प्रत्यक्ष साधना कराना संभव हो सकेगा क्या? ऐसी साधना में से प्रत्यक्षानुभव संपन्न व्यक्ति समाजोन्नति के लिए परिश्रम करनेवाले प्रशिक्षित किए जा सकेंगे क्या? इच्छा है कि ऐसा हो, परंतु उसका आग्रह नहीं है। आपके प्रमुख सहयोगियों का जैसा विचार हो, वैसा ही होगा।

सर्वांगीण विचार करने पर वेद पठन की परंपरा अखंड चालू रहे एवं आगे अधिकाधिक जानकार निर्माण होकर वेद ज्ञान का प्रसार हो, यह नितांत आवश्यक बात है। उसका प्रारंभ आप सब श्रेष्ठियों ने किया है, यह जानकर अत्यंत आनंद हो रहा है। सत्कार्य को धन का अभाव नहीं रहता। जहाँ भगवान वहाँ लक्ष्मी उसके चरणों के समीप विराजमान रहती है। श्री भगवत्कृपा से आपके संकल्प को अपेक्षा से अधिक धन उपलब्ध हो एवं आपकी इच्छा शीघ्र साकार हो, एतदर्थ परममंगल श्री 'वेदवेद्य वेदवित् यस्य निश्वसनं वेदाः' श्री परमेश्वर के चरणों में प्रार्थना करता हूँ।

(मूल मराठी)

१५६. गोरक्षा अभियान राजनीति से अलिप्त रहे

श्री रमाप्रसाद मुखर्जी, कोलकाता ११ सितंबर १९६८

श्री जगद्गुरु जी ब्यावर (राजस्थान) में है। उसी समय प्रादेशिक महाभियान परिषद् तथा सर्वोच्च समिति की बैठक आयोजित की गई है। मुझे भी उसमें आमंत्रित किया गया है, लेकिन पूर्वनिर्धारित कार्यक्रमों के कारण मैं जा नही सकूँगा, इसलिए खेद है।

जगद्गुरु जी, श्री स्वामी करपात्री जी तथा अन्य लोग शीघ्र ही सत्याग्रह आंदोलन करना चाहते हैं। वाराणसी में स्वामी करपात्री जी द्वारा दिए गए भाषण के वृत्तांत से यह ज्ञात हुआ है। आगामी गोपाष्टमी (२८ अक्तूबर ६८) से वे सत्याग्रह आंदोलन करने के इच्छुक हैं। उन्होंने यह भी संकेत दिया है कि उत्तरप्रदेश विधानसभा के आगामी मध्यावधि चुनाव में रामराज्य परिषद् सभी सीटों पर अपने उम्मीदवार खड़े करेगी। यह तो स्पष्ट रूप से पवित्र हेतु को राजनैतिक रंग देना है। मैं ब्यावर की बैठक की कार्यवाही के समाचार की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। यदि ऐसा दिखाई दिया कि राजनैतिक पक्ष द्वारा (फिर वह कोई भी पक्ष हो) यह आंदोलन पक्ष के हित में चलाया जा रहा है या चलाया जाएगा, तो इस महाभियान समिति में बने रहना या नहीं, इस बात पर मुझे गंभीरतापूर्वक विचार करना होगा।

(मूल अंग्रेजी)

१५७. दानवीर सोहनलाल दुग्गड को श्रद्धांजलि

श्री रतनलाल जी दुग्गड, कोलकाता १५ अक्तूबर १९६८

उडीसा में प्रवास कर आज सायंकाल मैं नागपुर लौट आया। प्रवास में ही आपके पूज्य पिताश्री के स्वर्गवास का शोकपूर्ण समाचार मिला था। एक अतिश्रेष्ठ, उदार हृदय, दानी व्यक्ति देश से उठ गया। अपने जीवन में किसी को रिक्त हस्त उन्होंने जाने नहीं दिया था। समाज के, धर्म के प्रत्येक कार्य में खुले हाथों से सहायता करनेवालों में उनका स्थान अनन्यासाधारण था। थोड़ा-सा दान करने पर भी बहुत दान करने का भाव धारण करनेवाले, नाम के लिए या अन्य स्वार्थ के लिए दान देने का आभास खड़े करनेवाले बहुत हैं, किंतु बहुत देने पर भी मन में संकोच का अनुभव करनेवाले कि कुछ भी दिया नहीं, असामान्य कोटि के होते हैं। ऐसा असामान्य दातृत्व स्वर्गीय सेठ सोहनलालजी का था। उनके तिरोधान से हुई

क्षति कैसे पूर्ण हो सकेगी, यह समस्या ही है।

हम सब लोगों पर उनका स्नेह अकृत्रिम था। अतः हम लोगों को उनके वियोग से अत्यधिक दुःख हो रहा है। आपका तो पितृकृपा का स्नेहमय छत्र ही चला गया है। इस अपार शोक में सांत्वना प्राप्त हो, मन की शांति हो, इसमें भगवत्कृपा ही समर्थ है। अतः मैं आप सब परिवार तथा उनके असंख्य आत्मीयजनों के लिए तथा अपने स्वतः के लिए परमकृपामय श्री भगवान के पास प्रार्थना करता हूँ कि सबको मनःशांति दें, इस कठिन दुःख को सहने की शक्ति दें, दिवंगत जीव को सद्गति प्रदान करें तथा उनके विशाल अंतःकरण के अकुंठित दातृत्व को आगे चलाने की प्रेरणा एवं अनुकूलता देकर आपको उनका नाम चिरंजीव बनाने की शक्ति दें।

१५८. परिवार-नियोजन राष्ट्रघातक

श्री छगनलाल कश्यप, अजमेर   १६ अक्तूबर १९६८

श्रीमज्जगद्गुरु शंकराचार्य महाराज, गोवर्धन पीठ, जगन्नाथ पुरी जैसे परमोच्चकोटि के महापुरुषों के विचार आपने प्रसिद्ध किए हैं। अब अन्य सामान्य लोगों से कुछ अधिक पूछताछ करने की विशेष आवश्यकता नहीं है।

परिवार नियोजन के नाम पर केवल अपने समाज की ही हानि नहीं, तो अपने धर्म के श्रेष्ठ ग्रंथों में वर्णित महापुरुषों तथा देवियों की प्रतिष्ठा भी नष्ट करने का प्रयत्न हो रहा है। परिवार नियोजन के प्रचार हेतु भगवान श्री रामचंद्र जी, माता कुंती आदि के नामों का उपयोग करना इसका प्रमाण है। संपूर्ण समाज को इसके विरोध में सचेत करना आवश्यक ही है।

ऐसा अनुमान है कि विदेशियों की यह चाल है। विदेशी प्रभाव में सुख माननेवाले अपने लोग भी उन्हें सहायता दे रहे हैं। हेतु यह है कि हिंदुस्थान से हिंदू नष्ट हों। हिंदू नष्ट होने पर यहाँ की प्रबल राष्ट्रशक्ति नष्ट होगी और विदेशियों को इस भूमि का स्वामित्व प्राप्त करना सुगम होगा। उनकी यह दृष्टि हो सकती है। उनकी इस कुटिल नीतिपूर्ण चालों का शिकार बनना आत्मघातक होगा, राष्ट्र ध्वस्त करना होगा, घोर अपराध एवं पाप होगा। आपके प्रयास में सब सत्प्रवृत्त देशवासी सहायक हों, एतदर्थ श्री भगवच्चरणों में प्रार्थना करता हूँ।

१५९. सरदार वल्लभभाई पटेल को आदरांजलि

श्री रघुवीरलाल देव, अहमदाबाद २२ अक्तूबर १९६८

अपनी कार्यव्यस्तता के कारण सरदार की महानता के विषय में मैं ऐसा कुछ लिख सकूँ, जो उनकी श्रेष्ठता को न्याय देगा, यद्यपि असंभव नहीं, किंतु कठिन जरूर है।

प्रांतवाद, भाषावाद, जाति-वर्ग विद्वेष, संप्रदायविरोध, तथाकथित राजनैतिक एवं आर्थिक वाद और अन्य अनेक विच्छेदनकारी प्रवृत्तियों से देश छिन्न-विच्छिन्न हो रहा है। देश के जिम्मेदार नेता भी देश के टुकड़े करने की ओर अग्रसर हैं। 'राष्ट्रीय एकात्मता' के प्रयत्न भी दुराग्रही तत्त्वों की खुशामद करने के निम्नस्तरीय कार्य को तथा पृथकतावादी एवं धमकाने की प्रवृत्तियों को ही पुरस्कृत कर रहे हैं। ऐसे समय राष्ट्र और समाज के हित का हृदयपूर्वक विचार करनेवाले लोग, भविष्यवेत्ता की दूरदृष्टि रखनेवाले, कर्तव्यकठोर व्यावहारिक बुद्धि से चलनेवाले लौहपुरुष सरदार पटेल का स्मरण किए बिना नहीं रह सकते। जहाँ जब प्रहार करने की आवश्यकता थी, वहाँ उन्होंने धैर्य से प्रहार किया। उनका अंतःकरण उदार एवं सहानुभूतिपूर्ण होने के कारण भिन्न मत व मार्गों को समझने की प्रवृत्ति उनमें थी। इसीलिए विभिन्न प्रवृत्तियों का समन्वय करते हुए वे उन्हें राष्ट्रोत्थान के लिए एकता, सामर्थ्य तथा सफलता के मार्ग पर ले गए।

आपके साथ मैं भी अद्वितीय देशभक्त सरदार वल्लभभाई पटेल की स्मृति में विनम्र श्रद्धांजलि अर्पण करता हूँ। (मूल अंग्रेजी)

१६०. स्नेह-सौहार्द का वायुमंडल बना रहे

श्री तुलसीदास जी परमार ३ जनवरी १९६९

आपने बहुत आवेश में आकर पत्र लिखा है। यह आवेश कुछ स्वाभाविक भी है। आपने आंदोलन आदि कार्यक्रम करने का संकल्प किया है, उससे हरिजन तथा शेष हिंदू समाज में एकता का भाव निर्माण होना तो दूर, भेद की प्रवृत्ति बढ़ने की संभावना है। उससे निरंतर पृथकता का व्यवहार चलते रहने की प्रवृत्ति बढ़ने की संभावना है, साथ ही आपस में ईर्ष्या द्वेषादि अनिष्ट भाव उत्पन्न होकर समाज की शांति भग्न होने की संभावना भी दिखती है। यह आप स्वयं समझते होंगे।

हम लोग प्रयत्न कर रहे हैं कि पृथकता का भाव तथा व्यवहार दूर हो एवं सच्चे स्नेह-सौहार्द का वायुमंडल बना रहे। हम लोगों को यह आशा है कि धार्मिक तथा सामाजिक व्यवहार में जो दूरी आज दिखती है, वह बहुत शीघ्र हट जाएगी। आचार्यों का भी समर्थन तथा शुभाशीष इसमें प्राप्त होने का विश्वास है।

परंतु यदि आप अपने पत्र में लिखे अनुसार पग उठाएँगे तो हम लोगों के प्रयत्नों में अकारण ही बाधा आ पड़ेगी। यद्यपि हमारे प्रयत्नों में कोई कमी नहीं आने दी जाएगी, तथापि उनकी सफलता में रुकावटें आकर बहुत विलंब होने की संभावना दिखती है।

कभी आपसे तथा अपने समाज की चिंता करनेवाले आप जैसे महानुभावों से साक्षात् वार्तालाप करने का शुभावसर मिले और वह भी शीघ्र मिले, यह इच्छा है। पत्रों से न तो आप अपने विचार या भाव स्पष्ट प्रकट कर सकते हैं, न मैं अपनी चिंता व्यक्त कर सकता हूँ।

आपके सब सहयोगियों को सस्नेह नमस्कार।

१६१. हिस्लाप कॉलेज के प्रति शुभ कामनाएँ

डा. भगत, प्रिंसिपल, हिस्लाप कॉलेज, नागपुर ४ जनवरी १६६६

हिस्लाप कॉलेज की ज्युबिली का निमंत्रण देने आप स्वयं कष्ट उठा कर आए, यह आपकी सुजनता का परिचायक है, परंतु मुझे उससे कुछ अटपटा लगा। आप हम लोगों के लिए आदरणीय प्राचार्य हैं। आपके स्थान पर कोई छात्र भी आता, तो भी ठीक होता। मैं तो हिस्लाप कॉलेज का पुराना छात्र हूँ। सन् १६२२ से १६२४- दो वर्ष इंटरमिडिएट में पढ़कर आगे की शिक्षा के लिए मैं बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में चला गया। इन दो वर्षों की अनेक सुखद स्मृतियाँ मेरे अंतःपटल पर अंकित हैं। हमारे उस समय के प्राचार्य रेव्ह.टी.डब्ल्यू.गार्डिनर महोदय तथा अन्य सभी प्राध्यापकों का स्नेहपूर्ण व्यवहार, उनकी उत्तम अध्ययनशीलता, नम्रता, निरहंकार आदि का प्रभाव मुझ पर पड़ा है। प्राध्यापक-छात्र-संबंध कितने मधुर स्नेहपूर्ण रहते थे, इसकी आज के दूषित वायुमंडल में कल्पना करना भी कठिन है। हम सब मिलकर एक ही परिवार के रूप में रहते थे। प्राध्यापकगण छात्रों के हित के लिए सदैव यत्नशील रहते थे, तो छात्र उनपर पूर्ण विश्वास रखकर उनके प्रति नम्रता से व्यवहार करते थे। संभवतः इसी कारण कॉलेज

में उत्तम संस्कार पाकर छात्र आगे चलकर भिन्न-क्षेत्र में सफल होकर नाम कमा सके।

मेरी भावनाएँ हिस्लाप कॉलेज के संबंध में अत्यंत आत्मीयता की हैं। सब भाव प्रकट करना तथा मेरे उन दिनों के विविध अनुभव लेखबद्ध करना समयाभाव के कारण इस समय मैं कर नहीं सकता, परंतु आगे कभी अवसर मिला तो करने का प्रयास करूँगा।

ज्युबिली के भाग्यपूर्ण अवसर पर उपस्थित रहने का भाग्य मुझे प्राप्त नहीं है, इसका मुझे बड़ा दुःख है। मैं नित्य का प्रवासी क्वचित् ही नागपुर में रह पाता हूँ। आज ही प्रवास हेतु जाना है। ६.१.१९६६ को होने जा रहे समारोह का कल्पनाचित्र मनश्चक्षुओं के सामने लाकर मुझे अपना समाधान करना पड़ रहा है। मेरी अनुपस्थिति के लिए आप तथा आपके सहयोगी प्राध्यापकगण एवं सब छात्रबंधु मुझे क्षमा करें। समारोह उत्तम सफलता से संपन्न हो– यह श्री प्रभुचरणों में प्रार्थना करता हूँ। सधन्यवाद।

१६२. धर्मजीवन पुनर्जागरण का प्रयास सफल होगा

श्री देवमणि याज्ञिक, ४ मार्च १९६६

वेदमूर्ति श्री रामचंद्रशास्त्री रटाटे स्मृति-ग्रंथ अब पूर्णरूपेण प्रकाशित होने का समय निकट आ रहा है। ग्रंथ सर्वांग पूर्ण होगा, इसमें संदेह नहीं है। श्रेष्ठ विद्वद्वर इसकी निर्मिति में जुटे होने से यह ग्रंथ वेदों के संबंध में सांगोपांग ज्ञान देनवाला, वेदों के प्रति उत्कट श्रद्धा जगानेवाला एवं जिन महापुरुषों ने ऐहिक मोह त्यागकर वेदाध्ययन की परंपरा अखंडित रखी है, उनके प्रति कृतज्ञतापूर्वक असीम आदर जागृत करनेवाला सिद्ध होगा, यह स्पष्ट है। विस्मृतप्राय धर्मजीवन तथा राष्ट्रभाव का पुनर्जागरण करनेवाला आपका यह सत्प्रयास सफल होगा ही। जिसका निश्वसित वेद है, उनका कृपानुग्रह इस ग्रंथ को संपूर्ण समाज में अत्यंत आदर का स्थान प्राप्त करा देगा, यह मेरा विश्वास है। विश्वलीलाचालक जगन्नियंता के चरणकमलों में मेरी यही प्रार्थना है।

१६३. स्तंभलेखक से प्रत्याशा

श्री दुर्गादास, दिल्ली ११ मार्च १९६६

आप का भेजा 'पोलिटिकल डायरी' नामक स्तंभलेख मैंने ध्यान से

पढ़ा। विषय महत्त्व का है। इतना ही नहीं, उसमें गंभीर प्रश्न भी अंतर्निहित हैं, जिसका सही समाधान अपेक्षित है। मैं आशा करता हूँ कि देशहित में प्रतिबद्ध, सविचारी लोगों को आपका यह स्तंभ प्रबुद्ध करेगा और उन सबको एकत्र आकर परिस्थिति के सुधार हेतु योजना बनाने की प्रेरणा देगा। (मूल अंग्रेजी)

१६४. स्वातंत्र्यवीर सावरकर : एक देदीप्यमान जीवन

श्री श्री.पु.गोखले, पुणे　　　　　　　　　　　　१६ मार्च १६६६

मुंबई जाते समय रेलगाड़ी में वह ग्रंथ पूर्ण पढ़ा। पुस्तक पढ़ते समय स्वातंत्र्यवीर का निकट से घरेलू तथा हास्य-विनोद के वातावरण में दर्शन तथा साहचर्य प्राप्त हो रहा है, ऐसा अनुभव हो रहा था। जिन्हें स्वातंत्र्यवीर सावरकर को निकट से देखने का अवसर प्राप्त नहीं हुआ, अनौपचारिक मिलने का या उनके सहजोद्‌गार सुनने का सौभाग्य नहीं मिला, उन्हें यह पुस्तक पढ़ते समय उनके सान्निध्य तथा आत्मीयता का अनुभव होगा।

उनके अनेक भाषण सुनने तथा कई अवसरों पर उनके साथ निकट से वार्तालाप का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ है। उनके भाषण का ओज, तेजस्विता, तर्कपूर्ण युक्तिवाद, प्रखर राष्ट्रभक्ति में से निर्माण हुई लगन तथा चारों ओर के प्रायः निराशामय वातावरण से उत्पन्न होने वाला त्वेष, इनसे मैं परिचित हूँ। इसका कुछ अंश अपनी पुस्तक में उतारकर आपने मराठी-भाषियों पर उपकार किया है।

आपकी पुस्तक पढ़कर अनेक स्मृतियाँ जागृत हुईं। आज वे दुर्भाग्य से हमारे बीच विद्यमान नहीं हैं, तथापि उस देदीप्यमान जीवन का अत्यल्पांश भी क्यों न हो, मुझमें अभिव्यक्त हो, इसके लिए प्रयत्न करने की प्रेरणा मिली। यह अल्पांश मिला तो भी अजेय सामर्थ्ययुक्त, ऐश्वर्यसंपन्न, सच्चे अर्थ से स्वतंत्र हिंदू राष्ट्र अल्पावधि में खड़ा कर सकेंगे, ऐसी मेरी श्रद्धा है।

आपने यह पुस्तक भेजकर मुझपर महद् उपकार किया है। उसके लिए कृतज्ञता से मैं आपका शतशः आभार मानता हूँ।

(मूल मराठी)

१६५. आपके संबंध में गर्व अनुभव कर रहा हूँ

श्री मोहन जी रानडे, गोवा मुक्तिसंग्राम के प्रमुख सेनानी १६ मार्च १९६९

प्रदीर्घ कारावास पूर्ण कर आपकी मुक्ति का अति-संतोषजनक समाचार और आपके मुंबई पहुँचने की जानकारी नागपुर से प्राप्त तार के द्वारा मिली। इस कालावधि में मेरा प्रवास-क्रम चल रहा था।

यह स्वाभाविक ही है कि मातृभूमि में लौटने के पश्चात् आपके सर्वत्र सत्कार समारोह आयोजित होंगे। इस प्रकार के स्वागत समारोह में आपके द्वारा भाषणों में अभिव्यक्त विचार, वृत्त-प्रतिनिधियों के साथ हुआ वार्तालाप आदि मैंने पढ़े हैं। उसमें आपने संयम एवं विचारपूर्ण विवेक प्रकट किया है, जो आपके अभिजात सौजन्य और विनम्र वृत्ति को अभिव्यक्त करता है। इन समाचारों को पढ़ने से मुझे आत्यंतिक संतोष एवं समाधान अनुभव हो रहा है। कट्टर देशभक्त से जो स्वाभाविक अपेक्षा रहती है, उसकी पूर्ति आपके द्वारा हो रही है, इस कारण मैं आपके संबंध में गर्व का अनुभव कर रहा हूँ।

परमात्मा की कृपा से जब आपसे मिलना संभव होगा, तब तक आपके लिए भारत-भ्रमण पूर्ण कर परिस्थिति का संपूर्ण मूल्यांकन करना संभव होगा। अपने राष्ट्र के संबंध में क्या किया जाए और कैसे किया जाए? इस बारे में आपके प्रकट विचार श्रवण करना मेरे लिए संभव होगा। इससे मुझे प्रचुर मार्गदर्शन प्राप्त होगा। अतः उत्कंठा से आपसे मिलने के सुअवसर की बाट जोह रहा हूँ।

आपका अभिनंदन करता हुआ तथा आपकी मुक्ति के लिए लगन से नित्य प्रयत्नशील अनगिनत लोगों के प्रति और परमात्मा के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करता हुआ श्री प्रभुचरणकमलों में मैं विनम्र प्रार्थना करता हूँ कि राष्ट्र-कार्यार्थ आपको प्रदीर्घ आयुरारोग्य प्राप्त हो। (मूल मराठी)

१६६. गोवा-मुक्ति आंदोलन के सेनानी का सत्कार

वीर मोहन रानडे सत्कार समिति, नागपुर २० मार्च १९६९

मातृभूमि की मुक्ति के लिए अनेकों को बलिदान करना पड़ता है, अनेक प्रकार के कष्ट सहने पड़ते हैं। उसमें कुछ अपरिहार्य और अनिवार्य रहता है, परंतु कई बार शासन की ढिलाई, विलंब, स्वकर्तव्यबोध का अभाव

या उपेक्षा के कारण अनेकों को कष्ट सहना पड़ता है। ऐसे कष्ट भोगनेवालों में एक श्री मोहन रानडे हैं। सारे दलगत भेद भूलकर सब देशवासियों ने उनका उत्साह से स्वागत करना शोभनीय है। नागपुर में ऐसा स्वागत-समारोह हो रहा है यह स्वागत समिति को भूषणीय है। मैं सबका अभिनंदन करता हूँ।

बहुत पहले से मेरे प्रवास का कार्यक्रम निश्चत हो चुका है और उसके लिए मुझे अभी प्रस्थान करना है। इसलिए इस देशभक्त का उचित सम्मान करने से मुझे वंचित रहना पड़ रहा है। परंतु उपाय नहीं है। मुझे विश्वास है कि वीर मोहन रानडे का उचित गौरवपूर्ण सम्मान इस इतिहासप्रसिद्ध नगरी में होगा।

इस आनंद में भी वीर मोहन रानडे के सहयोगी देशभक्त श्री मस्कार्नहास अब भी पुर्तगालियों के पाशवी कारागृह में सड़ रहे हैं। इसका तीव्रता से स्मरण रखकर उनकी शीघ्र मुक्तता के लिए शासन को कार्यप्रवृत्त करने का दृढ़ निश्चय प्रकट हो, यह आवश्यक है। विश्वास है कि यदि सब देशवासी एक स्वर से माँग करें तो पर्याप्त दबाव पड़कर शासन को उसके विस्मृत कर्तव्य का बोध हो सकेगा। भगवत्कृपा से वह देशभक्त शीघ्र मातृभूमि को लौट सके।

पुनः सत्कार समिति के सदस्यों, कार्यकर्ताओं के रूप में संपूर्ण नागपुर निवासी बंधु-भगिनियों का इस शुभसंकल्प के लिए तथा होनेवाले भव्य सत्कार समारोह के औचित्यपूर्ण आयोजन के लिए अभिनंदनपूर्वक धन्यवाद देता हूँ तथा स्वयं की अनुपस्थिति के लिए सबसे क्षमा माँगता हूँ।

(मूल मराठी)

१६७. बालकों-युवकों को अपने धर्म की महत्ता समझाएँ

श्री राजाभाऊ द. कुलकर्णी, कोल्हापुर — १४ जुलाई १६६६

मान्यवर श्री गजाननराव दंडगे द्वारा लिखित 'भारतीय धर्म विचारांची बैठक' नामक छोटी-सी पुस्तिका आज प्राप्त हुई और तत्काल पढ़ भी ली। हिंदूधर्म की जानकारी तथा श्रेष्ठ असाधारणता सरल शब्दों में सप्रमाण देने में उत्तम रीति से वे सफल हुए हैं। सद्यःकालीन वातावरण में 'विज्ञान' के झूठे और अयथार्थ अभिमान से अभिभूत हुआ आजकल का हिंदू युवक स्वधर्म की उपेक्षा तथा कभी-कभी विदेशी विचारों से भ्रमितचित्त होने से

निंदा करता हुआ दिखाई पड़ता है। फलस्वरूप शील-चारित्र्य-नाश एवं कर्तव्यनिष्ठा का ह्रास हुआ है तथा उद्दंडता-उच्छृंखलता के कारण इधर-उधर भटकनेवाली पतवारहीन नौका के समान हिंदू युवक जीवन में ध्येयशून्य-सा भटकता हुआ दिखाई देता है। इस कारण जीवन में सुख-शांति नष्ट होकर अत्यंत दयनीय अवस्था में पड़ा हुआ दिखता है। ऐसे अपने बालकों-युवकों को संक्षेप में, सरल भाषा में, अपने धर्म की तर्कसंगत महत्ता समझा कर, उसके योग्य श्रेष्ठ पवित्र जीवन जीने की तथा उस जीवन की निःस्वार्थ कर्तव्यनिष्ठा में से स्वसमाज, स्वराष्ट्र को पवित्र गुणसंपन्न, समृद्धिसंपन्न ऐश्वर्ययुक्त बनाने की शुद्ध आकांक्षा जागृत करनेवाली विचारप्रवर्त्तक पुस्तकें तथा अन्य प्रकार का प्रचार अत्यंत आवश्यक है।

यह आवश्यकता पूर्ण करने का प्रयास प्रत्येक को करना चाहिए। इस दिशा में यह अल्प-सा, परंतु बहुगुणी प्रयत्न अत्यंत उपयोगी और अभिनंदनीय है। (मूल मराठी)

१६८. हिंदी के प्रति सद्भाव जगाना आवश्यक

१४ जुलाई १९६९

श्री गोपालप्रसाद व्यास,
संपादक, गाँधी हिंदी दर्शन, दिल्ली

पूज्य महात्मा जी के राष्ट्र जीवन के विविध पहलुओं पर विचार अत्यंत मौलिक हैं। विविधता से पूर्ण अपने देश में सब व्यक्तियों के बीच व्यवहार-सौकर्य की दृष्टि से सामान्य भाषा का प्रयोग करना अनिवार्य होने से किस भाषा को यह स्थान प्राप्त हो, इस संबंध में अभी तक मतभेद हैं। कभी-कभी वे इतने तीव्र हो जाते हैं कि देश की एकता भी संकट में पड़ने का भय उत्पन्न होता है। इस गंभीर स्थिति में महात्मा जी के विचार को संपूर्ण देशवासियों तक पहुँचाकर उन्होंने देश की सामान्य भाषा के रूप में प्रचारित की हुई हिंदी के प्रति सद्भाव एवं अनुकूलता जगाना अत्यधिक आवश्यक है।

'गाँधी हिंदी दर्शन' के नाम से यह आवश्यक कार्य आपने दिल्ली प्रादेशिक हिंदी साहित्य सम्मेलन के द्वारा उठाया है, यह अति अभिनंदनीय है। आपके प्रयास को पूर्ण यश प्राप्त हो, इस हेतु परममंगल श्री परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ।

१६९. परलोक व पुनर्जन्म अनुभूत सत्य

श्री राधेश्याम जी बंका, गोरखपुर १८ जुलाई १९६९

'कल्याण' का 'परलोक और पुनर्जन्म' विशेषांक मैं पूरा पढ़ नहीं सका। कुछ अंश पढ़े हैं। बहुत श्रेष्ठ विद्वानों के विचारपरिपूर्ण लेख होने से अंक की श्रेष्ठता बढ़ी है। अपने धर्म के क्रांतदर्शी ऋषियों ने अपनी दिव्य दृष्टि से देखकर यह सत्य जगत् के सम्मुख रखा है। उनके लिए यह केवल आनुमानिक सिद्धांत नहीं था, प्रत्युत प्रत्यक्ष देखा, अनुभव किया सत्य था। हम लोग जिनकी दृष्टि स्थूल तथा सीमित है, यह अनुमान से सिद्ध करने योग्य तो है ही, परंतु आप्तवाक्य से प्रमाणित होने के कारण निःशंकता से ग्रहण करने तथा विश्वास करने योग्य है।

विद्वान लेखकों द्वारा बहुविध प्रमाण उपस्थित कर युक्तियुक्तता से इस सत्य को प्रमाणित किया हुआ इस अंक में पढ़ने को मिलता है। जो लोग पश्चिमी विचार मात्र सत्य, अपने पूर्वजों का असत्य, ऐसे भ्रमजाल में उलझे हुए हैं, वे भी इसका पूर्वाग्रह दोषरहित बुद्धि से अध्ययन करेंगे तो भ्रममुक्त होकर अपने पूर्वजों के द्वारा प्रकट किया हुआ सत्य अनुभव कर सकेंगे। उनकी आस्तिक्य बुद्धि जाग उठेगी। स्वधर्म, स्वसंस्कृति, अतएव स्वराष्ट्र की विशुद्ध धारणा हृदय में उदित होगी और पूर्ण स्वाभिमान का स्थान प्राप्त करने हेतु सन्मार्ग पर चलकर पूर्ण शक्ति से प्रयत्नशील हो सकेंगे।

इस अत्यावश्यक मनोभाव को जागृत करने की क्षमता प्रकट करनेवाला यह विशेषांक अपनी विशेषांकों की कीर्ति वृद्धि करनेवाला ही बना है। अल्पाध्ययन के आधार पर जो विचार मन में उठे हैं, आपकी सेवा में प्रस्तुत किए हैं। विलंब हो गया है, जिसके लिए क्षमायाचना करता हूँ। श्रद्धेय पूज्य भाईजी एवं कल्याण परिवार के सब महानुभावों को सादर अभिवादन।

१७०. मैं आपमें से ही एक हूँ

डा. बी.एस.आचार्य, अध्यक्ष, उडुपि नगरपालिका, २ सितंबर १९६९

विश्व हिंदू परिषद् के कार्यवाह को आपको पत्र लिखने की मैंने विनती की थी। उन्होंने इस विषय में मुझसे बात की थी। मैंने उन्हें सूचित किया था कि उडुपि में विश्व हिंदू परिषद् का प्रांतीय अधिवेशन हो रहा है, अतः परिषद् अध्यक्ष, उद्‌यपुर के राणा आदरणीय भगवतसिंह जी का

नागरिक अभिनंदन किया जाना उचित होगा। उनके अतिरिक्त किसी व्यक्ति का नागरिक सत्कार होना ठीक नहीं।

मैं तो आपमें से ही एक हूँ। इसलिए अपने ही सहयोगियों और मित्रों से स्वयं का स्वागत करा लेना हास्यास्पद होगा। मेरा अभिप्राय आप समझेंगे, यह आशा है।

श्री यादवराव जोशी ने आपकी ओर से मुझसे बातचीत की है। मैंने उन्हें अपने दृष्टिकोण से अवगत कराया, किंतु निर्णय लेने का भार उन्हीं पर सौंप दिया है। मुझे लगता है कि आप उनसे शीघ्र ही मिलेंगे और उचित निर्णय लेंगे। आप से विचार-विमर्श करने के बाद वे जो भी निर्णय लेंगे, वह मैं मानूँगा।

यह सम्मान मुझे देने के आपके प्रस्ताव के लिए आपका और उडुपी के अन्य नगरसेवकों का मैं आभारी हूँ। मेरे इस पत्र पर आप योग्य विचार करें, यह प्रार्थना है। (मूल अंग्रेजी)

१७१. 'संरक्षक' बनने को स्वीकृति

३ सितंबर १९६९

श्री बक्षी जगदेवसिंह जी,
अध्यक्ष, अंतर्राष्ट्रीय गुरुनानक प्रतिष्ठान समिति, दिल्ली

मुझे Patron बनाने के आपके विचार के लिए मैं आप सबका बहुत आभारी हूँ। किंतु मेरे व्यस्त जीवन में मैं आपके आयोजित कार्यक्रमों में उपस्थित हो सकूँगा, इसका मुझे विश्वास नहीं है। अनुपस्थित Patron के रूप में मुझे ग्रहण करना आप उचित समझते हों, तो ऐसे पुनीत कार्य से मेरा नाम संलग्न रखने में मुझे बहुत प्रसन्नता होगी। परंतु इसका निश्चय आपको ही करना है। मैं कल ४.९.६९ से १६.१०.६९ तक लगातार प्रवास में रहूँगा। आपके सब सहयोगी महानुभावों को सश्रद्ध नमस्कार।

१७२. आपके प्रवास पूर्णतः सफल हों

प्रा. श्री एम.एन.प्रधान, भुवनेश्वर (उत्कल) ३ सितंबर १९६९

अक्तूबर १९६९ में जिस 'गौरव ग्रंथ' के प्रकाशन का आयोजन आपने किया है, उस संबंध में आपके द्वारा भेजे गए पत्र की स्वीकृति देने में विलंब हुआ, इसलिए क्षमाप्रार्थी हूँ।

आपके प्रयास पूर्णतः सफल हों, इस हेतु सर्वशक्तिमान परमात्मा के श्री चरणों में केवल प्रार्थना ही कर सकता हूँ। मैं आशा करता हूँ कि छात्रों में शुद्ध शील-चारित्र्य के विकास में मार्गदर्शक, सद्गुणों की वृद्धि में सहायक, विविध अंगोपांगोंसहित ज्ञानार्जन एवं ज्ञान-समृद्धि में उपयोगी सिद्ध होनेवाले, अपनी श्रेष्ट जन्मभूमि और धर्म के प्रति स्नेह एवं भक्ति जगानेवाले, अपनी जीवन-पद्धति और राष्ट्रीय एकता छात्रों में हृदयंगम करानेवाले, श्रेष्ठ स्वदेशभक्त शिक्षाविदों के द्वारा लिखे गए लेख-प्रबंध आपको उपलब्ध होंगे।

अपने समाज एवं हिंदू राष्ट्र के प्रति निरपेक्ष सेवा में अग्रसर होकर उत्स्फूर्त कार्य करने की प्रेरणा उनमें जगे। (मूल अंग्रेजी)

१७३. जीवन से प्रेरणा ले

श्री एस.आर.वेंकटरामन, मंत्री चेन्नै — १७ सितंबर १९६९

आपका निमंत्रण मिला। मेरे प्रवास का कार्यक्रम १८.९.६९ से १६.१०.६९ तक निश्चित किया गया है। अतः मैं उस महान गवेषक, विद्वान और देशभक्त की जन्मशताब्दी-समारोह में व्यक्तिशः उपस्थित होकर उनके प्रति अपनी आदरांजलि अर्पण नहीं कर सकता, यह मेरा दुर्भाग्य है। क्षमाप्रार्थी हूँ।

उनकी स्मृति वर्तमान तथा आगामी पीढ़ियों को अपनी राष्ट्रीय संस्कृति की महान शिक्षा आत्मसात करने तथा अपने समाज की सर्वांगीण उन्नति की प्रेरणा दे।

इस समय हम अस्वाभाविक तनाव का अनुभव कर रहे हैं और इन महानुभावों के जीवन से प्रेरणा लेकर इन तनावों से उबरने में सफल होंगे, ऐसी आशा है। (मूल अंग्रेजी)

१७४. स्व. सरदार पटेल को श्रद्धांजलि

श्री रघुवीरलाल देव जी, अहमदाबाद — २५ अक्तूबर १९६९

स्व. सरदार वल्लभाई पटेल जी की जयंती का समारोह मनाने का तथा तत्संबंध में एक अभिनंदन-ग्रंथ प्रसिद्ध करने का आपका संकल्प पढ़कर बहुत आनंद हुआ। जिनके गुणों का स्मरण कर अपना जीवन योग्य

बनाना चाहिए, उन महान व्यक्तियों में स्व. सरदार पटेल जी का स्थान बहुत ऊँचा है, परंतु लोग उन्हें मानो भूलने लगे हैं। यह घातक विस्मृति आपके इस आयोजित कार्यक्रम से दूर हो सके, यही इच्छा है।

आज जब देश में सब प्रकार की हिंसा व अराजकता फैलानेवाले तत्त्व बल पकड़ रहे हैं, फैल रहे हैं और सब बड़े नेता, सत्ता का उपयोग करनेवाले भी उन परिस्थितियों के सामने आत्मसमर्पण कर राष्ट्र की अस्मिता तथा अस्तित्व को मिटानेवाली गतिविधियों को अपना रहे हैं, उनके द्वारा उत्पन्न प्रवाह में बहते जा रहे हैं, तब स्व. सरदार पटेल के वज्रकठोर, निश्चयी, उत्कट राष्ट्रभक्तिपूर्ण जीवन का, उनके निर्भय निर्णय एवं कृतियों का स्मरण जाग उठता है। यदि आज वे होते या उनके बाद के उनके अनुयायी माने जानेवालों में उनका यह गुणसमुच्चय होता, तो जिस द्रुतगति से राष्ट्र निम्न स्तर की ओर फिसल रहा है, वैसा कभी नहीं हो पाता और राष्ट्र उन्नति के पथ पर आगे बढ़ता रहता। आज इस परिस्थिति से बचने के लिए उनका पुण्यस्मरण आवश्यक है। इसी कारण मैं आपका हृदय से अभिनंदन करता हूँ तथा यही शब्दसुमनांजलि स्व. सरदार पटेल की पावन स्मृति में समर्पित करता हूँ।

१७५. प्रसिद्ध पत्रकार श्री लाड के प्रति आत्मीयता

श्री गो.म.लाड, मुंबई ३१ दिसंबर १९६८

आप योग्य समय पर सकुशल मुंबई पहुँचे होंगे। मुंबई कांग्रेस के एक विभाग की प्रतिनिधि सभा का अधिवेशन उस समय चल रहा था तथा केंद्रीय मंत्री, राष्ट्रपति आदि सबका वहाँ वास्तव्य था। समाचार-पत्रों की दृष्टि से वह एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण प्रसंग था। उस कारण आपकी ओर काम का दायित्व रहना स्वाभाविक ही है, तथापि आप समय निकालकर नागपुर के शिविर में दो दिन रहे, यह हम पर आपने बहुत बड़ा अनुग्रह किया है। प्रत्यक्ष शिविर में रहना, पूर्णतः अनौपचारिकता से सब स्वयंसेवक बंधुओं के साथ हिल-मिलकर व्यवहार करना, आपकी योग्यता बहुत बड़ी रहते हुए भी शिविर में पकनेवाला सामान्य भोजन तथा अन्य असुविधाओं की ओर पूर्णतः दुर्लक्ष्य कर प्रसन्न और हँसमुख रहना आदि बातों का सब स्वयंसेवक बंधुओं पर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ा है। आपके प्रति आदर-भाव बहुत पहले से ही है, वह वृद्धिंगत तो हुआ ही, साथ ही आत्मीयता भी बढ़ी है। फलस्वरूप संघवातावरण बहुत ही प्रसन्नतामय हो गया है।

आपको कितनी असुविधाएँ और कष्ट हुआ होगा, यह सोचकर संकोच होता है। इसके साथ ही कार्यबाहुल्य के कारण मैं पूर्ण समय आपके सहवास में नहीं रह सका। शिविर में मैं आता-जाता रहा। फलस्वरूप मन को संकोच हो रहा है। मैं निरुपाय था, अन्यथा मैं शिविर में पूर्ण समय रहता। इस त्रुटि के लिए क्षमा चाहता हूँ।

मुंबई की भीड़ अब कम हो गई होगी। चार-पाँच दिन का परिणाम आपके ध्यान में आया ही होगा। (कांग्रेस अधिवेशन की ओर संकेत है- सं.) व्यक्ति और परिस्थिति का सूक्ष्म अवलोकन करने का आपको अभ्यास है। इसलिए भला-बुरा आपकी आँखों से ओझल नहीं हुआ होगा। अन्य कोई विशेष समाचार नहीं है। आपकी स्नेहपूर्ण दृष्टि तथा प्रेम हम पर नित्य रहे, यह प्रार्थना। (मूल मराठी)

१७६. प्रा.रामसिंह का अभिनंदन

श्री सत्यकाम जी, दिल्ली

२ मार्च १९७०

अनुरोध-पत्र पर हस्ताक्षर कर भेज रहा हूँ। आगे आप समारोह की तिथि निश्चित होने पर सूचित करेंगे, यह विश्वास है। शेष भगवत्कृपा। पुनः आपका यह संकल्पित आयोजन मुझे कितनी प्रसन्नता देनेवाला है, यह शब्दों से व्यक्त करना मेरे लिए असंभव है। विगत ३२ वर्षों से मैं उनके प्रति श्रद्धायुक्त आदर की दृष्टि से देख रहा हूँ। यह आयोजन कृतज्ञ हिंदू जनता अपने निःस्वार्थ सेवाव्रती श्रेष्ठ पुरुष का समुचित आदर करने में जागरूक है, इसका प्रमाण होने से मुझे अत्यधिक सुख हो रहा है।

१७७. श्रेष्ठ पुरुषों का आशीर्वाद बहुमोल एवं फलदायी

आदरणीय श्री.भाऊ जी देशमुख, वाढोना (विदर्भ) ७ मार्च १९७०

आपका पत्र प्राप्त हुआ। पत्र के द्वारा आपके आशीर्वाद का लाभ ही मुझे प्राप्त हुआ है। आप आयु, अवस्था, ज्ञान, समाजसेवा आदि सब दृष्टि से और जीवन के अनेकविध अनुभवों से संपन्नता प्राप्त वयोवृद्ध हैं। ऐसे श्रेष्ठ पुरुषों का आशीर्वाद बहुमोल एवं फलदायी सिद्ध होता है।

भगवत्कृपा से जिस कार्य का दायित्व मुझपर सौंपा गया है, उसे सुचारु रूप से करने की बुद्धि, शक्ति का मुझमें अभाव ही है। किंतु श्रेष्ठ पुरुषों की कृपा का आधार प्राप्त होने का मेरा महद्भाग्य है। इसी कारण

गत इतने वर्षों तक कार्य होता रहा है। आगे भी जब तक जीवन चलता रहेगा और कार्यभार वहन करने का दायित्व रहेगा, तब तक इसी प्रकार बुजुर्ग, श्रेष्ठ पुरुषों के आशीर्वाद के फलस्वरूप कर्मशीलता कायम रखने की शक्ति प्राप्त होती रहेगी। एतदर्थ परम कृपासागर श्री परमेश्वर के चरणों में नतमस्तक होकर प्रार्थना करता हूँ।

आज आपका पत्र पढ़कर हृदय कृतज्ञता से भर आया। हमारे वृद्ध लोग कितने जागृत हैं, उनका हृदय प्रेम एवं असीम आत्मीयता से कैसा परिपूर्ण भरा हुआ है, इसकी प्रत्यक्ष अनुभूति होती है और ऐसे श्रेष्ठ परंपरा-प्राप्त समाज में जन्म ग्रहण करने से संतोष एवं गर्व के भाव जाग उठे हैं। आपका आशीर्वाद सदैव प्राप्त होता रहे और हमारे जैसे लोगों को प्रोत्साहन एवं शक्ति प्रदान करने के लिए आपको सुदीर्घ, उत्तम स्वास्थ्ययुक्त पूर्णायु जीवन का लाभ हो, एतदर्थ परममंगल सर्व करुणामय श्री प्रभुचरणों में प्रार्थना करता हूँ।

१७८. संचयिका हेतु आत्मपरिचय

संपादक, टाइम्स ऑफ इंडिया — १६ मार्च १९७०

आपके कार्यालय द्वारा भेजा गया बिना तारीख और बिना किसी के हस्ताक्षर का निवेदन मुझे प्राप्त हुआ। मुझे लगता है और आपसे अपेक्षा करता हूँ कि आप भी ऐसा कतई नहीं सोचते कि इस प्रकार के निवेदन की ओर जरा भी ध्यान देना चाहिए।

मुझे इस बारे में तनिक भी रुचि नहीं है कि अपने देश के श्रेष्ठ पुरुषों की मालिका में मेरा नाम रहे। उसका कारण भी स्पष्ट है कि मैं उस श्रेणी में नहीं हूँ। इसलिए आपसे प्रार्थना करने की मुझे अनुमति दें कि आप मेरे नाम को और किसी भी संदर्भ में मेरे जीवन-वृत्तांत को कृपया उसमें न जोड़ें। मैं आशा करता हूँ कि आप मुझ पर इतनी कृपा करेंगे।

(मूल अंग्रेजी)

१७९. श्री भाईलाल काका प्रखर राष्ट्राभिमानी महापुरुष

श्री रमणलाल भाई पटेल, — ६ अप्रैल १९७०

मैं दक्षिण भारत में प्रवास हेतु गया हुआ था। अकस्मात वृत्त-पत्रों में श्रद्धेय श्री भाईलाल काका के देहावसान का समाचार पढ़ा। आप तथा

समस्त परिवार का छायाछत्र चला गया। इस शोक में भगवत्कृपा से ही आप सबको सांत्वना मिल सकेगी। अतः मैं सबकी ओर से उसके श्री चरणों में प्रार्थना कर रहा हूँ। दिवंगत जीव की सद्गति के लिए भी परममंगल श्री प्रभुचरणों में प्रार्थना करता हूँ।

स्व. श्री भाईलाल काका के चले जाने से देश का एक ज्येष्ठ, श्रेष्ठ, कर्तृत्ववान, चरित्रवान, निरभिमानी, दीन-दरिद्री, दुःखी लोगों के प्रति स्नेहपूर्णता से सेवा करनेवाला, शिक्षा क्षेत्र में सामान्य कृषक श्रमिक तक ज्ञान पहुँचाकर उनका जीवन सुखी-सफल बनाने के लिए निरंतर परिश्रमरत, प्रखर राष्ट्राभिमानी महापुरुष अपने में से उठ गया है। जिस समय स्वार्थ, चरित्रहीनता, भ्रष्टाचार आदि दुर्गुणों का बोलबाला होने के कारण देश अंतर्बाह्य घोर संकटों से ग्रस्त है, तब ऐसे शुद्ध देशभक्त का वियोग बहुत ही खटकता है, परंतु ईश्वर की जैसी योजना होगी, वैसा ही होता है और उसे हम सब लोगों को स्वीकार करना पड़ता है।

श्री भगवान के मंगल चरणों में हम सब प्रार्थना करें कि इस परिस्थिति से बाहर पड़कर अपने देश की उन्नति करने के कार्य में हम सबको आशीर्वाद दें और जो अपूरणीय क्षति श्री भाईलाल काका के देहावसान से हुई है, उसे पूर्ण करने की अनुकूलता प्रदान करें। इति।

१८०. समाज में कोई उपेक्षित-निराश्रित न रहे

श्री सोहनलाल गुप्ता, खंडवा

२१ अप्रैल १९७०

'हिंदू बाल-सेवा-सदन' का स्वर्ण-जयंती समारोह आगामी मई मास में मनाया जा रहा है, यह समाचार बहुत आनंददायी है। समाज के निराश्रित, उपेक्षित बालक, महिलाओं आदि की सहायता कर उनको जीवन में सुखी बनाने का महत्त्व का काम यह सेवा-सदन कर रहा है। आसपास के सब लोगों की सहानुभूतिपूर्ण सहायता संस्था को नित्य प्राप्त होती रहे और संस्था अपना कार्य बढ़ती हुई सफलता से कर सके, यह इच्छा इस अवसर पर व्यक्त करता हूँ।

साथ ही समाज के सब व्यक्तियों में एकात्मभाव का ऐसा प्रबल सूत्र निर्मित होना आवश्यक है कि कोई उपेक्षित या निराश्रित न रह सके। किसी पर संकट आने पर वह असहाय-एकाकी अनुभव न करे। वह सब निकटवर्ती सज्जनों का आधार प्राप्त कर निर्भयता एवं निश्चितता का

अनुभव करे। परंतु ऐसी स्थिति उत्पन्न होने तक 'हिंदू बाल सेवा-सदन' जैसी उपकारक संस्थाओं की आवश्यकता अनिवार्य है।

इस पुनीत समाज कार्य में आप सब बंधु उत्तम यश प्राप्त करें। संस्था का संकल्पित स्वर्ण जयंती-समारोह उत्साह से संपन्न हो। मैं स्वयं २८.४.१९७० से प्रवास में रहूँगा। अतः यह पत्र भेजकर अपनी अनुपस्थिति के लिए क्षमाप्रार्थना कर रहा हूँ।

१८१. संस्कृति की प्रतिष्ठा बढ़ाने में सफल हों

श्री ओम पेना स्वामी, १० अगस्त १९७०

मुझे बहुत प्रसन्नता है कि आपके द्वारा अपनी वैशिष्ट्यपूर्ण नृत्य शैली को उन देशों में प्रस्तुत करने का आयोजन हो रहा है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि वहाँ के सुसंस्कृत लोगों को आप प्रभावित कर सकेंगे और आपकी योग्यता का सही मूल्यांकन होने के कारण आपको प्रचुर प्रतिसाद मिलकर आपकी सर्वत्र प्रशंसा होगी।

आपकी सफलता और यथोचित सत्कार हो इसलिए परमदयामयी श्री दिव्य जगन्माता के चरणों में मैं विनम्र प्रार्थना करता हूँ। आपकी सफलता के कारण अपनी पवित्र भारतमाता और अपनी महान संस्कृति की प्रतिष्ठा अवश्य ही बढ़ेगी।

आप तथा आपके सहकारियों के साथ मेरी सदिच्छाएँ सदैव हैं। वहाँ की 'डिवाइन लाईफ सोसायटी' के स्वामी जी के चरणों में विनम्र प्रणाम। (मूल अंग्रेजी)

१८२. स्मरणिका मार्गदर्शन

श्री शालिग्रामजी मिश्र, कानपुर २९ सितंबर १९७०

अपने विक्रमाजित सिंह सनातन धर्म कॉलेज की स्वर्णजयंती का समारोह सानंद संपन्न हो। व्यावहारिक शिक्षा के साथ अपने देश की धरोहर अपना धर्म, संस्कृति, तत्त्वज्ञान और पवित्र संयत जीवन के संस्कार प्रदान करना आवश्यक हैं। अपनी 'स्मरणिका' में इस पहलू का यथेष्ट विवरण हो तथा उसके अध्ययन से छात्र, उनके अभिभावक तथा अध्यापन में कार्यरत आचार्यगण स्वजीवन को ढाल सकें और वंश-परंपरा से यह पवित्र ज्ञानधारा

सबको पुनीत करती रहे, यह हृदय से इच्छा है। परमकृपालु श्री भगवान के चरणकमलों में इस हेतु तथा कॉलेज के उत्तरोत्तर विकास हेतु प्रार्थना करता हूँ।

१८३. स्वातंत्र्यवीर श्री सावरकरजी की श्रेष्ठता

डा.तलरेजा, उल्लासनगर (महाराष्ट्र) १४ अक्तूबर १९७०

आपने सिंधी भाषा में स्वातंत्र्यवीर सावरकर जी की जीवनी लिखी है। उसमें आपने क्या लिखा है, इसका मुझे कुछ भी ज्ञान नहीं है। आशा है उस महापुरुष के जीवन का यथार्थ चित्रण आपने किया होगा। वह जीवन चमत्कृतिपूर्ण है। उसके अनेक तेजोमय पहलू हैं। धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनैतिक आदि सब क्षेत्रों में उनकी अप्रतिहत प्रतिभा प्रकट हुई है। राष्ट्र के यथार्थ स्वरूप के आधुनिक काल के द्रष्टा के रूप में उनका स्थान सर्वश्रेष्ठ है। ऐसी अनेकानेक विशेषताएँ आपने व्यक्त की होंगी और पाठकों को स्फूर्ति देने का कार्य आपने इस ग्रंथ में किया होगा, ऐसा मेरा अनुमान है। आपका यह ग्रंथ चिरंतन महत्त्व का और प्रेरणाप्रद सिद्ध हो।

१८४. राष्ट्रीय एकता सम्मेलन सफल हो

१६ अक्तूबर १९७०

श्री जगदीश शर्मा, मंत्री, अ.भा. राष्ट्रीय एकता सम्मेलन, दिल्ली

आगामी २५ तथा २६ अक्तूबर को होनेवाला अ.भा. राष्ट्रीय एकता सम्मेलन सर्वथा सफल हो। अपने राष्ट्रीय जीवन के आधार में ही एकत्व है, इस विचार से व्यवहार करने पर तथा ऊपर से दिखनेवाले भेदों के बारंबार उच्चार से, उनपर बल देने से या तात्कालिक स्वार्थ के लिए इन दिखनेवाले भेदों को उभाड़ने का प्रयत्न करने से जो हानि होती है, हुई है, आगे भी होने का भय है, उसको ध्यान में रखते हुए इन गतिविधियों से दूर रहने का निश्चय करने पर अपनी मूलभूत एकता दैनंदिन जीवन में प्रकट हो सकेगी। भगवत्कृपा से ऐसा करने में सम्मेलन महत्त्वपूर्ण कर्तव्य पूर्ण करे।

'स्मारिका' भी एकत्व का मंडन करनेवाली, भेदों को सत्य मान कर केवल ऊपरी समझौते में रस न लेनेवाली चिरंतन उपयोगी बने, इस हेतु सबका एक आधार श्री भगवान के चरणों में प्रार्थना करता हूँ।

१८५. मैं 'गुरुजी' नहीं हूँ

श्री खुशीराम गुप्ता जी, १६ फरवरी १६७१

आपको मेरे संबंध में किसने क्या कहा, यह समझना कठिन है। मैं 'गुरुजी' नहीं हूँ। मेरे साथी एवं छात्र इस नाम से मुझे संबोधित करते हैं। 'गुरु' कहने पर जिस श्रेष्ठता का बोध होता है, उसका मुझमें लेश भी नहीं है। अतः आपको श्रेष्ठ अधिकारी पुरुष की खोज करना शेष है।

अपने देश में जो राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के नाम से कार्य चल रहा है, उसमें मैं एक स्वयंसेवक हूँ। उस कार्य के संबंध में तथा आपको उसमें योगदान करने से मनःशांति मिलेगी या नहीं इस संबंध में जानकारी आवश्यक प्रतीत होती हो तो आपके निकट दिल्ली में संघ का कार्यालय है, वहाँ जाकर किसी अनुभवी कार्यकर्ता से मिलें तो लाभ होगा।

व्यक्तिगत सुख के पीछे न दौड़ते हुए किसी श्रेष्ठ लक्ष्य की प्राप्ति हेतु प्रयत्नशील होने का तथा साथ ही जिस समाज से हम सब कुछ पाते हैं, उसके प्रति कृतज्ञता का भाव रखकर समाज के लिए कुछ करने का आपका संकल्प अभिनंदनीय है। आशा है आपके संकल्प की दृष्टि से आपका समाधान उस भेंट से हो सकेगा।

१८६. सारासार विवेक करनेवालों का दायित्व

श्री पी.कोदंडराव, सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसायटी, बंगलौर ६ मार्च १६७१

आपका आशीर्वाद प्राप्त हुआ। आपके प्रति हृदयपूर्वक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। दिव्य जगन्माता की कृपा एवं आशीर्वाद के कारण मेरा शरीर स्वास्थ्य ठीक है।

गत तीन सप्ताह से मेरा निवास नागपुर में है। राजनीतिक गतिविधियों में जिनकी रुचि है, उनकी इस कालखंड में उन्मादभरी कृतिशीलता अत्यधिक थी। किंतु आपसी आरोप-प्रत्यारोप और जाति, वंश आदि भेदों को आधार बनाकर आपसी विद्वेष-भावना प्रक्षोभित करते हुए अपने समाज की मूलभूत एकात्मता पर ही आघात होने से संपूर्ण वातावरण दूषित हो गया था। यह मेरे लिए अति दुःखद अनुभव था। सारासार विवेक करनेवाले लोगों को चाहिए कि वे इस विषैले वातावरण को शुद्ध करने का और सुदृढ़, स्वस्थ, सुसंगठित समाज जीवन निर्माण करने का तत्परता से

प्रयास करें। हम आशा करें कि यह आँधी भरा वातावरण स्वच्छ होने के पश्चात् लोगों के हृदय में स्थित सुप्त सद्‌भावना जागृत तथा प्रबल होगी और इस प्रकार के विद्वेषमूलक कार्य भविष्य में न करने का वे निश्चय करेंगे। (मूल अंग्रेजी)

१८७. श्री हनुमानप्रसाद जी पोद्दार को श्रद्धांजलि

मा. श्री. राधेश्याम बंका जी, गोरखपुर २३ मार्च १९७१

कल रात्रि में आकाशवाणी से श्रद्धेय भाईजी के पार्थिव देहत्याग कर भगवच्चरणों में विलीन होने का समाचार प्रसृत किया गया। उनके लिए दुःख करना शोभा नहीं देगा। उनका जीवन इतना पुनीत एवं राष्ट्रभक्ति, धर्मनिष्ठा और श्रीपरमात्मा के श्रीकृष्ण रूप में उत्कट अविचल भक्ति से ओत-प्रोत था कि इहलोक से गमन परमसौख्यमय चिरंतन भगवल्लोक में प्रवेश और श्री भगवत्सान्निध्य में चिरनिवास के रूप में ही हुआ है। मेरी यही श्रद्धा है। अतः उनके लिए शोक नहीं है। शोक तो हम सब जो पीछे रहे हैं उनकी दशा पर है कि हम लोगों के सम्मुख अब वह जीता-जागता कर्मभक्तियोगी-ज्ञानी, माधुर्य से परिपूर्ण आदर्श नहीं रहा।

अब उनके जीवन का आदर्श अपने जीवन में उतारने का प्रयत्न करते हुए उनके धर्म-जागरण कार्य को निरंतर आगे बढ़ाने में अपनी-अपनी योग्यता तथा प्रवृत्ति के अनुसार लगे रहना यही उनके प्रति श्रद्धा अभिव्यक्त करने का योग्य मार्ग होगा। उनके धर्म जागरण के कार्य का साधन 'श्री गीता प्रेस' एवं 'कल्याण' प्रतिष्ठान अपने वैशिष्ट्य के साथ चलता-बढ़ता रहे, इस हेतु सब धर्मप्रेमियों को विशेष कर श्रद्धेय श्री भाईजी के प्रति आदरभाव रखनेवालों को दत्तचित्तता से सचेष्ट रहना शोभनीय होगा।

मुझे विश्वास है कि यह सब होगा। परम श्रद्धेय भाईजी श्री हनुमान प्रसाद जी पोद्दार की पवित्र स्मृति को शतशः वंदन। इति।

१८८. शिक्षा तथा संस्कार के साथ साक्षरता

श्री रमेश चंद्र पंत, मुंबई

२० अप्रैल १९७१

साक्षरता का प्रसार करने के लिए अपने देश के शासन ने गत २३ वर्षों से बहुत प्रयास किया है। वह प्रयास चल रहा है और उसकी गति

अधिक तीव्र होकर शीघ्र ही नवजात शिशुओं को छोड़कर कोई निरक्षर नहीं रहेगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

मनुष्य के विकास में आत्मनिर्भर होकर ज्ञान-संपादन करने की क्षमता उसे पढ़ना-लिखना अच्छा आने से निर्माण होती है। विकास का रूप निश्चित करना होगा।

साक्षर, सुशिक्षित, सुसंस्कृत– ये शब्द विकास में पथ-प्रदर्शक हो सकते हैं। सर्वथा निरक्षर व्यक्ति सुशिक्षित सुसंस्कृत होकर समाज में प्रतिष्ठा प्राप्त कर सकता है, ऐसे बहुत उदाहरण मुझे ज्ञात हैं। सुशिक्षा तथा सुसंस्कार के अभाव में केवल साक्षरता तथा उससे उत्पन्न शब्दों का उत्तम ज्ञान अहितकर भी हो सकता है। संस्कृत भाषा में एक सुभाषित प्रसिद्ध है– 'साक्षरो विपरीतत्त्वे राक्षसो भवति ध्रुवम्।' इस दृष्टि से सुशिक्षा, सुसंस्कार प्राप्त करा देनेवाली साक्षरता इष्ट होगी।

इसलिए 'मनुष्य का विकास' कहने पर क्या अपेक्षित है, यह निश्चित करना होगा। मनुष्य अर्थोत्पादन में लगा हुआ आर्थिक जीव मात्र है या राजनैतिक अधिकारों के लिए लालायित, संघर्षरत, राजनैतिक प्राणिमात्र है या मनुष्य भगवत्स्वरूप है? यह प्रश्न उपेक्षित सा हो गया है। इस प्रश्न की उपेक्षा के कारण ही सर्वत्र चारित्र्यहीनता, उच्छृंखलता, उद्दंडता तथा विध्वंस की प्रवृत्तियाँ पनपती और बढ़ती जा रही हैं, ऐसा सुज्ञों का कहना है। सब सोचकर प्रारंभ से ही निर्दोष पथ पर पदक्षेप करते हुए संपूर्ण देश में एक भी व्यक्ति निरक्षर न रहे, इस हेतु शासन के प्रयत्नों में पूरक बनकर आपका 'साक्षर' साप्ताहिक उत्तम कार्य करने में यशस्वी हो तथा उसकी निरंतर उन्नति होती रहे।

१८९. श्रद्धेय का वियोग श्रद्धालु पर आघात

श्री भीमसेन चोपड़ा जी, इंदौर २७ जुलाई १९७१

आपका २१ जुलाई का पत्र २४ जुलाई को नागपुर पहुँचा और कल सायंकाल मेरे पास पहुँचा। श्रद्धेय श्री भाई जी के रहते ही उनके अभिनंदन में एक ग्रंथ प्रकाशित करने का विचार मान्यवर डा. भगवतीप्रसाद सिंह जी ने पत्र द्वारा मुझे सूचित किया था और मैं कुछ लिखूँ– यह भी कहा था। उसके उत्तर में मैंने एक पत्र भेजा था, जो मेरे भावों को संक्षेप में व्यक्त करनेवाला होने से अभिनंदन ग्रंथ में समाविष्ट किया जा सकता था। परंतु

श्रद्धेय श्री भाई जी ने नश्वर शरीर का त्याग कर भगवत्सान्निध्य प्राप्त किया। अब वह अभिनंदन-ग्रंथ दुःखपूर्ण कल्पना मात्र रह गया। पश्चात् यह श्रद्धांजलि-ग्रंथ के रूप में उनकी पावन स्मृति में कुछ शब्द-सुमन अर्पण करने का निश्चय होकर उस संबंध में भी मेरे पास पत्र आया था, जिसका मैंने उत्तर दे दिया है, ऐसा स्मरण होता है। निश्चित तो नागपुर जाने पर ही कह सकूँगा।

मेरी बहुत बड़ी कठिनाई यह है कि जिनके संबंध में मेरे में अपार श्रद्धा और प्रेम होता है, उसका वियोग होने पर हृदय पर गहरा आघात होता है। वह घाव और गहरा होता है, जब कभी उनके विषय में कुछ सोचने, कहने का प्रसंग उपस्थित होता है। उस घाव की वेदना असह्य हो उठती है। फिर शब्द सूझते नहीं। विचार कुंठित हो जाते हैं। मन एक अवर्णनीय व्यथा से अभिभूत हो जाता है।

आपका पत्र आने पर ऐसी ही असहनीय पीड़ा का फिर जागरण हुआ। जिनके प्रेम व आशीर्वाद से कार्य करते समय निश्चिंतता तथा उत्साह का अनुभव करता था, वह अब प्रत्यक्ष में दिखाई नहीं देंगे, यह सोचकर मन बेचैन हो उठा है। अशरीरी, अव्यक्त रूप से उनका प्रोत्साहन और आशीष वह दे ही रहे हैं। यह सत्य होते हुए भी एक देहधारी के लिए इस विचार से संतोष होना कठिन है।

इस कारण मैं सबसे क्षमा याचना करता हूँ। संभव है कि और कुछ समय बीतने पर मनोभावों पर इतना नियंत्रण कर सकूँगा कि अंतःकरण के भाव शब्दों में उतारकर श्रद्धेय श्री भाई जी की स्मृति में उन्हें अर्पण कर सकूँ। आज तो भावावेग अत्यंत प्रबल है। विचार, शब्द बिल्कुल अवरुद्ध हैं। क्या करूँ? अतः बार-बार क्षमायाचना करता हूँ। सबको सश्रद्ध प्रणामबद्ध क्षमा की याचना करता हूँ। इति।

१९०. 'मार्क्सियन मिराज' ग्रंथ पर अभिप्राय

श्री एस.आर.पटेल, बड़ोदरा

२५ अगस्त १९७१

मैंने 'मार्क्सियन मिराज' ग्रंथ पढ़ा। आपने उन विचारों की इमारत नींव से ही उध्वस्त कर दी, किंतु अनेक जगह आपकी भाषा अति कठोर हुई है। ऐसा प्रतीत होता है कि लेखक क्रुद्ध एवं विचलित मनोभूमिका में है, अतः उसके निष्कर्ष कुछ लोगों के लिए भले ही अपरिहार्य हो, किंतु इस

मनोभूमिका के कारण तर्कसंगत न्याय्य विश्लेषण धूमिल हो गया है। तथापि कुल मिलाकर विषय प्रतिपादन परिपूर्ण एवं उत्तम हुआ है।

आप तो जानते ही होंगे मार्क्स के अनुयायी कपाट-बंद मनोवृत्ति के होते हैं। अतः उन पर इसका कोई असर नहीं होगा। लेकिन सरल, निश्छल लोगों के लिए यह ग्रंथ आँख खोलनेवाला और तारक सिद्ध होगा।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रति आपकी भावनाओं से मैं उपकृत हूँ। माँ जगदंबा आप जैसे महानुभावों की अपेक्षाएँ पूर्ण करें। (मूल अंग्रेजी)

१९१. गैर मुस्लिमों में इस्लाम-प्रचार

डा. संकटाप्रसाद, ३१ नार्थ एवेन्यू, नई दिल्ली ३० अगस्त १९७१

आपके मित्र श्रीमान् हाफिज मोहम्मद अताउल्ला खाँ अतारहमानी जी 'जन-मार्ग' नाम का हिंदी साप्ताहिक पत्र निकालने वाले हैं और उसमें इस्लाम का वास्तविक रूप प्रकट कर इस्लाम मतानुयायियों में जो भ्रामक धारणाएँ हैं, उन्हें दूर करने का प्रयास करनेवाले हैं। यह उचित ही है। परंतु कितने इस्लाम मतानुयायी हिंदी पत्र पढ़ेंगे और अपनी भूलें सुधारने का अवसर पा सकेंगे, यह समस्या ही है। उर्दू में यह साप्ताहिक होता, तो वे पढ़ सकते और उसमें रुचि लेते।

किंतु गैर-मुस्लिम समाज को इस्लाम की शिक्षा देने की दृष्टि से इस्लाम के सिद्धांतों के महत्त्व को सद्यःस्थिति में आधुनिक परिभाषा में सिद्ध कर उसका प्रचार करने की दृष्टि से इसका उपयोग हो सकेगा। भारत में इस्लाम के प्रचार का यह एक साधन के रूप में अपना स्थान बना सकेगा और इस्लाम प्रसार में प्रेम रखनेवालों में लोकप्रिय होगा। भगवत्कृपा से उनका साप्ताहिक यशस्विता से चले।

१९२. योगिराज का वरदहस्त

श्री केशवराव जोशी, ३ दिसंबर १९७१

'पंथराज' त्रैमासिक के तीन अंक देखे। उनमें से प्रथम अंक का अधिकांश पठन हो पाया है। अधिक पढ़ना संभव न हो सका। यथावकाश उसका पठन करूँगा।

जिसका पठन हुआ, वह अत्यंत उद्बोधक, मन को सन्मार्ग का

दिशाबोध करनेवाला और हृदय में विश्वास वृद्धिंगत करनेवाला है। अध्यात्म, योग, शक्तिपात आदि शब्दों के कारण भ्रमित लोगों को समझा-बुझाकर धैर्य धारण करने में उपयुक्त और अपने जीवन कार्य का सही हेतु सुस्पष्ट कर उसे सुविधापूर्वक साध्य किया जा सकता है, इसका विश्वास जगानेवाला और समर्थ सद्‌गुरु की कृपा के कारण उसकी सुगमता से उपलब्धि संभव है, इस तथ्य को हृदयंगम करा देने का कार्य, इन त्रैमासिकों में प्रकाशित लेखों द्वारा निस्संदेह संपन्न होगा, ऐसा मुझे विश्वास है।

अपना यह देश विशाल व विस्तृत है। इस धरा पर छोटे-बड़े अनेक देश विद्यमान हैं। सभी देशों में भारत के इस (अध्यात्म) मार्ग के जिज्ञासु हैं। सद्‌गुरु के नाते जिनकी सेवा में उपस्थित होने से उनको अपने सच्चे हित की उपलब्धि हो सकेगी, ऐसे श्रेष्ठ महात्माओं की जानकारी उनके लिए उपयुक्त सिद्ध होगी।

हमारा अहोभाग्य है कि आपके पास के ही क्षेत्र में परमश्रद्धेय श्रीमत् योगिराज श्री गुळवणी महाराज जी विद्यमान हैं। मुझे पूर्ण विश्वास है कि हमारे सिरपर उनका वरद्‌हस्त है। उनके पवित्र आशीर्वाद के फलस्वरूप त्रिविध ताप के कारण दुःखी लोगों को यह त्रैमासिक शांति प्रदान करने में समर्थ होगा। भगवत्‌कृपा से ऐसा ही हो, इस हेतु प्रभुचरणों में प्रार्थना करता हूँ।

श्री सद्‌गुरु श्रीमत् गुळवणी महाराजजी के श्रीचरणों में अनंत प्रणाम। (मूल मराठी)

१९३. मा. बाबासाहब आप्टे को श्रद्धांजलि

श्रद्धेय आचार्य विश्वबंधु जी, होशियारपुर, २९ अगस्त १९७२

माननीय श्री बाबा साहब आप्टे जी का इहलोक छोड़ जाना एक बहुत बड़ा आघात है। प्रारंभ से ही अनेकों को कार्यप्रवण करने में वे प्रेरणा के अखंड स्रोत रहे। जीवन शुद्ध तपस्वी का, गंभीर अध्ययन के कारण ज्ञान के भंडार के रूप में सबको मार्गदर्शन करनेवाला रहा। उनका शरीरत्याग भी अलौकिक ही कहा जा सकता है। २५.७.१९७२ को प्रातः नित्य के अनुसार वे प्रातःस्मरण में उपस्थित नहीं हुए, इस कारण चिंतित होकर उनके कक्ष में गवाक्ष में से प्रवेश किया गया। देखा कि वे अचेतन पड़े हैं। डाक्टर आदि आए, चिकित्सालय में भी ले जाया गया। कुशल चिकित्सकों

ने अपनी पूरी बुद्धि से प्रयत्नों की पराकाष्ठा की, परंतु कुछ भी परिणाम नहीं निकला। बहुत धीमी गति से श्वसन चल रहा था। मुखमंडल तथा अंग-कांति बहुत अच्छी—तेजस्वी कहें तो अत्युक्ति नहीं होगी। लगता है कि स्वेच्छा से उन्होंने अपनी जीवन-ज्योति संवरण कर महाज्योति में विलीन कर दी। २६.७.७२ की रात्रि के प्रथम प्रहर में मंद श्वसन बंद हो गया।

ऐसे अध्यवसायी, ध्येयनिष्ठ, कर्मरत, सर्वस्वार्पण कर काया-वाचा-मनसा लक्ष्य की साधना में लगे हुए तपःपूत लोग थोड़े ही हैं। उस अल्प संख्या में से एक का भी अभाव बहुत बड़ी हानि हो जाती है। ऐसा ही हुआ है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ में हम लोगों पर यह असहनीय आपत्ति आ पड़ी है। अब जिसके सहारे कार्य चल रहा है, वह विश्वपिता परमात्मा ही हम लोगों को धैर्य देकर उनके अभाव की पूर्ति करने की क्षमता प्रदान करे, यही प्रार्थना हम लोग कर रहे हैं। इसमें आप सब महानुभावों की शुभकामनाएँ हमारी सहायक हैं। इसी विश्वास से कार्य यशस्वी करने के निश्चय को लेकर हम सब बंधु चल रहे हैं।

१९४. सरदार पटेल की गरिमा

श्री विद्याशंकर, दिल्ली — १२ अक्तूबर १९७२

अंग्रेजों के चले जाने पर अपने ही लोकनेताओं पर देश का भाग्य बनाने का गुरुभार आ पडा। उस घटना को २५ वर्ष पूर्ण हो गए और उसकी रजत जयंती मनानी पड़ी। इस रजत जयंती के साथ ही इस वर्ष का सरदार पटेल जयंती समारोह मनाते समय उनके द्वारा देश के भवितव्य-गठन में हुए योगदान का कृतज्ञता से स्मरण करना संपूर्ण देश के निवासियों का कर्तव्य है।

१५ अगस्त १९४७ को जब सत्ता का हस्तांतरण हुआ, संपूर्ण देश में आनंदोल्लास के साथ ही अशांति का, दंगों का, कश्मीर पर हुए आक्रमण का और कुछ ही समय के पश्चात् अनेक अनिश्चितताओं का अनुभव हो रहा था। उस कठिन अवसर पर केवल भावुकता या अव्यावहारिक सिद्धांतवादिता से काम बन नहीं सकता था। भविष्य को समझनेवाले द्रष्टा तथा वास्तविकता को सही रूप से समझकर, उसका योग्य मूल्यांकन कर उचित कार्यवाही करने की क्षमता रखनेवाले कठोर निश्चयी कुशल संगठक व संतुलित व्यक्ति की आवश्यकता थी। अपने इस चिरंजीव राष्ट्र का यह

भाग्य रहा है कि अति कठिन समय पर उससे जूझकर राष्ट्र को विजयी बनानेवाले राष्ट्रपुरुष राष्ट्रनौका के कर्णधार के रूप में प्रकट होते हैं। २५ वर्ष पूर्व की अति विकट स्थिति में यह कर्णधार निस्संदेह सरदार पटेल के रूप में ही हम सबको उपलब्ध हुए और संकटों के चपेटों से डगमगाती राष्ट्रनौका स्थिर होकर प्रगति की ओर बढ़ने में समर्थ हो सकी।

इन स्थितियों का सूक्ष्म अध्ययन कर सरदार की गरिमा को यथार्थ रूप से जनसाधारण के सामने रखना आवश्यक है। कालप्रवाह में सब लोग अपने-अपने निजी स्वार्थसिद्धि में लगकर उनके महान उपकारों को विस्मृत कर रहे हैं, उनके गुणों को दुर्लक्षित कर रहे हैं, यह अच्छा लक्षण नहीं है। अपने महान नेताओं का विस्मरण, उनके उपकारों के प्रति कृतघ्नता, उनके चरणचिह्नों पर चलने में अरुचि, राष्ट्र के भाग्यशाली भवितव्य निर्माण के आवश्यक कर्तव्य को पूरा करने में समाज को असमर्थ बनानेवाले अवगुण हैं। उनसे समाज को बचाने हेतु सरदार पटेल जयंती के सुअवसर का उपयोग कर, उस महापुरुष के जीवन की प्रखर ज्योति जन-जन के अंतःकरण में प्रज्ज्वलित करने का आप सब मिलकर प्रबल प्रयत्न करेंगे, कर ही रहे हैं।

१६५. देशी गाय का दूध ही रोगहारी

२५ नवंबर १६७२

श्री ओमप्रकाश अग्रवाल, श्री गौशाला सोसायटी, आगरा

गौ-सेवा तथा गोरक्षा का आपका पवित्र कार्य उन्नति करे। गौ-संवर्धन अच्छे वंशों का होकर विपुल दूध देने वाली गायें बढ़े, परंतु इस हेतु विदेशी वृषभों से संकर कराना मुझे जँचता नहीं। अपनी देशी गाय का दूध ही रोगहारी तथा स्वास्थ्यकर है। हृदय को शक्ति देनेवाला, बलवीर्य वृद्धिकर है, ऐसा मैं मानता हूँ। संकर से यह गुण नष्ट होने का भय है। आप कार्य में संलग्न होने से जानकार हैं। मैंने केवल एक सामान्य व्यक्ति के नाते मेरा मत लिखा है।

भगवान श्री गोपालकृष्ण आपको उत्तरोत्तर अधिक सफलता प्रदान करें।

प्रकरण - ७
सामाजिक संस्थाओं के कार्यकर्ताओं को लिखे पत्र

१. वृत्त-पत्र के संचालन की दिशा

श्री रामशंकर अग्निहोत्री, दिल्ली ५ सितंबर १९५३

'आकाशवाणी' चलाते रहने का निर्णय हुआ है, इसका मुझे पता लगा था। पत्र सायं दैनिक होने के कारण उसे पर्याप्त क्षेत्र है। देश-विदेश के कुछ समाचार छाँटकर सुचारु रूप से सामने रखने से एवं देश की अन्यान्य समस्याओं को अपने अग्रलेख द्वारा तथा कभी-कभी अन्यत्र स्वतंत्र लेख द्वारा उठाकर जनता का सुव्यवस्थित ज्ञान एवं भावों को जागृत करने का प्रयत्न करते रहने से पत्र अपना स्थान बना लेगा। साथ ही प्रचलित बातें चटपटी बनाना यह तो आजकल वृत्त-पत्रों के लिए अनिवार्य हो गया है और उस कला में आप किसी से कम तो नहीं। अतः पत्र की सफलता का मुझे पूर्ण विश्वास है।

२. वीर-परंपरा बढ़ रही है

श्री रामभाऊ गोडबोले, १ जुलाई १९५५

संघर्ष में यह सब अपेक्षित ही है। इसके अतिरिक्त जिनसे संघर्ष है, उनके स्वार्थ पर तथा तथाकथित प्रतिष्ठा पर आघात होने से उनका चिढ़ना तथा अमानुषता का व्यवहार होना भी अपेक्षित ही है। कितना मूल्य देना पड़ेगा, यह कौन बता सकता है। इसके अतिरिक्त अपनों की उदासीनता तथा शासनकर्ता-बंधुओं का विरोध सहकर भी देशभक्त, राष्ट्रप्रेमी जनसाधारण को यह लड़ाई लड़नी पड़ रही है। फलस्वरूप कष्ट और यातना तथा आवश्यकता पड़ने पर देहार्पण अधिक मात्रा में होना अपरिहार्य दिखता है। परंतु अंततः अल्पावधि में सफलता मिलेगी, इसमें संदेह नहीं।

इस समय श्रेय-प्राप्ति तथा झूठी प्रतिष्ठा, शांति, अंतरराष्ट्रीय सद्भाव की भ्रामक कल्पनाओं के पीछे न पड़कर, संपूर्ण देश के सब विचारों के गुटों का एक स्वर से समर्थन त्वरित फलदायी होगा। परंतु वह कैसे होगा? यह समस्या ही है। पूर्णतः छोटी-छोटी बातों में स्वार्थ, पक्षहित तथा चुनाव पर दृष्टि रखनेवाले आजकल के भारत के राजनैतिक नेताओं से कितनी अपेक्षा कर सकेंगे? यह एक बड़ा प्रश्नचिह्न है। तथापि इस स्वार्थसाधना के कीचड़ में प्रत्यक्ष न फँसी हुई जनता अगणित है। उसका हृदय सुदृढ़ और स्वस्थ है। उनकी राष्ट्रभक्ति मुखरित न भी हो, तो भी अंतःकरण में गहराई तक पैठी है। इस भक्ति का विस्फोट होकर संघर्ष में विजय प्राप्त होगी, ऐसे सुचिह्न इन पवित्र आत्मार्पण की ताजा घटनाओं में से स्पष्ट दिखाई दे रहे हैं।

मैं अपनी मनोदशा स्वयं कैसे बताऊँ? और केवल निर्जीव शब्दों से वह कौन समझेगा? परंतु गोवा में अपने राष्ट्रभक्त बंधुओं पर होनेवाला प्रत्येक आघात मेरे हृदय में घाव कर रहा है। श्री जगन्नाथ, श्री अण्णासाहेब आदि बंधुओं पर हमला होने की वार्ता प्राप्त होने के पूर्व ही जिस दिन वे गोवा में प्रवेश करनेवाले थे, उस दिन संध्या को ही अकस्मात हृदय तिलमिला उठा था। परंतु यह दुःख भी संतोष देनेवाला है। इन निर्भय वीरों का स्नेहसंबंध अपने से अटूट है तथा यह वीरपरंपरा अपने चारों ओर बढ़ रही है, यह ज्ञान अंतःकरण की यातनाओं पर मात कर एक पवित्र संतोष प्रदान कर रहा है।

माननीय डा. लेले आदि तत्रस्थ बंधु तथा बेलगाँव के अपने सहयोगी पीड़ित बंधुओं की सेवा करेंगे ही। इसमें से भारत के भाग्योदय को आवश्यक स्फूर्ति और शक्ति उन्हें तथा अथक परिश्रम करनेवालों को मिलेगी। (मूल मराठी)

३. 'हिंदू-संस्कृति विशेषांक' की महत्ता

श्रद्धेय श्री हनुमानप्रसाद जी पोद्दार, गोरखपुर, ५ जुलाई १९५५

आज 'हिंदू' नाम से भी घृणा या कम से कम 'हिंदू' नाम से जो कुछ है, उसके प्रति उदासीनता दिखाई देती है। अपने अतिप्राचीन काल से चले आए जीवन-प्रवाह को, अपनी अति प्राचीन होते हुए भी नूतनतम सब समस्याओं को हल सुझाती हुई चिरंजीव, नवचैतन्य से परिपूर्ण संस्कृति को भूलकर, अज्ञान या अधूरे ज्ञान पर तथा भ्रमात्मक युक्तिवाद से भरी हुई

अन्य अहिंदू, अभारतीय विचार-प्रणालियों को अपनाना ही आज अपने राष्ट्र में प्रगतिशीलता माना जा रहा है। यह बड़ा दुर्भाग्य है। यह आत्मविस्मृति राष्ट्र के जीवन में संकट उत्पन्न कर समस्त जीवन को ही सुखा सकती है। इस अवस्था में राष्ट्र के त्राण के लिए अपनी दिव्य अमृतमयी संस्कृति के प्रवाह का यथार्थ ज्ञान इस अभागे हिंदू-समाज को करवाते हुए इस सांस्कृतिक जीवन के कारण इस समाज में उत्पन्न हुए नररत्नों के, देवताओं के आदर्श सब व्यक्तियों के सम्मुख रखने का महान उत्थान कार्य आप 'कल्याण' द्वारा, विशेषतः इस 'हिंदू-संस्कृति विशेषांक' द्वारा कर रहे हैं।

मैं यद्यपि इसमें आपकी योग्य सेवा न कर सका, तो भी आशा करता हूँ कि पथभ्रष्ट होने जा रहा आज का मेरा हिंदू-समाज इसका अध्ययन कर अपने जीवन की श्रेष्ठता को समझेगा और अच्छा समझकर अपनाई तुच्छ अभारतीय विचारधाराओं का त्याग करेगा। परमपिता परमात्मा से मेरी यही प्रार्थना है कि वह हम लोगों पर कृपा कर हमें अपनी अमर संस्कृति के आधार पर आदर्श राष्ट्रजीवन निर्माण करने की प्रेरणा एवं ज्ञान दे और इस अपने प्रिय भारत के द्वारा विश्वशांति की प्रस्थापना करे।

आपके इस श्रेष्ठ कार्य के लिए मैं आपको धन्यवाद भी कैसे दूँ? आपमें और मुझमें इतना दूरान्वय तो है ही नहीं।

४. सार्वजनीन कामों में भी आदर्श उपस्थित करें

श्री कृष्णराव इनामदार, धुले — ७ जुलाई १९५५

आपका नई पद्धति के कार्य से निकट का परिचय हो रहा है तथा उसमें संगठन मंत्री के पद पर एक बड़े विभाग में आपको कार्य करने का अवसर प्राप्त हुआ है, यह जानकर आनंद हुआ। उसमें आपका उत्कर्ष हो तथा आपको सौंपे गए कार्य में आपको यश प्राप्त हो, यही इच्छा है।

नई पद्धति के कार्य के लिए जो ज्ञान और गुण चाहिए, उनका संपादन करना आवश्यक है। किसी भी काम में उत्तम यश प्राप्त करने के लिए अपना जीवन शुद्ध एवं भावना, विचार, व्यवहार से परिपूर्ण तथा दृढ़ भगवन्निष्ठ रहना ही चाहिए। उसी प्रकार जिस समाज में हमें कार्य करना है, उसके साथ निःस्वार्थ तथा निरपेक्ष आत्मीयता रहना आवश्यक है। इन श्रेष्ठ गुणों का मूलधन पर्याप्त हो तथा निरपेक्ष उद्योग करते रहने की

सिद्धता हो, तो नव नवीन जीवन के सब प्रसंग पार करने तथा नए कार्य के लिए आवश्यक सारी गुणसंपदा प्राप्त कर उसे आत्मसात करने का सामर्थ्य प्राप्त होता है। इन मौलिक गुणों का संग्रह आपके निकट है तथा उसकी प्राप्ति व संवर्धन करनेवाले अपने श्रेष्ठतम संघकार्य की आपके अंतःकरण पर पकड़ है। नये कार्य में कभी-कभी स्वार्थपरता, अहंकार, बड़प्पन की चाह, स्पर्धा, ईर्ष्यादि अवगुण, अन्य सबको हीन मानकर उनकी खिल्ली उड़ाने की अनिष्ट प्रवृत्ति आदि बातें पैदा होती हैं। स्वपक्ष का मंडन, दूसरों का खंडन आदि करते समय अनेक बार अपने अनजाने ये और ऐसे अनेक अवगुण हृदय में प्रवेश कर बढ़ने लगते हैं, तथापि आपके पूर्वायुष्य की संस्कार-निर्माण तथा दृढ़ीकरण की योजना से आपका नित्य, नियमित दैनिक संपर्क रहने से आप सुरक्षित रहकर सार्वजनीन समझे जाने वाले कामों में भी कार्यकर्ताओं का आदर्श कैसा शुद्ध रहता है, यह अपने व्यवहार से सिद्ध करेंगे, इसका मुझे विश्वास है। (मूल मराठी)

५. चुनाव में स्वार्थों की खींचातानी

श्री मिश्रीलाल जी, उज्जैन — १६ जुलाई १६५५

सार्वजनीन क्षेत्र में नगरपालिका चुनाव आदि की जानकारी ज्ञात हुई। इन सब घटनाओं में अपने समाज का सामान्य जीवन दिखता है। उसकी प्रवृत्तियाँ, रुचियाँ, स्वार्थों की खींचातानी आदि का चित्र दिखता है। उनका इतना ही महत्त्व है, अन्यथा उनमें समाज में स्वार्थवश परस्पर स्पर्धा, ईर्ष्या, द्वेष, आदि उत्पन्न करने का तथा गुट निर्माण से समाज विच्छिन्न करने का इतना अवगुण है कि उसकी ओर क्षणमात्र के लिए भी दृष्टिक्षेप करने की इच्छा नहीं होती। परंतु इन सब बातों को समझकर, उनका अनिष्ट परिणाम धोकर, शुद्ध, सुदृढ़, सुव्यवस्थित, स्नेहपूर्ण समाज का पुनःसंस्थापन करने के कार्य को आगे बढ़ाना है, इसी कारण उधर कभी ध्यान देकर उनकी विचित्रताओं से समाज सुरक्षित रखने का उद्योग करना होता है।

किसी भी कारण से शाखाओं के प्रति अपना दुर्लक्ष्य होना ठीक नहीं। यह ध्यान में रखकर अन्यान्य समाजहितकारक कार्यों को सुचारु रूप से चलाने की प्रेरणा देना ठीक हो सकता है। अतः अपने उत्साह में शाखाओं के दैनंदिन संचालन में न्यूनाधिक्य होते रहना ठीक नहीं। उत्साह

निरंतर वर्धमान रहना आवश्यक है, यह जानकारी सब छोटे-बड़े बंधुओं को देकर प्रत्येक अपना कार्यभार सुचारु रूप से सँभालेगा, ऐसा करना आवश्यक है। इस प्रकार करने से कार्य उत्तम रीति से बढ़ेगा- यह विश्वास है।

६. शिशुओं की शिक्षा का महत्त्व

श्री रामप्रसाद जी, रामपुर ५ अगस्त १९५५

आपने शिशु मंदिर स्थापित करने का विचार किया है, यह ठीक ही है। समाज सेवा का यह भी अंग है। यद्यपि प्रत्येक माता-पिता का यह कर्तव्य है कि अपने शिशुओं को प्राथमिक शिक्षा-दीक्षा देकर योग्य संस्कार प्रदान करें तथा उनके कुछ बड़े होने पर वे पाठशालाओं में जाने लगे, तब भी अपने आचरण से तथा शिक्षा से उत्तम गुणों को एवं संस्कारों की वृद्धि करने में सचेष्ट रहें। आजकल ऐसा दिखता है कि माता-पिता सामान्य प्राणियों की भाँति केवल प्रजोत्पादन ही करना जानते हैं। ऐसी स्थिति में अन्य किन्हीं सद्भावयुक्त सज्जनों को यह भार वहन करना आवश्यक होता है, जो रामपुर में आप उठा रहे हैं। इसके लिए आप अभिनंदन के पात्र हैं।

समाज-सेवा का यह एक अंगमात्र है, इसका स्मरण रखकर अपने समाज की सर्वाधिक महत्त्व की आवश्यकता को पूर्ण करने के अपने कार्य में सचेष्ट रहना आप भूलेंगे नहीं, ऐसा विश्वास है।

७. इक्यावनवीं वर्षगाँठ

श्री जगन्नाथराव जोशी, ३ मार्च १९५६

८ मार्च १९५६ को इस शरीर का जन्मदिन है। ५० वर्ष पूर्ण होते हैं इसलिए इसकी घोषणा विशेष धूमधाम से करना, यह अभी स्वयंसेवकों के बीच चर्चा व कार्य का एक विषय है। लोग जो करेंगे, वह थोड़ा ही है। मैं इस संबंध में कुछ न कहूँ, ऐसा आदेश है, इसलिए सब सहने के लिए मन की सिद्धता करने के प्रयास में हूँ। यह एक अग्निपरीक्षा ही है। जैसी श्री प्रभु की इच्छा।

आप श्री नारायणराव गोरे, श्री त्रिदिब चौधरी आदि श्रेष्ठ पुरुष मातृभूमि के शेष भाग के विमोचनार्थ कारावास भोगें तथा हम यहाँ ऐसे प्रसंग धूमधाम से संपन्न कर आनंद लूटने की योजनाएँ बनाएँ, यह अति

विचित्र है। मुझे क्या लगता है, यह मैं व्यक्त नहीं कर सकता। आप समझ लें।

आपकी उंगलियों का घाव अभी भी पीड़ा दे रहा है, यह जानकर बहुत दुःख हो रहा है। इस अवस्था में बाहर आना आवश्यक है, तो भी उधर किसी का ध्यान नहीं है। संप्रति कुछ नेता सत्ता चिरंजीवी बनाने, उसके लिए इष्टानिष्ट मार्ग से प्रयत्न करने, भाषा, प्रांत आदि अभिनिवेश से प्रेरित होकर आपसी संघर्ष करने तथा शेष लोग अन्य स्वार्थों में लीन हैं। जिस क्षेत्र से ये प्रश्न सुलझाए जाना चाहिए, वहाँ सर्वत्र अंधकार ही दिखता है। सत्ता-स्वार्थ-सिद्धि छोड़कर बुद्धि अन्य किसी भी प्रश्न पर काम करती हुई, कम से कम ठीक करती हुई नहीं दिखती। (मूल मराठी)

८. राजनैतिक हलचलों से दूर रहता हूँ

श्री जगन्नाथ पेडणेकर, गोवा ३ जुलाई १९५७

आपने चुनाव आदि के बारे में पूछा है। मैं इन सब राजनैतिक हलचलों से दूर रहता हूँ। चुनाव से मेरा किसी भी प्रकार का संबंध नहीं आता, किंतु अपने समाज में किसी भी बात को लेकर विच्छेद निर्माण करना या बढ़ाना, स्वार्थवश समाज-विरोधी अहितकारी तत्त्वों से भी हाथ मिलाने के लिए प्रवृत्त होना, तात्कालिक आंदोलनात्मक भड़कीली कार्यवाहियों के मोह में पड़कर अंततोगत्वा राष्ट्र के लिए मारक सिद्ध हो सकनेवाले कार्यकलापों से संबंध जोड़कर अप्रत्यक्ष रीति से क्यों न हो, बढ़ावा देना इत्यादि अनेक संकट चुनाव के वायुमंडल में अधिक नग्न रूप में प्रकट हुए। उन्हें देखता रहा था। राजनैतिक दलबंदी, स्वार्थनिरत गुटबंदी आदि से परे विशुद्ध समाज प्रेम की नींव पर सुदृढ़ संगठित जीवन-शक्ति का निर्माण ही इन संकटों में तारणहार है, इस अपने निर्णय को हृदय में अधिक दृढ़मूल करनेवाले इन प्रमाणों के बल पर अपना संघकार्य बाह्य वायुमंडल से अनाहत रखकर उसकी वृद्धि में जुटे रहना ही अत्यावश्यक जानकर उसमें ही लगा रहा। परिणाम आगे श्री भगवान की कृपा से दिखाई देगा।

मातृभूमि के प्रत्येक कण की मुक्ति हेतु संकटों से लोहा लेनेवाले आप सबको नम्रतापूर्वक वंदन कर यह पत्र यहीं पूर्ण करता हूँ और श्री परमात्मा से उत्कृष्ट भविष्य के लिए प्रार्थना करता हूँ।

९. शिक्षा में चारित्र्य-गठन की ओर विशेष ध्यान रहे

श्री ठाकुरदास टंडन, उदयपुर   ११ जुलाई १९५७

'विद्या निकेतन' खुलने का समाचार पढ़ा। विश्वास है कि छात्रों को जो सामान्य शिक्षा अन्य पाठशाला में दी जाती है, वह तो मिलेगी ही, परंतु उसके साथ ही शुद्ध राष्ट्रभक्ति तथा पवित्र चारित्र्य-गठन की ओर विशेष ध्यान रहेगा। सद्गुणों से, सात्विकता से अंतःकरण तथा उत्तम स्वास्थ्य एवं बल से शरीर सुदृढ़ करना आवश्यक है, यह तो सब जानते ही हैं। इन बातों के साथ परस्पर स्नेह, सौहार्द, बंधुता का सूत्र अखिल भारतव्यापी बनता हुआ तथा 'सर्वेऽत्र सुखिनः सन्तु' आदि में प्रकट भाव को साक्षात् करता हुआ दृढ़ अनुशासन में व्यक्त हो, इस ओर भी ध्यान देना आवश्यक प्रतीत होता है। इन सब सद्भावों का निर्माण प्रधान लक्ष्य रहे, तभी 'विद्या निकेतन' अपने निर्माण में सफल हुआ, ऐसा कह सकेंगे।

उसके समय के संबंध में कहना है कि यदि प्रातः ७ से १० और अपराह्न में २ से ४ का समय निर्धारित किया, तो कैसा रहेगा? मेरी समझ में इसमें असुविधा न होकर अपनी प्राचीन पद्धति का भी कुछ मात्रा में अनुसरण होगा। लगातार पाँच-छः घंटे काम चलाने से दो भागों में चलाना अधिक लाभदायक हो सकता है। छात्रों का मन अधिक सुगमता से एकाग्र होने में यह व्यवस्था साधक होगी, ऐसा मुझे लगता है।

१०. सफलता के आनंद में स्वकर्तव्य का ध्यान रहे

श्री अजित मित्र, मालदा,   १० मार्च १९५८

म्युनिसिपल चुनाव में आप तथा श्री बुलुदा सफल हुए, यह जानकर प्रसन्नता हुई। आप दोनों का अभिनंदन करता हूँ। इस हर्ष के प्रसंग पर भी अपने निकटवर्ती तथा स्नेहास्पद महानुभाव असफल हुए, उनकी असफलता के लिए दुःख होना स्वाभाविक ही है। मेरे जैसे के जीवन में ऐसे सुख-दुःख मिश्रित प्रसंग आते ही हैं। दोनों भावनाओं का परस्पर छेद होकर मेरा मन अपनी प्राकृतिक संतुलित अवस्था में ही रह जाता है। यही शास्त्र का आदेश भी है कि सुख-दुःख में समानरूप रहना चाहिए। अतः सफलता का आनंद भोगते हुए भी उसका मन पर विपरीत परिणाम न होने देते हुए स्वकर्तव्य का ध्यान रखकर तथा नगरपालिका में प्राप्त स्थान के लिए उचित कर्तव्य को स्मरण में रखकर पूरी शक्ति से कार्य में लगना आवश्यक एवं उचित है।

साथ ही अपना जीवनव्यापी कार्य, उसके सब अंगों का हृदयतापूर्वक परिपालन करने में कुछ भी न्यूनता न आने देना अतीव आवश्यक है।

११. चुनावों की सफलता कार्य का मापदंड नहीं

श्री सत्यनारायण जी बंसल, दिल्ली २५ मार्च १९५८

....मेरी ओर से एक बात स्पष्ट करना आवश्यक है। मेरा जनसंघ के कार्यकर्ताओं में से कतिपय व्यक्तियों के साथ स्नेहसंबंध अवश्य है, किंतु मैं उनके कार्य में हस्तक्षेप करने की न तो इच्छा रखता हूँ, न अधिकार ही। अतः किसी को जनसंघ में कोई काम या कोई विशेष स्थान देने के सम्बन्ध में मैं उनसे कुछ नहीं कह सकता। मेरे कहने पर वे लोग स्नेहवश मानने के लिए सिद्ध भी हों, तो भी मैं कह नहीं सकता, कहना मेरे क्षेत्र के बाहर है।

आपके पत्र से आप राजनीति में रुचि रखते हैं, ऐसा दिखता है। फिर आपको दिल्ली की कांग्रेस-विरोधी भावना प्रबल होने से जनसंघ को आशातीत सफलता प्राप्त हुई तथा जनता ने जनसंघ को अपना विश्वास व समर्थन दिया है, ऐसा कहते या लिखते समय अपने विचार में कुछ त्रुटि होने का भाव क्यों नहीं होता? इस 'सफलता' में संतोष क्यों होता है? यह अतीव क्षणिक भावना है। यह तो स्पष्ट है कि तात्कालिक चुनावों की सफलता यह कार्य का मापदंड नहीं है। वास्तविक रूप से जनसाधारण के विचार-परिवर्तन, उनका स्थायी होना, सचाई से विचारों पर दृढ़ रहना, राष्ट्रीय चारित्र्य से युक्त होने के फलस्वरूप सामयिक भावनाओं की लहरों में न बहने की शक्ति रहना, इन बातों में कितनी सफलता मिली है, यही विचारणीय है, ऐसा मुझे लगता है। आप तो स्वयं यह सब जानते हैं, अतः इस संबंध में अधिक कुछ लिखता नहीं।

१२. अध्यवसायी वृत्ति के शिक्षक

श्री भैयासाहब दबड़घाव, पुणे १३ अगस्त १९५८

'नूतन मराठी विद्यालय' ने विद्यादान के अपने पुनीत कार्य के ७५ वर्ष पूर्ण कर ७६वें वर्ष में पदार्पण किया है, यह विद्यालय के भूतपूर्व तथा वर्तमान चालक-वर्ग को भूषणीय है। विविध शैक्षिक कार्यों में तथा प्रत्यक्ष परीक्षाओं की शिक्षा में विद्यालय ने सदा उच्चकोटि का स्थान पाया है। विद्यालय ने उत्तम छात्र निर्माण किए हैं, यह सर्वश्रुत है। इसका श्रेय

अध्यवसायी शिक्षकों को है। विद्यार्थी अपने हाथों में सौंपी हुई राष्ट्रीय अमानत है, उसकी अधिकाधिक अभिवृद्धि करने में ही शिक्षकों का जीवन सार्थक है, इस पवित्र बोध से व्यवहार करनेवाले उत्कृष्ट शिक्षकों के कारण ही होता यह विलोभनीय यश तथा उज्ज्वल कीर्ति विद्यालय तथा उससे संबंधित माध्यमिक विद्यालय को प्राप्त हुई है।

नूतन मराठी विद्यालय तथा उससे संबंधित माध्यमिक विद्यालय तथा सर परशुरामभाऊ कॉलेज आदि महाविद्यालय इतनी सफलतापूर्वक संचालन करने का कठिन काम करनेवाले 'शिक्षण प्रसारक मंडल' का जितना अभिनंदन किया जाए, उतना थोड़ा ही है। मंडल को भी ७० वर्ष पूर्ण हो चुके हैं तथा पूर्ण उत्साह से शिक्षा के प्रसारार्थ अनेकविध योजनाएँ हाथ में लेकर नए-नए स्थानों पर शिक्षा-केंद्र खोलने की श्रेष्ठ महत्त्वाकांक्षा मन में रखकर, तदनुरूप कार्य अपने हाथों में लेंगे तथा उन्हें सफल करेंगे। अपने इस ध्येय के अनुरूप सारी आकांक्षाएँ तथा योजनाएँ सफल करने के लिए मंडल अविराम परिश्रम कर रहा है, यह देखकर मन को परम आह्लाद हो रहा है। अपने कार्य में पूर्ण यश प्राप्त कर ज्ञान के विविध क्षेत्रों में मौलिक योग देनेवाली, श्रमयुक्त ज्ञानोपासना करनेवाली, राष्ट्र की सर्वांगीण उन्नति के लिए निरलसता से, निःस्वार्थता से आजीवन प्रयत्नशील ऐसी एक के बाद एक पीढ़ी शिक्षित कर आगे लाने का महनीय कार्य करते हुए, 'शिक्षा प्रसारक मंडल' तथा उसके द्वारा सद्यःसंचालित तथा भविष्य में संचालित होनेवाली सभी संस्थाएँ चिरायु हों। उनका उत्तरोत्तर उत्कर्ष हो, यह इस अमृतोत्सव के शुभ अवसर पर परमदयालु सर्वज्ञानमय तपोमय जगत्पिता के चरणों में प्रार्थना करता हूँ। (मूल मराठी)

१३. सातत्य से जनजागरण व संगठन के प्रयत्न

श्री बालकृष्ण मेनन, पालघाट (केरल) २६ मार्च १९५९

....आपके द्वारा भेजा गया स्नेहभरा पत्र, वहाँ की परिस्थिति का सर्वसाधारण विस्तृत चित्र प्रस्तुत करता है। परंतु भयाकुल होने से भी कुछ होनेवाला नहीं है। स्थिर वृत्ति से निरंतर प्रयत्नशील रहने की आवश्यकता है। राजनीतिक दलों एवं गुटों के द्वारा अकस्मात कुछ कार्यवाही के बारे में सोचा जाना असंभव नहीं है। परंतु ऐसी सभी घटनाओं के विषय में संबंधित व्यक्तिविशेषों को चाहिए कि सबकी पूर्व सहमति सुनिश्चित करने के लिए विचार-विनिमय बहुत आवश्यक होता है, वह करें। केवल एकाध

कार्यक्रम तय करना और उसी के माध्यम से लोगों को जानकारी देकर सबकी सहमति का आह्वान करना अनेकों के लिए कष्टप्रद सिद्ध हो सकता है। जहाँ तक अपने कार्य का संबंध हो, आप जानते ही हैं कि अपने मित्र, कार्यकर्तागण और श्री परमेश्वरन् आपके संगठन के लिए तत्परता से प्रयास कर रहे हैं। कार्य को यथोचित ढंग से एवं क्षमाशील वृत्ति धारण करते हुए किया गया तो गलतफहमी होने का कारण नहीं, ऐसा मुझे लगता है।

स्थिर वृत्ति धारण कर एवं सातत्य से प्रयत्न करते हुए जनजागरण और संगठन की सुदृढ नींव पर आधारित सशक्त, एकसंघ एवं अपने वैशिष्ट्यपूर्ण जीवन की विरासत के साथ केरल प्रदेश का निर्माण कर उसे हमेशा के लिए स्वाभिमानपूर्वक खड़ा किया जा सकता है।.. (मूल अंग्रेजी)

१४. केरल की सरकार हटाने का आंदोलन असमर्थनीय

श्री देवेन्द्र जी, राष्ट्रधर्म प्रकाशन, लखनऊ २६ जून १९५९

'पांचजन्य' का केरल की स्थिति के विषय में अंक प्रसिद्ध करने की आपकी योजना अच्छी है।

एक बात स्पष्ट है कि जनतंत्राधिष्ठित रचना तथा प्रचलित आधारभूत संविधान को मानना हो, तो यह जो आंदोलन छेड़ा गया है, वह समर्थनीय नहीं दिखता। किसी को बलप्रयोग से चाहे वह सत्याग्रहादि आंदोलनों के रूप में प्रयुक्त क्यों न हो, सत्ताधिष्ठित दल को अपदस्थ करना एवं स्वयं सत्ता प्राप्त करना ही उचित दिखता हो, संविधान के प्रति सर्वथा अनादर हो, 'माईट इज राइट' (जिसकी लाठी उसकी भैंस– स.) जिनका सिद्धांत हो, उनकी दृष्टि से सब प्रकार के अनवस्थापूर्ण कार्यकलाप ठीक ही हैं। आजकल केरल में सत्ताधिष्ठित दल अराष्ट्रीय है, यह जब तक निःसंदिग्ध रूप से केंद्रीय शासन तथा संविधान घोषित नहीं करता, तब तक संविधान पर श्रद्धा रखनेवाले, अभी चल रहे आंदोलन का समर्थन कर सकेंगे, ऐसा मैं नहीं समझता।

१५. अनुभवी देशभक्त का मार्गदर्शन

२० अप्रैल १९५९

श्री शि.ह.धुपकर, कार्यवाह, तिलक महाराष्ट्र विश्वविद्यालय, पुणे

यह जानकर परम संतोष हुआ कि दीक्षांत भाषण द्वारा स्नातकों

को मान्यवर श्री हरिभाऊ पाटसकर जैसे पुराने अनुभवी देशभक्त का मार्गदर्शन प्राप्त होनेवाला है। अपने देश के एक पुराने प्रखर राष्ट्रभक्ति की प्रेरणा से आविर्भूत हो, किसी की भी कृपा पर लालच-भरी दृष्टि से निर्भर रहकर लाचारिता स्वीकारना तिरस्कार्य मानकर निर्भयता से मानधनता से चलनेवाला आपका पवित्र विश्वविद्यालय हैं। विश्वास है कि यहाँ से शिक्षित होकर संघर्षरत जीवन में पदार्पण करनेवाले स्नातक विद्यापीठ की कीर्ति को शोभा देनेवाले, कीर्ति में चार चाँद लगानेवाले, निःस्वार्थ, निरपेक्ष, निर्भय राष्ट्रभक्त के नाते शोभा देंगे। तदर्थ श्री प्रभुचरणों में प्रार्थना करता हूँ।

१६. नगरपालिका वास्तविक सुधार करे

श्री जमुनादास जी वर्मा, बिलासपुर ३० अगस्त १९५९

...आशा है कि राजपत्र में यह प्रकाशित होकर आप नगरपालिकाध्यक्ष का कार्यभार सँभालने लगे होंगे। अत्यंत कष्ट का तथा किसी का भी मन प्रसन्न रखने के लिए कठिन, ऐसा यह कार्य है। किंतु अपनी सर्वसंग्राहक स्नेहपूर्णता से आप कांग्रेस आदि नामों से प्रसिद्ध अपने बंधुओं को अपनाकर नगरपालिका में पूर्ण सहयोग का वायुमंडल निर्माण कर सकेंगे और नगरपालिका को नगर में वास्तविक सुधार करने में समर्थ करेंगे, ऐसा मुझे विश्वास है।

चुनाव आदि के कारण अपने पक्षभेदातीत कार्य में कोई बाधा न आए तथा जो अपने ही बंधु के नाते परिचित हैं, वे अपने सेवाभाव, परिश्रम, तथा चारित्र्य से कार्य का पवित्र नाम उज्ज्वल रखें। ऐसा हो इस ओर आपको दत्तचित्त होकर ध्यान देना आवश्यक प्रतीत होता है। मेरा इस संबंध में आप पर पूर्ण भरोसा है। मित्रवर श्री राघोमल आदि उत्तम बंधु हैं। अतः सब सफलतापूर्वक होगा, ऐसा विश्वास है।

'भारतीय सेवाश्रम संघ' के कुछ साधु मेरे परिचय के हैं। उनके विचार भी अपने से मिलते-जुलते हैं। कार्य की पद्धति मात्र भिन्न है। वहाँ कौन आए हैं, उनको मैं जानता नहीं। किंतु अपने अभी तक प्रसिद्ध सिद्धांतों के अनुसार आदिवासियों में वे जागरण का कार्य कर रहे हों, तो काम ठीक ही रहेगा। उसकी जाँच करनी होगी तथा कहाँ तक सहयोग करना ठीक रहेगा, इसका परिस्थिति देखकर निर्णय करना होगा।

१७. मूल्यांकन स्वयं के निरीक्षण से

श्री टी.बालकृष्ण मेनन, पालघाट (केरल) २४ सितंबर १९५९

केरल की पूर्व एवं प्रचलित परिस्थिति के विषय में आपके द्वारा किए गए सुस्पष्ट विश्लेषण के कारण मैं आपके प्रति कृतज्ञ हूँ। श्रीमन् पद्मनाभनजी, जिनकी श्रेष्ठता महती वाद-विवाद से परे है, के बारे में आपकी उदात्त भावना से अवगत होने के कारण मैं विशेष रूप से संतोष का अनुभव कर रहा हूँ। ऐसे श्रेष्ठ पुरुषों का स्मरण कर उनके संबंध में गौरव-भावना का अनुभव करना अपने लिए कल्याणप्रद रहता है। यद्यपि हम जानते हैं कि उनकी यथार्थ महत्ता में प्रशंसा के सामान्य शब्द जोड़ने के लिए हम बहुत ही छोटे हैं।

मैं नहीं जानता कि वहाँ की परिस्थिति के मूल्यांकन में मुझे किससे मार्गदर्शन प्राप्त हुआ? इस बारे में आपका संकेत किस व्यक्ति की ओर है? चाहे जिसके संबंध में आपका संकेत हो, कृपया मुझे सुस्पष्ट रूप से आपको अवगत कराने दें कि अपने स्वयं के निरीक्षण के आधार पर, स्वतंत्र रूप से स्वयं ही चिंतन कर मैं अपनी धारणा बनाता हूँ। यह धारणा बहुत बार मेरे मित्रों के विचारों से मेल नहीं खाती। कभी विरोधी भी रहती है, क्योंकि जैसा वे देखते हैं और अनुभव करते हैं, उसी आधार को लेकर वे परिस्थिति को प्रस्तुत करते हैं। इस समय संभवतः आपके साथ भी ऐसा ही हुआ है।

वहाँ की स्थिति बहुत तरल व अस्थिर है और अनेक संभाव्यताओं को निर्माण करने की क्षमता रखती है। परिस्थिति में हो रहे इस विकसन को हम सजगता से देखें। अपने आवश्यक हितों की सुरक्षा की ओर ध्यान दें। कुछ समय बीतने के पश्चात् शायद सभी के लिए समस्या का शांतिपूर्वक सोचा गया सही निर्णय संभव हो सकेगा। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि यदि मेरी त्रुटि हो, तो उसे सुधारने के लिए मैं हमेशा तत्पर रहता हूँ। इसका कारण भी स्पष्ट है। परमात्मा की कृपा से मैं जानता हूँ कि मेरा ज्ञान अल्पमात्र है और मुझे जीवनभर शिक्षा ग्रहण करनी है।

(मूल अंग्रेजी)

१८. विद्यार्थी-जीवन राष्ट्रोपयोगी हो

श्री मदनलाल खुराना, प्रयाग २ मार्च १९६०

'साधना' सफल हो। विद्यार्थी जीवन में बहुत उथल-पुथल है, यह स्वाभाविक ही है। स्पष्ट ध्येय तथा तदर्थ समर्पण का विशुद्ध भाव न होने से, साथ ही चारों ओर की आंदोलनकारी ध्वंसात्मक प्रणालियों की ओर यौवन-सुलभ झुकाव हो जाने से जीवन अस्तव्यस्त होकर आगे राष्ट्रोपयोगी होने की संभावना कम हो रही है। इसमें सबको मिलकर सुधार करने की चेष्टा करने की अत्यंत आवश्यकता है। केवल छात्रों को उद्दंड आदि अपशब्दों का 'उपहार' देना ठीक नहीं, लाभदायी भी नहीं। आप अपनी शक्ति लगाकर प्रयत्न करें, श्री प्रभुकृपा आपका साथ देगी।

१९. दूसरों को प्रसन्न रखा जाए

श्री नारायणराव शेजवलकर, ग्वालियर (मध्यभारत) १६ अप्रैल १९६०

आपको प्राप्त हुए इस नए पद के अनुरूप नगर की सेवा करने में कठिनाइयाँ आएँगी। आजकल के प्रजातंत्र में सब लोगों का लाभ हो, इस ओर ध्यान रहने की अपेक्षा लाभ होना हो तो वह अपनी ओर से हो, अन्य कोई कहे कि मैं करूँगा तो उसे विरोध किया जाए एवं उसके द्वारा जहाँ तक हो सके, अच्छा न होने दिया जाए, इस ओर ही विशेष ध्यान रहता है। इससे आपके द्वारा की गई अच्छी हितकारी योजनाओं में बाधा लाना ही अपना पुनीत कर्तव्य समझनेवालों की बाधा आपको सहन करनी पड़ेगी। अपनी कुशलता से एवं 'बहुतों का हृदय प्रसन्न रखा जाए', इस नीति से मार्ग निकालकर अधिकाधिक जनहित साध्य करने का प्रयत्न करना पड़ेगा। मुझे विश्वास है कि इसमें आप सफल होंगे। (मूल मराठी)

२०. सच्चा समाज ग्रामों में रहता है

श्री रामभाऊ गोडबोले, पुणे २८ जून १९६०

अपना सच्चा समाज ग्रामीण-विभाग में ही रहता है। वह खेती, छोटे-मोटे उद्योग, व्यापार, शहरों के कल-कारखानों आदि में मेहनत-मजदूरी करनेवाला है। इनके सुख के लिए सब को प्रयत्न करना है। उनका ज्ञान और चारित्र्य पुष्ट कर राष्ट्र को समृद्ध करना है। उनके साथ अपनी

समरसता की स्थिति प्राप्त करना आवश्यक है। बाधाएँ अनेक हैं, अनेक विकृत पूर्वाग्रह निर्माण किए गए हैं, किए जा रहे हैं। इस कार्य का विस्तार भी अमर्याद है। इसलिए पराकाष्ठा के प्रयत्नों की आवश्यकता है। चौमुखी प्रयत्न होने चाहिए। दलगतहित की दृष्टि से कुछ लाभ हो या न हो, अपने समाज का महान अंग स्वस्थ, निरुज, सुदृढ़ हो तथा उसका जीवन सुखी हो, इस निश्चय से कार्य करने से विशुद्ध राष्ट्रीयत्व की पहचान होती है। इसी राष्ट्रीयत्व की भावना से दलीय कार्य में सफलता मिलेगी। (मूल मराठी)

२१. राष्टहितार्थ कुटीर उद्योग

श्री फूलसिंह साहू, कल्याणाश्रम, जशपुरनगर — १२ अगस्त १९६०

आप कल्याणाश्रम के कार्य में लग गए हैं तथा तत्संबंधी अंबर चरखा केंद्र चलाने का कार्य आपको प्राप्त हुआ है, यह जानकर बहुत प्रसन्नता हुई। अपने समाज की वास्तविक एकता का प्रसार करते हुए अपने संबंध में आनेवाले वनवासी बंधुओं को सद्गुणसंपन्न स्वराष्ट्र के यथार्थ ज्ञान से परिचित करना तथा राष्ट्रहितार्थ नित्य यत्नशील रहने का स्वभाव उनमें निर्माण करना यह आपके कार्य का प्रमुख अंग है, ऐसा मुझे लगता है। साथ ही कुटीर उद्योग के रूप में चरखे के कार्य का ज्ञान कराकर उन्हें स्वपोषण के हेतु आत्मनिर्भर करते हुए शुद्ध आत्मविश्वास जगाना, यह भी अति महत्त्व का अंग है। आप इसमें सफल होंगे– ऐसा मुझे विश्वास है।

२२. दबाव के बिना चयन

श्री मनोहर मुजुमदार, मुंबई — २१ अगस्त १९६०

....हिंदुस्थान समाचार लिमिटेड के एक सदस्य निवृत्त होने जा रहे हैं। इसलिए विचार हुआ कि उनके स्थान पर दूसरा कोई निष्पक्ष सज्जन लिया जाए। अपने श्री कामदार का नाम सामने आया है।...इसलिए आप श्री कामदार से पूछकर उनकी सहमति प्राप्त करने का प्रयत्न करें तो अच्छा होगा। श्री दादासाहब आप्टे दिल्ली गए हुए हैं। उन्हें इस विषय में अधिक पूछना हो तो पत्र भेजकर विस्तृत जानकारी प्राप्त कर लें। श्री दादासाहब की श्री कामदारजी से भेंट कराना आवश्यक हो, तो वैसा उन्हें सूचित करें। श्री कामदारजी से बातचीत करते समय प्रारंभ में मेरे नाम का उल्लेख न करते हुए दादासाहब आप्टे आदि का ही करें। उन्होंने मेरा अभिप्राय पूछा,

तो ही उल्लेख करें कि मेरी ओर से भी यही सूचना है। मेरे नाम का दबाव उन पर व्यर्थ न डालें।.... (मूल मराठी)

२३. पक्षपातरहित वृत्ति अपेक्षित

श्री दादासाहब आप्टे, दिल्ली २७ अगस्त १९६०

'पी.टी.आई.' से स्पर्धा न करनेवाली, किंतु उसकी पूरक रहनेवाली, जिस क्षेत्र में पी.टी.आई. का प्रवेश नहीं हुआ है एवं अपेक्षित भी नहीं है, उन क्षेत्रों के वृत्त संकलन करनेवाली एवं इतने वर्ष की प्रतिकूल परिस्थिति में रहकर भी प्रगति करनेवाली विशुद्ध राष्ट्रीय वृत्त-वितरण संस्था के नाते 'हिंदुस्थान समाचार' को न्याय्य सहायता प्राप्त हो। प्रादेशिक एवं केंद्रीय शासन में संकुचित मनोवृत्ति, अपने पक्ष के प्रति अनुकूल रहने की अन्याय व पक्षपातपूर्ण प्रवृत्ति सर्वथा हेय है। इस प्रकार की पक्षपातपूर्ण प्रवृत्ति रही एवं बढ़ी तो देश में भयंकर असंतोष एवं फलस्वरूप अनवस्था पैदा हो सकती है। अतएव वह प्रवृत्ति अनिष्ट, राष्ट्र को अहितकर एवं पूर्णतः त्याज्य है, यह समझ-बूझकर शासन चलानेवाले व्यवहार करेंगे तो यह सहायता प्राप्त होना सहज संभव है। सत्प्रवृत्ति एवं सद्भाव उनके अंतःकरण में जागृत हो, यही हम सब की अपेक्षा रह सकती है।

(मूल मराठी)

२४. जनता की सहानुभूति प्राप्त हो

श्री बाळासाहब देशपांडे, कल्याणाश्रम, जशपुर २७ सितंबर १९६०

आपके यज्ञ का कार्यक्रम धर्मजागरण की दृष्टि से सफल हुआ होगा। जनता में उत्साह की लहर दौड़ गई होगी। इसके आगे यह धर्मभावना स्थायी रहकर, अपने आश्रम-कार्य में जनता की बढ़ती हुई सहानुभूति एवं सहायता प्राप्त हो, इसके लिए प्रयत्न करना चाहिए। उस क्षेत्र में विधर्मियों के आक्रमण को दूर करने के कार्य में बढ़ता हुआ यश प्राप्त हो, ऐसा सब बंधु प्रयत्न करें। इस पवित्र कार्य में अगुवाई करने के लिए श्रीमान् राजासाहब को मेरा सधन्यवाद सादर नमस्कार कहें। श्री स्वामी करपात्री महाराज आदि साधुवृंदों के चरणों में अनंत साष्टांग प्रणिपात।

(मूल मराठी)

२५. कार्य सर्वथा समयानुकूल है

श्री मोहनलाल जी श्रीवास्तव, दिल्ली ३ दिसंबर १९६०

श्रद्धेय श्री गुरुदत्त जी की अध्यक्षता में अखिल भारतीय साहित्यकार संघ का वार्षिक अधिवेशन....मकर संक्रमण के पुण्य पर्व पर होने जा रहा है, यह जानकर बहुत प्रसन्नता हुई। श्रद्धेय वैद्यजी से इस विषय पर वार्तालाप करने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ था। देशभर की विभिन्न भाषाओं में प्रतिथयश, राष्ट्रीय संस्कृति के उपासक साहित्यकारों का सुसूत्र संगठन सद्यःस्थिति में अतीव आवश्यक है। आप लोग इस आवश्यकता की पूर्ति करने हेतु इस साहित्यकार संघ का उद्योग कर रहे हैं। यह प्रयास सर्वथा समयानुकूल है, अति अभिनंदनीय है।

प्रगतिशील साहित्य के विलोभनीय नाम से मानव-मात्र को उत्पथगामी बनाने के विशेषतः अपने भारत में स्वराष्ट्र, स्वसंस्कृति, स्वधर्म को उध्वस्त करने के प्रयत्न दिन-प्रतिदिन अधिक व्यापक रूप में प्रकट हो रहे हैं। उसका जनमानस से प्रभाव समूल नष्ट करना तथा स्वराष्ट्र का यथोचित उत्कट अभिमान जागृत करना, यह श्रेष्ठ कार्य साहित्यकार संघ को करना है। मुझे विश्वास है कि श्रद्धेय वैद्य गुरुदत्त जी की अध्यक्षता में वह कार्य पूर्ण रूप से सफल होगा। श्रद्धेय वैद्यजी स्वयं इस उदात्त साहित्य निर्माण करनेवालों में अग्रगण्य हैं और उनका प्रत्यक्ष आदर्श सबको उचित प्रेरणाप्रद एवं मार्गदर्शक होगा इसमें संदेह नहीं।

२६. हिंदू-सिख अलगाव के भावों को हटाएँ

श्री गुरुदेव सिंह नामधारी, लुधियाना ३ मार्च १९६१

श्री सद्गुरु जगजीतसिंह महाराज की प्रेरणा तथा मार्गदर्शन होने से सब बंधु सर्व कार्यक्रम उत्साह से पूर्ण करेंगे तथा अपने प्रभाव से सात्विकता, धर्मश्रद्धा का वायुमंडल फैलाकर क्षुद्र राजैनतिक स्वार्थ से जो लोग हिंदू-सिख अलगाव उत्पन्न कर रहे हैं, उस विपरीत भाव को हटा देंगे, इसका मुझे पूर्ण विश्वास है। श्री सद्गुरु महाराज की हम लोगों पर नित्य कृपा रही है और अभी के श्री सद्गुरु महाराज भी वही कृपा कर रहे हैं।

मैं भैणीसाहब में अवश्य आता, किंतु अब समय नहीं है। इस कारण श्री महाराज जी से क्षमायाचना करता हूँ। सब श्रेष्ठजनों को अभिवादन करता हूँ। इति शम्।

२७. वीर-गाथाओं से जनसाधारण की भावशुद्धि

४ मार्च १९६१

श्री लक्ष्मीनारायण कुशवाहा, उदयराज हिंदू कॉलेज काशीपुर, (नैनीताल)

'वीरांगना' कर्मदेवी' खंडकाव्य का विषय श्रेष्ठ है। आपके पास शब्दसंपत्ति भी विपुल है, आपके अधीन है। राष्ट्र के वीरों की गाथा आज के जनसाधारण को हृद्य काव्य-रूप में सुनाकर उसकी भावशुद्धि करना आवश्यक है। राष्ट्रजीवन के अनेकविध पहलुओं में जिन्होंने निःस्वार्थ भाव से सेवा की है, वे वीर ही हैं। केवल रणांगण पर शस्त्रों के आघात-प्रत्याघात में निर्भयतापूर्वक सर्वस्वार्पण करनेवाले ही नहीं, अपितु धर्म के क्षेत्र में, उद्योगों के क्षेत्र में, शिक्षा क्षेत्र में, आध्यात्मिक साधना के क्षेत्र में जिन्होंने अकुतोभय होकर जनसाधारण का मार्गदर्शन किया है, ऐसे अगणित महापुरुष आपकी प्रतिभा के लिए वर्ण्य विषय हो सकते हैं। मुझे आशा है कि आपका काव्यगुण इन श्रेष्ठ पुरुषों का सरस वर्णन कर जन-जन को उपकारक होता रहेगा।

प्रस्तुत खंडकाव्य के विषय के संबंध में कुछ कहने की मेरी शक्ति नहीं है। तो भी कभी भेंट होने पर कुछ विचार कहने की धृष्टता करूँगा। पत्रों में मैं अपने विचार व्यक्त कर सकूँगा, ऐसा मुझे विश्वास न होने के कारण ही प्रत्यक्ष मिलने के अवसर तक प्रतीक्षा करने लिए बाध्य हूँ।

२८. कोंकण के आर्थिक विकास का प्रयत्न अभिनंदनीय

श्री पांडुरंगपंत खेडकर, चिपलूण　　१५ मार्च १९६१

उद्योग मंदिर का सदा उत्कर्ष हो, यह मेरी आंतरिक इच्छा आपकी सेवा में निवेदन करता हूँ। आपने जो योजना बनाई है, वह अनेक वर्षों से मेरे मन में विचार-रूप में थी। ऐसा कुछ करने के विषय में अनेकों के साथ अनेक बार कहा भी। वही योजना स्वतंत्र रूप से आप लोगों के मन में आकर तुरंत उसपर अमल भी किया गया तथा वह अब साकार होने से आप अगणित युवकों को उद्योग क्षेत्र में प्रस्थापित कर रहे हैं। देश के, विशेषतः कोंकण के आर्थिक विकास के लिए उपयुक्त कार्यारंभ कर रहे हैं, यह आपका विशेष गुण अभिनंदनीय है। मेरी निष्फल इच्छा तथा आपका प्रत्यक्ष कृति में उतारने का निश्चय, दोनों अंतर स्पष्ट है। इसलिए आपके सब सहयोगी कार्यकर्ता बंधुओं के प्रति मेरे मन में असीम आदर उत्पन्न

हुआ। आपकी इस योजना को उत्तरोत्तर वर्धिष्णु यश प्राप्त हो तथा एक महत्त्व के क्षेत्र में महनीय राष्ट्रसेवा कर रहे हैं, इसलिए आपको नित्य संतोष प्राप्त हो, एतदर्थ श्री प्रभुचरणों में विनम्र प्रार्थना कर रहा हूँ। (मूल मराठी)

२९. एकात्मता प्रकट करने का कार्य अभिनंदनीय

श्री विश्वनाथ दिनकर नरवणे, मुंबई　　　　२० मार्च १९६१

आपका 'व्यवहार कोश' प्राप्त हुआ। आपके दीर्घ प्रयत्नों ने मूर्त रूप धारण कर इस कोश के रूप में पूर्णता प्राप्त की है। आपके संकल्पानुसार कुछ अन्य लिपियों में भी इसकी प्रतियाँ उपलब्ध होकर संपूर्ण देशभर में कोश की उपयुक्तता बढ़ेगी, यह विश्वास है।

आप अब तक जो कार्य पूर्ण कर चुके हैं, वह असाधारण कोटि का है। भविष्य में सभी भारतीय भाषाओं की अंतर्बाह्य एकात्मता अंकित करनेवाली ग्रंथ-संपदा का आप निर्माण करें, यह इच्छा है।

भारत की मौलिक एकता चिरंजीवी है, उसका संवर्धन जब तक चलता रहेगा, तब तक वर्तमान विच्छेद-विषासक्त काल में एक अभिनव और अत्यावश्यक मार्ग से आप एकात्मता का अमृतमय अरुणोदय करने वाले हैं। आपका नाम चिरंजीवी रहेगा, सत्कीर्तियुक्त रहेगा।

आपका मुझसे तथा संपूर्ण देशभर फैले हुए आत्मीयों से आत्मीयता का स्नेह-संबंध है, इसका मुझे अभिमान है।

आपकी प्रतिभा इस दिशा में नित्य नूतन सौंदर्य से सुशोभित होकर उत्तरोत्तर अधिक तेजस्विता से व्यक्त होती रहे, यह प्रभुचरणों में प्रार्थना करता हूँ। (मूल मराठी)

३०. विश्वात्मक सत्य से तादात्म्य की अनुभूति

२० मार्च १९६१

श्री प्रकाश अवस्थी, सेक्रेटरी, लखनऊ यूनिवर्सिटी यूनियन, लखनऊ

लखनऊ यूनिवर्सिटी यूनियन की ओर से 'लाईट एंड लर्निंग' का वार्षिकांक आप प्रसिद्ध करने जा रहे हैं, यह पढ़कर बहुत प्रसन्नता हुई। ऐसी 'यूनियनों' के द्वारा कार्यवाहियाँ होना लाभदायक होता है। यह लाभ योग्य दिशा में हो, इस हेतु को लेकर मैं एक विद्वान का अवतरण दे रहा

हूँ– 'संस्कृति चिंतन की चेष्टा है, सौंदर्य तथा मानवी भावनाओं की ग्रहणशीलता है। केवल जानकारी के जुड़े हुए टुकड़ों से उसका कोइ संबंध नहीं। केवल बहुत जानकारी रखनेवाला आदमी ईश्वर की दुनिया में सबसे नीरस व्यक्ति है। जिसमें संस्कृति तथा विशिष्ट दिशादर्शन करने के लिए विशेष ज्ञान है, ऐसे व्यक्ति का निर्माण हमारा उद्देश्य होना चाहिए।' (A.W. Whitehead, The Aims of education)

अपनी राष्ट्रपरंपरा में 'कल्चर' में शुचितासंपन्न, शीलसंपन्न, चारित्र्यसंपन्न, निःस्वार्थ जीवन बनाना तथा व्यक्ति का स्वरूप सुस्पष्टकर विश्वात्मक सत्य से तादात्म्य की अनुभूति करने के मार्ग पर निरंतर बढ़ते रहना, ये गुण सर्वश्रेष्ठ माने गए हैं। इसमें श्रीमान् व्हाईटहेड महोदय के विचारों का अंतर्भाव है ही। इस दृष्टि से भारतीय लक्ष्य मूलग्राही, परमोन्नति की ओर अग्रसर बनने की योग्यता व्यक्तिमात्र में निर्माण करना है। शिक्षा व तदुत्पन्न संस्कृति इसी दिशा में प्रयत्नशील रहे, यह अपना राष्ट्रीय आदर्श है।

इस आदर्श की ओर विद्यार्थी तथा अध्यापक दोनों का ध्यान आकृष्ट करने योग्य आपका 'लाईट एंड लर्निंग' का यह वार्षिकांक बने, यही मेरी इच्छा है।

३१. हर्ष की लहर को स्थायी बनाने में जुटें

श्री बलराज मधोक, दिल्ली ४ अप्रैल १९६१

नई दिल्ली क्षेत्र के चुनाव में आपको उत्तम सफलता प्राप्त हुई। इस आनंददायक समाचार को पाकर सब बंधु अतीव प्रसन्न हुए।...अब आप सबके सामने आगामी वर्ष का चुनाव है। यह यश आगे के वायुमंडल की पूर्व सूचना देता है। किंतु साथ ही अन्य विचारधाराओं के दलों को चौकन्ना कर अधिक सतर्क एवं प्रयत्नशील होने के लिए आह्वान भी दे रहा है। अभी से ही चारों ओर के क्षेत्रों में आपके यश के कारण निर्माण हुई हर्ष तथा आशा की लहर को स्थायी बनाने में जुट जाना लाभदायक होगा। आप सब बंधु इस चुनाव आदि के क्षेत्र में जानकार हैं, जबकि मुझे उन बातों का सर्वथा अज्ञान है। अतः इस सफलता को पूरी प्रकार से आगे आनेवाले कामों में उपयोगी बनाने में आप कोई कसर नहीं रखेंगे, ऐसा मुझे विश्वास है। मैंने तो केवल स्नेहवश लिखा है।

३२. भिन्न दृष्टिकोण – विरोधी व अविरोधी

श्री देवेंदकुमार वार्ष्णेय, एटा, उत्तरप्रदेश ४ जुलाई १९६१

आपकी सूचना व्यवहार में लाने के लिए दिल्ली में हिंदू महासभा आदि संस्थाओं के श्रेष्ठ कार्यकर्ता तथा नेता क्रियाशील हैं, ऐसा समाचार-पत्रों में वृत्त हम लोगों ने पढ़ा है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का कार्य किसी अन्य समाज के कामों की प्रतिक्रिया के रूप में कुछ भी करना उचित नहीं मानता। कार्य की भी नींव दूसरों का विरोध न होते हुए अपने समाज का यथार्थ प्रेम ही रहना उचित है। परंतु आपको प्रतिक्रियात्मक अन्य समाजों के विरोधभाव से भरे हुए कार्यकलाप ही रुचिकर होते हों तो अपने समान विचार करनेवालों को खोज निकालना तथा उनके सहयोग से आप जो करना चाहें, वह करना यही आपके लिए आवश्यक है। परंतु ऐसी बातों में संघ का प्रत्यक्ष या परोक्ष समर्थन प्राप्त करने की आशा न रखें।

आप जैसे विचारी पुरुष को अस्थायी, अस्थिर, आशुविनाशशील, मूलतः समाज के लिए हानिकारक भाव मन में उठने देना आश्चर्य की बात है। अनुरोध है कि आप शांत चित्त से और संतुलित बुद्धि से विचार करेंगे।

३३. अनुभव से कठिनाइयाँ दूर हो जाएँगी

श्री विनायक महाराज, भारतीय मजदूर संघ, पुणे ८ सितंबर १९६१

विस्तृत पत्र पढ़कर विशेष आनंद हुआ। कार्य के मध्यवर्ती स्थान की दृष्टि से स्वतंत्र कार्यालय होना जरूरी था। संबंधित कार्यकर्ताओं को दिनरात संपर्क स्थापित करना होगा। मुझे लगता है कि अपने से सहानुभूति रखने वाले अनेक व्यक्तियों से थोड़ी-थोड़ी सहायता मिलती गई, तो धनाभाव की प्रारंभिक कठिनाई दूर हो सकेगी। मेरा अनुमान है कि इसमें कुछ कठिनाई का अनुभव नहीं होगा। कठिनाई पैदा हुई या झुंझलाहट से, अनिच्छा से, जबरन किसी मजबूरी के कारण केवल आपकी आवश्यकता पूरी करने का प्रयत्न किसी ने किया, तो मुझे वह प्रशंसनीय नहीं होगा। विश्वास है कि मन में विषाद पैदा करनेवाला अनुभव आपको नहीं आएगा।

यह सच है कि आप कार्य में नए हैं, यह कठिनाई है। कालांतर से तथा अनुभव से वह दूर हो जाएगी ही। प्रारंभ में सभी कामों में प्रत्येक कार्यकर्ता के सामने यह कठिनाई आती है। आप दत्तोपंत ठेंगड़ी आदि पुराने तथा अनुभवी कार्यकर्ताओं से परामर्श करते ही हैं, इसलिए कार्य के

अंगोपांग की बारीकियाँ अल्पावधि में आपके ध्यान में आकर उन्हें आप आत्मसात कर लेंगे। मुझे लगता है कि एक प्रयत्न किया जा सकता है। आपने कहा है कि अन्य यूनियनों में कुशल कार्यकर्ता हैं, यह सच है। लोगों के साथ उठना-बैठना, परिचय बढ़ाना तथा उन्हें आत्मसात करना, यह जो अपने संघकार्य की कुशलता है, उसका उपयोग कर उनमें से एक भी उत्तम, सत्प्रवृत्त तथा सारी बारीकियाँ जाननेवाले कार्यकर्ता को आप अपने प्रभाव में लाने का तथा अपने ध्येयनिष्ठ स्नेहपूर्ण आचरण के द्वारा अपने ही कार्य में निमग्न होकर वह यावज्जीव अपना सहयोगी बने, यह प्रयत्न करना फलदायी हो सकेगा। आपकी आकांक्षा पूर्ण होने के लिए यह अत्युत्तम उपाय सिद्ध होगा। अर्थात् इस क्षेत्र के बारे में कुछ भी ज्ञान न रखनेवाले मुझ जैसे व्यक्ति की यह इच्छा है। साधक-बाधक विचारों की कसौटी पर कसकर परीक्षा करने के बाद जो उचित दिखाई दे, वह करें।

सहजता से पत्र लिखना, उसमें कार्य की यथोचित जानकारी देना, आगामी अपेक्षाएँ व्यक्त करना, सद्यःस्थिति की अनुकूलता-प्रतिकूलता तथा अपने मन की अवस्था का यथातथ्य विवरण ही पत्र का सर्वोत्तम गुण है। ये सारे गुण आपके पत्र में है। इससे मुझे अतीव प्रसन्नता हुई। (मूल मराठी)

३४. राष्ट्रसेवा का कार्य शासकीय तंत्र के बाहर

श्री मदनलाल भंडारी, आगर ३१ जनवरी १९६२

आज काम की शासकीय रचना में एक सुव्यवस्थित पक्ष के रूप में चुनाव में चुनकर आकर विधानसभा आदि के माध्यम से राष्ट्रसेवा करने की एक योजना है, ऐसा दिखता है। उसके अनुसार आप प्रयत्नशील हैं, यह ठीक ही है। अब अपने-अपने प्रचार की धूम मचने का समय होने से अपने मन तथा वाणी पर अपना पूरा स्थायी अधिकार रखना, अनिष्ट भाव तथा अशोभनीय वाक्य-प्रयोगों से सर्वथा अलिप्त रहना विशेष प्रयत्न के द्वारा ही हो सकता है। वह प्रयत्न आप अवश्य कर प्रचार का स्तर श्रेष्ठ रखेंगे, विश्वास रखता हूँ।

राष्ट्रसेवा का अति महान कार्य शासन तंत्र के कार्यकलापों के बाहर है। अतः चुने जाने पर भी अपने इस कर्तव्य को पूर्ण करने में आप लगे रहेंगे ही। आपको इस प्राप्त कार्य तथा नित्य कर्तव्यपूर्ति में सदैव यश मिलता रहे, इस हेतु श्री भगवान के चरणकमलों में प्रार्थना करता हूँ।

३५. प्रत्याशी की अर्हता

श्री रा.वि.बडे, सेंधवा (मध्यप्रदेश) १४ फरवरी १९६२

आप संसद के लिए खड़े हैं, यह मुझे किसी ने नहीं बताया, फिर भी मेरी वैसी अपेक्षा थी। उज्जैन के शिविर में मैंने आपसे पूछा भी था। अब आपके पत्र से आपकी ओर से यह निश्चित ज्ञात हुआ। आप उस क्षेत्र के अपने वनवासी बंधुओं के अभ्युदय की कसक अंतःकरण में पालकर अत्यंत परिश्रम कर रहे हैं। उस परिश्रम को अधिक यश प्राप्त होने के लिए आपका चुनाव में जीतना आवश्यक है। कम से कम अपना स्वार्थ एवं हित देखकर तो सभी बंधु आपको संसद में भेजेंगे, ऐसी अपेक्षा है। वैसी मेरी इच्छा भी है। श्री परमेश्वर-कृपा से वह पूर्ण हो।

स्वास्थ्य की ओर लापरवाही न करते हुए उसे उत्तम रखकर ही, आगे अधिक काम किया जा सकेगा। आप अपने चुनाव क्षेत्र में अन्य समय भी बहुत प्रवास करते रहते हैं। अब अधिक परिश्रम करना आवश्यक लगता होगा। फिर भी स्वास्थ्य की ओर पर्याप्त ध्यान दें। आपने अपना पत्र जिस थकी हुई स्थिति में लिखा है, उस स्थिति की कल्पना मन में स्पष्ट होते ही बहुत दुःख हुआ। चिंता भी हुई। इसलिए यह सब लिखा है।

(मूल मराठी)

३६. राष्ट्र की सेवा सर्वोपरि

श्री नंदकिशोर आचार्य, एडवोकेट, उज्जैन २५ फरवरी १९६२

आपके क्षेत्र में मतदान होने के पूर्व मैं आपको अपनी शुभ कामनाएँ समर्पित कर नहीं सका। अब मतदान पूर्ण होकर फल प्रकट होने की प्रतीक्षा है। फल कुछ भी निकले, अपने को राष्ट्र की सेवा करनी है। लोकसभा, विधानसभा में जो कार्य करना संभव है, उससे कहीं अधिक दैनंदिन जीवन में समाज में अधिक घुल-मिलकर चारों ओर के बंधुओं की समस्याओं को समझकर, हृदय में उनकी व्यथा जागृत रखकर, उन समस्याओं को सुलझाने के लिए पूर्ण शक्ति से प्रयत्न करने से ही अधिक हो सकता है। मुख्य कार्य तो समाज को जागृत करना, स्वाधिकार का ज्ञान देना, स्वकर्तव्य की प्रेरणा जगाना, स्वाभिमानी राष्ट्र के रूप में संसार में गौरव से जीवन चलाने की उत्कट अभिलाषा और तत्पूर्त्यर्थ सुदृढ़, सचेत, संगठित शक्ति के रूप में समाज को नित्य उपस्थित रखना है। उसमें आपके परिश्रम लगते ही रहेंगे। और क्या कह सकता हूँ।

३७. राष्ट्र का अस्तित्व शक्ति पर निर्भर

श्री परमेश्वरी दयाल जी, एटा ६ मार्च १९६२

आपकी काउन्सिल के संबंध की इच्छा ध्यान में आई। स्वयं चुनाव आदि के विषय में मेरी रुचि न होने के कारण इस बारे में मैं कुछ सोचता नहीं, न ही कुछ सुझाव या परामर्श देता हूँ। इस विषय में किसी ने कुछ बताया, तो सुन अवश्य लेता हूँ। मेरी रुचि प्रारंभ से ही नहीं थी। संघ जैसे ठोस कार्य से संबंध आने पर तो अरुचि ही हो गई है। अंततोगत्वा राष्ट्र का अस्तित्व, उत्कर्ष, यशस्विता, उसकी स्वाभिमानयुक्त सुसूत्र शक्ति पर निर्भर है। विधानसभा आदि तो ऐसे सुदृढ़ राष्ट्र जीवन का दैनंदिन व्यवहार चलानेवाली रचनाएँ मात्र हैं। राष्ट्रजीवन विशुद्ध स्वत्वभावपूरित सुदृढ़ न रहने पर ये रचनाएँ लाभदायक होंगी ही, ऐसा विश्वास करना कठिन है। हानिकारक होने में देर नहीं लगती। सद्यःस्थिति में अपने राष्ट्र को स्वत्वसंपन्न, स्वाभिमानयुक्त सुदृढ़ शक्तिशाली रूप में हम लोग पाते नहीं। अतः राष्ट्र की यह वांछनीय अवस्था निर्माण करने पर ही संपूर्ण ध्यान केंद्रित होना अत्यावश्यक है। ऐसा एकाग्र ध्यान रखकर राष्ट्र की यह स्थिति बनाने में अपना संघकार्य संलग्न है। इसी कारण संघकार्य का जीवन में प्रवेश होने पर विधानसभा, तदर्थ चुनाव आदि के विषय में मेरी तीव्र अरुचि हो गई है।

चुनाव के कारण उत्पन्न उत्तेजित वायुमंडल अब शांत हो गया होगा। अब अपने संघ के कार्यकर्ता स्वयंसेवक बंधुओं को इस शांत वातावरण में अपने कार्य की वृद्धि करने हेतु प्रोत्साहित करने से बहुत लाभ हो सकेगा। अपने सब बंधु व अधिकारीगण तथा ज्येष्ठ व श्रेष्ठ कार्यकर्तागण दत्तचित्त होकर इस उत्साह को बढ़ाने में किसी प्रकार न्यून न रहने देंगे, तो आगामी कुछ काल में संपूर्ण प्रांत में राष्ट्र की ओजसपूर्ण दृढ़ चेतना अनुभव हो सकेगी।

३८. विद्यार्थियों का जीवन राष्ट्रसमर्पित हो

श्री माधवराव परलकर, मुंबई २० जुलाई १९६२

अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् का कार्य व्यवस्थित चले। विद्यार्थी-बंधुओं में ज्ञानोपार्जन, बलोपार्जन, शुद्ध चारित्र्योपार्जन की तीव्र आकांक्षा जागृत हो। सस्ती लोकप्रियता दिलानेवाले निरर्थक आंदोलनों के

प्रति अनिच्छा पैदा हो। राष्ट्रचिंतन तथा उसके विशुद्ध स्वरूप का साक्षात्कार हो। राष्ट्रार्थ जीने का निश्चय उदित होकर स्थायी हो। सब प्रकार की व्यक्तिगत आकांक्षाओं का वही निश्चय प्रेरणास्रोत और नियामक हो। इन सारी बातों की ओर उनका ध्यान खींचकर, इन्हीं बातों में वे रस लेंगे, ऐसा प्रयत्न करें। इससे अधिक इस समय क्या कहूँ? चमत्कृत करनेवाले बड़े-बड़े शब्दसमूहों का उपयोग करना मैं नहीं जानता। छोटी-छोटी, परंतु जिनपर ध्यान देना अनिवार्य है, ऐसी महत्त्वपूर्ण बातें ही मुझे सूझती हैं। (मूल मराठी)

३९. मजदूर संघ के नए कार्यकर्ता का मार्गदर्शन

श्री हरिभाऊ वाडवेकर, पुणे 　　　　　　　　　२३ जुलाई १९६२

'....आप जो कार्य कर रहे हैं, उसमें अभी सभी नए दिखते हैं। मुंबई में श्री रमण शाह को थोड़ा अधिक अनुभव है। यद्यपि कार्यकर्ता नए हैं, फिर भी तरुण, उत्साही एवं निश्चयी हैं। अतः सब समस्याओं, प्रश्नों एवं इस क्षेत्र में ऊधम मचानेवालों की कार्यवाहियों का उत्तम अभ्यास कर दृढ़, राष्ट्रभक्तिपूर्ण, कर्तव्यदक्ष, जागृत संगठित सामर्थ्य आप निर्माण कर सकेंगे, इसमें संदेह नहीं। अपने जीवन का प्रेरणास्रोत नित्य-नूतन स्वरूप में रहे, एतदर्थ जो संपर्क अपेक्षित है, वह हर स्थान पर नियम से शाखा की उपस्थिति के रूप में अखंडित रखें, जिससे अनेक विचारवान कार्यकर्ताओं की सहायता एवं मार्गदर्शन भी सदैव प्राप्त हो सकेगा।..... (मूल मराठी)

४०. परस्पर स्नेह एवं विश्वास से कार्य करें

श्री मारोतराव पुसदकर, धामणगाँव 　　　　　　　　　९ अक्तूबर १९६२

कार्य की दृष्टि से सब प्रमुख मंडली का कार्य व परस्पर का संबंध, नए-नए क्षेत्रों में प्रवेश करने के बाद भी उसमें अपनी भूमिका और संघकार्य के संबंध की शुद्ध निष्ठा होनी चाहिए। इस विषय में कोई भूल न हो, इस दृष्टि से मैंने आपको जो सूचित किया, वह स्थानीय सब नए-पुराने बंधुओं को ध्यान में रखकर वैसा आचरण में लाना चाहिए। मेरे कहने से यदि आपने यह अनुमान किया हो कि माननीय भैयाजी दाणी की आपकी प्रांतीय बैठक में आपके विषय में विपरीत धारणा हुई है, तो वह ठीक नहीं है। अतः ऐसा अनुमान निकालकर आप अकारण अपने मन को दुःखी न करें। सभी परस्पर स्नेह एवं विश्वास से कार्य करें, ऐसा करें। (मूल मराठी)

४१. गीता के सुभाषितों का चयन अच्छा है

वैद्य पं. मुनिवर उपाध्यायजी, अजमेर

सुभाषितों का चयन अच्छा है, परंतु श्रीमद्भगवद्गीता का जो श्लोक दिया है, उसे 'सुभाषित' कहना ठीक होगा क्या? 'परधर्मो भयावहः', 'यो यच्छ्रद्धः स एव सः'– ऐसे वचन सुभाषित में आ सकते है। 'संभावितस्यचाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते' यह भी प्रसिद्ध सुभाषित है। किंतु 'नैनं छिन्दन्ति' आदि श्लोक को 'तत्त्वज्ञानपूर्ण वचन' ही कह सकेंगे। लालित्य, चमत्कृति तथा शब्द एवं अर्थ के अलंकारों से रुचिपूर्ण और साथ ही जीवन में मार्गदर्शन करनेवाले तत्त्व को व्यक्त करने से 'सुभाषित' कहना उचित होगा, ऐसा पुराने संस्कृत सुभाषितों के बड़े संग्रह देखने से बोध होता है। अच्छे चयन के साथ उसका भावार्थ तो बहुत संतोष देता है। यह उपक्रम बहुत अभिनंदनीय हुआ है। आगे द्वितीय संस्करण और भी अच्छा होकर वाचकों को सुख और ज्ञान दे सकेगा– ऐसा विश्वास है।

४२. साहसी गौरव व प्रेरणा

श्री बापूराव गायधनी, १२ अप्रैल १९६३

'वीर बापूराव गायधनी के ३२वें स्मृति-दिन के उपलक्ष्य में प्रतिवर्ष के अनुसार अनेक साहसी जनरक्षकों का गौरव करने का कार्यक्रम आगामी १८.४.१९६३ को आयोजित किए जाने की सूचना एवं उस हेतु निमंत्रण प्राप्त हुआ। कार्यक्रम उत्तम होगा ही। अब तो मातृभूमि की रक्षा के लिए असंख्य बंधु अपना जीवन सहर्ष समर्पण करने के लिए आगे आ चुके हैं, आगे आ रहे हैं। उन सबका गौरव महान है। उनका यथोचित सत्कार होना ही चाहिए। अनेक वीर अज्ञातावस्था में रणभूमि में चिरनिद्रा में लीन हो गए। उनके नाम-ग्राम तक का पता नहीं। इन सब ज्ञात-अज्ञात समरदेवता की आहुति हुए वीरों को कृतज्ञता से वंदन करने की ओर सभी भारतवासियों का ध्यान जाना चाहिए। उनसे प्रेरणा लेकर राष्ट्र-रक्षा के महान कार्य के लिए, संकट सहने के लिए विकट घड़ी में मृत्यु को भी आलिंगन देने को आगे आना चाहिए तथा एक-दूसरे को इसके लिए प्रोत्साहन देना चाहिए। यही सद्यःस्थिति की माँग है। आपके कार्यक्रम से यह प्रेरणा व्यक्त हो।

(मूल मराठी)

४३. साहित्य-क्षेत्र में भारतीय संस्कृति का प्रभाव रहे

श्री मोहनलाल जी श्रीवास्तव, दिल्ली 　　　　　　　　१३ दिसंबर १९६३

आपका संकल्प अति उत्तम है। आजकल साहित्य के क्षेत्र में विशुद्ध तथा पवित्र भारतीय संस्कृति का अधिकाधिक प्रभाव रहना आवश्यक है। अपनी संस्कृति की आस्था के अभाव में कितने ही अच्छे युवक राष्ट्रविरोधी शक्तियों के समर्थक बने हैं, बनते जा रहे हैं। बड़े-बड़े जननेता भी अपनी सांस्कृतिक परंपरा के प्रतिकूल मानव का वास्तविक कल्याण सिद्ध करने में अक्षम विचारधाराओं का प्रचार कर अपने ही देशबांधवों को स्वदेश-विरोधी बनाने में प्रत्यक्ष या परोक्ष सहायता दे रहे हैं। इस वायुमंडल को विषमुक्त कर उसे शुद्ध, पवित्र भारतीयत्व से भरने का कार्य साहित्यकार उत्तम रीति से कर सकते हैं। मानव के ऐहिक सुख, प्रगति, वैज्ञानिक उन्नति आदि के साथ उसकी आध्यात्मिक श्रेष्ठता को चरम सीमा तक पहुँचाकर मानव-मात्र का सच्चा कल्याण करने का असंदिग्ध सफल मार्गदर्शन करने की क्षमता केवल अपने धर्म तथा संस्कृति, जिसे लोग कभी 'वैदिक', कभी 'औपनिषदिक', कभी सुगमता के लिए 'हिंदू' और आजकल 'हिंदू' कहने से झिझककर लज्जा करने की अनिष्ट प्रवृत्ति के कारण 'भारतीय संस्कृति' कहते हैं। यह झिझक और लज्जा न होती तो 'हिंदू' तथा 'भारतीय' पर्यायवाची होने से एवं 'भारतीय' शब्द अधिक प्राचीनकाल से प्रचलित होने से उसी का प्रयोग इष्ट प्रतीत होता। अतः इस पवित्र विचार एवं भावों की धरोहर को सुललित, सुश्लिष्ट, सुगम हृदयस्पर्शी भाषा में प्रत्येक व्यक्ति के अंतस्तल तक पहुँचानेवाले साहित्यिकों की आत्यंतिक आवश्यकता है। इसको पूरा करने का आपका प्रयास अत्यंत अभिनंदनीय है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि आपके इस मंगल संकल्प को परममंगल श्री भगवान की कृपा से सफलता मिलेगी।

४४. डाकू-समस्या के समाधान का उपाय

श्री ठाकुर घनश्याम नारायणसिंह जी, 　　　　　　　　१५ जनवरी १९६४

समस्या का आपका सुझाव अनुभवों पर आधारित होने से स्वीकार्य है। मानवीय स्नेह का व्यवहार तथा तथाकथित डाकुओं के निर्भय पौरुष को अभिव्यक्त होने के लिए अनुकूल सैनिक-व्यवसाय प्रदान करना यही मार्ग है। परंतु मुझे लगता है कि शासनाधिकारियों को यह विश्वास नहीं है

कि वे सैनिक-अनुशासन का तथा विशुद्ध राष्ट्रभक्ति का यथायोग्य पालन करेंगे। तो भी कुछ लोगों से प्रारंभ कर उस अनुभव के आधार पर आगे का पग उठाया जा सकता है।

एक कठिनाई और भी होगी। सेना में प्रवेश करने की आयु-मर्यादा इन बंधुओं ने कभी की पार कर ली है। शिवाजी आदि के काल में ऐसे नियम होने का समाचार नहीं है। अतः उन दिनों यह कठिनाई नहीं थी। इसका समाधान शासन कैसे कर सकेगा, यह प्रश्न है? तथापि यह प्रयोग कर इन शूर-बंधुओं के गुणों को राष्ट्रसेवा में लगाकर प्रयत्न करना आवश्यक है।

आपने अपनी पुस्तक के द्वारा यह विचार प्रचलित किया है। समस्या सुलझाने का एक मार्ग भी दिग्दर्शित किया है। इसके लिए संपूर्ण समाज आपका आभारी रहेगा। मैं आपको अभिनंदनपूर्वक धन्यवाद समर्पण करता हूँ।

४५. विदेशस्थ हिंदुओं का प्रेरणा स्रोत भारत हो

श्री होतचंद जी, मुंबई ३ अप्रैल १९६४

यह पत्र आपके पास लानेवाले श्री. एस.एस.आप्टे एक समर्पित व्यक्तित्व हैं। विश्व के विभिन्न देशों में बसे हुए हिंदुओं का एक सम्मेलन आयोजित करने का विचार कई दिनों से मेरे मन में था। इस दृष्टि से श्री दादासाहेब आप्टे को देश के गण्यमान्य व्यक्तियों से मिलकर तथा उनके साथ परामर्श कर संयोजन समिति का गठन करने व सम्मेलन की संभाव्य तिथि एवं स्थान निश्चित करने का भार सौंपा है। इसी उद्देश्य से वे आपके पास आ रहे हैं। विदेशों में इतस्ततः बिखरे हुए बंधुओं में जागृति लाने तथा सांस्कृतिक संबंध दृढ़ करने हेतु यह सम्मेलन अत्यावश्यक है। चूँकि उन बंधुओं के साथ संपर्क रखने का कोई माध्यम न रहने से वे अपने चिरंतन जीवनमूल्यों से हटकर विदेशी जीवन-पद्धति की ओर शीघ्रता से आकर्षित हो रहे हैं। यह माध्यम भारत में ही क्रियाशील हो, क्योंकि वही अपनी उज्ज्वल प्राचीन संस्कृति का प्रेरणास्रोत एवं निधान होने के कारण विदेशों में बसनेवाले हिंदू अपनी संस्कृति के अनुसार जीवन व्यतीत कर वे जिन लोगों के साथ भी रहते हों, उनके जीवन पर अपनी गहरी एवं अमिट छाप डालने की प्रेरणा दे सकते हैं।

अनेक विदेशस्थ हिंदू-बंधुओं के साथ आपका संपर्क होने के कारण सम्मेलन की कल्पना से उसके मुख्य संयोजक के रूप में कार्य करने पर सफल होने में सहायता मिलेगी। परमपूज्य साधु वासवानी जी भी सम्मेलन के संयोजकों की नामावली में अपना नाम समाविष्ट करने की सहमति देकर इस कार्य को आशीर्वाद दें, ऐसी मेरी इच्छा है। आप उन्हें इस बात के लिए सहमत करा सकते हैं।

इस कार्यक्रम की संपूर्ण रूपरेखा श्री दादासाहेब आप्टे आपके सामने प्रस्तुत करेंगे। (मूल अंग्रेजी)

४६. व्यापक राष्ट्रदृष्टि से समस्या को देखें

६ अप्रैल १९६४

श्री महादेवराव साने, भारतीय मजदूर संघ कार्यालय, कोल्हापुर

मेरे बिहार प्रांत के अनुभव कुछ विशेष विचार करने योग्य नहीं हैं। जिस प्रवृत्ति से सद्यः शासन विचार करता है, उसे देखते हुए शुद्ध राष्ट्रभक्ति करने की इच्छा रखनेवालों को इन्हीं प्रसंगों में से गुजरना पड़ेगा। उड़ीसा, बंगाल में भी इसी प्रकार की अंधाधुंध है। उनकी यह कल्पना हो सकती है कि इससे अहिंदू समाज संतुष्ट होगा। उसके दूरगामी परिणाम वही होंगे, जो इसके पूर्व हुए तथा हो रहे हैं। भूतकाल में भी इसी प्रकार असाधारण श्रेष्ठ पुरुषों को कारागार में डाला गया था, तथापि अहिंदू समाज की उद्दंडता तथा आक्रमण बंद नहीं हुए, इसके विपरीत बढ़े तथा अब पूर्व-बंगाल में जो हुआ, वह भुगतना पड़ा। वर्तमान नीति से एक ही परिणाम निकलने वाला है कि अल्पावधि में ही अधिक भीषण परिस्थिति का सामना करना पड़ेगा और राष्ट्र के मुख पर कालिख पुतेगी।

आप अपने क्षेत्र में उत्तम रीति से काम कर सब बंधुओं को व्यापक राष्ट्रदृष्टि प्राप्त होकर, उसमें से स्वयं की समस्याओं का हल ढूँढने की बुद्धि प्राप्त हो, ऐसा सफलतापूर्वक प्रयास करें। (मूल मराठी)

४७. संपूर्ण देश में एक ही पंचांग हो

मान्यवर पंडित हरदेव शर्मा त्रिवेदी जी २४ जून १९६४

पं. प्रियव्रत शर्मा एवं पं. शशिधर शर्मा द्वारा लिखित 'शास्त्रशुद्ध पंचांग-निर्णय एवं क्षयादि मास-व्यवस्था' पुस्तक यथासमय प्राप्त हुई।

....मेरे लिए वह विषय दुर्बोध ही है, तथापि उसे पर्याप्त सरल किया गया है। आशा है कि सबकी संदेह-निवृत्ति हो सकेगी। शास्त्र निर्णय में दुराग्रह त्याज्य है। सभी ज्योतिषशास्त्र के पंडितों को एक बार शुद्ध गणित का निर्णय कर दृक् प्रत्यय में खरा उतरनेवाला गणित स्वीकार कर संपूर्ण भारत में एक ही पंचांग प्रचलित करना चाहिए। स्थान-स्थान के अक्षांश-रेखांश के कारण जितनी भिन्नता शास्त्रीय दृष्टि से रहेगी, उसको छोड़कर संपूर्ण सामंजस्य होना लाभदायक है। आप अपने विद्वान सहयोगियों के साथ इस दृष्टि से प्रयत्नशील हैं ही। श्री परमात्मा की कृपा से सब बंधुओं में सद्बुद्धि जागृत होकर आपके प्रयत्न त्वरित सफल हों।

४८. मासिक पत्रिका से अपेक्षा

पं.रामशंकर अग्निहोत्री, राष्ट्रधर्म, लखनऊ — २२ जुलाई १९६४

अब आपको पूर्ण रूप से इस विचारप्रद, विचार-प्रवर्तक मासिक के लिए अधिकाधिक मात्रा में लगाते हुए इसको उत्कृष्टतम बनाना है। अपने राष्ट्रजीवन से संलग्न भिन्न-भिन्न विषय, जागतिक जीवन की विचार-भावधाराएँ, ज्ञान-विज्ञान के अन्यान्य पहलू आदि में सबको एक आदर्श इसमें से प्राप्त हो, ऐसा इसे बनाना है। आप तो जानकार हैं। मैं आपसे यह सब कहूँ, यह ठीक नहीं।

४९. अपप्रचार की उपेक्षा करें

श्री कुंजबिहारी लाल जी, संभल, जि.मुरादाबाद — २२ अगस्त १९६४

....आपके यहाँ का वृत्त-पत्र मनगढ़ंत और असत्य समाचार बनाकर छापने में संलग्न है, यह ध्यान में आया। अपने-अपने सांस्कृतिक स्तर के अनुरूप ही कोई कुछ बोलता-लिखता है। ऐसी बातों की ओर ध्यान देकर उसके पीछे लगने से अपना समय व्यर्थ नष्ट होता है। इससे अच्छा तो यह है कि अपने शुद्ध विचार प्रसारित करने में अधिकाधिक शक्ति लगाएँ, ताकि वैसी अभद्र बातें पढ़नेवाला ही न मिल सके।

अतः मेरी आपसे प्रार्थना है कि उक्त वृत्त-पत्र से व्यथित या संतप्त न होते हुए अपने कार्य में मग्न रहें।

५०. भारतीय भाषाओं का परस्पर परिचय हो

श्री टी.लक्ष्मीनारायण, विजयवाड़ा १८ मार्च १९६५

आप 'जागृति' साप्ताहिक के रूप में एक नए उपक्रम का प्रारंभ कर रहे हैं– यह जानकर हम सब संतुष्ट हैं। 'भारतीय व्यवहार कोश' नामक ग्रंथ के लेखक पुणे के श्री विश्वनाथ नरवणे से आपको सहायता मिलेगी। इस कोश में उन्होंने व्यवहारोपयोगी शब्दों के लिए सभी भारतीय भाषाओं के प्रतिशब्द दिए हैं। विभिन्न भाषाओं में समानता एवं सादृश्य पर जोर देते हुए, उन्होंने सर्व भाषाओं के मुहावरे, कहावतें तथा लोकगीत एकत्र कर एक ग्रंथ लिखा है (जो अभी अप्रकाशित है)। वे आपकी मदद अवश्य करेंगे।

आपका उपक्रम सफल होता देखकर, आपसे प्रेरणा लेकर, अन्य वृत्त-पत्र भी ऐसा ही एक स्तंभ प्रारंभ कर अपनी अन्य भाषा-भगिनियों में उपस्थित महान सांस्कृतिक धरोहर का परिचय अपने वाचकों को देंगे। हिंदी-मराठी साप्ताहिकों ने, तमिल, तेलगु या बंगाली में संभाषण, वर्णोच्चार तथा साहित्य भंडार से परिचय कराने हेतु उपक्रम आरंभ किया, तो जो लोग इन भाषाओं से परिचित नहीं हैं तथा जो इन भाषाओं के साहित्य भंडार से अपरिचित हैं, उनकी बहुत बड़ी सेवा होगी। इस उपक्रम की सफलता का विश्वास है। (मूल अंग्रेजी)

५१. राष्ट्र-परंपरा विरोधी विचार त्याज्य

श्री सुरेंद्रकुमार गंभीर, दिल्ली ५ अप्रैल १९६५

....संस्कृत भाषा के संबंध में उपेक्षा की जो नीति चल रही है, उससे सब परिचित हैं। संस्कृत की स्तुति सब करते हैं, जब उससे स्तुति करनेवाले की स्तुति या अन्य भौतिक लाभ प्राप्त होने की संभावना दिखती हो, अन्यथा उसे 'मृतभाषा' कहकर हटा देने का विचार ही प्रत्यक्ष व्यवहार से व्यक्त हो रहा है।

केवल भाषा का ही प्रश्न नहीं है। परंपरा से जो बातें भारतीय जीवन में शुद्ध, पवित्र, रक्षणीय रही हैं, उनकी यही स्थिति है। अंग्रेजों के चले जाने के बाद भी इस भगवान गोपालकृष्ण की भूमि में गोहत्या चलती रहेगी, उसके लिए आधुनिकतम यंत्रसिद्ध गोवध-भवन बनेंगे, वह भी पवित्र तीर्थ-स्थानों में बनेंगे, ऐसी बात कभी किसी ने सोची थी क्या? परंतु वह

प्रत्यक्ष है, सत्य है। इसका एक ही अर्थ स्पष्ट है कि देश का संपूर्ण वायुमंडल अपनी राष्ट्र-परंपरा से भरकर तद्विपरीत विचारों को हटा देना। विपरीत विचार करनेवाले, प्रसृत करनेवाले समाज की दृष्टि से दोषी अतएव त्याज्य होने के सद्भाव को जन-जन में भरना। इस प्रथमावश्यक कार्य को सफल किए बिना संस्कृत भाषा, संस्कृति, राष्ट्रजीवन तथा भारतभूमि की रक्षा व संवर्धन नहीं हो सकेगा।

आप अपने निकटवर्ती सब बंधुओं में ऐसी जागृति उत्पन्न कर, ऐसे बंधुओं को अन्य बंधुओं को जगाने के लिए प्रवृत्त करें। किसी प्रकार के स्वार्थ या प्रलोभन में न पड़ते हुए इस जागृति को जीवन के सब क्षेत्रों में व्यवहृत करने का निश्चय प्रसारित करें। तब अल्पकाल में ही यह चित्र सब सज्जनों के हृदयानुकूल बन सकेगा। हम सब आपके साथ हैं ही।

५२. अन्य क्षेत्र में हस्तक्षेप नहीं

श्री व्यंकटराव कुलकर्णी, कल्याण ५ अप्रैल १९६५

आप मुंबई से संपर्क प्रस्थापित करें। वहाँ के कार्यकर्ता आपका सहयोग लेना चाहते हों, वैसा उन्हें संभव हो, तो परस्पर के विचार-विनिमय में से जो निष्कर्ष निकले, वैसा करें। मेरा इस काम से प्रत्यक्ष संबंध नहीं है। कल्पना अच्छी होने से उसकी (विश्व हिंदू परिषद्) प्रारंभिक दो बैठकों में मैं उपस्थित रहा था। एक हिंदू के नाते अच्छी लगनेवाली कल्पना को सहायता करना प्रत्येक हिंदू व्यक्ति का कर्तव्य है। उसमें मेरे सामर्थ्य के अनुसार कुछ करना पड़ा एवं कर सका तो प्रयत्न करूँगा। इतना ही मेरा संबंध है। मेरे सामने दैनिक संघ का काम है। वह जीवन की संपूर्ण शक्ति व्याप्त करनेवाला है, फिर भी अपना सामर्थ्य कम पड़ता है। संघकार्य की यह भव्यता इस बात का मुझे एहसास दिलाती है। इसलिए अन्यत्र ध्यान देना मुझे असंभव होता है। उसके साथ ही सभी क्षेत्रों में हस्तक्षेप करने की मन की रचना भी नहीं है। फिर भी यह परिषद् उत्तम प्रकार से सफल हो, यह मैं मन से चाहता हूँ।

५३. सामाजिक कार्यकर्ता का गौरव

श्री बापूराव लाखनीकर सत्कार समिति, २६ नवंबर १९६५

मित्रवर श्री बापूराव लाखनीकर ५१वें वर्ष में पदार्पण कर रहे हैं। विगत २४ वर्षों से लाखनी तथा आसपास के गाँवों में शिक्षा-प्रसार के लिए

उन्होंने शालाएँ खोलीं तथा विगत वर्ष से लाखनी में महाविद्यालय भी चालू किया है। इस संस्था के प्रारंभ की स्थिति तथा आज के उसके विशाल स्वरूप की तुलना करें, तो यह ध्यान में आएगा कि शिक्षा के क्षेत्र में उन्होंने कितना ठोस कार्य किया है। भंडारा जिले के शिक्षा प्राप्त करने के इच्छुक सैंकड़ों ही नहीं, हजारों बालकों और युवकों को उन्होंने कितनी उत्तम सुविधाएँ उपलब्ध करा दी हैं। यह एक आश्चर्य है कि यह सारी प्रगति उन्होंने अपने अकेले के भरोसे की है। अर्थ-शक्ति और सत्ता-शक्ति पीछे न रहते हुए इतना बड़ा काम करना असंभव ही माना जाता है। विशेषतः इन दिनों यह सर्वसाधारण धारणा बन गई है कि कोई भी समाजोपयोगी काम करने को आगे आनेवाला शासनमुखापेक्षी होता है तथा शासन के समर्थन के बिना वह एक भी कदम आगे नहीं बढ़ा सकता। इस धारणा के कारण शासन की खुशामद करने में समाजसेवक का समय और शक्ति खर्च होती है। ऐसी अवस्था में अपनी ही साधन-सामग्री पर निर्भर रहकर, अनेक बाधाओं को कुशलता तथा धैर्य से एक ओर धकेलते हुए श्री बापूराव द्वारा किया गया भव्य कार्य-विस्तार देखने पर उनके आत्मविश्वास, कर्तृत्वसंपन्नता तथा साहस का स्वरूप आँखों के सामने आता है।

उनके द्वारा संचालित संस्थाओं में केवल लौकिक शिक्षा देकर कुछ परीक्षाएँ उत्तीर्ण करवाना ही लक्ष्य नहीं है, अपितु विशेष बात यह है कि प्रत्येक विद्यार्थी सुसंस्कृत हो, चारित्र्यवान बने, राष्ट्रभक्त बने निःस्वार्थी तथा राष्ट्रसेवारत बने– इसकी ओर विशेष ध्यान दिया जाता है। इस दृष्टि से स्वधर्म, उज्ज्वल इतिहास, श्रेष्ठ साधु-संत तथा राष्ट्रपुरुषों के जीवन के संस्कार अंतःकरण में अंकुरित हों, इसके लिए परिश्रमपूर्वक प्रयत्नशील रहना– यह इस संस्था की बहुत बड़ी विशेषता है। अपना स्वयं का जीवन बनाने के साथ ही, अपने सब समाज-बंधुओं में भी स्नेहपूर्ण एकता स्थापित करना तथा अनुशासनबद्ध राष्ट्र निर्माण के लिए प्रत्येक व्यक्ति अपनी संपूर्ण शक्ति से परिश्रम करे, ऐसी प्रेरणा यहाँ प्राप्त होने की व्यवस्था है। इसलिए ये संस्थाएँ असाधारण ही हैं। दूसरे स्थानों पर केवल परीक्षोपयोगी तथा उदरभरणोपयोगी शिक्षा देने की ओर ही ध्यान रहता है। इन संस्थाओं की यह विशेषता देखकर, उनका निर्माण करनेवालों की ध्येयनिष्ठ व दूरदृष्टि का अभिनंदन किए बिना रहा नहीं जाता। श्री बापूराव का और मेरा परिचय विगत अनेक वर्षों से है। उनकी संस्थाओं का विकास, उनके स्थापना-काल से मेरे सामने है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कर्तृत्ववान

कार्यकर्ताओं को मार्गदर्शक होनेवाला शुद्ध, समाजसेवी, ध्येयनिष्ठ, चारित्र्यसंपन्न, अविश्राम परिश्रमी उनका जीवन विकसित होता हुआ तथा परिपक्वावस्था को किस प्रकार प्राप्त हुआ, मैं निकट से देख सका हूँ। ऐसा सहयोगी हम स्वयंसेवकों को प्राप्त हुआ, यह ईश-कृपा ही है। परमदयामय श्री परमेश्वर की कृपा से श्री बापूराव को उत्तम स्वास्थ्य प्राप्त हो, समाज में शिक्षा-प्रसार के उनके काम में उन्हें उत्तरोत्तर वर्धिष्णु यश प्राप्त हो। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के विशुद्ध राष्ट्रभक्तिपूर्ण सामर्थ्य-निर्माण की, हिंदू-समाज को संगठित करने की ध्येयपूर्ति के लिए यह कर्तृत्ववान सहयोगी हम स्वयंसेवक बंधुओं को चिरकाल उपलब्ध रहे, यही मंगलमय सर्वशक्तिसंपन्न ज्ञानमय श्री परमेश्वर के चरणों में नम्र प्रार्थना है। (मूल मराठी)

५४. मन स्वस्थ तो शरीर स्वस्थ

मान्यवर ठाकुर भैरोसिंह जी, ८ मार्च १९६६

मित्रवर श्री ब्रह्मदेव जी का पत्र पढ़ा। उसमें आपके स्वास्थ्य के संबंध में कुछ जानकारी है। अकस्मात यह कष्ट होने से चिंता अवश्य हुई है, किंतु जाँच होकर केवल पेट की कुछ विकृति होने का निर्णय निकला, यह पढ़कर मन आश्वस्त हुआ कि किसी प्रकार की गंभीर बात नहीं है। आगे काम भी आपको बहुत करना है। अतः अभी कुछ दिनों के लिए नियमपूर्वक आहार-विहार का ध्यान रखना आवश्यक प्रतीत होता है। लगभग एक मास पश्चात् एक बार फिर ई.सी.जी. आदि जाँच करा लेने से मन की सब शंकाएँ दूर हो जाएँगी।

इसमें मुख्य बात है, मन को स्वास्थ्य के विषय में चिंतित न होने देने की। थोड़े में ही मन अनेक अनिष्ट कल्पनाएँ करने लगता है। उन्हें हटा देना उचित होता है। बहुत वर्ष पूर्व मुझे भी कई दिन ज्वर और खाँसी रहने के कारण डाक्टर ने टी.बी. होने का संदेह किया था। उन्होंने मुझे बताया, परंतु मैंने हँसकर बात उड़ा दी और डाक्टर को कहा कि आपके पहले मैं नहीं जा सकता। उन्हें यह बात बुरी लगी, किंतु उस घटना को ४० वर्ष हो रहे हैं और मैं स्वस्थ हूँ, यह आप देख ही रहे हैं। कुछ वर्ष पूर्व वही डाक्टर महोदय मिले थे और उन्होंने सानंद अपनी भूल स्वीकार कर विनोद में मुझे कहा कि वे मेरे पहले जाने को सिद्ध हैं। केवल अंत समय में मैं कहीं निकट रहूँ, तो अच्छा हो। देखें, भगवदिच्छा क्या है।

एक ही तत्त्व ध्यान देने योग्य है कि मन की दृढ़ता से स्वास्थ्य अच्छा होने के संबंध में निश्चय रखें, तो सब रोग दूर हो जाते हैं। आप शुभ कार्य में हैं, अतः श्री भगवान भी आपके साथ हैं और आपकी चिंता करते हैं। इसलिए आप निश्चय रखें कि अत्यल्प काल में आप सब प्रकार से स्वकार्यमग्न होने की क्षमता का अनुभव करेंगे।

५५. अनशन का हेतु सफल हो गया

श्री यज्ञदत्त शर्मा, जालंधर १६ मार्च १९६६

पंजाब प्रांत की एकता बनाए रखने के लिए तथा हिंदू समाज में सांप्रदायिक भावनाओं को लेकर सिख और अन्य हिंदू बंधुओं में विच्छेद न हो, इस हेतु को लेकर प्रबल वायुमंडल बनाकर शासन चलानेवाले नेताओं को योग्य निर्णय करने हेतु प्रेरणा देने की इच्छा से आपने अनशन प्रारंभ किया है। उसके पीछे की सद्भावनाओं को विचार में लेकर यही कहना पड़ेगा कि आपने जो पग उठाया है, वह उचित ही है। किंतु इतने दिनों के बाद आपका शरीर उत्तरोत्तर निर्बल होता जा रहा है। यह गंभीर चिंता का विषय है। मैं कुछ दिनों से अत्यंत व्यथित हूँ। मन में बड़ी अस्वस्थता हो रही है। देश के लिए कार्य करने की दृष्टि से आपके प्राण बहुमूल्य हैं। अतः मेरी आपसे प्रार्थना है कि अब आप अपना अनशन छोड़ दें और अपने नित्य के कार्य में जुट जाएँ।

आपके व्रत से वातावरण प्रभावित अवश्य हुआ है। पंजाबी सूबा इस नाम से अनुकूल, प्रतिकूल जो आंदोलन चल रहे हैं, उनमें उग्रता बहुत आने पर भी सिख-गैर सिख ऐसी अनिष्ट भावना नहीं आई। यह आपके हेतु की सफलता का प्रमाण ही है। इस सफलता को दृढ़ बनाए रखने के लिए जो काम करना है, उसके लिए भी आपका अनशन छोड़ना उपकारक सिद्ध हो सकेगा। सांगोपांग विचार कर मेरा यह मत बना है। इसी कारण यह पत्र भेजकर आपसे अनुरोध कर रहा हूँ कि जितना हुआ, वह भी बहुत हुआ। अब व्रत समाप्त कर दें। आप जैसे समर्थ कार्यकर्ताओं के प्रत्यक्ष नियंत्रण के अभाव में जो उग्र वातावरण बना हुआ प्रतीत होता है, उसे अनिष्ट मोड़ पर जाने से बचाएँ। और क्या लिखूँ? आपके लिए जो व्याकुलता हो रही है उससे आपका योग्य निर्णय ही मुझे मुक्त कर सकता है।

५६. सरल शुद्धि-विधि

श्री विष्णु रामचंद्र मोडक शास्त्री, ५ जून १९६६

जिन व्यक्तियों को बिना किसी हो-हल्ले के पुनः हिंदू-समाज और धर्म में समरस होना है, उन्हें कुछ अल्प-सी विधि कर अनुमति देना हितकारी है। उत्तम तिथि पर देवदर्शन, विधिवत पूजा कर तीर्थ-प्रसाद ग्रहण करें। उन लोगों के साथ ये बातें स्थानीय व्यक्ति करें। कार्यक्रम में सम्मिलित होनेवालों की संख्या अधिक न हो। इससे कार्यक्रम को समारोह का स्वरूप प्राप्त नहीं होगा। शुद्धि-पत्र देना, उनसे लिखवा लेना कि इसके आगे वे हिंदू हैं और रहेंगे, ये औपचारिक बातें सरकारी दफ्तरों में हिंदू के रूप में उनका समावेश कराने के लिए आवश्यक हैं, इसलिए अवश्य की जाएँ। पुणे के अपने विधिज्ञ कार्यकर्तागण इस दिशा में प्रयत्न करने में सर्वतोपरि सहायता देंगे।

वहाँ अपनी शाखा है। वहाँ के कार्यकर्ताओं से श्री मोरोपंत पिंगले ने कहा है कि वे इन लोगों से पारिवारिक व कार्य की दृष्टि से सब प्रकार के संबंध रखें। इसलिए आप निश्चिंत रहें। (मूल मराठी)

५७. गोरक्षा आंदोलन हेतु

५ जुलाई १९६६

श्री पी.वी.जोशी, अधिवक्ता, सर्वोच्च न्यायालय, दिल्ली

पूज्य श्री ब्रह्मचारी जी को मैंने अभी पत्र लिखा है। सर्वदलीय संगठन के संबंध में आपका विचार ठीक ही है। यहाँ आगामी ९.७.६६ को पं. विश्वंभर प्रसाद शर्मा जी आ रहे हैं। उनसे इस संबंध में परामर्श करने का सौभाग्य मुझे प्राप्त होगा। पं. विश्वंभर प्रसाद शर्मा के द्वारा यह समिति गठित होना उचित और लाभप्रद होगा, क्योंकि गोरक्षा क्षेत्र में उन्होंने बहुत वर्ष निरलस, निःस्वार्थ कार्य किया है। उनका अनेकों से घनिष्ठ परिचय है, उन व्यक्तियों पर प्रभाव है और ऐसा संगठन करने का उन्हें पूर्वानुभव भी है। उनसे आप परामर्श करें और आवश्यकतानुसार पूज्य ब्रह्मचारी जी आदि से भी मार्गदर्शन प्राप्त करें और ऐसा सर्वदलीय संगठन खड़ा करने की ओर पग उठाएँ। अपने अनेक कामों में से अधिकाधिक समय निकालकर मैं भी सेवा में उपस्थित हो जाऊँगा।

५८. सेवाभावी व्यक्ति रहने से राज्य में सुख-समृद्धि

श्री हरिहर पटेल, भुवनेश्वर २ अप्रैल १९६७

....आपके स्वास्थ्य के संबंध में मैं पूछताछ करता रहा हूँ। अच्छा सुधार होने का समाचार भी मुझे मिला, जिससे बहुत संतोष हुआ। चिंता भी दूर हो गई। अब तो यह भी प्रसन्नता देनेवाला वृत्त प्राप्त हुआ कि गत चुनाव में आप सफल हुए और आपके दल ने अन्य छोटे-मोटे दलों को एकत्रित कर मंत्रिमंडल भी बना लिया है, जिसमें आपको स्थान प्राप्त होकर उद्योग विकास विभाग आपके अधीन हुआ है। शासन में अच्छे सेवाभाव के चरित्रवान व्यक्ति रहने से सुख-शांति व समृद्धि का जीवन प्राप्त होता है। आप तथा आपके अन्य सहयोगियों के अधिकार-ग्रहण से ऐसे व्यक्तियों के हाथों में राज्य की बागडोर आने का उत्तम प्रसंग उपस्थित हुआ है। इसमें मुझे परम संतोष का अनुभव हो रहा है। आप सबकी पूर्ण सफलता पर मुझे विश्वास है। मंत्रिमंडल के प्रमुख भी श्रेष्ठ पुरुष हैं, जिनका अंतःकरण क्षुद्रता की ओर झुकना सर्वथा असंभव है। आशाभरी दृष्टि से आप लोगों के शासन के सुदर्शन की ओर देख रहा हूँ, जिससे कि उत्कल प्रांत के सब बंधु प्रगतिपूर्ण सुखमय जीवन का लाभ प्राप्त कर सकें।

....उत्कल के संघ शिक्षा वर्ग में किन दिनों में मैं रहूँगा, इसकी सूचना आपको देने के लिए कह रहा हूँ। संभव हुआ तो उस समय आपसे प्रत्यक्ष में आपका अभिनंदन कर आपको बधाई देने का सुअवसर प्राप्त करूँगा।

....आपके निरंतर उत्कर्ष के लिए भगवच्चरणों में प्रार्थना करता हूँ। कृपया मान्यवर मुख्यमंत्री आदि सब सहयोगियों को मेरे सादर नमस्कार प्रविष्ट करें।

५९. बोली से भाषा का विकास

श्री शांतनुराव शेंडे, वनवासी क्षेत्र, असम ७ जून १९६७

आप उस नवीन क्षेत्र में कार्यार्थ हैं। नया अनुभव पाकर कार्य करने का आत्मविश्वास बढ़ेगा ही। वहाँ के बंधुओं की भाषा सीखने का प्रयत्न लगन से करें। देवनागरी में लिखने का प्रयत्न करें। उनकी वाक्य-रचना ध्यान में लेकर व्याकरण के साधारण नियम एवं सुबोध व्याकरण लिख डालें। वैसे ही उस भाषा के शब्दों को अपनी भाषा के

समानार्थी देखकर सामान्य व्यवहार में उपयुक्त शब्दों का कोश बनाने का प्रयत्न करें। यह काम आगे स्थायी रूप से उपयुक्त होगा।

अपने देश में अनेक क्षेत्रों में बोलियाँ निर्माण हुईं। वे स्वतंत्र हैं। उनका परस्पर संबंध बढ़कर धर्म-संस्कृति का व्यापक एवं शुद्ध स्वरूप परस्पर को समान रूप से अनुभव में आने लगा, जिससे देश के सनातन धर्म का शिक्षण जिस भाषा में प्राप्त होता रहा है एवं धर्म-संस्कृति का मार्गदर्शन करनेवाले महापुरुषों का चरित्र-वर्णन जिस भाषा में व्यक्त हुआ है, उस देववाणी संस्कृत के निकट आत्मीय संबंध से स्थानीय भाषा समृद्ध होती जाकर आगे चलकर सब प्रकार से संस्कृत पर ही उनका जीवन चलता है। यह विकसित हुई बोली 'भाषा' पद को प्राप्त होती है, तब वह संस्कृतोत्पन्न हुई होती है एवं संस्कृत में से ही क्रम-क्रम से समृद्ध होती जाती है। इसी अर्थ में सब भारतीय भाषाएँ संस्कृतोत्पन्न मानी जाती हैं। यह कहना सार्थ है। यह मेरा मत है। भाषाशास्त्री क्या कहते हैं, इसकी मुझे जानकारी नहीं है। मैं भाषाशास्त्र के संबंध में कुछ नहीं जानता हूँ।

(मूल मराठी)

६०. राजनैतिक कार्यकर्ता का दायित्व

श्री पीतांबरदास जी, जनसंघ　　　　　　　　२८ जून १९६७

....राजनीति के विचित्र मार्ग में ऐसे ही कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है, जो अपने साथ आनेवाले नए-नए बंधुओं को सन्मार्ग पर बनाए रख सकें, फिसलने से रोक सकें, ध्येय का स्पष्ट दर्शन कराकर निष्ठावान-चारित्र्यवान बना सकें। अतः आपका स्थान बहुत दायित्वपूर्ण है और उस दायित्व को पूर्ण करने की आपकी क्षमता है। मैं इसी विश्वास को लेकर निश्चित हूँ। चिंता करने का, सतर्कता बरतने का कठिन काम आपके पास है। यह जो कष्ट आपको होगा, हो रहा है, उसके लिए कोई अन्य उपाय नहीं है।

आपके पत्र से हृदय में ऐसी भावनाएँ उमड़ पड़ी हैं, जिनको शब्द में व्यक्त करना संभव नहीं है।

आशा करता हूँ कि आपपर जो भार है, उसे वहन करने की शक्ति तथा स्वास्थ्य आपको प्राप्त हो। परमदयाघन श्री परमात्मा से इस हेतु मैं नम्रता से प्रार्थना करता हूँ।....

६१. अध्यापन-कार्य के माध्यम से संघकार्य

श्री सूर्यकांत जोशी, २६ जून १९६७

आप अध्यापन-कार्य कर रहे हैं। उसमें ध्यान देकर अपने छात्रों को पाठ्यक्रम के अनुसार पढ़ाने के अतिरिक्त उन्हें अपने धर्म, संस्कृति, इतिहास के श्रेष्ठ तत्त्व तथा आदर्श पुरुषों के चरित्र का ज्ञान देकर उनका शीलसंवर्धन करना, अपने से बड़े, अपने समवयस्क तथा अपने से छोटे के साथ योग्य तथा मृदु व्यवहार करना आदि बातों की ओर ध्यान दिया तो संघ के कार्य का ही एक महत्त्व का अंश आप कर रहे हैं, यह संतोष आपको प्राप्त होगा। आप संघ का कार्य पवित्र, दैवी तथा जीवन में आनंददायी मानते हैं। अतएव उपर्युक्त प्रमाण में तथा पद्धति से वह करने में आपको कोई कठिनाई नहीं होगी। वह आपके व्यवसाय के अनुरूप ही है। (मूल मराठी)

६२. सहयोग से कार्य कल्याणकारी

श्री आनंद श्रीखंडे, मुंबई १८ अगस्त १९६७

....आप अत्यंत उत्तम कार्य का दायित्व ग्रहण कर रहे हैं। यह सोचकर कि वह दायित्व अकेले निभाना कठिन एवं कष्टसाध्य है, आपको एक नम्र सूचना करता हूँ कि किसी के सहयोग से कार्य करना कल्याणकारी होगा। आपके द्वारा बनाई गई योजना का मूल विषय मन में रखकर विश्व हिंदू परिषद् नामक संस्था द्वारा काम शुरू किया गया है। उन्हें कठोर परिश्रम कर निरलसता से अंतःकरणपूर्वक काम करने वाले सेवाव्रती कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है। लगता है कि आपकी योजना उन्हें पसंद आएगी एवं उस संस्था के तत्त्वावधान में उस संस्था के कार्यकर्ताओं सहित कार्य कर कुछ ठोस कार्य खड़ा करना संभव होगा। विश्व हिंदू परिषद् के मुख्य कार्यवाह (अर्थात् महामंत्री –सं.) श्री शिवराम शंकर आप्टे (दादासाहब आप्टे) हैं। उनका पता है– 'चंद्रमहल, ठाकुरद्वार, मुंबई-२'। उन्हें आप सूचित करें। प्रत्यक्ष भेंट करना अधिक अच्छा होगा।.... (मूल मराठी)

६३. शिवाजी की स्मृति में स्फूर्तिप्रद योजनाएँ बनाएँ

श्री आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव, आगरा २२ अगस्त १९६७

....भगवत्कृपा से कार्यक्रम में पूर्ण सफलता प्राप्त करें।

अपने इस प्राचीन राष्ट्र में देश के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में महापुरुषों की दिव्य परंपरा चली आ रही है। यह महापुरुष उसी क्षेत्र, प्रांत या जाति विशेष के ही नहीं, अपितु संपूर्ण भारत के राष्ट्रपुरुष हैं। इनमें छत्रपति श्री शिवाजी का अपना अनन्यसाधारण महत्त्व का स्थान है। देशभर में उनके चरित्र का अध्ययन, मनन होना तथा उससे प्रखर राष्ट्रभक्ति का व्यक्ति-व्यक्ति में जागरण करना अतीव लाभदायक सिद्ध होगा। सौभाग्य से उनके पराक्रमसंपन्न, नीतिकुशल, यशस्वी जीवन का केवल महाराष्ट्र से संबंध नहीं है। गुजरात, उत्तरप्रदेश, दिल्ली तथा प्रयाग से उनके चरित्र का संबंध आता है, जिसमें आगरा से औरंगजेब के षड्यंत्र को विफल कर उनका मुक्त होना असामान्य बुद्धि एवं योजनाचातुर्य का प्रसंग रोमहर्षक है। शत्रुओं में निराशा एवं भीति-निर्माण करनेवाला है। दक्षिण में भी तंजावूर तक उनका भ्रमण हुआ है, जो उनकी राजनैतिक दूरदर्शिता प्रमाणित करता है। इसी कारण उनकी मृत्यु के पश्चात् औरंगजेब द्वारा महाराष्ट्र आक्रांत होने के समय संभाजी के वध के पश्चात् राजाराम को जिंजी के किले में सुरक्षित आश्रय मिल सका और वहाँ से आगे की योजनाएँ बनाकर स्वराज्य को पुनः सुदृढ़ नींव पर वे प्रतिष्ठित कर सके।

उत्तर से दक्षिण तक समूचे भारत के साथ उनके जीवन के प्रसंगों का संबंध और पूर्ण देश से म्लेच्छों के प्रभुत्व का उच्छेद कर धर्मराज्य की स्थापना की उनकी महत्त्वाकांक्षा का विचार कर, देशभर में उनकी स्मृति जागृत रख उत्तम स्फूर्तिनिर्माण की योजनाएँ बनाना आवश्यक है। इसमें आपके द्वारा आयोजित यह समारोह अत्यंत श्रेष्ठ होने से उसकी सफलता के लिए श्री भगवच्चरणों में प्रार्थना करता हूँ।

६४. कार्य के प्रति सहानुभूति रखें

२४ अगस्त १६६७

श्री प्राण मल्होत्रा जी, सचिव, स्वतंत्र पार्टी, गुरुदासपुर

आप जिस पार्टी से निष्ठापूर्वक जुड़े हुए हैं, उस पार्टी का काम उत्साहपूर्वक करते होंगे। मुझे लगता है कि पार्टी के महत्त्वपूर्ण पदाधिकारी होने के कारण राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से संपर्क बनाए रखना आपको असुविधाजनक तथा असमंजसपूर्ण लगता होगा। राजकीय कार्यों से जुड़े हुए असंख्य व्यक्तियों के विषय में यही देखा गया है। आप संघ के पास रहें या दूर, आपके मन में उसके प्रति सहानुभूति तो अवश्य रहेगी। कुछ भी

हो, यह भी देशसेवा का एक मार्ग है। इस कार्य का महत्त्व संतुलित विचार करनेवाले व्यक्तियों के मन में धीरे-धीरे आएगा।

(मूल अंग्रेजी)

६५. पारसी हिंदू ही हैं

श्री दादासाहब आप्टे, महामंत्री, विश्व हिंदू परिषद् २५ अगस्त १९६७

....अनेक बार श्री दादाभाई नौरोजी, फिरोजशाह मेहता, मैडम कामा आदि का गौरवपूर्ण उल्लेख कर पारसी बंधु राष्ट्र-जीवन में राष्ट्र की आशा-आकांक्षाओं से एकरूप हुए हैं। इसलिए उनका पृथकत्व से विचार करने की अब आवश्यकता नहीं है, वे वास्तव में हिंदू ही हैं एवं उनकी राष्ट्रीय वृत्ति के कारण उन्हें अधिक प्रमाण में हिंदू ही कहना उचित है, ऐसा मैंने प्रगट रूप से कहा था। उसी दृष्टि से नागपुर के बाल स्वयंसेवकों के शीतकालीन शिविर के उद्घाटन के लिए अध्यक्ष के नाते मेरे निकट के मित्र श्री जाल पी गिमी को आमंत्रित किया गया था। उन्होंने अध्यक्ष पद विभूषित भी किया था। आपको लगे तो उन (पारसी सहयोगियों) की जानकारी के लिए सूचित करें एवं यह उन्हें नम्रतापूर्वक बताएँ कि वे ऐसी कोई गलतफहमी न रखें कि हम उन्हें पृथक मानते हैं।....

(मूल मराठी)

६६. राष्ट्रीय समूहगान प्रतियोगिता

डा. सूरजप्रकाश जी, दिल्ली १३ अक्तूबर १९६७

भारत विकास परिषद् की ओर से 'राष्ट्रीय समूहगान प्रतियोगिता' आयोजित है और इसी के संबंध में एक स्मरणिका भी प्रकाशित करने का विचार है, यह समाचार प्राप्त हुआ। आपकी योजना सफल हो और अपना बाल-युवक वर्ग राष्ट्रभावना जगाने तथा दृढ़मूल करनेवाले सद्विचार, सद्भावयुक्त गीतों के अभ्यास से, उसके गायन से, चिंतन से अपने अंतःकरण को आजकल व्याप्त उच्छृंखल हीन रुचि के विषय विलासिता के उत्तान वीभत्स स्वरूपवाले, अनैतिकता, चारित्रिक पतन की ओर ले जानेवाले अभद्र गीतों से और उनके कुसंस्कारों से मुक्त होकर चाारित्र्यवान, निःस्वार्थ, निरलस, कर्मनिष्ठ, राष्ट्रभक्त बन सके- इस हेतु आपकी यशस्विता के लिए परममंगल श्री परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ।

६७. विवेक बनाए रखें

श्री राजासाहब सिंगरामऊ, उत्तरप्रदेश 　　　　१५ अक्तूबर १९६७

....उत्तरप्रदेश की राजनीति में जो उथल-पुथल हो रही है, उससे ऐसा आभास हो रहा है कि आप लोगों ने बनाई हुई संयुक्त विधायक दल की सरकार थोड़े ही दिनों में सत्ताच्युत हो जाएगी। फिर आपके सामने जितने प्रश्न हैं, उनके संबंध में कुछ कहने का अवसर नहीं रहेगा। फिर से एक दल-मात्र के रूप में जनसंघ जो भी कुछ कर सकेगा, करता रहेगा। आपको भी जनजागरण के कार्य में फिर जुट जाने का दायित्व उठाना पड़ेगा।

किसी भी व्यक्ति या दल को शासन चलाने का अवसर मिलता है, तब पद-प्रतिष्ठा भी प्राप्त होती है। इस स्थिति में सब लोग बहुत सूक्ष्म दृष्टि से उनकी ओर देखते हैं और उनकी नीति को पूर्ण रूप से व्यक्त होने का समय न देते हुए दोषारोपण करते हैं। यह स्वाभाविक ही है। ऐसे समय आप जैसे विचारी तथा सुप्रतिष्ठित महानुभावों को उतावली न कर विवेक से अपने बंधुओं के प्रति सहानुभूति की दृष्टि अपनाकर उनकी प्रतिमा निर्दोष रूप में सबके सामने आ सके, ऐसा प्रयत्न करना हितावह होगा। दोष देखना ही चाहिए, किंतु उसमें कड़वाहट नहीं आने देना चाहिए– ऐसा जानकार कहते हैं।

आगे कभी उधर आने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ तो आपसे विचार-विमर्श करने का सुअवसर प्राप्त कर सकूँगा।....

६८. हिंदू धर्म और विज्ञान

श्री डी.बालसुंदरम्, कोयंबटूर 　　　　१३ नवंबर १९६७

आपकी पुस्तक 'Some new thoughts on Science and Hinduism' मुझे बहुत पहले ही प्राप्त हो चुकी थी। किंतु अपने निरंतर प्रवास के कारण मैं पुस्तक पढ़ नहीं सका और न आपको लिख सका, इसके लिए क्षमा चाहूँगा। आपने वैज्ञानिक तथा मनोवैज्ञानिक दृष्टि से इस विषय का सफलतापूर्वक लेखन किया है। निस्संदेह इस विषय को अधिक स्पष्ट करके निश्चित रूप से जँचनेवाला बनाने हेतु आप एक और प्रयास करेंगे। आपका चिंतन मौलिक है। हिंदू धर्म के प्रति आपकी दृढ़ श्रद्धा होते हुए भी हिंदू धर्म के विविध पहलुओं का परामर्श लेकर उनका मूल्यांकन,

निष्पक्षता एवं निर्भयता से किया है। मुझे आशा है कि यह ग्रंथ अधिक से अधिक लोग पढ़ेंगे। इससे उनके मन में अपनी शास्त्रीय अमर जीवनशैली, जिसे सर्वसाधारण लोग 'हिंदूधर्म' कहते हैं, वास्तव में यही सनातन धर्म है, के प्रति दृढ़ श्रद्धा निर्माण होगी। यही मनुष्य के आचरण के सभी पहलुओं का नियंत्रण कर उसकी दिव्यता का प्रकटीकरण करनेवाला, आत्मा से परमात्मा तक ले जाने वाला अमर सनातन धर्म है। (मूल अंग्रेजी)

६९. 'जनप्रदीप' विशुद्ध राष्ट्रवाद का संदेशवाहक बने

श्री मित्रसेन, जालंधर (पंजाब) १४ मार्च १९६८

'जनप्रदीप' सब कार्यकर्ताओं के प्रयत्नों से तथा जनसाधारण के सहयोग से सफल होगा। समाचार-वितरण सुव्यवस्था से हो, साथ ही प्रचलित गतिविधियों का प्रामाणिक विवरण हो और विशेष महत्त्व का विषय, याने शुद्ध राष्ट्रभक्ति का उद्दीपन हो– यह लक्ष्य आपने अपने सम्मुख रखा ही होगा। सभी प्रकार के ओछे भाव, जाति, पंथ, भाषा आदि के समाचार बढ़े हुए हैं, बढ़ते जाते हैं, बढ़ाए जा रहे हैं। अनेक भ्रम फैलाए जा रहे हैं। अपने राष्ट्र को विच्छिन्न करनेवाली विदेशी शक्तियाँ अपने देश के अनेक भ्रमग्रस्त बंधुओं को आगे कर आपसी विद्वेष तथा तदुत्पन्न अंतर्कलह से राष्ट्र की एकात्मता भंग कर अराजकता निर्माण करने के लिए प्रयत्नशील हैं। इस दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थिति को समझते हुए राष्ट्र की एकात्मता का, स्वाभिमान का, निःस्वार्थ भाव से, राष्ट्रहितार्थ सर्वस्वार्पण भाव से यावज्जीव कष्ट करने के निश्चय का जागरण, दृढ़ीकरण करने में अपनी पूरी शक्ति लगाकर 'जनप्रदीप' विशुद्ध राष्ट्रविचार का प्रबल संदेशवाहक बने, यही मेरी इच्छा है।

अपने राष्ट्र का आधार परम मंगलमय श्री भगवान की कृपा से 'जनप्रदीप' सच्चे अर्थ में सफल हो।

७०. घाव बहुत गहरा है

(दीनदयाल जी की मृत्यु पर शोक-संवेदना पत्र के उत्तर में)

श्री के.आर.मलकानी, दिल्ली १५ मार्च १९६८

घाव गहरा है, बहुत गहरा है। वह कब भर पाएगा, मैं नहीं

जानता। हृदय के भाव व्यक्त करनेवाले शब्द मेरे पास नहीं है। तीव्र वेदना के कारण संवेदन-शून्यता अनुभव कर रहा हूँ। लिखना तो चाहता हूँ, परंतु लिख नहीं सकता।

कृपया क्षमा करें। घाव कुछ प्रमाण में सूखने दें। कृपया अधिक न खरोंचें। (मूल अंग्रेजी)

७१. *शाकाहार से खाद्यान्न-समस्या सुलझेगी*

श्री गणपति शंकर देसाई, मुंबई १५ मार्च १९६८

'The Bombay Humanitarian League' अपनी स्वर्ण जयंती मनाने जा रही है– यह विदित हुआ। मान्यवर श्री स.का.पाटिल की अध्यक्षता में समारोह समिति सफलता को प्राप्त करेगी– इसका पूर्ण विश्वास है। मान्यवर श्री निजलिंगप्पा जी उद्‌घाटन कर अपना पूरा समर्थन प्रदान कर रहे हैं, यह सौभाग्य की बात है।

इन श्रेष्ठ पुरुषों के सहयोग से आपको यश प्राप्त होगा ही। यदि राजनैतिक क्षेत्र में श्रेष्ठ माने गए नेतागण तथा कर्णधार शाकाहारी भोजन की श्रेष्ठता का प्रतिपादन करेंगे और भोजन-सामग्री में परिवर्तन कर जनता को सामिष आहार (अंडे, मछली, मांस, जिसमें दुर्भाग्य से गो-मांस को भी सम्मिलित किया जाता है) करना चाहिए ऐसा अनिष्ट प्रचार करना छोड़ देंगे, तो जनसाधारण शाकाहारी बनने में संकोच नहीं करेगा। अन्न-धान्य की समस्या भी सुलझ सकेगी। तज्ञ लोगों का मत है कि एक व्यक्ति के शाकाहारी भोजन के लिए चतुर्थांश एकड़ भूमि की उपज वर्षभर के लिए पर्याप्त होती है, किंतु एक व्यक्ति के वर्षभर के सामिष भोजन के लिए आवश्यक मांस जितने पशुओं के शरीर से प्राप्त हो सकता है, उतने पशुओं को पाल-पोसकर पुष्ट करने के लिए चार एकड़ भूमि की उपज आवश्यक होती है। मांस के साथ धान्य का सेवन व्यक्ति करता है उसके लिए और थोड़ी भूमि आवश्यक होती है। अतः सामिष भोजनवाले अनेक शाकाहारियों को भूखा रखकर अपने जिह्वा-लौल्य को तृप्त करते हैं, ऐसा कहा जा सकता है।

यदि शाकाहार ही सब लोग ग्रहण करें तो आज जितनी भूमि कृषियोग्य है, उसकी उपज से आज से बहुत अधिक जनसंख्या का सुखपूर्वक पोषण हो सकेगा, ऐसा कुछ जानकार लोगों का कहना है। अतः

आप शाकाहार के संबंध में अपनी प्रबल आवाज उठाकर जनसाधारण पर महान उपकार करेंगे और अपने मूक पशु, जो अपनी ओर से रक्षा की अपेक्षा रखते हैं, उनको भी जिह्वालोलुप हिंस्र मानव के भक्ष्य बनकर नष्ट होने से बचा सकेंगे।

दयाघन श्री भगवान आपको पूर्ण सफलता प्रदान करें और अपने पवित्र देश को समृद्ध, सुरक्षित बनने की प्रेरणा एवं सद्बुद्धि दें, यह उनके पावन चरणों में प्रार्थना करता हूँ।

७२. संसद सदस्यता राष्ट्रहितार्थ प्रभावसंपन्न हो

श्री प्रेममनोहर जी, कानपुर १७ अप्रैल १९६८

....आपका हृदय से अभिनंदन करता हूँ। भगवत्कृपा से आपकी संसद-सदस्यता परिणाम करनेवाली, प्रभावसंपन्न सिद्ध हो।

शुद्ध राष्ट्रभक्ति के संस्कार अपने पुनीत कार्य से अंतःकरण में दृढ़ रहते हैं। सब व्यवहार, आचार-विचार, उच्चार उन संस्कारों से ओतप्रोत रहने के कारण आपकी संसद-सदस्यता देश के लिए हितावह सिद्ध होगी, ऐसा विश्वास है।....

७३. वनवासी बंधुओं से निष्कपट व्यवहार हो

१८ अप्रैल १९६८

श्री मनोहर रेड्डी, सचिव, वनवासी सेवा प्रकल्प,
अ.भा.विद्यार्थी परिषद् क्षेत्रीय कार्यालय, रायपुर

रविशंकर विश्वविद्यालय के छात्रों द्वारा वनवासी क्षेत्र में कार्य करने हेतु आपने योजना बनाई है, यह प्रसन्नता की बात है। वहाँ के अपने बंधुओं से निष्कपट भाव से मिलना, अपने नागरी जीवन के अभिमान का आभास भी न हो, इस प्रकार के अनिष्ट भाव को हृदय से हटाकर व्यवहार करना, व्यवहार में कृत्रिमता न आने देना, स्वाभाविक रूप से अपने समाज की एकात्मता प्रकट हो ऐसा ही बोलना-चालना, आचरण करना, अर्थात् वन्य क्षेत्र में अपने लिए अपरिचित रहन-सहन दिखाई देने पर उसके प्रति घृणा आदि दुर्भावनाओं को किंचित्मात्र भी अंतःकरण में प्रश्रय न देना, ऐसे कुछ पथ्य सँभाल कर काम करें तो उत्तम यश मिलेगा और आप सब बंधु श्रेय के भागी बन सकेंगे।

ग्रीष्मावकाश में प्रारंभ किया काम वहीं छोड़ देना ठीक नहीं होगा। अतः आगे भी मास में एक दो बार, एक-एक दिन निकाल कुछ बंधु उस क्षेत्र में जाते रहें और नवनिर्मित आत्मीय संबंध दृढ़तर करते रहें तो अधिक शोभनीय होगा। इसके पश्चात् भी कार्य कैसा और क्या करें, इसका विचार कर रखें। आगे तदनुरूप वह चलाया जा सके ऐसी व्यवस्था करना लाभदायी होगा।

आपके उत्तम संकल्प पर आप सबका अभिनंदन कर पत्र पूर्ण करता हूँ।

७४. वनवासी कार्यकर्ता के लिए पाथेय

डा. केशवरावजी जोगलेकर, तलासरी, महाराष्ट्र　　१० जुलाई १९६८

....तलासरी में आपकी योजना हुई है, ऐसी जानकारी प्राप्त हुई। आपके लिए एक नया कार्यक्षेत्र उपलब्ध हुआ है। कार्य उत्तम है। धर्म एवं संस्कृति का स्वाभिमान सर्व दूर जागृतकर सब लोगों को अपनी उपजीविका चलाने के संबंध मे मार्गदर्शन करना तथा उनको सुसंगठित कर आपत्तियों से संघर्ष करने में समर्थ बनाना यह एक श्रेष्ठ कार्य है। मुझे विश्वास है कि इस कार्यक्षेत्र में आप समरस होकर अपने श्रेष्ठ कर्तव्य को सफलतापूर्वक पूर्ण करेंगे।

इस प्रकार के काम करते समय मनःशांति रखना वह प्रक्षोभित न हो– ऐसा प्रयास करना और किसी प्रतिक्रिया के स्वरूप कार्य करने की भावना से स्वयं को पृथक रखना लाभदायक सिद्ध होता है।

कार्य की प्रगति के विषय में समय-समय पर लिखने की कृपा करें। (मूल मराठी)

७५. गीतरामायण के गायन से हिंदू संस्कृति का प्रचार

श्री सुधीर फड़के, मुंबई　　१६ अगस्त १९६८

ज्ञात हुआ कि आपको मेरी भेंट के लिए बहुत देर तक रुकना पड़ा। इसका मुझे बहुत दुःख हुआ। वास्तव में मैं उस समय सोया नहीं था। दरवाजे पर दस्तक दी होती तो मैं त्वरित उठकर आता। परंतु अब बीत गई, सो बात गई।

श्री वसंतराव दीक्षित से ज्ञात हुआ है कि 'गीतरामायण' के लिए आपको कुछ देशों में आमंत्रित किया गया है। यह बहुत अचछा सुयोग है। मधुर माध्यम से रामायण का प्रचार करने का महद्भाग्य आपको प्राप्त हो रहा है। भिन्न-भिन्न देशों में रामायण की रुचि पैदा होकर तद्देशियों पर हिंदू-संस्कृति का प्रभाव पड़े तथा भारत की ओर सब श्रद्धा-भक्ति से देखें— यह स्वाभाविक इच्छा है। ऐसा वातावरण निर्माण करने में आपको सफलता मिले तथा आपकी कीर्ति शुक्लेंदुवत वर्धिष्णु हो, इसके लिए श्री प्रभु चरणों में प्रार्थना करता हूँ। भगवत्कृपा से आप अपनी यात्रा सकुशल तथा सफलतापूर्वक पूर्ण कर लौटेंगे, तब भेंट होगी ही। इस प्रवास में आपकी सारी इच्छाएँ पूर्ण हों। (मूल मराठी)

७६. घोषणा खोखली न हो

श्री दादासाहब आप्टे, दिल्ली — १६ मार्च १६६६

आपके द्वारा बनाई हुई योजना पढ़ी। संपूर्ण कार्य के लिए बहुत कष्ट उठाने पड़ेंगे और खर्च भी बहुत करना पड़ेगा। क्रमशः सब प्रकार की अनुकूलता जुटानी पड़ेगी। शिक्षाक्रम भी निश्चित करना पड़ेगा। मुख्यतः क्या सिखाना चाहिए, अन्य विधियों की पद्धति कौन सी रहे, आदि अनेक विषय गंभीरता के साथ विचार करने योग्य हैं। केवल अपनी योजना की घोषणा करने में तो कोई प्रत्यवाय नहीं है, परंतु वह घोषणा खोखली न रहे, इस हेतु कौन किस प्रकार कष्ट करेंगे, इसकी भी योजना बननी चाहिए। घोषणा कर दी, फिर कुछ नहीं बना, तब मनस्ताप, फिर एक-दूसरे पर दोषारोप लगाना, ऐसी स्थिति निर्माण न हो। यह ध्यान में रखकर जो भी कर सकें, करें।

७७. संतुलित बुद्धि से विचारों का प्रतिपादन

श्री अशोक जी घारपुरे, सांगली — २२ अक्तूबर १६६६

....'साप्ताहिक विजयंता' का विशेषांक प्रकाशित करने का आपने संकल्प किया है— ऐसा ज्ञात हुआ। भारतीय जनसंघ के प्रांतीय अधिवेशन के उपलक्ष्य में यह उपक्रम है, इसलिए 'जनसंघ' के लक्ष्य, नीति आदि विषयों के बारे में यथार्थ जानकारी देनेवाले लेख तो उसमें प्रकाशित करने का आपने अवश्य ही सोचा होगा। उसी के साथ अन्य सब दलों के बारे

में संतुलित बुद्धि से लिखी गई सर्वकष जानकारी प्रकाशित कर तौलनिक विचारों को प्रतिपादन करना यदि संभव हुआ तो वह लाभप्रद सिद्ध होगा। साथ ही विशुद्ध राष्ट्रभावना जागृत करनेवाली कथाएँ, घटनाएँ, कविताएँ आदि के द्वारा यह विशेषांक सर्वांग परिपूर्ण हो– ऐसा प्रयास करें।

आपका यह विशेषांक उत्तमज्ञानप्रद, राष्ट्रभक्ति उद्दीपन करनेवाला, उपयुक्त और संग्राह्य बने, इसलिए आप सबकी ओर से श्री भगवच्चरणों में प्रार्थना कर रहा हूँ।....

७८. भूयश्च शरदः शतात्

श्री निरुभाऊ लिमये, पुणे ४ नवंबर १९६९

आपके अभीष्ट चिंतन के लिए यह पत्र लिख रहा हूँ। देश के सार्वजनीन, विशेषतः राजनैतिक जीवन में स्वार्थरहित राष्ट्रचिंतनपरक जीवन जीने वालों की संख्या दुर्भाग्य से बहुत अल्प है। राष्ट्रहित पर दृष्टि रखकर, पक्षाभिनिवेशरहित, परंतु पक्ष की निष्ठा न टूटने देते हुए सब पक्षोपपक्षों से एकता का भाव रखने का प्रयत्न करने के लिए व्याकुल होनेवाले बहुत थोड़े हैं। इन दिनों कांग्रेस जैसी पुरानी, सबका श्रद्धास्थान बनी हुई संस्था में भी फूट पड़ गई है। सभी अपने-अपने अभिनिवेश में डूबे हुए हैं। इस परिस्थिति में चिंता से व्यथित हुए मन को धीरज बँधता है तथा उज्ज्वल भविष्य के प्रति विश्वास होता है, वह कुछ सत्प्रवृत्त, समन्वय साध्य करने के लिए प्रयत्नशील स्वार्थशून्य व्यक्तियों के अस्तित्व के कारण। इन व्यक्तियों में मैं आपकी गिनती करता हूँ। इसलिए आपके बारे में मेरे अंतःकरण में नितांत प्रेम और आदर है।

आपको ६० वर्ष पूर्ण हो रहे हैं तथा अधिक अनुभवपक्व जीवन इसके आगे आपका प्रारंभ हो रहा है, इसका मुझे अतीव आनंद होता है। परममंगल जगज्जननी श्री अंबा की कृपा से आपको उत्तम आरोग्य, नित्य उत्साहपूर्ण कर्मशक्ति तथा श्रेष्ठ गुणों से युक्त पूर्ण जीवन प्राप्त हो। अपने यहाँ १०० वर्ष जीने की इच्छा तथा उसके लिए प्रार्थना करते समय ही 'भूयश्च शरदः शतात्' यह इच्छा प्रकट की गई है। आपको भी आपका उपयोगी जीवन 'भूयश्च शरदः शतात्' उत्तम रीति से जीने के लिए श्री जगन्माता का आशीर्वाद प्राप्त हो तथा उसका वरद्हस्त आपके मस्तक पर सदैव अखंडरूप से रहे, इसके लिए उस करुणामयी के चरणों में प्रार्थना करता हूँ। (मूल मराठी)

७९. मार्गदर्शक संदेश

श्री प्रभाकर जी धनागरे, २९ दिसंबर १९६९

अधिवेशन सभी दृष्टि से सफल हो। छात्र बंधुओं को उनके अध्ययन में आवश्यक सब प्रकार से सहयोग प्राप्त हो। उनका सर्वांगपूर्ण विकास हो। वे उत्तम राष्ट्रसेवक, शील-चारित्र्य-ज्ञान एवं कर्तृत्वसंपन्न बनें, इस लक्ष्य को स्वीकार कर आप सोचें और अपनी योजना कार्यान्वित करें। मात्र आंदोलनात्मक विचार न रहे। आज तो स्वाधिकार लालसा की प्रधानता और कर्तव्यपूर्ति में आनाकानी का ही बोलबाला है। इस स्थिति को बदलना चाहिए, ऐसा लगता है।

मुझे विश्वास है कि आप यथोचित और सुयोग्य बातों को ही कार्यान्वित करेंगे। सभी कार्यकर्तागण एवं उपस्थित छात्रों को सादर नमस्कार।

(मूल मराठी)

८०. सबका भारतीयकरण करना नितांत आवश्यक

श्री देवेंद्रस्वरूप, 'पांचजन्य', ८ मार्च १९७०

'भारतीयकरण' को लेकर आप एक विशेषांक निकाल रहे हैं, यह बड़े औचित्य की बात है। अपने इस पुनीत देश पर, अपने चिरंजीवी राष्ट्र पर कुछ अभिशाप-सा पड़ा हुआ दिखता है, अन्यथा इस शब्द को लेकर जो विरोध प्रकट हो रहा है, वह न होता वरन् इसका स्वागत और अभिनंदन ही होता। पूरी पृथ्वी पर ऐसा दूसरा देश नहीं होगा, जहाँ के शीर्षस्थान के नेता, शासन का भार वहन करनेवाले व्यक्ति अपने देश के निवासियों में राष्ट्रीय भावनाओं के संस्कार स्थापित करने की आवश्यकता की अवहेलना और विरोध करते हों। यह अपने भारत का ही दुर्भाग्य है। विशेषत: जब जातिवाद, पंथवाद, भाषावाद, प्रादेशिक अभिमान का अतिरेक, दलगत स्वार्थ, व्यक्तिगत मान पद-प्रतिष्ठा आदि स्वार्थ के कारण विशुद्ध भारतीय एकात्म राष्ट्रभाव को मारक अवगुणों का सर्वत्र प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है, भारतीयकरण के हेतु योजनाबद्ध व्यापक प्रयत्न करना अतीव आवश्यक है। इसका विरोध करना राष्ट्रविनाशकारी क्षुद्र प्रवृत्तियों का पोषण करना ही है, जो कि आक्रांताओं से घिरे हुए, विघटनकारी तत्त्वों से छिन्न-विच्छिन्न हो रहे, अपने संकटग्रस्त देश को दासता की भीषण गर्त में ढकेल सकता है। किसी की निष्ठा देश के, राष्ट्र के बाहर के लोगों पर नहीं

है, किसी का प्रेम अपने देश पर होने के स्थान पर अन्य देश पर नहीं है, निष्ठा का विभक्त रूप नहीं है– ऐसा कौन कह सकता है? यह स्थिति यदि विद्यमान है, तो उसके सर्वनाशकारी परिणामों से देश को, राष्ट्र को सुरक्षित रखने के लिए संपूर्ण देश में जातिपंथादि भेद से हटकर निरपेक्ष भाव से सब देशवासियों को भारतीयता के संस्कार देना और भारत तथा उसकी परंपरा, उसका राष्ट्रजीवन, उसका हितसाधन, संकट-निवारण, विजयसंपन्न वैभव-संपादन के ऊपर एकाग्र अविचल निष्ठा जगाकर सबका भारतीयकरण करना नितांत आवश्यक है।

यह सब सोचकर आपके इस विशिष्ट 'भारतीयकरण' विशेषांक प्रसिद्ध करने के संकल्प का अभिनंदन करता हूँ और देश के सब प्रकार के कामों में जुटे हुए मनीषी अपने सुलझें हुए विचारों को इसमें प्रसिद्ध कराकर राष्ट्र के अभ्युदय के हेतु आवश्यक संस्कार की अटल भित्ति-निर्माण के आपके संकल्प में पूर्ण सहयोग देंगे, ऐसा विश्वास रखता हूँ।

यह अमर दैवी राष्ट्रपुरुष आपको सफलता का शुभाशीष प्रदान करे। इति शम्।

८१. वनवासी हिंदू हैं

श्री श्रीकांत आठल्ये, १० मार्च १९७०

जोरहाट का सम्मेलन होने के पश्चात् पेजावर स्वामी कुछ दिन उधर रहनेवाले हैं। उनका कार्यक्रम आयोजित करें। उन्होंने पूछा है कि वे सम्मेलन में क्या बोलें? यह उनकी नम्रता, अर्थात् बड़प्पन है। तथापि सब हिंदुओं की एकता, वनवासी लोग हिंदू ही हैं, परंतु उनमें से जो लोग किसी कारण से अहिंदू हुए हैं, उन्हें हिंदू-समाज में लेकर उनकी योग्य देखभाल करना, यही अपना धर्म है। सब हिंदू परस्पर सहानुभूति, सहयोग, स्नेह तथा परस्पर सहायता का व्यवहार करें। सब भगवद्भक्ति रूप धर्म का पालन करें। समाज में एकात्मभाव जागृत रखने के लिए सामूहिक भजन, नाम-संकीर्तन, सद्ग्रंथ-पठन आदि कार्यक्रम नियम से करें। ये सूचनाएँ देकर आशीर्वादयुक्त भाषण दें। उस क्षेत्र के धर्मगुरु, सत्राधिकार सम्मानित हों तथा वे भी घूम-घूम कर सारे समाज में भक्ति का जागरण करते हुए धर्म-प्रसार करें। यह बात भी उनकी ओर से अधिकार वाणी से कही जाए-- यह हम जैसे सामान्य जनों की अपेक्षा है। इसके अतिरिक्त जो-जो

उनके शुद्ध अंतःकरण में स्फुरित होगा, वह अत्यंत कल्याणकारी ही होगा। आपको अपेक्षाएँ सूचित करना योग्य लगता हो, तो वैसा उन्हें लिखने को कहें। (मूल मराठी)

८२. संस्कृत अध्ययन आवश्यक

श्री श्री धुं.कवीश्वर, मुंबई — १६ अप्रैल १९७०

आपका पत्र आज दोपहर को मिला। संयोग से आज ही प्रातःकाल डा. वर्णेकर से भेंट हुई थी तथा विदित हुआ कि वे आपकी संस्कृत शिक्षा परिषद् के लिए जानेवाले हैं। संस्कृत की आजकल जो अवहेलना हो रही है, यह चर्चा हम दोनों में हुई। वर्तमान शासनकर्ताओं की नीति में जो-जो भारतीय, प्राचीन, श्रेष्ठ और पवित्र है, उसका जाने या अनजाने योजनापूर्वक अवमान तथा विनाश करने की प्रवृत्ति दिखाई देती है। संस्कृत का ज्ञान भारत के प्राचीनकाल से चली आ रही चिरंजीव सांस्कृतिक-राष्ट्रीय भावनाओं का उद्दीपन तथा पोषण है। और आज आधुनिकता तथा प्रगतिशीलता के भ्रामक नाम पर उन पवित्र भावनाओं का निर्मूलन करने में नेता कहलानेवाले लोग अपना पुरुषार्थ मान रहे हैं। इस परिस्थिति में अध्ययन-अध्यापन के विषय में जो शासकीय नीति है, वह अपेक्षित ही है। इसमें उचित परिवर्तन हो, इसके लिए एक-एक बार इसके लिए आंदोलन किया जाए या अन्य उपाय किए जाएँ, इसका विचार हो। सत्य तो यह है कि 'मूले कुठारः' न्याय से जीवन में व्याप्त अराष्ट्रीय एवं परमुखापेक्षी वृत्ति का उन्मूलन कर जनसाधारण की शुद्ध राष्ट्रभक्तिपूर्ण सुसंगठित शक्ति खड़ी करने तथा उसके द्वारा जीवन के सब प्रवाह शुद्ध करने की ओर ध्यान देना आवश्यक है। मूल के सींचने से शाखा-पल्लवों का संवर्धन होता है। जनसाधारण की भाव-शुद्धि तथा परिणामकारक संगठन सब समस्याओं का हल करने समर्थ हो सकेगा। तब तक पृथक-पृथक प्रयत्न चालू रखना चाहिए। परंतु मुझे लगता है कि मूल अधिष्ठानभूत शक्तिनिर्माण की ओर ध्यान रखकर प्रयत्नरत रहना चाहिए।

आप इस परिषद् के माध्यम से प्रभावी रूप से जनता की माँग के नाते संस्कृत-अध्ययन का मंडन करेंगे ही। मैं परममंगल श्री प्रभुचरणों में प्रार्थना करता हूँ कि आपको यश प्राप्त हो तथा गीर्वाण वाणी पुनः अपने सिंहासन पर विराजमान होने का दृश्य फल आपको प्राप्त हो। (मूल मराठी)

८३. धर्मांतरितों के पुनरागमन का विचार हो

श्री मिश्रीलाल जी, भोपाल १७ अप्रैल १९७०

श्रीमंत राजमाता का कार्यक्रम उत्साहपूर्ण होकर उनको प्रभावित कर सका– यह पढ़कर बहुत प्रसन्नता हुई। लोहरदगा तथा गुमला से भी अपने बंधु आए थे, यह भी अच्छा हुआ। मुझे ऐसा समाचार मिला है कि लोहरदगा के चिकित्सा-केंद्र एवं संलग्न छात्रावास को ही पर्याप्त मानकर चलने का वहाँ के कार्यकर्ताओं का विचार है। अपने अनेक बंधु जो किसी कारणवश भिन्न धर्म-पंथ में चले गए हैं, उनके पुनरागमन की दृष्टि से कोई विचार नहीं है। यह कहाँ तक सच है, यह मैं नहीं जानता। उस क्षेत्र में सभी प्रकार की दृष्टि रखकर काम करना लाभदायी होगा। चिकित्सा का प्रबंध सहायक के रूप में अच्छा है। उसके कारण अपने बंधुओं को सहायता कर उन्हें सहायता के नाम से जो धर्मभ्रष्ट करने का प्रयास करते हैं, उनसे सुरक्षित रखना तथा जो उनके जाल में फँस चुके हैं, उन्हें उस जाल से मुक्त कर पुनः अपने धर्म में, समाज में सुप्रतिष्ठित करना उचित होगा। ऐसा विचार लेकर लोहरदगा का कार्य चलाने का संकल्प है या नहीं, यह आप बता सकेंगे, ऐसा सोचकर ही आपसे यह जिज्ञासा कर रहा हूँ।

८४. विशेषांक उद्‌बोधक हो

श्री अमरेंद्र गाडगिल, पुणे १६ अक्तूबर १९७०

योग्य हाथों में योग्य काम सौंपा जाना सोने में सुगंध की तरह है। विश्व हिंदू परिषद् के महाराष्ट्र प्रांतीय सम्मेलन के निमित्त 'हिंदू विश्व' मासिक का विशेषांक प्रकाशित होनेवाला है। उसके संपादन का दायित्व आपने ग्रहण किया है, यह उत्तम है। विशेषांक में महाराष्ट्र के धर्म व तत्त्वज्ञान का प्राचीन काल का इतिहास संक्षेप में दिया जाए भागवत्‌धर्मी, वारकरी संप्रदाय, नाथ संप्रदाय, श्री गुलाबराव महाराज का मधुराद्वैत संप्रदाय तथा अनध्यस्त विवर्त मत सहित भक्ति के विविध आविष्कार, आधुनिक काल में समाज सेवा, राष्ट्रीय आंदोलन आदि से भक्तिमार्ग का संबंध जोड़नेवाले श्री संत तुकडोजी महाराजादि संतों के प्रयत्न आदि का योग्य विवेचन हो, तो वह पाठकों को बहुत उद्‌बोधक होगा। सामाजिक घटनाचक्र तथा उसका राष्ट्रीय जीवन पर होनेवाला परिणाम, सद्यःस्थिति में पश्चिमी जीवन का अपनी परंपरा पर आघात तथा उसमें से हमें अपेक्षित

विकास के विषय में भी संतुलित विचार व्यक्त हों। श्री दादासाहब आप्टे के साथ आपने चर्चा की होगी। मुझे विश्वास है कि उनके मार्गदर्शन तथा आपकी प्रतिभा से यह विशेषांक अत्यंत उद्‍बोधक तथा संग्राह्य होगा। (मूल मराठी)

८५. ध्येयदृष्टि पर दृढ़ रहें

श्री अरविंद गोदीवाला, सूरत (गुजरात) २६ अप्रैल १९७०

पाक्षिक, साप्ताहिक, दैनिक या अन्य प्रकार के पत्र या पत्रिकाएँ बहुत चलती हैं, परंतु उनके संबंध में मुझे जानकारी नहीं है। सभी राष्ट्रवादी होने का दावा करके प्रारंभ करते हैं, फिर अर्थोपार्जन के लिए जो रंग लेना पड़े, ले लेते हैं। अतः आपके लिए मैं यही प्रार्थना करूँगा कि आप ध्येयदृष्टि पर दृढ़ रहें। यदि ऐसा करने से हानि उठानी पड़े तो भले ही प्रकाशन बंद कर दें, परंतु ध्येय के विपरीत कुछ प्रसिद्ध न करें। देखें, भगवान की आपके संबंध में क्या इच्छा है। मैं उनके श्री चरणों में प्रार्थना करता हूँ।

८६. सम्मेलन सफल हो

श्री जगदीश जी शर्मा, नई दिल्ली १६ अक्तूबर १९७०

आगामी २५ तथा २६ अक्तूबर को होनेवाला सम्मेलन सर्वथा सफल हो। अपने राष्ट्रजीवन के आधार में ही एकत्व है– इस विचार से व्यवहार करने पर तथा ऊपर से दिखनेवाले भेदों के बारंबार उच्चार से उनपर बल देने से या तात्कालिक स्वार्थ के लिए इन दिखनेवाले भेदों को उभाड़ने का प्रयत्न करने से जो हानि होती है और आगे भी होने का भय है, उसे ध्यान में रखते हुए इन गतिविधियों से दूर रहने का निश्चय करने पर अपनी मूलभूत एकता दैनंदिन जीवन में प्रकट हो सकेगी। भगवत्कृपा से ऐसा करने में यह सम्मेलन महत्त्वपूर्ण कर्तव्य पूर्ण करे।

'स्मारिका' भी एकत्व का मंडन करनेवाली, भेदों को सत्य मानकर केवल ऊपरी समझौतों में रस न लेनेवाली चिरंतन उपयोगी बने, इस हेतु सबका एकमात्र आधार श्री भगवान के चरणों में प्रार्थना करता हूँ।

८७. सम्मेलन अत्यंत यशस्वी व परिणामकारी हो

डा. फतहसिंह, कोटा (राजस्थान) १६ अक्तूबर १६७०

कोटा में विश्व हिंदू परिषद् का हाड़ौती सम्मेलन नवंबर के २८ तथा २६ दिनांकों पर होना निश्चित हुआ है, यह पढ़कर बहुत प्रसन्नता हुई। आप उसके संयोजक हैं– यह जानकर सम्मेलन की सफलता में पूरा विश्वास हुआ। अपने क्षेत्र के हिंदू-समाज की सब श्रेणियों के जीवन का अध्ययन कर, उनकी आर्थिक, चारित्रिक तथा धर्म-संबंधी सभी समस्याओं का अध्ययन कर उत्तम समाज-जीवन हेतु जो सुधार आवश्यक हैं, उनकी योजना बनाना तथा उन योजनाओं को क्रियान्वित करने के लिए उत्साह से, लगन से कार्य करनेवालों का चयन करना आवश्यक है। सम्मेलन में आनेवाले कार्यकर्ता इसपर ध्यानपूर्वक विचार करेंगे, ऐसा विश्वास है।

परमदयालु श्री भगवान की कृपा से तथा आप सबके निरलस परिश्रम से सम्मेलन अत्यंत यशस्वी एवं परिणामकारी होगा ही। इस सफलता के लिए उस जगच्चालक के श्री चरणों में प्रार्थना करता हूँ।

८८. परिषद् का आयोजन बहुत आवश्यक

१८ नवंबर १६७०

श्री सुब्रमण्यम्, कार्यवाह,
'हिंदू टेंपल प्रोटेक्शन स्टेट कॉन्फ्रेंस', सेलम (तमिलनाडु)

आयोजित परिषद् की कल्पना एवं विचार कार्यान्वित करना आज बहुत आवश्यक है। मैं हृदयपूर्वक आशा करता हूँ और परमदयामयी श्री दिव्यजगन्माता के चरणों में प्रार्थना करता हूँ कि आपके द्वारा आयोजित परिषद् पूर्णतः सफल हो तथा उसका ईश्वर-पूजन और भक्ति, वैराग्य एवं ज्ञान प्राप्ति के लिए उपयोग किया जा सके। इससे अपने पवित्र मंदिरों के जीर्णोद्धार की ओर ध्यान देने की प्रेरणा अपने असंख्य हिंदू बंधुओं को प्राप्त होगी।

इस कल्पना से सृजनकर्ता सभी महानुभाव और उसे सफल बनाने में तत्परता से प्रयास करनेवाले सभी को मेरा नमस्कार प्रविष्ट करें। (मूल अंग्रेजी)

८९. संघकार्य में किसी पर बल प्रयोग नहीं

श्री कैलाश गौड, गौहाटी २४ मार्च १९७१

पत्रकारिता के काम को करते समय संघ से संबंध रखना या नहीं– इसका विचार आपको ही करना है। संघ के प्रति, उसके सिद्धांत, ध्येय आदि के प्रति आपके अंतःकरण में जितना विश्वास होगा, जितनी श्रद्धा होगी, संघकार्य की आवश्यकता जितने प्रमाण में आपको अनुभव होती होगी, उसपर आपका निर्णय निर्भर रहेगा। इससे अधिक मैं कुछ कह नहीं सकता।

संघकार्य में किसी पर बलप्रयोग नहीं करते कि संघ का काम करना ही पड़ेगा। ऐसी संघ की नीति नहीं है। प्रत्येक की स्वतंत्र इच्छा व निष्ठा पर यह छोड़ दिया जाता है। यह सोचकर आप जैसा चाहें, वैसा करें। इति।

९०. विकृत इतिहास को शुद्ध करना चाहिए

१४ अप्रैल १९७१

श्री अंबरीष,

सेक्रेटरी, स्टुडेंटस् न्यूज एंड व्ह्यूज एसोसिएशन, मुरादाबाद

छात्रों ने सब कार्य स्वयं अपने पर लेकर 'युग मराल' मासिक पत्रिका चलाने का संकल्प किया है, यह पढ़कर बहुत प्रसन्नता हुई। श्रम की प्रतिष्ठा का यह जीता-जागता उदाहरण शारीरिक कामों में झिझक का अनुभव करनेवाले सफेदपोश नूतन छात्र-छात्राओं के लिए मार्गदर्शक सिद्ध होगा। प्रामाणिकता से स्वार्थरहित होकर कर्तव्य भावना से किया हुआ समाजहितकारी प्रत्येक काम गौरवपूर्ण है। गत पीढ़ी में वंद्य महात्मा गाँधी जी ने यह पाठ पढ़ाने का व प्रत्यक्ष तदनुसार आचरण कर दिखाने का प्रयास किया था, किंतु बाद में राजनीति, सत्तानीति के चक्कर में सब लोग उस पुनीत पाठ को भूल गए। अब नवोन्मीलनशाली युवावर्ग के ऊपर वह पाठ स्वयं अपने जीवन में चरितार्थ कर समाज को शिक्षित करने का भार आया है। आप इस कार्य में अग्रस्थान पर हैं। इस कारण मेरे मन में आपके प्रति अत्यंत आत्मीयतापूर्ण आदर-भाव भरा हुआ है।

मैं सदा प्रवास में रहता हूँ। पत्र लिखना भी कभी-कभी ही हो सकता है। अतः मैं कुछ विचार लेखबद्ध कर सकूँगा, ऐसा दिखता नहीं।

आपके परिचर्चा के विषय के बारे में मैं इतना ही कह सकता हूँ कि सत्य पर आश्रित शुद्ध राष्ट्रीय भाव से पूरित होकर, अपने देश के इतिहास को पुनः लिखकर, जान-अनजान से जो भूलें, विकृतियाँ, असत्य उसमें घुसे हुए हैं, उससे इतिहास को शुद्ध करना अनिवार्य रूप से आवश्यक है। परंतु राष्ट्रीय कहकर, अनिष्ट भावावेश में आकर इतिहास को भिन्न प्रकार से विकृत करने के मोह से मुक्त रहकर यह कार्य होना चाहिए। विस्तार से अन्य बंधु और विद्वान ही लिख सकेंगे।

आपके सत्प्रयास की सफलता के लिए परममंगल श्री जगन्माता के चरणों में प्रार्थना करता हूँ।

६१. श्रीगणेशोत्सव का उद्देश्य

श्री शंकरराव शास्त्री, नागपुर　　　　२४ अगस्त १९७१

सार्वजनीन गणेशोत्सव मनाने के पीछे एक उद्देश्य था। अब परिस्थिति भिन्न है। परंतु जनसाधारण में धर्माभिमान, राष्ट्राभिमान, शील आदि गुणों का संवर्धन करने का उद्देश्य सार्वकालिक है। उसकी अवहेलना कर श्रीगणेश के नाम पर केवल मनोरंजन करना, याने अपने वंदनीय देवता की विडंबना करना ही है। कहते हैं कि श्रीगणेश ज्ञान, शक्ति, पराक्रम एवं शुद्ध शीलसंपन्न पवित्र चारित्र्य तथा एकता का देवता है। श्रीगणेश का आह्वान, अर्चन, पूजन करते समय यह इच्छा जागृत रखी कि हम उसके भक्त कहलाने योग्य हों, तो उसकी कृपा से सारे विघ्नों का नाश होकर, राष्ट्र तथा समाज का श्रेष्ठ, सुसंस्कृत, समृद्ध तथा विजयशाली जीवन बनाया जा सकेगा। अपने इस चिरंजीवी राष्ट्र के घटक के नाते इस प्रकार का जीवन निर्माण करने तथा उसमें से राष्ट्रोत्थान का दायित्व उठाने का भार हम सब गणेशपूजकों पर है। वह पूर्ण करने की प्रेरणा, ज्ञान तथा निरंतर कार्यरत रहने का गुण हमें श्रीगणेश कृपा से प्राप्त हो, इसके लिए उस विघ्नहर्ता के चरणों में नमनपूर्वक प्रार्थना करता हूँ। (मूल मराठी)

६२. पूर्व-बंगाल के हिंदू बांधवों की समस्या

श्री नानाजी देशमुख, जलगाँव　　　　२५ अगस्त १९७१

पूर्व-बंगाल की गड़बड़ी में वहाँ के हिंदू बंधुओं को निष्कासित कर दिया गया है। इसकी ओर किसी ने भी ध्यान नहीं दिया। सांप्रदायिकता के

आरोप का भय तथा सेक्युलरिज्म के भूत के आतंक के कारण लगता है कि यह सत्य कहने का साहस कोई नहीं करता। परंतु अनेकों का मत है कि इस तथ्य को दबाने से कोई लाभ नहीं है। इस सत्य को उद्घोषित किया जाए तथा पूर्व-बंगाल की समस्या की यह भीषण परिस्थिति दुनिया के सामने रखी जाए। इस दृष्टि से एक बड़ा कार्यक्रम लिया जाए– ऐसी इच्छा व्यक्त की गई। यदि इस बृहद् सभा का आह्वान करने के लिए श्री रमेशचंद्र मजुमदार आगे आते हैं, तो लाभ होगा। कार्यक्रम दिल्ली या कोलकाता में से जो अधिक उपयुक्त तथा भव्य कार्यक्रम होने की दृष्टि से सुविधाजनक हो, वहाँ अक्तूबर माह में किया जाए। आप यथाशीघ्र श्री रमेशचंद्र मजुमदार से मिलकर उन्हें राजी करा सकें, तो उत्तम होगा। अन्यान्य दलों के प्रमुखों को भी समाविष्ट कर एक प्रातिनिधिक मंडल खड़ाकर, उसकी ओर से श्री रमेशचंद्र जी के नेतृत्व में एक सभा आयोजित करना तथा इस गंभीर समस्या के भिन्न-भिन्न पहलुओं की ओर सबका ध्यान आकर्षित करना उपयुक्त सिद्ध होगा।

तथापि श्री वि.घ.देशपांडे के साथ परामर्श कर शीघ्र उचित कदम उठाएँ, यह प्रार्थना। (मूल मराठी)

९३. श्री गुरुगोविंदसिंह जी समस्त हिंदुओं के गुरु

डा. सूरज प्रकाश, दिल्ली २० दिसंबर १९७१

....दिल्ली आना मेरे लिए संभव नहीं है। डा. आबाजी थत्ते का ऑपरेशन अपेक्षित है, अतः मुंबई जाना आवश्यक है। आपके द्वारा आयोजित कार्यक्रम बहुत औचित्यपूर्ण है। श्री गुरुगोविंदसिंह संपूर्ण हिंदू-समाज के गुरु, मार्गदर्शक हैं, परम वंदनीय हैं। सद्यःस्थिति में उनकी वीरगाथा का, उनकी पवित्रता का, त्याग का, धर्मनिष्ठा का श्रद्धा से स्मरण कर अनुसरण करना अतीव आवश्यक है। आपने पूरे समाज को यह स्मरण करने का अवसर देने की योजना बनाई है, जिसके लिए आप सबका अभिनंदन करते हुए सबको बधाई देता हूँ।

परम मंगल सर्वशक्तिमान श्री प्रभु के आशीर्वाद से आपको पूर्ण सफलता मिले।

आपके सहयोगियों को तथा कार्यक्रम में सम्मिलित होनेवाले सभी माताओं-महानुभावों को सादर प्रणाम।

९४. महायोगी श्री अरविंद अनन्यसाधारण विभूति

श्री सुरेश अवस्थी, अ.भा.विद्यार्थी परिषद्, कानपुर ३० जून १९७२

....महायोगी श्री अरविंद जी की जन्मशताब्दी के उपलक्ष्य में उनके विचारों का संकलन 'स्मृति मंजूषा' के रूप में आप प्रकाशित करने जा रहे हैं, यह बहुत अभिनंदनीय है। उनके जीवन की झाँकी भी साथ में दें तो अधिक लाभप्रद होगा। मनुष्य के संस्कारक्षम ऐसे बाल्य से यौवन दशा प्राप्ति तक के वर्ष इंग्लैंड जैसे विदेश में बिताकर भी अपने धर्म, संस्कृति, तत्त्वज्ञान के पवित्र संस्कार जागृत रखनेवाले तथा उनमें पूर्णत्व की श्रेष्ठतम अवस्था प्राप्त करने वाले क्वचित ही देखने को मिलते हैं। ऐसे असाधारण विभूतियों में महायोगी श्री अरविंद जी अनन्यसाधारण हैं। उनके जीवन के प्रकाश की एक छोटी-सी किरण भी हम अपने हृन्मंदिर में प्रविष्ट कर सकें तो इह-परत्र में परम कल्याण प्राप्त कर सकेंगे। आशा है कि आपकी पत्रिका इस प्रकाश किरण के वितरण में अपना दायित्व पूर्ण करेगी।

आपके शुभ संकल्प का अभिनंदन करते हुए उसकी सफलता के लिए परममांगल्यमयी श्री जगज्जननी के चरणों में प्रार्थना करता हूँ।

९५. जड़-मूल से संबद्ध रहें

श्री मुकुंदराव कुलकर्णी, पुणे ५ जुलाई १९७२

चुनाव में आपकी सफलता के संबंध में मुझे पहले ही बताया गया था। आपकी इस सफलता से बहुत संतोष हुआ। अपने स्वीकृत कार्य हेतु आपने देश में सर्वत्र जाने का किया हुआ संकल्प यथोचित है और आवश्यक भी है। योग्य आचरण एवं विचारों का सर्वत्र प्रचार-प्रसार अपरिहार्य रूप से आवश्यक है।

वृक्ष की शाखा जिस प्रकार अपने जड़-मूल से संबद्ध रहती है, वैसे ही अपने कार्य की सभी शाखा-उपशाखाएँ अपने जड़-मूल को पहचानने में सक्षम हों और सभी कार्य सुसूत्र कार्यान्वित करने का प्रयास करें।

यह सब कठिन और कष्टसाध्य है। इन कष्टों को सहने के लिए आपको चाहिए कि स्वास्थ्य निरोगी, सुदृढ़ रहे। स्वास्थ्य कुछ ठीक है, ऐसा

आपने लिखा है। इससे निश्चिंतता का अनुभव कर रहा हूँ। चाहता हूँ कि भविष्य में आप उत्तम स्वास्थ्य का अनुभव करें। स्वास्थ्य की चिंता करें।

(मूल मराठी)

९६. दुर्गम स्थानों में रहने वाले बंधुओं की सेवा

३० अगस्त १९७२

श्री धोंडोपंत केलवाईकर, बोर्ली पंचायतन, जि. कुलाबा (महाराष्ट्र)

आप जो काम कर रहे हैं, उसकी जानकारी प्राप्त हुई। दोहरंग की योजना बहुत उपयोगी है। अपने कितने ही बंधु दुर्गम स्थानों में रहते हैं तथा जीवन की साधारण आवश्यकताएँ भी पूरी नहीं कर पाते। इस प्रकार की मन को व्यथित करनेवाली अवस्था में उन्हें थोड़ी सहायता करते हुए उनके कष्टमय जीवन में थोड़ा भी योग्य परिवर्तन लाना, उनके दुःख-निवारण का प्रयत्न करना तथा उन्हें समाज के समकक्ष लाने के परिश्रम करना, अपना कर्तव्य है। आप यह सब हृदय से कर रहे हैं। यह उत्तम है।

इन सब कामों में आप स्वयं के स्वास्थ्य की ओर ध्यान दें। उस दृष्टि से आप कुछ मास पूर्ण विश्राम लेनेवाले हैं, यह अत्यंत आवश्यक है तथा समयोचित है। (मूल मराठी)

९७. समाज-सेवा के भिन्न-भिन्न कार्य करना उचित

८ सितंबर १९७२

श्री बालकृष्ण रस्तोगी, अवैतनिक अधीक्षक, लखनऊ

आपके पत्र से 'श्री मदनमोहन सार्वजनिक पुस्तकालय एवं वाचनालय' की स्थापना से अभी तक की प्रगति एवं विकास का परिचय प्राप्त हुआ। अपने समाज में प्रत्येक प्रकार से आत्मीयता उत्पन्न करनेवाला, अच्छे जीवन की प्रेरणा जगानेवाला जो-जो कार्य चलता है, वह अभिनंदनीय है। आपका यह कार्य उच्च कोटि का है। उससे जो भाव-जागृति होगी, उसको संग्रहीत कर शुद्ध राष्ट्रीय सामर्थ्य के रूप में खड़ा करनेवाले अपने दैनंदिन संघकार्य में आप संलग्न हैं, यह अति प्रसन्नता का विषय है। मूल कार्य करते हुए समाज-सेवा के भिन्न-भिन्न कार्य करना उचित है। इसलिए आप सब बंधु बधाई के पात्र हैं।

९८. विविधता में एकता का अनुभव

श्री आत्माराम जोशी, जामखेड़ (महाराष्ट्र) १३ अक्तूबर १९७२

मैं समझता हूँ कि इस नए प्रतीत होनेवाले क्षेत्र में अब आप समरस होकर कार्य कर रहे हैं।

व्यक्ति-व्यक्ति में जिस प्रकार भिन्नता प्रतीत होती है, उसी प्रकार विभिन्न क्षेत्र और वहाँ के निवासी व्यक्तिसमूह में भी कुछ वैशिष्ट्यपूर्ण भिन्नता दृष्टिगोचर होती है। इन विविधताओं में अनुस्यूत अपने धर्म, संस्कृति, समाज तथा राष्ट्रजीवन की एकता खोजने का और उस एकत्व के सूत्र का साक्षात्कार करते हुए उसे हृदय में अनुभव करने का सद्गुण, एक स्वयंसवेक के नाते आपमें तो विद्यमान है ही। इस सद्गुण के विकास का प्रयास, तदर्थ विचार एवं चिंतन आवश्यक है।

अभी तक के कार्यानुभव के कारण उस क्षेत्र की भिन्नता में स्वयं अपने जीवन का साधर्म्य अनुभव कर आप पूर्ण आत्मविश्वास के साथ कार्य कर रहे होंगे।

ॐ ॐ ॐ

वैराज्यं न राजाऽऽसीन्न, च दण्डो न दाण्डिकः।
धर्मेणैव प्रजासर्वाः, रक्षन्तिस्म परस्परम्।।

न तो राज्य था न राजा, न दंडनीय अपराधी और न दंड। धर्म द्वारा ही संपूर्ण प्रजा एक–दूसरे की रक्षा करती थी। सदाचरण की संहिता है धर्म, जो समान आंतरिक बंधों को जागृत करता है, स्वार्थपरता को संयमित करता है तथा बिना किसी बाह्य प्रभुत्व के जनता को सामंजस्य की स्थिति में एक साथ बनाए रखता है। धर्म के प्रभावी रहने से न तो स्वार्थपरता होगी, न अपसंचय। सभी मनुष्य संपूर्ण समाज के लिए जिएँगे और कार्य करेंगे। – श्री गुरुजी

ॐ

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ

मा. स. गोळवलकर | डॉ. हेडगेवार भवन

नागपूर २.

क्रमांक 65 | दिनांक 24.10.57

My dear Subodh Babu,

Recd. your letter of the 1st Oct. I am very happy to read that your leg is better and that you can attend to your profession to some extent.

After the Vijaya Dashami Celebrations I went to Madras & after visiting a few places I came back only yesterday. Now on 1.11.57 I shall leave for Bangalore & after going to some important centres in Karnatak I shall return on 8.11.57. Afterwards I intend going to Gujerat & then to U.P. when I shall have the happiness of meeting you.

I am quite well. My Pranams to Mananeeya Panditji, Dattaraj your brother and brother Swayamsevaks. With Regards —

Yours Sincerely,

M. S. Golwalkar

(श्री गुरुजी का अंग्रेजी हस्ताक्षर)

शब्द संकेत : खंड ७

खंड ७ : पत्राचार

संतवृंद, विदेशस्थ बंधु, नेतागण, अन्य मतानुयायी, माता, भगिनि, प्रबुद्ध जन तथा सामाजिक संस्थाओं के कार्यकर्ताओं को लिखे पत्र।

खंड ८ : पत्र-संवाद

स्वयंसेवकों व कार्यकर्ताओं को लिखे पत्र।

खंड ९ : भेंटवार्ता

प्रश्नोत्तर, वार्तालाप, प्रमुख लोगों से वार्तालाप। पत्रकारों के सम्मुख भाषण। महत्त्वपूर्ण भेंट तथा अनौपचारिक चर्चाएँ।

खंड १० : संघर्ष के प्रवाह में

प्रतिबंध के समय सरकार से हुआ पत्राचार। उस समय दिये गए वक्तव्य। आभार प्रदर्शन। बाद के अभिनंदन समारोह। भारत–चीन व भारत–पाकिस्तान युद्ध के समय की जनसभाएँ, बैठकें, शिविर, पत्रकार वार्ता तथा वक्तव्य।

खंड ११ : चिंतन-सुधा

संपादित विचार नवनीत

खंड १२ : स्मरणांजलि

श्री गुरुजी के बारे में महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों, संसद व विधानसभा तथा समाचार–पत्रों द्वारा श्रद्धांजलि।



डा. हेडगेवार स्मारक समिति, नागपुर